कृष्णा सोबती

ज़िन्दगीनामा

साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित कृति

ज़िन्दगीनामा

कृष्णा सोबती

भारतीय साहित्य के परिदृश्य पर हिन्दी की विश्वसनीय उपस्थिति के साथ कृष्णा सोबती अपनी संयमित अभिव्यक्ति और सुथरी रचनात्मकता के लिए जानी जाती हैं। कम लिखने को वे अपना परिचय मानती हैं, जिसे स्पष्ट इस तरह किया जा सकता है कि उनका 'कम लिखना' दरअसल 'विशिष्ट' लिखना है।

किसी युग में किसी भी भाषा में एक-दो लेखक ही ऐसे होते हैं जिनकी रचनाएँ साहित्य और समाज में घटना की तरह प्रकट होती हैं और अपनी भावात्मक ऊर्जा और कलात्मक उत्तेजना के लिए एक प्रबुद्ध पाठक वर्ग को लगातार आश्वस्त करती हैं।

कृष्णा सोबती ने अपनी लम्बी साहित्यिक यात्रा में हर नई कृति के साथ अपनी क्षमताओं का अतिक्रमण किया है। 'निकष' में विशेष कृति के रूप में प्रकाशित 'डार से बिछुड़ी' से लेकर 'मित्रो मरजानी', 'यारों के यार', 'तिन पहाड़', 'बादलों के घेरे', 'सूरजमुखी अँधेरे के', 'ज़िन्दगीनामा', 'ऐ लड़की', 'दिलो-दानिश', 'हम हशमत', 'समय सरगम', 'शब्दों के आलोक में' और 'जैनी मेहरबान सिंह' तक ने जो बौद्धिक उत्तेजना, आलोचनात्मक विमर्श, सामाजिक और नैतिक बहसें साहित्य-संसार में पैदा की हैं, उनकी अनुगूँज पाठकों में बराबर बनी रही है।

कृष्णा सोबती ने हिन्दी की कथा-भाषा को एक विलक्षण ताज़गी दी है। उनके भाषा-संस्कार के घनत्व, जीवन्त प्रांजलता और सम्प्रेषण ने हमारे समय के अनेक पेचीदा सच आलोकित किए हैं। उनके रचना-संसार की गहरी सघन ऐन्द्रियता, तराश और लेखकीय अस्मिता ने एक बड़े पाठक वर्ग को अपनी ओर आकृष्ट किया है। निश्चय ही कृष्णा सोबती ने हिन्दी के आधुनिक लेखन के प्रति पाठकों में एक नया भरोसा पैदा किया है। अपने समकालीनों और आगे की पीढ़ियों को मानवीय स्वातंत्र्य और नैतिक उन्मुक्तता के लिए प्रभावित और प्रेरित किया है। निज के प्रति सचेत और समाज के प्रति चैतन्य किया है।

साहित्य अकादमी पुरस्कार और उसकी महत्तर सदस्यता के अतिरिक्त, अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों और अलंकरणों से शोभित कृष्णा सोबती साहित्य की समग्रता में अपने को साधारणता की मर्यादा में एक छोटी-सी कलम का पर्याय ही मानती हैं। समय को लाँघ जानेवाला लेखन ऐसे लेखन से कहीं अधिक बड़ा होना चाहिए–साहित्य को जीने और समझनेवाले हर आस्थावान व्यक्ति की तरह यह निर्मल और निर्मम सत्य उनके सामने हमेशा उजागर रहता है।

आवरण: नरेन्द्र श्रीवास्तव

विख्यात ग्राफिक डिजायनर। कुछ समय अध्यापन के उपरांत इस समय स्वतंत्र कार्य। 1972 में नेहरू फेलोशिप से विभूषित। भारत और पेरिस में साथ-साथ कार्य किया। हिन्दी टाइपोग्राफी पर शोध, देवनागरी के अक्षरों और 'ओउम' का रचनात्मक अंकन। कई संस्थाओं व विख्यात डिजायनर्स के लिए प्रतीक-रचना।

कृष्णा सोबती

ज़िन्दगीनामा

राजकमल पेपरबैक्स

पहला पुस्तकालय संस्करण
राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड द्वारा
1979 में प्रकाशित

© कृष्णा सोबती

राजकमल पेपरबैक्स में
पहला संस्करण: 2004
नौवाँ संस्करण: 2016

© कृष्णा सोबती

राजकमल पेपरबैक्स: उत्कृष्ट साहित्य के जनसुलभ संस्करण

राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.
1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज
नई दिल्ली-110 002
द्वारा प्रकाशित

शाखाएँ: अशोक राजपथ, साइंस कॉलेज के सामने, पटना-800 006
पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-211 001
36 ए, शेक्सपियर सरणी, कोलकाता-700 017

वेबसाइट: www.rajkamalprakashan.com
ई-मेल: info@rajkamalprakashan.com

ZINDAGINAMA
Novel by Krishna Sobti

ISBN: 978-81-267-1742-2

چوں کار از ہماں حیلتے در گزشت
حلالست بُردن بہ شمشیر دست

चूँ कार अज़ हमाँ हीलते दरगुज़श्त।
हलालस्त बुर्दन ब-शमशीर दश्त।।

जब दूसरे सब रास्ते कारगर न हो सकें तो
जुल्म के ख़िलाफ़ तलवार उठा लेना जायज़ है।

श्री गुरु गोबिन्दसिहंजी

इतिहास/जो नहीं है
और इतिहास/जो है

वह नहीं
जो हुक़ूमतों की
तख़्तगाहों में
प्रमाणों और सबूतों के साथ
ऐतिहासिक खातों में दर्ज़ कर
सुरक्षित कर दिया जाता है,

बल्कि वह
जो लोकमानस की
भागीरथी के साथ-साथ
बहता है
पनपता और फैलता है
और जन सामान्य के
सांस्कृतिक पुख़्तापन में
ज़िन्दा रहता है!

अनुक्रम

ज़िन्दगीनामा

गलबहियों-सी
उमड़ती, मचलती
दूधभरी छातियों-सी
चनाब और जेहलम की धरती
माँ बनी
कुरते के बन्द खोलती
दूध की बूँदें ढरकाने को।
कनक के
सुनहली ढेरों पर
चमचम चमकती
मीठी सजरी धूप;
चाँदी के चौंकफूल पहने
बर्फीली चोटियों को छू-छू आतीं
ठंडी सुहानी हवाएँ।
सरसों के पीले खेतों को
हिलाती-डुलाती
कुलाचें भरती
भागीभरे चनाब के
अल्हड़ अनोखे पानियों पर।
जिसकी
अमृत की बूँदों ने
लहू के पेड़ खड़े कर दिए
हरे-भरे खेतों की
मुँडेरों पर।
तने माथे पर अक्खड़ तेवर
गेहुआँ रंग पर नखरीली मूँछोंवाले
भारे गौहरे चेहरों पर
गन्दम की इलाही लाली।
बाँहों के चूड़े छनकाती
मक्का-सी खिली-खिली
शरबती आँखोंवाली
नई ताजी बहूटियाँ।
हँसती-हँसातीं
तेवरों से रिझातीं
खुले-डुले पंजाब की हीरें
और उनकी खलंदड़ी सहेलियाँ।
धूप की बरखा में

फुलकारियों की ओट कनखियों से
ख़ुदा बनके खड़े-अड़े अपने गबरुओं को
खेतों की देखतीं मुँडेरों पर।
ऐसे
अनोखे अलबेले पंजाब के
दूधिया घरों में
राँगली पीढ़ियों पर बैठीं रानियाँ
घूँ-घूँ चरखा काततीं
तकलों पर महीन सूत निकालतीं
भरी-भरी गहराई देहें
मोटे-गाढ़े खद्दर-पट्ट में लिपटीं
मेहनत-महारानियाँ।
तपे तन्दूरों पर झुकी
इलाही गन्ध भरी
घी-रची मोटी वज़नी रोटियाँ।
पेड़े उठा
हथेली से लगातीं
ज़िन्दगी की सोंधी महक को
लहक को
जगातीं
लहकातीं।
तारों की लौ
मुँह अँधेरे उठ
बैलों को हलों में जोत
हर खेत का रखवाला
सदियों ख़ुले आसमान तले
गेहूँ की सुनहली फसलें उगाता रहा।
हर बार
हर पीढ़ी का नौजवान
हर सुबह
मीठी देहों के गुंजल खोल
खेतों को सत्कारता रहा
हर शाम
जिसकी मेहनत पर
माँ-बहनों और साथिनों ने
अमृत के कलश वार दिए
न्यौछार दिए।
तस्वीर यह ख़ुदी रही
मरदाने पंजाब की।
उस सूरमा तासीर और

मिश्री से आब की।
हर धड़कते दिल में
फड़कती बाँहों में
दरियाओं की मचलती लहरों में
सब्ज़ जामावर बनी
इतराती-चौंकाती
सजी बनी दुल्हन-सी
धरती पंजाब की।
नज़र परवान होती रही
हज़ार बार
हज़ार बार आसमान झुका
धरती पर।
बार-बार
लाख बार महका मोतिया
सेहरों की लड़ियों में।
लाख बार ढोल बजे
बैसाखी और लोहड़ी के।
पाँव की थिरकन में
गिद्दे और भाँगड़े पड़े।
खेतियों में बीज पड़े
बीज उगे
और सोना रंग फसलों के
अम्बार लगे।
माँएँ
अपने आँचलों में
उगाती रहीं
मजबूत बेटे-बेटियों की पनीरियाँ।
पीर-फकीरों की
मनौतियों से
अपने लापरवाह
लाड़-प्यारों से।
कड़कती सरदी
और तपती लूओं ने
जिनके हाड़-मांस को कमाया
जिसने शुंकारते-फुंकारते
स्वभाव को रचाया-बसाया
जिसने लड़ाकू बच्चे-बच्चियों को
दूध पिलाया
ऐसी बीरबाणियों के कुरतों पर
चमकते रहे कंठे

और लाखे रानी हार।
लदी-भरी बोरियों तले
चहकती रहीं बच्चों की किलकारियाँ
सुबह-शाम
गुच्छियों से उछलती-लपकती
गुल्ली-डंडे और सौंची की बारियाँ।
अँगनों और पसारों में झिलमिलाते
सगुणों के बाग और फुलकारियाँ।
भंडार-घरों में
मक्का और बाजरे की
महक से सराबोर
हर घर का अन्दर और बाहर।
वह
ख़ुशहाल धरती का ख़ुशहाल लिशकारा
आँखों की प्यास बनकर
हर चौके की चंगेरों के
सगुण मनाता रहा।
भर-भर मूठें
बरतन-भाँड़ों में उँडेलता रहा।
खाने-पहनने और
जी भर-भर जी लेने की रीझें।
जहाँ का हर मेहनतकश बादशाह
अपने सिर के साफ़े को
अपना ताज समझ सँभालता रहा
और अपने खेतों को
अपना रिजक समझ
सत्कारता रहा।
ऐसे भागीभरे
भरे-पूरे पंजाब की धरती पर
ज़हर की काँगें घिर आईं।
देखते-देखते
लाखों कदमों के हुजूम उठ धाए।
चढ़ाइयाँ
बहुत बार हुईं
बहुत बार हमलावरों से सामने।
बहुत बार राज-पाट बदले
पर चौड़े सीनेवालों ने
कड़े जिगरेवालों ने
कभी हौसले नहीं गँवाए
मरने और मारने से

खौफ़ नहीं खाए
पर आज?...
क्या सूरमाओं के सिक्के बदल गए?
बाजुओं के हथियार लटक गए?
कन्धे धचक गए?
हाथ मूठों से उठे नहीं।
एक आवाज़ पर
उठ खड़े होनेवालों की
शोख-गुस्ताख़ लहरें गुस्से की
कहाँ गुम हो गईं?
क्या क़हर भरी छातियों में?
रब्बी हुक्म की तरह
क्या ये फ़ैसले भी आख़िरी हैं?
मुँह मोड़ लो
अपने घर-आँगन से
हरी-भरी
पकी-जड़ी अपनी फ़सलों से।
पीठ दे दो
इस हरियाली
इस जड़त और
इन नीलाहटों को।
इस धरती पर
अब हमारे पुण्य
शेष हो गए हैं।
अब हमें बिछुड़ जाना है
अपनी धरती से
अपनी माँ से
माँ की माँ से
और हम सबकी माँ से!
इसकी मिट्ठड़ी ओट से
छाँह से।
इसकी
दूध-भरी छातियों से
अब दूध नहीं
खून टपकता है।
देखो पलटकर
मत देखो
दौड़ चलो
छोड़ चलो
इस पानी को

इस धरती को
जिसने हर मौसम
हर बहार में
सूरमाओं की पनीरी उगाई थी
जिसने
हाड़-मांस के इन्सानों में
मेहनत करने
और ज़िन्दगी को
जी भर-भर प्यार करने की
ललक जगाई थी
लौ लगाई थी
अलविदा
आबों के आब को
पंज दरियाओं के पंजाब को
जेहलम और चनाब को।
अलविदा
अपने पुरखों की याद को
जिनके खून और
दूध से बने बच्चे
अब फिर कभी इस धूल में
इस मिट्टी में
कभी नहीं खेलेंगे
कभी नहीं खेलेंगे
इन ज़िन्दा रूखों की छाँह में
जहाँ दूर तक
जमे थे
ख़ुबे थे जड़ों समेत
इनके छाँहदार कबीले।
बेरियों और टालियों तले
दुल्हनों की पालकियाँ
अब कभी नहीं उतरेंगी
कभी नहीं ठिठकेंगी
दूल्हों की
साज़-बाजवाली घोड़ियाँ
गाँव की सीमाओं पर।
गोटा लगी
चूनरों की टोलों से
उठते-खिंचते
लाड़लों की 'घोड़ियों' के
ममताले सुर।

फिर कभी नहीं पुकारेंगी
कच्चे कोठों से
चिट्टी दूध शोख़
पंजाब की बेटियाँ।
टप्पों के बन्द जोड़
अपने माहियों को
अपने दिलग़ीरों को।
कौन जानेगा
कौन समझेगा
अपने वतनों को छोड़ने
और उनसे मुँह मोड़ने के दर्दों को
पीड़ों को!
जेहलम और चनाब
बहते रहेंगे इसी धरती पर।
लहराते रहेंगे
ख़ुली-डुली हवाओं के झोंके
इसी धरती पर
इसी तरह।
हर रुत-मौसम में
इसी तरह
बिलकुल इसी तरह।
सिर्फ़
हम यहाँ नहीं होंगे।
नहीं होंगे,
फिर कभी नहीं होंगे,
नहीं।

शरद पुण्या की रात।

पिंड के कच्चे कोठे चम्मचम्म चमकने लगे। दमकने लगे। चान्ननी ने सजरी लिपाई से खेत-खलियान रूख-वृख सब उजरा-उजला दिए।

कुओं के मिट्ठड़े सुर झलमल-झलमल हियरों को हुलसाने लगे।

बेटों-बच्चड़ों के साथ घरों को लौटती बलदों की जोड़ियाँ जी की तृखा-प्यास जगाने लगीं।

चूल्हों से उठती उपलों की कच्ची गन्ध हर कोठे हर चौके को महकाने-लहकाने लगी!

रब्बा, ये सोहणे समय मनुक्खों के साथ लगे रहें। सजे रहें।

चिट्टी दूध चाँदनी में तुरकी बुलबुलों की डार पंख फैलाए अपनी लम्बी उडारियों पर।

“लो, एक और आया झुंड!”

“बग्ग है कि टोका?”

“टोका है।”

“न, बग्ग है।”

“वीरजी, ये कहाँ जा रही हैं उड़कर?”

मिट्ठी के भाई मेहरबान ने बहन के सिर पर लाड़ से दो धप्पे दिए–“सुन न, ये चोग के लिए आई थीं हमारे पिंड। चुग्गा जुटाकर अब जा रही हैं तेरी ससुराल।”

“हट परे वीरा?”

मींडियों गुँथे सिर पर चौंकफूल डाले मिट्ठी ने भाई की बाँह पर चूँडी भर ली। फिर दन्दियाँ झकाकर कहा–“मँगनी मेरी हुई है कि तुम्हारी? बताऊँ तुम्हारी लाड़ीजी का नाम? डोडो...डोडो...”

“चल मरजानी!”

शाहों के कोठे पर कुड़ियों-चिड़ियों के झुंड खैनू खेलने में मग्न थे। छलाँग मार मिट्ठी उनमें जा मिली:

आल माल
पहला थाल
माँ मेरी के
लम्बे बाल
कूएँ हेठ पानी
माँ मेरी रानी
काढ़ेगी कसीदड़ा
दूध पाए मथानी।

ऊपर माउंटीवाले बनेरे पर बाँहें फैलाए लड़के दरिया की सीध देखने लगे।

“वह देखो अल्लाह रक्खे की बेड़ी–वह किनारे लगी शाहों की।”

“वह बीच भँवर में दरिया पीर ख़्वाज़ा खिज़र की बेड़ी झूलती रहती है।”

“किसी को दिखती नहीं है, पर होती ज़रूर है!”

पीछे से आ चन्नी ने भाई का कुरता खींच लिया–“मुझे भी दिखाओ न वीरजी! दरिया पीर की बेड़ी क्या कभी नहीं डूबती?”

“हाथ जोड़ दे चन्निए! ख़्वाज़ा खिज़र ज़िन्दगानी के पीर हैं। आप ही दरियाओं में भँवर डालते हैं और आप ही बेड़ियों को पार उतारते हैं।”

चन्नी ने आँखें मूँद दरिया की सीध हाथ जोड़ दिए।

“देखो-देखो, दरिया में दो चाँद हैं। दो नहीं। एक ऊपर आसमान पर और एक थल्ले पानी में।”

“ऊपरवाले का लिशकारा है। जा चन्नी, शाहनी से काँसी का कटोरा लेकर आ। ऊपरवाला चाँद हाथ में पकड़ा दूँगा।”

ख़ुल्लरों की निक्की और पास ढुक आई–“कटोरा मुँह को लगाकर मैं चाँद को पी जाऊँगी।”

जितने काँसी का कटोरा आए, घोलू ने बन्द मूठ में से पँजीरी का फक्का मार लिया।

ख़ुशबू आते ही लड़कों ने घेर लिया–“तेरी माँ ने पुण्या का व्रत रखा है क्या?”

“न, निक्की बेबे बाँट रही है। सबको।”

"चलो भई, चलो निक्की बेबे के बेहड़े।"

चाँद कटोरा भूल-भाल लड़के कोठों पर कुलाँचे भरते चले।

मोहरे की बेबे से हाँक पड़ गई–"अरे कख न जाए तुम्हारा, नीचे मिट्टी झड़ती है। कहीं रण जीतने तो नहीं जा रहे।"

मंजी पर चौकड़ी मार लाला वड्डे दूध-पराँठा खाकर तृप्त हुए ही थे कि वानरों की टोली आ प्रकटी।

"बेबेजी, प्रसाद। बेबेजी, पँजीरी।"

"आओ मेरे बच्चड़ो, आओ! निक्किए, बालड़ों को बैठने को खीड़े दो। आसन दो।"

बेबे निक्की ख़ुश हो-हो गई–"साँइया, आज सारा आँगन सुच्चा है। सजरी लिपाई की है। इनका जहाँ मन आए बैठें।"

लड़कों के पीछे-पीछे लड़कियाँ भी घिर आईं।

"बेबेजी, प्रसाद ख़त्म तो नहीं हो गया?"

"न री न। प्रसाद में बहुत बरक़त।"

मुँह मीठा कर बच्चे लालाजी के पीछे पड़ गए।

"लालाजी, कहानी। लालाजी, बुझारतें। लालाजी, कोई क़िस्सा।"

लाला वड्डे की अँखियों के आगे अपने बचपन की पुण्या उतर आई। हँसकर कहा, "पुत्तरजी, बाबा पीरनेवाली बेरियों पर बेर झाड़ने कौन-कौन जाता रहा?"

"लालाजी, वहाँ कैसे जाते? वहाँ तो कुत्ता पड़ता है।"

"पुत्तरजी, बेरियों पर कुत्ता ज़रूर पड़ेगा, नहीं तो बेरियाँ अब तक ख़ाली न हो जातीं। रखवाले न होते बेरियों के तो तभी खाली हो जातीं जब मैं छोटा था।"

सुनारों के सुथरे की आँख फैल गई–"लालाजी, क्या बाबा पीरना तब भी अपने हाथ में लम्बी डाँग लिये बैठा रहता था?"

माँ सदके गई–"अरे, पीरना नहीं, उसका दादा। मेरे बच्चड़ो, रूख वही रहता है, उसके रखवाले बदलते रहते हैं।"

"बेबेजी, हम तो तूत खाने जाती हैं।"

"सो भला धियो, जब तक इस ग्राँ का दाना-पानी है, ख़ूब खा लो। फिर तो जा बैठोगी अपने सासरे।"

सिर पर किड़े और मीडियों के जाल बिछाए कँवारियाँ शरमा-शरमा हँसने लगीं।

"पुत्तरो, एक बात तो बताओ, ये सेव-बेरोंवाली बेरियाँ भला किसने लगवाई थीं?"

लसूड़ेवालों के चोखे ने मुंडी हिलाई–"लालाजी, मुझे पता है।"

"चन्नमल्ल के भाईया, यह तो तुम्हारा भी पुरखा जम्म पड़ा। बोलो पुत्तरजी, बोलो।"

"लालाजी, अबवाले बाबे पीरने के दादे के दादे ने रोपी थीं ये बेरियाँ। इन बेरियों के बूटे पंचनद से आए थे। तभी इनका फल इतना मीठा घुट्टू है।"

बच्चों ने रौला डाल दिया–"लालाजी, कहानी। लालाजी, आख्यान।"

"चंगा। सुनो मेरे बच्चो, जिसे हाजत हो वह हो आए, जिसे प्यास हो पी आए–बीच में से उठने की मनाही है।"

भाई को कुच्छड़ में उठाए शानो चुपके से उठी और कोठे-कोठे जनानियों को बुलावा दे आई–"निक्की बेबे के घर कथा हो रही है। सबको बुलाया है।"

शानो वापस आई तो सब चाचियाँ-ताइयाँ एक गोट्ठ में जुटी बैठी थीं।

"सुनो मेरे बच्चड़ो, हर पुत्र अपने पिता का अवतार होता है।"

लड़के अपने-अपने सिरों को छूने लगे, "जी, मैं भी...मैं भी...मैं भी...।"

कालू उठ खड़ा हुआ–"बेबेजी, मैं भी तो।"

"बलिहारी जाऊँ पुत्तर, तू क्यों नहीं, तुम भी।

"हर वन्दा अपने पिता का अवतार है। याद रखो। अवतार वह जिसके दो हाथ हैं। अवतार वह जिसके दो पाँव हैं। अवतार वह जिसका मुँह-माथा है। धड़ है। आगा है। पीछा है। मेरे बच्चो, अवतार वह जो धरती हल से जोतकर पानी से सींचता है। तृप्त करता है। बीज बोता है। फ़सलें उगाता है।

"आगे सुनो।

"सबसे पहला अवतार हुआ आदि पुरुख प्रजापति।

"प्रजापति आप ही नर था। आप ही नारी था।

"उसने आप ही अपने को दो हिस्सों में बाँटा।

"एक हिस्से से पैदा हुए बल्द। दूसरे से उत्पन्न हुई गऊ माता।"

"लालाजी, गाय और बल्द दोनों भाई-बहन हैं न?"

"यही समझ लो।"

थल्ली वंडवाले जगतार का ध्यान कहीं और जा भटका–"न जी, दोनों नर-मादा हैं। गाय बल्ले से ही तो ब्याई जाती है।"

दूर बैठी जगतार की बहन दीपो ने उठकर दो-चार कसे हाथ भाई की पीठ पर दिए–"चुप कर, बीच में नहीं बोलते।"

लालाजी ने हाथ से रोक दिया, "बस, जातको! आगे सुनो–

"फिर पैदा हुआ रूख। सृष्टि-रूख।"

"जी, बल्द और गाय इसकी छाँव में बैठ सकें–इसीलिए न!"

भोलू क्यों पीछे रहे। आगे होकर बोला–"कौन सा रूख था वह भला? पीपल, बोढ़, धरेक कि कीकर?"

मिट्ठी को सूझ गया–"लालाजी, अपने पीपलवाले खू का पीपल होगा। कितनी बड़ी-बड़ी जटाएँ चढ़ी हुई हैं, इस पीपल पर!"

"बच्चो, यह रूख हमारे सब रूखों से बड़ा था। इतना बड़ा कि गउओं और बल्दों के बड़े-बड़े झुंड इसके नीचे आ ढुके। इसी सृष्टि-रूख से भूलोक उपजा। यह पृथ्वी। धरती हमारी। फिर उपजीं चार दिशाएँ और फिर बना आकाश। जब यह सबकुछ स्थित हो गया तो फिर जन्मा अदिति को दक्ष।

"पीछे-पीछे इसके देवता जन्मने लगे।"

"लालाजी, इस तरह तो हम ही हुए न देवता! हम ही हुए न अवतार!"

लालाजी ने उँगली हिला दी–"न पुत्तरजी, देवता अपने मुँह से अपने आपको कभी देवता नहीं कहते। अपने मुँह अपनी बड़ाई नहीं करनी।

"हाँ, तो माता अदिति सारे ब्रह्मांड की माता है। अदिति आकाश भी है। अदिति धरती भी है। इन दोनों के ऊपर, आगे जो कुछ भी है, वह भी अदिति है।"

बड़े बेटे चन्नमल्ल का निक्का दादे का मुकाबला करने लगा।

"लालाजी, क्या ध्रुवतारा भी अदिति है? सात तारों की बहँगी भी अदिति है? मैं भी अदिति हूँ? आप भी अदिति हैं? नदियाँ भी अदिति हैं? कुएँ भी अदिति हैं?"

निक्के के चाचा भागमल्ल ने कान मरोड़ दिया–"बीच में नहीं बोलते।"

"जात को, देवताओं की तीन पाँतें हैं:

पृथ्वी के देवता
आकाश के देवता
बड़े मंडल के देवता।"

मदरसे में पढ़ते बोद्दे को चमकार हो गया–"लालाजी, हर कोई मरकर बड़े मंडल में ही जाता है। बड्डे-वड्डेरे जब पूरे हो जाते हैं न तो ऊपरवाले मंडल में जा बैठते हैं। आकाश-गंगा के किनारे मंजियाँ बिछी हैं। उन्हीं पर बैठ सब दादे-नाने हुक्का पीते रहते हैं। नानियाँ-दादियाँ पीढ़ियों पर बैठ चरखे कातती हैं।"

बोद्दे की माँ ने दूर से हाथ दिखाया–"चुप कर।"

"बच्चो, जुग चार होते हैं:

सोता हुआ कलजुग
छोड़ता हुआ द्वापर
खड़ा हुआ त्रेता और
चलता हुआ सतजुग।"

घोलू की फिरकी फिर घूम गई–"सतजुग रेलगड्डी पर चढ़ता है, घोड़े पर कि डाची पर?"

"पुत्तरजी, जुग समय के चक्कों पर चलते हैं। गाड़ी में सिर्फ़ यात्रा होती है। सफ़र होता है। भला किसी ने देखी है गड्डी!"

गींडे ने हाँक मार दी–"लालाजी, मैंने देखी है। मामे के ब्याह में मैं लाला मूसा गया था।"

"अच्छा है। वाह भला।

"याद रखो, सूरज सारी दुनिया, लोक-परलोक, ऊपर-थल्ले में, धरती-आकाश में सबसे बड़ा है। वह सच्ची-मुच्ची का महाराज है। ब्रह्मांड का सरताज सम्राट है।

"अब सुनो कथा सूरज की धी-धियानी की।

"सूरज ने अपनी धी सूरजा व्याही आकाश को तो सूरज महाराज ने इतनी बड़ी उजियारी चादर धी-जमाई को दी कि वह सारे मंडल में बिछती चली गई।"

चन्नी बोली–"लालाजी, उस चादर का सूत किसने काता था? सूरजा की दादी ने कि नानी ने?"

बेबे निक्की बड़े लाड़ से हँसी–"ले री सुन बन्तिए, अपनी धी की बात! पूछती है, सूत किसने काता था। फिर पूछेगी, उसकी जोड़े की फुल्कारी किसने काढ़ी थी।"

"आगे सुनो–

"चादर आगे-आगे और उस पर ठुमक-ठुमक गउओं के झुंड-के-झुंड। पीछे सुनहले रथ में जुटे थे नीले घोड़े। बारह। एक से एक बाँका। मंडल का शृंगार।"

चन्नी की छोटी बहन छन्नी सूरजा पर अटक गई–"बेबेजी, सूरजा की बाँहों में लाल चूड़े, चाँदी के कलीरे, माथे पर दौनी, सिर पर चौंक-फूल, ऊपर किनारी के बन्दोंवाली ओढ़नी झम्म-झम्म करती। किस रंग का जोड़ा था भला उसका लालाजी? लाल कि गुलाबी?"

"सिरमुनिया, इधर तो आ।"

बेबे ने सिर पर प्यार फेरा–"ले, देख ले लाजवन्तिए, अभी से तेरी धी का दिल

अटका पड़ा है, चूड़े-कंगन में। इसे मंग छोड़ जल्दी से।"

"बारह घोड़ोंवाला रथ चलता रहा–चलता रहा। आकाश और सूरज लगाते चले चक्कर पूरे ब्रह्मांड के चौतरफ़ा।"

"जी, घोड़ों पर पलाने पड़े थे कि काठी सजी थी?"

"मेरी बच्ची, घोड़ों पर पड़े थे सतरंगी पालने और उनके पैरों में हवा की झाँझरें।"

"फिर क्या हुआ लालाजी?"

"सूरजा को लड़का हो गया–अगनकुमार।"

बड़ी-बड़ी आँखोंवाली मिट्ठी की माँ को कुछ दिन पहले लड़का जन्मा था। मिट्ठी ने फ़िकर से पूछा–"अगनकुमार रथ में ही जम्म पड़ा? रथ में कैसे लेटी सूरजा? क्या उसमें मंजी बिछ गई थी?"

चाची महरी ने पीछे से टनोका लगाया–"चुप री, पहले लालाजी की बात सुन।"

मिट्ठी न मुड़ी–"तो और क्या, कोठड़ी-पसार न होगा तो कैसे जापा पाया सूरजा ने?"

चाचियाँ-ताइयाँ ठुड्डियों पर हाथ रखे मन-ही-मन हँसती चलीं। थनों पर फूल उगने लगे।

"पुत्तरो, ध्यान से सुनो। अगनकुमार सूरज वड्डे का धोत्रा और समुद्रों का पोत्रा।"

"जल का पुत्तर अगनकुमार कैसे हुआ लालाजी?"

"अगनकुमार का पिता अन्तरिक्ष और समुद्रों का स्वामी। सो जब जन्मा न अगनकुमार तो नद-नदियाँ बह-बह निकलें। पुत्तरजी, यह अगनकुमार सब देवताओं का सारथि है। और यही अग्नि और यज्ञ का पिता भी।"

"पर जी, अग्नि कहाँ से उपजी?"

"पुत्तरो, अग्नि की उत्पत्ति सुनहले जल से हुई। सोने जैसे रंगवाले सुथरे पवित्र जल से।"

भाई को कन्धे से लगाए भोली बड़ी सोचों में पड़ गई–"लालाजी, यह सुनहला जल गागर में था कि घड़े में? घट काँसी का था कि मिट्टी का?"

लालाजी बच्ची को देख-देख सिर हिलाते रहे, फिर बड़े लाड़ से बोले, "बेटी, यह सुनहला जल गागर में नहीं, घड़े में था। आदि पुरुख की सत्या देखो। कलश से बूँदें गिरीं गागर में और हाड़-मांस के मनुक्ख बन-बन खड़े होने लगे।"

"लालाजी, चन्न मामा की भी कहानी सुनाओ न!"

"पुत्रो, चन्द्रमा अकेला है। इसका कोई संगी-साथी नहीं। इसके कोई आगे-पीछे नहीं। जो मनुक्ख अकेला है, वही इसे साथी मान लेता है।

"चन्द्रमा ऊपर से धरती को देखकर दिल में बड़ा सन्ताप पाता है। पर अपना दुख किसी को नहीं दिखाता। सारे दुख-दर्द अन्दर ही अन्दर पीता रहता है। सो चाँद का कालजा शिलाखंड बन गया है।"

शाहनी ने ठंडा हौका भरा तो चाची महरी का दिल भर आया।

"लालाजी, सूरज की गरमी चाँद को क्यों नहीं पिघलाती?"

"पुत्री, सूरज अपने-आप ही इससे परे रहता है। जानता है न कि अगर चाँद के दुख-सन्ताप पिघल गए तो ब्रह्मांड में प्रलय हो जाएगी।"

"लालाजी, चनाब में दो चन्न कैसे दिखते हैं?"

"पुत्तरजी, चाँद तो एक ही है। दूसरा तो उसका लिशकारा है।

“लो, यह और सुनो।

“ऊपरवाला चन्न और अपना दरिया चनाब दोनों जुड़वाँ भाई हैं।

“सूरजा के ब्याह में जब गगन मंडल में उजियारी चादर पड़ी तो इन दोनों भाइयों की आँखें चौंधियाँ गईं। एक इधर भागा, एक उधर। बस, दोनों बिछुड़ गए।”

“बेबेजी, इनकी माँ ने क्यों न ढूँढ़ा अपने बच्चों को? वह कहाँ थी उस वक्त?”

“बच्ची मेरी, वह चाटी में दूध-दही डाल चुकी थी। मथानी कैसे छोड़ती! बेटों के लिए मक्खन भी तो निकालना था न!”

“जब दोनों बच्चे खो गए तो उसने मक्खन का क्या किया?”

“धिए, उसने घी बना लिया होगा।”

“लालाजी, फिर?”

“बच्चो, दोनों भाई बिछुड़ गए तो एक जहाँ ठिठका था वहीं का वहीं रह गया। दूसरा हिमवान राजा के आँगन में आ गिरा।

“चुप्पा चाँद गुमसुम रहकर ठंडा हो गया और दूसरा जोरावर चंचल टकरा-टकरा बर्फ़ों को तोड़ने लगा।

“हिमवान ने सोचा, इसे पाताल पहुँचा दूँगा, पर यह मनचला लौंकड़ा परबतों से कूद भागा और हमारी धरती पर अठखेलियाँ करने लगा। जोरावरी दिखाने लगा!”

अल्लाहु अकबर
अल्लाहु अकबर
अल्लाहु अकबर
अल्लाहु अकबर
अश्हदुअल्ला इलाह इल्लल्लाह
अश्हदुअल्ला इलाह इल्लल्लाह
अश्हदुअन्न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह
अश्हदुअन्न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह
हय्य अलस्सलाह
हय्य अलस्सलाह
हय्य अलल फ़लाह
हय्य अलल फ़लाह
अस्लातु ख़ैरुम-मिनन्नौम
अस्लातु ख़ैरुम-मिनन्नौम

मसीत में अज़ान और मुर्गे की बाँग एकसाथ। उठो!

घूँ घूँ घूँ बेरियोंवाले कूएँ के गिड़ने की आवाज़ फ़जर के गले में सुरों की लड़ियाँ पिरोने लगी।

शाहनी ने करवट ली और आँखें खोल दीं। वाह गुरु! वाह गुरु! पौ फटने से पहले का सुच्चा अँधेरा ज्यों धरती की जिन्द भर-भर माऽल खींचती हो ज़िन्दगानी के कूएँ से!

अकाल पुरुख मानो बन्दों से कहते हों–लो, और लो, और लो! भर-भर जियो और जी भर-भर अमृत पियो! अन्न-पानी दाते का और कर्म करनेवाला मनुक्ख। सच्चे पादशाह

आपजी के दरबार में कोई कमी नहीं। ऐसा थान-थनान्तर अपने हिस्से आया जहाँ दूध-सा अन्न और अमृत-सा जल। बाबा! तेरी मेहरें, तेरी बरक़तें!

शाहनी ने टँगने पर पड़ी सूथन झाड़कर पहन ली। कुरते के बीड़े लगाए। बाल सहेज धुस्से की 'बुक्कल' मारी, टुक शाहजी की बैठक की ओर देखा और तप्ताए चित्त पौड़ियों से नीचे उतर गई।

ड्योढ़ी का दर ठेला ही था कि हवेली का ऊँचा कपाट खुल गया।

"सलाम शाहनी!"

"सलाम चन्ना। बड़ी-बड़ी उमर हो।"

शाहनी ने नित की तरह तबेले की ओर झाँका। आले में जलते दीवटे की लौ। तीनों घोड़े तैयार पर तैयार।

दोनों चिट्टे शाहजादा और बादशाह चौकन्ने हो ऐसे शुंकारे ज्यों बादल शहबाज़। लाक्खा गुलख़ैर शाहनी को देख हिनहिनाने लगा। जैसे पूछता हो–क्यों शाहनी, दरिया तक जाना है!

न रे, न!

शाहनी पुचकारकर आगे बढ़ी:

"मल्ला, इस लाक्खे का मस्तक तो ऐसा कि कोई वीर सूरमा हो!"

"शाहनी, इसकी शंसा न करो। बड़ा खच्चर है। जान ले कि इसकी काठी पर सवार कोई नया है तो फिर उसकी ख़ैर नहीं। पार के साल आलमगढ़वाले शाह को महीना-भर टकोर करनी पड़ी थी। ले उड़ा सवार नया समझके और मौजोकीवाले टिब्बो से नीचे दे पटका।"

शाहनी हँसी–"सो तो ठीक है नवाब खाँ, पर तुम्हारा तो इससे दिन-रात का साथ है। पहचानता है न तुम्हें!"

नई ब्याई वीर-कुंडी भैंस ने शाहनी को देखा तो तिखूँटा छुड़ाने लगी।

शाहनी ने थापड़ा दिया–"बड़ी गुस्सील है री तू! क्यों नवाब, इसका अफ़रावा कम हुआ?"

"कल आम का अचार और आजवायन डाल दिए थे इसके गत्तावे में!"

शाहनी ने बच्छड़े को सहलाया–"मल्ला इसकी भी मश्क भरी है। आज इसे खट्टी लस्सी में तेल दो। कोई अड़ होगी तो छुड़क जाएगी।"

बेगोवालवाली नई झोटी ने सिर उठाया।

"इस मलका महारानी की उदासी कम हुई? कल दूध दिया था न?"

"थोड़ा ही। बच्चा चुँघता रहा। ज्यों ही अलग किया, दूध ऊपर चढ़ा बैठी।"

शाहनी ने कोने में जा गाय की खुरली देखी। हाथ फेरकर पुचकारा–"यह है न हमारी कपिला गाय।"

"शाहनी, इस चित्र-मित्री के भुलावे में न आना। बड़ी ज़ालिम तल्ख़ है। बच्छा जरा-सा ओझल हुआ नहीं कि सावी पीली हो जाती है।"

शाहनी ने बच्छड़े को सहलाया–"सदके जाऊँ, दो-चार दिन ही माँ की लहर-बहर है, फिर तो ख़ैरों से डाली लग जाएगी।"

"रब्ब ख़ैर करे। टपोसियाँ मारने लगा है। माँ से छूटा और बल्द हुआ।"

तबेले के अँगना पीतल के लशलश करते पंजसेरी गड़वों की क़तार देख शाहनी ने आँखें झुका लीं। दाता तेरी मेहरों से।

शाहनी तबेले से बाहर निकली तो सिर पर अभी भी टिम-टिम तारों की लौ थी।

मियें ख़ाँ के तबेले के आगे दित्ते पहरुए ने खँखारा।

शाहनी दारे के पिछवाड़े से बाहर की ओर हो ली।

बोढ़ के पुराने पेड़ पर पाखियों के झुंड के झुंड। एकाएक शाहनी के पाँव ठिठक गए। साक्खयात अंबड़यालवाली। ब्याह का लाल सुब्बर, गोटेवाला जोड़ा और नाक में सोने का लौंगड़ा!

भय की फाँस शाहनी के कलेजे आ ख़ुबी। आज इतने बरसों बाद–वाह गुरु...वाह गुरु...

शाहनी ने सिर झुकाया और हाथ जोड़ दिए–"पुरखिन, तुम जीने-मरने से परे शाहों के घर की मालकिन। मैं तो चेरी तुम्हारे हुक़्म से।"

शाहनी ने छन-भर बाद आँख खोली तो पहले दीखी पीठ अंबड़यालवाली की, फिर बिना पैरों की परछाईं वह जा और वह जा!

शाहनी के पाँव ऐसे भारी हुए कि किसी ने तन-मन की सत्या खींच ली हो!

बेरियोंवाले कूएँ पर पहुँचते ब्राह्म-मुहूर्त्त की उषा सूरज भगवान का तिलक करती थी। हाथ जोड़कर सिर नवाया–"धन्य प्रभु, तुम्हीं ने यह दिन-रात का मेल मिलाया। ब्रह्मांड का खेल रचाया।"

गाद्दी पर बैठे लद्दे ने शाहनी को ओल की ओर बढ़ते देखा तो दोत्तही से मुँह-सिर लपेट लिया।

कपड़े उतार शाहनी ने बाढ़ पर रखे और ओलू में बैठ मल-मल नहाने लगी। ठीकरी से पाँव रगड़े। मुँह पर पानी के छींटे देते-देते फिर आँखों पर अंबड़यालवाली का परछावाँ उतर आया।

बाल खोल गीले किए और मन-ही-मन कहा–'बहना री, तेरी नज़र रहे सीधी। इस मुँह-चित्त से तेरा नाम कभी मैला नहीं किया!'

स्नान कर शाहनी ने कुटिया जा माथा टेका। पाठ सुना तो चित्त को चैन मिला।

वाह गुरु, आप जानी जान हो।

हाथि कलंम अंगम मसतकि लेखावती।
उरझि रहियो सभ संगि अनूप रुपावती।
उसतति कहनु न जाई मुखहु तुहारिया।
मोही देखि दरसु नानक बलिहारिया।
सन्त सभा महि वैस कि कीरति मै कहाँ।
अरपी समु सींगारु एहु जीउ सभु दिवा।
आस पिआसी सेज सु कंति विछाइए।
हीरहा मसतकि होवै भागु त साजनु पाइए।
सखी काजल हार तंबोल सभे कुछ साजिया
सोलह कीए सींगारु कि अंजनु पाजिया
जे घर आवे कंतु त सभु कुछ पाइए
हीरहा कंते बाझु सींगारु सभु बिरथा जाइए
जिस घर बसिआ कंतु सा वड्ड भागणे
तिस बणिया सभु सींगारु सोई सुहागने।

सतवचन, सतवचन! चैन पा शाहनी ने गुरु के दरबार में शीश नवाया और देहरी

की धूल माथे लगाकर घर की ओर चली!

धर्मशाला के आगे अराइयों की क़तार सब्ज़ी-वक्खर का ढेर लगाए बैठी थी।

"आओ शाहनी, आओ!"

"इधर आने दे री जवाहराँ, बोहनी करने दे। लो शाहनी, यह कनके की मूलियाँ!"

हुकम बीबी ने सरसों का साग आगे किया:

"लो शाहनी, रुत का मेवा हरा करो!"

फ़तेह ने काले भट्ट बैंगन आगे किए:

"शाहनी, पराहुनों के लिए ही ले जाओ!"

शाहनी ने साग-सब्ज़ी झोली में डलवा टुक अलिए की धी फ़तेह को देखा। चिट्टा दूध कश्मीरी रंग। पीडा गदराया बदन। ओढ़नी तले जवानी का थर बँधा हुआ। देखकर जी की भूख उतरे।

"फ़तेह री, ज़रा आना दुपहरीं हवेली की ओर।"

"हला शाहनी!"

उत्तरी वंडवाली नज़ाम बीबी ने टोहका दिया–"हैं री, झोली बड़ी कर ले। जा रही हो तो घाटे में क्यों रहो!"

फ़तेह मिश्री-मिश्री हँसने लगी। फिर हाँक दी–"ले लो री नरम मुलायम टींडे, कनके की सोहली मूलियाँ!"

नज़ाम बीबी ने छेड़ा–"अरी सहेलड़ी, सब लूणा-मीठा कच्चा-पक्का आज ही न बेच जाना। अभी उम्र पड़ी है री!"

शाहनी जंजघर के सामने पहुँची तो सिर का कपड़ा माथे तक खींच लिया, तावली-तावली लोहारों की गली से हवेली जा निकली।

ड्योढ़ी से ऊपर चढ़ी तो आले में जलता दीवा देखकर पाँव थिड़क गया। सहमकर आवाज़ दी–"माँबीबी, चित्त-चेता तो ठिकाने है। दिन-चढ़े ढिवटे की लौ जलती छोड़ दी! सूरज उगे पीछे दीपक की निरादरी! बक्शना महाराज! न सूरज बिन दिन सजे, न दीपक बिन रात!"

शाहनी चूल्हे-चौके लगी तो करतारो ने काँसी के बरतन नितारकर चौंकी पर लगा दिए।

शाहनी ने दूधारने से उपले की आँच ली और दरलाटों पर उपले रख चूल्हा लहका दिया।

दूध की कड़ाही ऊपर रखकर करतारो को चेताया–"ध्यान रखना करतारो, दूध धुआँखा न जाए।"

शाहनी दूध बिलोने बैठी तो मथानी के दूधीले सुर चौके के दर-भित्तियों से लग-लग गूँजने लगे। दूध-कणियाँ चाटी से बाहर बिखरने लगीं।

चाटी में हाथ डाला। अभी तो कणी काच्ची है।

"करतारो बल्ली, कोसा पानी देना। ज़रा छींटा दूँ।"

मक्खन के पेड़े तौलबाज़ में रख चाटी पर सुथरा पोना डाला कि शाहजी आन पधारे!

आसन पर बैठे तो शाहनी बोली–"मैंने कहा जी, सयाले-सयाले अपनी कूईं पर

नहा लिया करें।"

"न शाहनी, अपने स्नान तो अपने पुरखे दरिया में ही। तुम ऊपरवाले चह-बच्चे पर क्यों नहीं नहातीं? बेबे के रहते तो सजी रहती थी यह कूईं।"

शाहनी बूझ गई, शाहजी को माँ याद आई है। सुरगों में वास बड़ी सरकार का। नहाती देह की झाल न झेली जाती थी। जितना रूप उतना दक्ख!

"यहीं जहाँ बैठी हो न शाहनी, सुबह प्रभाती माँ का चूड़ा छनकारने लगता। मैं और काशी पड़े-पड़े पसार में पहाड़े याद करते। बस, मथानी के थमते ही मक्खन-मिश्री को पहुँच जाते। बेबे मक्खन पर मिश्री-बादाम बुरकती, ऊपर से लस्सी का कटोरा पी तबेले में जा घोड़े खोल लेते!"

"जी, कहाँ गईं वे सुहावनी घड़ियाँ और कहाँ गईं वे मीठी परछाइयाँ! रब्ब खैर करे शाहजी, मैं तो आज बड़ा डर गई हूँ!"

शाहजी देखते-भर रहे।

"आज मुँह-अँधेरे मसीत के मोड़ पर बड़ी को देखा। झलमल करते कपड़े। साक्खयात देह ओढ़कर..."

शाहजी खड़े हुए–"दूध-दही सँभाल ज़रा अन्दर आना शाहनी।"

शाहनी ने परात बेसन की भर दी। घी का मोन दिया। चुटकी-भर नमक और अजवायन।

"करतारी, बेसन ढीला न करना। गूँथकर तन्दूर तपा दे। मैं अभी आई।"

"शाहनी, सोचा, तुम भरम करोगी–तुमसे कहा नहीं। पिछले पक्ख गौरजा मुझे भी सपने में आई।"

शाहनी डर से काँपने लगी।

"शाहजी, सपने में कैसे दीखी–कुछ बोली?"

शाहजी जाने कैसी अँखियों से शाहनी को देखते रहे, जैसे दो-चित्त हों–कहें न कहें!

"मुझमें बड़ी तृष्णा थी। साथ रही इने-गिने दिन। जब सपने में दीखती है बस यही–शाहजी, मेरा जातक कहाँ है! कुल वंश में कौन आगे, कौन पीछे! कहकर हँसती है और ओझल हो जाती है!"

शाहनी रोने लगी। बार-बार आँचल से आँखें पोंछने लगी।

"इस घर रब्ब का दिया बहुत-कुछ, पर मैं ही इम्तहान में ख़री नहीं उतरी।"

"शाहनी, प्रारब्ध के आगे किसी का बस नहीं। मेरी मानो तो उनके कुनबे से किसी लड़की का ब्याह अपने हाथों कर छोड़।"

छन-भर को तो शाहनी का दिल दहल गया। फिर झटपट सँभलकर कहा–"मेरी मानो शाहजी, तो एक लड़का गोद ले लो!"

शाहजी शाहनी की पीड़ समझे। पुचकारकर कहा–"ये निर्णय-फ़ैसले तुम्हारे हाथ। जो मन को रुचे, वह करो।"

वचन सुन शाहनी का मन परच गया। सिर हिलाकर बोली–"सयानफ़ आपकी, मैं किस जोग!"

शाहजी कुछ कहने को हुए, फिर ओठों-ही-ओठों में हँसकर रह गए।

शाहनी चौकन्नी हुई–"शाहजी, मुँह तक आई को क्या रोकना!"

"शाहनी, एक बार आँखें मीट लेने पर कौन अपना और कौन पराया! कुल चलाने

को बेटे की लोक-रीत चली आई है।"

शाहनी का दिल तो ऐसा उमड़ा कि रो-रो शाहजी के गले जा लगे, पर ठिठकी-सी अपने धनी को देखती चली।

फिर क़दम उठाया। दहलीज़ तक जाकर मुड़ी–"बेसन की तन्दूरी खा लोगे न!"

सिर हिला दिया–हाँ।

शाहजी तकते रहे और शाहनी दहलीज़ लाँघ गई। चाल में संकल्प ऐसा कि विधि से निपटारा करना हो। आलमगढ़ियों की यह धी जितनी ऊपर उतनी अन्दर। माँ शाहनी की ऐसी कि निरी नर्म छाल और पिता ऐसा कड़ा कठोर कि पीडा पक्का तना हो पुराने बोढ़ का!

लोहड़ी से पहले शाहनी ने 'त्रिजन' बिठाया, तो पिंड में धूम मच गई। नीचे के तद्दरे लीप-पोत सुथरे किए। दिन-भर शाहों के घर गहमा-गहमी मची रही कि घर में कोई ढंग पज्ज हो।

त्रिकाल बेला शाहनी ने दिवटों में तेल डाल बाती की। एक-दूजे को लौ दिखाई, और हाथ जोड़ सिर नवाया:

दीवा जले
दुश्मन टले
रिज़क का छींटा
अन्दर पड़े
दीपक तेल
बिछुड़े मेल

चाची महरी ने लौ को हाथ जोड़ माथे से छुआ लिया:

सन्ध्या पड़ी उतारनी
मेरे सगले दोक्ख निवारणी।

"बच्ची, तनिक नीचे चल के देख तो ले। तद्दरों में लड़कियों के चरखे समा तो जाएँगे। हाँ; माँबीबी, रजाइयोंवाली कोठरी से खेस-दोत्तहिया तो निकाल ले। लड़कियाँ पाले ही न ठर जाएँ।"

माँबीबी दुपहर से चाची के फ़रमान सुन रही थी। खीझकर कहा, "अपनी अकल-बुद्ध पर तो भरोसा नहीं चाची, पर तेरी नज़र पर ज़रूर है!"

"हला री हला, तेरा किया-धिया भी देख लेते हैं। आ बच्ची, ज़रा नज़र मार ले!"

तीनों नीचे पहुँचीं तो हाथ की लौ से लम्बा दालान हल्के-हल्के लिशकारे-सा झिलमिलाया। सर्द-खाने की दीवार पर हरे-गुलाबी रंग फड़फड़ाने लगे।

शाहनी ख़ुश हुई–"यह क्या पूर दिया माँबीबी!"

चाची ने पास ढुक देखा–"वाह री वाह! क्या मोर-मोरनी, यह पंछियों का सैयद कबूतर! कबूतरी! ये कूँजों की डार!"

"चाची, और देखो। यह मोतिए का बूटा। ये बल्द। यह झोटी। और लो यह चाँद-सूरज की जोड़ी।"

शाहनी की प्यासी अँखियों में जोतें जलने लगीं। मन के त्रास को लम्बा श्वास ले अन्दर खींच लिया।

चाची महरी ने शाहनी के कन्धे पर हाथ रखा–"बच्ची, कुछ ऐसा भासता है इस पल कि घर में त्रिंजन से पहले ही लाल तेरा तद्दरों में खेलता हो।"

शाहनी ने दहलीज़ की ओर मुँह मोड़ लिया।

माँबीबी चाची से बोली–"सौंह रब्ब की चाची, मैं आँकने से पहले विचारने न बैठी थी। ये सोहणी मूरतें आप ही हाथ से पुर गई हैं। अल्लाह बेली हमारी भी सुनेगा न!"

"उसी के हजूर में अर्ज़ कर, इस घर भी बच्चड़े खेलें।"

"चाची, बाबा फ़रीद जिनकी अल्ल के पुरखा हों, उन पर क्यों न मेहर होगी! क्यों न झोली भरेगी!"

शाहनी ने ऊपर बनेरे पर से आवाज़ दी–"माँबीबी, मेरे चरख़े की माल तो देख ले, त्रकला तो नहीं कहीं बिंध पड़ा!"

"हला शाहनी!"

माँबीबी चाची महरी की ओर मुड़ी–"चाची, शाहनी को किसी पीर-सयाने के पास ले जाओ। ख़बरे क्या बात है। कँई दिन से अन्दर-बाहर जाती शाहनी अँखियाँ पोंछती रहती है। लम्बे-लम्बे श्वास लेती है। चलती है तो ऐसे जिमि कोई ऊँची मुँडेर फलाँगनी हो!"

ठुड्डी पर हाथ रखे चाची सिर हिलाती रही।

दोनों ऊपर पहुँचीं, तो हाथ में गेंदे का फूल लिए करतारो हँस-हँस इतराती थी!

"क्यों री, सद्दा दे आई है त्रिंजन का?"

"कहाँ चाची, अभी तो उत्तरी वंड सारी पड़ी है।"

"सिरसड़ी! अरी कुछ भूख-प्यास हो तो खाकर सद्दा पूरा कर आ!"

"शाहनी, दूध में मखाने डाल दे तो जी हरा हो जाए।"

चाची ने झिड़क दिया–"क्यों री, यह तो कह, फुल्ल गेंदुवा कहाँ से ले आई?'

"कुटिया से लाई हूँ, कुटिया से।"

"मरगई, वहाँ किसे बुलाने गई थी?"

निःशंक हो करतारो ऐसे हँसी कि हाथ से बरतन चमकाती हो–"चाची, मैं कुटिया गई थी माथा टेकने। भाईजी ने प्रकाश किया, वाक निकाला। धूल माथे लगाई तो झोली में यह फूल आ गिरा। समझ ले चाची, मेरे हक़ में कोई अच्छी बात होनेवाली है।"

"नासहोनी, अरी लगाम दे मुँह पर।"

करतारो चाची से मशकरी करने लगी–"मुझे कोसती हो, मेरे साथ की तो क़बीलदारनें होकर बैठी हैं!"

"चुप री, कौन तू बीस-बाईस के पेटे में पहुँच गई है। सहारा कर। तेरा भी लाड़ा किसी दिन आन पहुँचेगा।"

"चाची, मैं तो कब के ड्योढ़े-सवाए पार कर चुकी!"

नवाब और मुहम्मदीन दूध-भरे गड़वे ऊपर ले आए।

"लो शाहनी, ख़ैरों से झोटी ने आज कोई टंटा-बखेड़ा नहीं किया। हाँ, करतारो बहन, बड़ी लहरों-बहरों में! दूध का कटोरा मुँह से लगाए बैठी हो; क्या पैंडा मारकर आई हो!"

"वीरा, मैं तुम्हें नहीं सुहाती पर मेरे कटोरे को नज़र न लगा!"

शाहनी ने पुचकारा–"उठ करतारो, त्रिकलाँ उतर आई। दिलबाग़ को साथ ले जा

और बुलावा पूरा कर आ।"

"दिलबाग़ से माथा कौन खपाएगा शाहनी! दोनों कानों से डोरा है।"

चाची ने झिड़का–"चुप री, डोरा है तो कौन रास्ते में उसने अर्ज़ी-परचा करना है! जा।"

"चाची, मुहम्मदीन को मेरे साथ कर दो तो हवा-सी परतूँगी।"

"नवाब तेरा वैरी है क्या?"

"चाची, आज है मेरा अच्छा दिहाड़ा। नवाब के लग्न हैं ठंडे। इसकी तो हर सयाले मँगनी टूटती है।"

चाची हँसने लगी–"तेरे फेरों से पहले इसने निकाह पढ़ा लिया, तो मुँह छिपाती फिरेगी।"

निकाह के नाम से नवाब की रूह टपकने लगी–"तेरे मुँह घी-शक्कर, चाची!"

"मैंने कहा, माँबीबी, कोई साक-रिश्ता दौलतगढ़ से ही ले आ। चूड़ी-छल्ला शाहनी घड़वा देगी, और देग-चंगेर शाहजी कर देंगे। अरे, पल्ले हों दमड़े तो रात सोने से पहले सजे ब्याह।"

माँबीबी नवाब की ओर देख-देख हँसी–"जम्मीवाले जुलाहों के घर नवाब का कौड़ी फेरा। कोई है उम्मीद इस जोड़-मेल की!"

नवाब झेंप गया।

"माँबीबी, सैयदा बड़ी टपोनी चंचला है।"

चाची ने घुड़का–"कुछ शरम कर रे! उमर हो गई घोड़ों को टपोसियाँ लगवाते और ले-देके एक लड़की तेरे काबू नहीं!"

नवाब ने पैरीपौना बुला दिया–"चाची, तेरी सीख-असीस से ही बेड़ा पार होगा।"

हुसैना नायन आई तो खोजों की रेशमा का चरख़ा साथ ले आई।

शाहनी बोली–"हुसैना री, ज़रा बाबो मिरासन को आवाज़ देना। आकर रौनक लगाएगी। कुड़ियों का दिल ख़ुश करेगी।"

नीचे लम्बे पसार में चरख़ों और पीढ़ियों की क़तारें सज गईं। बीच में रुई से भरी पिटारियाँ।

नाक-कानों से दमकती नई ब्याहियाँ। भर-जवानी में गोता मारने को तैयार चुलबुली शोख मुटियारें और उठती उम्रें खिलखिल करती कँवारियाँ।

चाची महरी ने हाँकें मार-मार माँबीबी-करतारो को थका दिया–"दोनोंवाली चंगेर उठा ला। गुड़ की पिन्नियोंवाली भी। सीलम के मरुंडे भूल आई? शीरनी का थाल कहाँ है?"

लड़कियाँ हँस-हँस माँबीबी को छेड़ने लगीं–"माँबीबी, अपनी सोहणी मोहनी मूरत भी चंगेर में सजा ला!"

"हाय री, आप ही आ गई। अपना ढोल भी लेती आती। हम भी देखते।"

"कुड़ियो-चिड़ियो, आज तो ख़ैरों से भोरे बैठी हो। हँसो-खेलो, पर कातना न भूलो।"

लड़कियाँ खिड़खिड़ हँसती रहीं और एक-दूजे को धौल-धप्पे देती रहीं।

शाहनी अपनी पीढ़ी पर बैठी तो रेशमा चहकी, "सूत नहीं, शाहनी पट्ट कातती है।"

"क्यों न हो! जो पट्ट पहने सो पट्ट काते।"

नूरी ने झुझका दिया, "क्यों री रेशमा, तुम्हें भी अराइयों की राबयाँ की लत लग गई! देखा-देखी बन्द जोड़ने लगी!"

शाहनी ने नज़र फिराई–"क्यों री, राबयाँ और फ़तेह क्यों ने आईं? जा री नियामते, नवाब को आवाज़ दे! बहनों को बुला लाएगा। कहना, चरख़े लाना न भूलें।"

नियामते उठी ही थी कि दोनों बहनें आन पहुँचीं।

"बड़ी उम्रें तुम्हारी! चरख़े लाई हो न?"

"जी शाहनी:

रूँई बिन पिंजन कैसा
चरख़े बिन त्रिंजन कैसा!"

चाची महरी ने ख़ुश होकर बलैयाँ ले लीं–"मैं सदके, मैं वारी राबयाँ! कैसे-कैसे बोल जोड़ लेती हो! हाँ री माँबीबी, छाजों में छः-छः पूनियों के छोपे डालो।"

चिड़ों की बिम्बो चहकी, "अरी माँ-बाप जाइयो, अपनी-अपनी पूनी छुओ। दित्ते पहरुए की डाँग खड़कने लगी है।"

घूँ...घूँ...घूँ...घूँ...एक संग चरख़ों के हत्थे घूमने लगे और तक़लों से तार निकलने लगे।

"देख री देख, शाहनी की तार देख! महीन ऐसी कि सिर का बाल हो!"

चाची ने घुड़क दिया–"चुप री, अपना-अपना देखो और अपना-अपना कातो।"

लड़कियाँ हँसने लगीं–"चाची, हम क्या नज़र लगाती हैं!"

पिटारियों में सूत के मुंडे मटकने लगे। 'छोपों' के ढेर हल्के होने लगे।

कम्मो बोली–"बहना बाबो, क्यों चुप बैठी हो? शाहनीजी, बाबो से कहो–कुछ सुनाए!"

गुच्छा-भर आवाज़ें चहकीं–"'हीर' बाबो, 'हीर'!"

चाची महरी बोली, "सुना दे लड़कियों को, पर ज़रा हौली। तेरे गले का टंकार तो, री, छत्त हिला देता है। ख़ैरों से ऊपर मर्द पौड़ते हैं।"

बाबो बुड़बुड़ाने लगी, "लो सुनो लोको, चाची की शर्तें! गला भींचकर तो सयापे के 'वैण' नहीं उठते, यह तो सुक्खी-साँदी वारसशाह की 'हीर' है।

"कत्ता क़लाम माफ़–तख़्त हज़ारे के राँझे मरद ने सयालों की हीर खिला-रुला डाली–वारसशाह ने हीर गा-गा मुहब्बतें सजा डालीं–निगोड़ अपने ही मर्द हीर के सुर नहीं पहचानते। अरी शाहनियो, हीर सुनकर तो ज़िन्द जाग उठती है!"

"हुआ री हुआ, अब नखरे न कर। कवित्त उठा।"

"लो सुनो लड़कियो:

डोली चढ़दया मारियाँ हीर चीकाँ
मैनू लै चल बाबला लै चलो वे
मैनू रख लै बाबला हीर आखे
डोली छत्त कहार नी लै चल वे।
साडा बोलना-चालना माफ़ करना
पंज रोज़ तेरे घर रहे चले वे।"

शाहनी की अँखियाँ भर आईं। माँबीबी चुप-चुप हौके भरती रही। मदमाती चिड़ियों की आँखें बाबो के मुखड़े पर टिकी रहीं।

चाची महरी वैराग से बोली, "रब्ब राक्खा! रब्ब रक्खया करे तो आशिक़ी परवान चढ़े।"

अरोड़ों की मिहंदी हँसने लगी–"लो, और सुनो चाची की! प्रीत-प्यार के क़िस्सों में रब्ब का क्या जोड़!"

"चुप री, छोटा मुँह बड़ी बात! रब्ब रखवाला न हो आशिक़ों का तो मुहब्बतें तोड़ नहीं चढ़तीं। चनाब पार करनेवाले घड़े ही गल जाते हैं।"

बाबो ने सुर उठाया:

"अव्वल हमद खुदा दा विरद कीजे
इश्क़ कीता सू जग दा मूल मियाँ
पहला आप ही रब्ब ने इश्क़ कीता
तो माशूक़ है नबी रसूल मियाँ
इश्क़ पीर फ़कीर दा मरतबा ए
मरद इश्क़ दा भला रंजूल सजूल मियाँ
इश्क़ वास्ते रब्ब हबीब उत्ते
कीता आप फ़रमान नजूल मियाँ।"

बाबो ने लड़कियों को गुमसुम देखा तो टिटकारी ली–"कँवारियो-ध्यानियो, अभी से क्या चिन्ता-फ़िकर! जो आँख वक़्त से लड़ेगी वह अल्लाह के फ़ज़ल से तोड़ भी जा चढ़ेगी।"

पूनी की आधी तार थामे हरबंसो टुकर-टुकर बाबो की ओर देखती चली।

"किन सोचों में मेरी लाड़ो, अभी तो ख़ैरों से बौर ही नहीं पड़ा!"

हरबंसो ने हथेलियों में मुँह छिपा लिया।

रसूली ने हँस-हँस मुरकियाँ हिलाईं–"बाबो बहनी, हमेश यह छेड़छाड़ अच्छी नहीं।"

माँबीबी ने चाची महरी के माथे पर तेवर देखे तो हाथ से वर्ज दिया:

"छोड़ दे यह प्रसंग। कुछ और गा।"

बाबो ने सुहाग उठा लिया:

"बीबी चन्नन दे ओले-ओले क्यों खड़ी
जी मैं खड़ी साँ बाबुल जी दे पास
बाबुल वर ढूँढ़ियो!"

न किसी की मँगनी, न ब्याह और बाबो मरियम सुहाग गाने चढ़ आई!

शाहनी उठी और बाबो के लिए दूध का छन्ना भर लाई।

"लो, घूँट भर ज़रा गला हरा कर लो। इतने लड़कियाँ कुछ गाती-सुनाती हैं।"

किसी ने आवाज लगाई:

"फ़ातमा बहन, नबी रसूलवाली घोड़ी गा दो। बड़ी मनभानी है।"

"मेरे वीर का सेहरा आया
कोई माली गूँथ ले आया
उत्ते छत्र नबी का सोहवे
सालयात या अली।"

इतना गाकर फ़ातमा मुकर गई।

"सहेलियो, कौल रहा। फिर कभी गाऊँगी। भाई मेरा परतेगा होती मरदान से,

तो पूरे टंकार से गाऊँगी।”

चाची महरी ने बलैयाँ ले डाली:

“सातों ख़ैरें तेरे भाई की धिया! शौकत अपनी छाती सजाकर आएगा!”

“और मेरा भी चाची...?”

ज़फ़र की सबसे निक्कड़ी बहन अकबरी बोली।

शाहनी का जी उमड़ आया। गुड़ उठा अकबरी की झोली में डाला:

“जियें वीर सब बहनों के री! मुँह मीठा कर मेरी बच्ची!”

“सुनते हैं री, ज़फ़र चीना पहुँचा हुआ है!”

“न चाची, उसकी पलटन लंडीकोतल है। वज़ीरियों से लड़ाई लड़ने गया है।”

“ख़ैर सदके, गज्ज-वज्ज के आएगा।”

“सुनाओ री, कोई सोहणी-महीवाल गाओ। फ़तेह री, सुनाओ न!”

काले झग्गे पर मटमैली ओढ़नी। मुखड़ा-तसवीर घड़ी हुई। फ़तेह का एक हाथ चरख़े की हत्थी पर, दूसरा ठुड्डी-तले:

“यार-यार तू पई पुकारनी ऐ जेकर जान कहे महीवाल माए
मेरा रब्ब रसूल ते ख़ास काबा जे इमान कहे महीवाल माए
वाली वारस जो जहान अन्दर मेरा ख़ान कहे महीवाल माए
फ़ज़ल शाह यार तो जान फ़िदा मेरी, मेरा तान कहे महीवाल माए।”

सबकी आँखें शेख़ों की बहाराँ की ओर उठ गईं। तत्ती सैयदजादड़ी लगा बैठी दिल रँगरेज़ से!

“अरी राबयाँ, कुछ तू भी सुना न! लोक-जहान धूम है, तू बैंतबाजी करती है।”

शाहनी राबयाँ की सूरत पर रीझती रही। अराइयों के घर ऐसा सुच्चा रूप!

राबयाँ अनझिपी आँखों शाहनी की ओर देखती रही, ज्यों शाहनी कोई मूरत हो! लौ का बूटा हो!

“लो, सुनो:

दीवे की मिट्टी लौ चरख़े राँगले
गोरी चिट्टी मुटियारें जैसे चान्नने
पोह माह के पाले डाडे ठारने
भोरे बैठी शाहनी सूत सँवारने।”

“रक्ख साईं की राबयाँ री, तुम्हें रब्ब की देन! कुछ और कह मेरी बच्ची!”

“शाह कूएँ की माल
भर-भर पानी लाए
शाहनी घर की रानी
मनचाहा वरताए।”

सुनकर शाहनी का अन्दर-बाहर हुलस गया। गले से बुगतियोंवाला नामा उतार हाथ में थमा दिया।

“ले ले री, शाहनी ख़ुशी-ख़ुशी देती है! सँभाल के रख ले। सासरे जाएगी तो पहनना।”

कुड़ियाँ ले-ले हाथ में देखने लगीं।

“हाय री, किस पटोवे ने पिरोया! बीच में हौर्ददली का सुच्चा पत्थर। राबी री, तेरा सौदागर घोड़े पर चढ़ पहुँचा ही समझो। शाहनी के हाथों तेरा सगुण चंगा हुआ!”

एकाएक चाची महरी ने आँख की छड़ घुमा दी–"अरी गुड़ की भेलियो, तुम्हारे चुगने के लिए चोग की चंगेरें भरी हैं। कातोगी नहीं तो खाओगी क्या! हाथ न चला और ज़बान ही चली, तो सूत की पिटारियाँ ख़ाली भिनभिनाएँगी और देख उन्हें तुम्हारी माँएँ बुड़बुड़ाएँगी। तुम्हें कातने को भेजा है त्रिंजन में।"

भाई रे बाँके चीरेवाले
दमड़ा तो इक देता जा
मोह माई दे के जा
दाढ़ी फुल्ल पवा के जा

"बस, जातको! यह लो फल-फूल और ख़लासी करो।"
"ख़लासी कैसी!"
"हमें तो टके चाहिएँ।"
"न टाबरो, झूठी बात।"
"हमें तो पैसे चाहिएँ।"
"हमें तो धेले चाहिएँ।"
"लो, हाथ करो..."
बच्चों में शोर मच गया–"धेला...पैसा...दमड़ी..."
छोटे-छोटे लड़के-लड़कियाँ टोलियों में घर-घर ढूकने लगे। जिस घर शादी-ब्याह हुआ हो, नई-नवेली आई हो, जिस घर झोली लाल पड़े हों, उनके दर पर जाकर:

"भरी मिले भई भरी मिले
लाडलों की भरी मिले।"

शानो की माँ ने टोली में अपनी धी को देखा तो लड़की की चुटिया खींच एक धौल दिया–"कख न जाए तेरा कोई वक्त-वेला भी! मार सात दिन से पिंड का चप्पा-चप्पा गाह मारा। न रोटी-टुक्कर की होश, न कामकाज की। कल पसार की लिपाई करना।"
बच्चों ने हेक उठा ली:

"करेगी भई करेगी
शानो लिपाई करेगी
झोलियाँ पसार लो
शानो की माँ भरेगी!"

"दुर्...दुर्...परे हटो!"
शानो की माँ ने बच्चों को ऐसे भगाया ज्यों कुत्तों को फटकारती हो।
बच्चे हँसने लगे:

"आएगी भई आएगी
इस घर लोहड़ी आएगी
आनेवाली लोहड़ी पर
शानो की माँ गोदी में
बच्चड़ा खिलाएगी
अरी तेरा गीगड़ा जीए

शानो का वीरड़ा जीए!"

शानो की माँ के तेवर धुलकर थनों में पसर गए। झूठ-मूठ का गुस्सा दिखाया–"अरे, कुछ शरम करो! लाज करो!"

मूठ-भर मक्का के दाने बाँट दिए और शानो को बाँह से पकड़कर झुझका दिया–"सिरमुनिया, इन खरुदियों के साथ तू भी बकारा करती है!"

फिर लड़की को लाड़ से धक्का दिया–"जा, मैं आप ही लिपाई कर लूँगी। त्रिकालाँ से पहले-पहले लौट आना।"

दहलीज़ पर खड़ी-खड़ी शानो की माँ बच्चड़ों का शोर सुनती रही:

"अरी तेरा लाडला जिए
सात ख़ैरों से जिए!"

पसार में जा लकड़ी की पेटी खोली और अपने ब्याह का सुच्चा जोड़ा मंजी पर फैला दिया।

हाय री, तुझे पहले चित्त-चेता न आया। इसे धूप लगा देती। ख़ैर सदके, निगोड़ी यह आँख तो फड़कती है। क्या पता शानो का भाईया बरस-वरस के दिन आ पहुँचे पटना साहिब से!

छातियों-तले बेफ़िक्री से पसरे पेट को छुआ, सिर पर हाथ फेरा।

शुक्र है, सिर में घी नहीं रचाया। शानो का भाईया इस गन्ध पर बड़ा नाक-मुँह चढ़ाता है। वाहगुरु किए जना आन ही पहुँचा तो सिर धोने को हाथ-पैर तो न पड़ जाएँगे।

त्रिकालाँ उतरते ही गाँव में लोहड़ी की गहमा-गहमी मच गई। भरियों के ढेर जंजघर में इकट्ठे होने लगे।

ख़ुले आँगन में उपलों के ऊँचे ढेर पर लकड़ियों के अम्बार सजने लगे। पहले मुंड़, फिर कीकर-बेरी के गट्ठर। ऊपर कपास की सूखी मनछिट्टी।

ख़ुशियोंवाले घरों से चंगेरें आने लगीं। मक्का के फूल। गुड़ की भेलियाँ। रेवड़ियाँ। चावल-तिल की त्रिचौली। कच्ची लस्सी के गडुवे और मूलियों-भरी पच्छियाँ।

शाहों के घर से उम्दा नायन मेहँदी-घुली परात उठा लाई। साथ आईं गरमाई की चंगेरें। मसाले का गुड़ और उड़द की दाल की पिन्नियाँ।

जोतें जगते ही जनानियों-बच्चों का शोर जंजघर को गुँजाने लगा।

कोई नवेली पहन आई सलमे-जड़ा मखमल का लाल जोड़ा। किसी ने पहना हरे रंग की काबुली दरियाई का। किसी ने बाँकड़ी के जालवाली गुलाबी ओढ़नी। किसी ने मूँगिया खद्दर पर टँका सुनहरी गोखरू। कोई सास की प्यारी ओढ़ आई फुलकारी चीरमे फूल की। कोई बबोए और कौड़ीवाली।

काले कोच्छड़ों की गोरी बहूटी पार्वती बन्दोंवाली केसरी ओढ़नी ओढ़ इतरा-इतरा जाए।

मोहरसिंह की घरवाली छुहारेवाली बूटी का जोड़ा पहन निक्का-निक्का शरमाए।

सुनहरी भरावे बाग फुलकारियाँ ओढ़े देवरानी के साथ शाहनी पहुँची तो सभा का सिंगार बन-बन फबने लगी।

बड़ी-बुढ़ेरियाँ चिट्टे दुपट्टों में पक्की खेतियों-सी अपने-अपने टब्बर-क़बीलों के

संग ऐसे दिखें जैसे कोई भू-दात्रियाँ हों!

जंजघर के दालान में मंजी-पीढ़ियों पर बैठीं सजरी माँएँ ओढ़नियों-तले बच्चों को दूध चुँगाने लगीं। छोटे-बड़े घूँघटोंवाली दुलहनें कभी टीका सँवारें, कभी सिंगारपट्टी। कोई पाउँचियों के कुल्फ़ कसे, कोई नन्द-जेठानियों से घिरी सहेलियों को चुपके-चुपके सैनत मारे।

मोहरे की बेबे बहू को साथ लिवा लाई, और सबको दिखा-सुना पुचकारकर बोली–"बैठ मेरी बच्ची, ज़रा हँस-खेल।"

बचनो ने टुक कपड़ा ऊपर उठाया तो नवेलियाँ मुँह-ही-मुँह में हँसने लगीं।

प्यारे की बहू मुँहफट्टी में मशहूर–"बेबे, अच्छा किया जो यहाँ ला बिठाया। तुमसे दूर बैठेगी तो कुछ तो जी बहलेगा इसका।"

बेबे ने अनसुना कर अपनी जोड़ीदारों की तरफ़ मुँह मोड़ लिया।

"बधाइयाँ, बधाइयाँ! मोहरे की बेबे, सुखी-साँदी बहूटी को पहली लोहड़ी आई है।"

देवे ख़ुल्लर की बहूटी गुलाबी जोड़े में, गहने-गट्टे से लदी-फदी घूँघटा निकाले आई तो बारी-बारी सब सयानियों को पैरीपौना किया।

चाची महरी ने माथा चूम लिया–"मैं बलिहारी जाऊँ! हैं री, रंग ऐसा उजला कि हाथ लगे मैला हो!"

शाहनी ने सिरवारना कर झोली में गरी-छुहारे का सगुण डाल दिया।

ख़ुल्लरों की बेबे को आवाज़ दे कहा–"बेबे, बहू क्या है चन्न चढ़ा हुआ है!"

"तेरे पैरों का सदका धिया!"

हाथ में पकड़ी गुत्थी से भनकड़ निकाल शाहनी बच्चों का सिरवारना करती जाए।

छोटी शाहनी बिन्द्रादई ने मायावन्ती के लड़के को गोद में लेकर पूछा–"क्यों री, इसका मुहांदरा किस पर?"

"दादी पर है, अपनी दादी पर। इसी से ख़ुश होती है सास मेरी!"

साक्खयात स्वयंभू और सतरूपा-से वड्डे लाला और निक्की बेबे आन विराजे। सब छोटे-बड़े उठ-उठकर पैरीपौना करें और आशीष लें।

काबुलवाले बधावासिंह और बुद्धसिंह। गंडासिंह, गुरुदित्तसिंह, ताया तुफ़ैलसिंह। अरबी घोड़े-सा लश-लश करता शाहों का चचेरा भाई तारेशाह। तीखे-तराशे नक्श शाहजी के और मुग़ल तातारी रंग!

छोटे भाई काशीराम का चौड़ा मस्तक और चेहरे पर कहीं-कहीं निशान पहाड़ोंवाली के।

कृपाराम की मूँछें ऐसी कि मुँह पर दो पाखी बैठे हों।

पिंड का पिंड वड्डे लाला की मंजी के पास आ ढुका।

"लालाजी, नहरों से भागमल्ल, रणमल्ल, बिक्रममल्ल, लाब्बामल्ल क्यों न आ गए!"

बेबे निक्की झट दिशी बोल उठीं, "पुत्तरा, सारी प्रजा के नाम गिना डालेगा क्या! ख़ैर सदके, बड़ा चन्नमल जो माजूद है। छोटों को अपनी जिवियों पर रंग लाने दो!"

कृपाराम ने आगे झुक निक्की बेबे के घुटने छू लिए–"बेबे, मेरे कहे का भरम न करना। तुम्हारा पुत्र हूँ। पिंड का पिंड तुम्हारा है तो भला भागमल्ल-बिक्रममल्ल को किसी की नजरें क्यों लगने लगीं!"

बेबे ने पीठ पर हाथ फेरा–"सच कहता है कृपाराम, सच कहता है। तुम मेरे पास हो और वे दूर। कहते हैं न, अँखियों दूर सो दूरों दूर!"

कृपाराम ने बेबे को बाँह से घेर लिया–"बेबे, न वे दूर, न तुम दूर! पूरा पिंड जुड़ा है आँखों के आगे, पर तार तुम्हारे दिल की वहीं बजती है! दूर कैसे हुआ?"

बेबे निक्की ने डाढे लाड़ से धमकाया–"छोड़ रे, तंग न कर मुझे।"

बच्चे बेसबरे भूखी नज़रों से चंगेरों पर टिकटिकी लगाए कभी आपस में धौल-धप्पा करें, कभी माँओं के आँचल खींच खाने को माँगें।

शाहजी ने पांदे को हाथ से संकेत दिया तो पग्गड़ सँभाल पांदाजी आसन पर जा विराजे।

कच्ची लस्सीवाली गड़वी को मौली बाँधी। थाली में फूल-खील रखे। मूली। तिल। गुड़। और गहर-गम्भीर स्वर में कहा–"माँओ-बहनो, लोढ़ी का भागी भरा त्यौहार सदा-सदा!"

त्रिचौलीवाला थाल निक्की बेबे के हाथ में दे 'भरी' के अम्बार को अंगार दिया।

"बधाइयाँ बहनो, बधाइयाँ! लो पांधाजी, पहले अपने महँगे जातकों की भरी डले।

"लो जी, यह नौनिहालसिंह की!

यह चिड़ो के धोत्रे की!

यह ख़ुल्लरों के पौत्र की!

यह सुरजनदास के पुत्र की!"

निक्की बेबे ने सतपुत्री वीराँवाली को आगे कर दिया–"चल धिए, लस्सी डाल प्ररिक्रमा कर अग्नि-देवता की। जुग-जुग आता रहे यह कर्मोंवाला दिहाड़ा। झोलियाँ भरती रहें। दुल्हनें देहरी चढ़ती रहें। सतपुत्रियाँ होती रहें।"

लकड़ियों के ऊँचे ढेर में कपास की सूखी मन्छिटी की लपटें आसमान की ओर कौंधने लगीं। तारों की छाँह में बैठे जने-जनानियाँ, बच्चे-बूढ़े ऐसे भासें जैसे लहू के पौधे हों। और अपने-अपने टब्बर-क़बीलों के झुरमुट झुंड की छाँह में बेफ़िक्री से बैठे हों।

बच्चों के होंठों में घुलती गुड़ की टुकड़ियाँ। मक्का के दाने हाँफती हुलारों-भरी मस्त कँवारियाँ।

घोलू की माँ ने लड़के को दबादब गुड़ चुगलाते देखा तो सिर पर करारा धौल दिया–"मुढ़, रात चमूने लड़ेंगे तो रुढ़ी पर फैंक आऊँगी।"

दादी ने पोते को गोद में खींच लिया–"छोड़ री, आज तो कर लेने दे खुशी इसको मन की। यह भागी-भरा दिहाड़ा कभी-कभी!"

क़द निकाले हुए गबरू लड़कों का जमावड़ा एक तरफ़।

शुर्ली और गींडा उठा-उठा भरियाँ आग में डालने लगे।

हवा में आग की सुर्ख़-सुनहरी लपटें ऐसे हिलोरें लें ज्यों मनमौजन ज़िन्दगी उन्हें हवा के हिंडोलों में झुलाती-डुलाती हो!

माँओं-दादियों से हटकर कँवारियों की गजबी टोली कभी दाने फाँके, कभी आपस में गलबहियाँ दे-दे दूर खड़े लड़कों को देख-देख इतराए। लजाए।

हरबंसो ने तृप्ता को हाँक दी–"ले आ री, एक मूठ बादाम-किशमिश की मेरे लिए भी।"

शिब्बो ने झुझका दिया–"धम्मान चढ़नेवाली है क्या?"

"देर है री, अभी देर है।"

"फिटे मुँह!" हरबंसों ने चकोटी काट ली।

"हाय री, मैं मर गई!"

सामने खड़ा सुनारों का गुलज़ारी बिंधी अँखियों से देखने लगा तो देखता ही रह गया।

किसी सयानी ने झाँका तो झिड़की दी–"अकल कर री, गले का कपड़ा नीचे कर!"

ढोल की थाप पर लड़कों की टोली से ऊँची गहरी-गुंजान आवाज़ निकलकर लोढ़ी की रात को थरथराने लगी:

"सात पुत्र सत्रह पोत्रे
पाँच धियाँ पन्द्रह पोत्रे
नित-नित धोवे माँ किच्छी
टब्बरों के पोतड़े।
अरे खट्टी कमाई खाएँ कर्मावालड़ियाँ
नित-नित ब्याह रचाएँ कर्मावालड़ियाँ।"

अमृतवेला शाहनी और चाची महरी ने घर की कूँई पर स्नान किया। सूथने झग्गे पहन ऊपर धुस्से लिए और हवेली के आगे आन खड़ी हुईं।

थापड़ा दे शहबाज़ को नवाब ने पलाना डाला, 'तंग' कसा और ड्योढ़ी के सामने ला खड़ा किया।

शाहनी ने मन-ही-मन वाहगुरु का नाम लिया और छुटियारी मुटियार की तरह घोड़े पर चढ़ गई। हाथ दे चाची को ऊपर खींचा और घोड़े की लगाम थाम ली। ऊपर देख तारों की लौ समय सही किया और गाँव से बाहर निकल चली।

संग-संग पैदल आते नवाब की जुत्ती की आवाज़ घोड़े की टाप से रल-मिल अनोखा शोर करने लगी।

रुढ़ी पर कोई मेमना कूदकर आगे-आगे भागने लगा।

"चाची, देख यह बच्छड़ा। चार-छ: दिन से ज़्यादा नहीं। क्या कुलाँचें भर-भर कूद रहा है!"

"बच्ची, मियें ख़ाँ की झोटी सुई है।"

चाची महरी ने मन-ही-मन दाते के आगे अर्ज़ की–'ग़रीब-नवाज़, आपके हुक्म की बन्दी आपके दरबार में शीश झुकाने आती है! मेहराँवाले, तेरी नज़रें हों सीधी तो शाहों के घर भी झंड़ा फिरे।'

गाँव से नीचे उतर रेत का सूखा द्वाड़ा पार किया तो मीठे-महीन सुरों में शाहनी बाबा फ़रीद की वाणी उच्चारने लगी:

"पहले पहिरे फुल्लड़ा
फलु भी पछा राति
जो जागन्हिं लँहिन से
साँई कन्नों दात।
दाती साहिब सन्दिया
किए चले तसु नालि

इकि जागदे न लहन्हि
इकन्हा सुत्तयाँ दे उठाल।"

गाते-गाते शाहनी का कंठ भर आया। धन्य-धन्य बाबे की वाणी! धन्य बाबा तेरी सत्या!

धुर कलेजे से बादल उमड़ा और शाहनी की आँखों में फुहार पड़ने लगी।

नवाब ने अल्लाह पाक़ को याद किया। शाह की सुच्ची कमाई जिसने शाहनी जैसी घरनी पाई। मलका-महारानियों-सा सिदक और रब्ब के नाम से प्रीत।

दोत्ताल पार कर रेतीले कंडों से घोड़ा ऊपर चढ़ा तो सूरज महाराज आसमानी बुरजी से झाँकने लगे थे। सब्ज़े पर बिछी त्रेल मोतियों-सी चमकने लगी। सरसों के पीले खेतों के बनेरे-बनेरे सिंगी और मैना की क्यारियाँ धूप में चमक-चमक आँखों को रिझाने लगीं।

सामने के पहाड़ों से आती बर्फ़ानी हवाएँ जैसे धूप के छाज छाँटने लगी हों!

शाहनी और चाची महरी ने एक साथ शीश नवाए। अदालतगढ़ की सीध शेख़ सद्दों के मीनारे आँखों में उभरने लगे थे।

नवाब ने सलाम किया तो चाची महरी बोली–"मन्नत माँग–दिल की मुराद पूरी हुई तो शेख़ सद्दों के दरबार चिराग़ जलाऊँगा।"

साहनी ने लगाम खींच घोड़ा रोक लिया। नीचे उतर ख़ानक़ाह की दहलीज़ पर माथा टेका, तेल के लिए पैसे रखे और अदालतगढ़ की ओर चल पड़ी।

"मैंने कहा बच्ची, हाकमा के यहाँ घड़ी-भर ही ठहरेंगे। दुपहरी भी चल देंगे तो शाम जलालपुर जा पहुँचेंगे। और कल तड़के बाबा फ़रीद के दरबार।"

धूप में चमकता सुघड़ाई से लिपा-पुता हाकम बीबी का सजरा आँगन दूर से पहचान में आता था।

"हाकमा बड़ी सुच्चज़ी है री। देख, लिपाई ऐसी कि तख़्ती पोती हुई हो!"

ख़ुरली के पास आ खड़ी हुईं दोनों।

उपलों में धुआँ निकलता था और दूधारने में दूध की हँडिया पड़ी थी।

चाची ने हाँक मारी–"हाकम बीबी, बाहर तो आके देख। तेरे घर पराहुने आए हैं।"

हाकम बीबी का घरवाला गुलाम रसूल बाहर आ खड़ा हुआ कि कच्चे कोठे सज गए।

ऊँची काठी। गंदमी रंग पर सलोनी मूँछें और गर्दन को सजाते बालों के छत्ते।

"सलाम करता हूँ चाची! सलाम शाहनी!"

"जीता रह पुत्तर, जवानियाँ मान।"

चाची ने आशीष दी।

"क्यों जी ग़ुलाम रसूल, मेरी बहन हाकमा कहाँ?"

"अभी हुई हाज़र।"

हाकमा बीबी ठसियोड़ी चाल बाहर निकली तो गब्ब कोठरी का जातक दुपट्टी में से चोर-अँखियों झाँके।

"आओ शाहनी, आओ! ख़ैरों से आज तो सजरी धूप बनकर आन पहुँची।"

फिर चाची को सलाम किया।

"साईं जीवे, रब्ब पुत्तर दे!"

"सच मानना शाहनी, तड़के कनाली में आटा डाला तो टुकड़ी-भर बाहर जा गिरा। दिल में आया ज़रूर, कोई पराहुना चला हुआ है! सदके तुम्हारी आमद पर!"

शाहनी ने ग़ुलाम रसूल की ओर देखा–"शाहजी सुख-सन्देश पूछते थे। क्यों री हाकमा, मेरे बहनोई को हमारे ग्राँ के राह-रास्ते ही भुला दिए!"

ग़ुलाम रसूल का माथा हँसने लगा, "सच कहती हो शाहनी, यह मुँहबोली बहन तुम्हारी जब तक जच्चयोड़ी बनी रहेगी, मेरा घर से निकलना कोई न!"

चाची महरी की नज़रें हाकमा के लाचे के इर्द-गिर्द टिकी रहीं। फिर हौले से पूछा–"क्यों धियाँ, आठवाँ कि नौवाँ?"

हाकमा शाहनी से आँख चुराए रही।

शाहनी हँसने लगी–"लाज काहे की! मैं अपने बहनोई से ठट्ठा-ठलोकड़ी करूँगी, तुमसे नहीं। क्यों जी ग़ुलाम रसूल!"

ग़ुलाम रसूल की कलमें धूप में चमकती रहीं।

हाकमा की हमसाई सत्तभ्रावीं पराहुनों को सुनकर मिलने आन पहुँची।

"हाकमा, तन्दूर लहकने लगा है। मैं गर्म-गर्म रोटी उतारकर लाती हूँ!"

"न री न मेरी बच्ची, हम खा-पी के चली थीं।"

सत्तभ्रावीं अड़ गई–"अन्न-पानी दाते का। परवान करो। मैं सुच्चे मुँह न जाने दूँगी!"

चाची ने शाबाशी दी–"जीती रहो! धिए, हम गले-गले तक भरी हैं। पैदल पैंडा मारके आतीं तो कुछ भूख लगती!"

ग़ुलाम रसूल ने बीच-बचाव किया–"चाची, सत्तभ्रावीं भरजाई न मानेगी। रोटी नहीं तो दूध-लस्सी पी लो।"

हाकमा को शाहनी की पसन्द याद हो आई–"शाहनी को कहवा पिला दो।"

सत्तभ्रावाँ बड़ी ख़ुश–"अरी मेरे मुँह तक आई थी। सत्ती के भाइए ने सावी पत्ती भद्रवाह से भेजी है। मैं अभी लाई बनाकर।"

चाची ने हिदायत की–"चुटकी-भर नमक डाल लेना। और हाँ, धिए, मेरे कहवे में मलाई कम डालना।"

हाकमा हँसने लगी–"चाची, वह कहवा क्या जिसमें मलाई न हो!"

ग़ुलाम रसूल ने तपी काँगड़ी पराहुनों के आगे ला रखी।

छोटी-सी काँगड़ी में लाल-सुनहरी अंगारा ऐसा सुर्ख़ सुहाना जिमि धरती की कोख में कोई छोटा सा टिकुला सूरज का आन पड़ा हो!

शाहनी हाथ तापते मन ही मन सोचने लगी–'देखो खेल क़ुदरत के और देखो आऽर बन्दे के! अपने सुख-सुभीते के लिए क्या नहीं बनाया आदम के बेटे ने!'

सत्तभ्रावीं पिटारी में गुड़ और बाजरे की भुनी खीलें ले आई–"जितने सोमावर गर्म हो उतने मुँह जूठा करो!"

चाची ने गुड़ की डली मुँह में डाली–"हैं री, यह तो धम्मान का गुड़ लगता है! अजवाइन-सोंठ पड़ी है!"

हाकमा हँसने लगी–"सत्तभ्रावाँ भरजाई को गुड़ चुगलाने की रब्बत है। हर सयाले घड़ा भर लेती है!"

"चल, तेरे पुत्तर जन्मने से पहले ही मुँह मीठा कर लेते हैं। हाँ री, कब विराज रही है?"

हाकमा ने पेट पर ऐसे हाथ फेरा ज्यों बच्चड़े का सिर सहलाती हो! फिर चाची की

ओर झुक फुसफुसाई–"रात-भर पीड़ें उठती रहीं। तड़के उठ तावली-तावली काम निपटा दिया।"

"अरी ठंडी पीड़ें तो नहीं जो रह-रहकर उठती हों?"

"न!"

"रसूल, पुत्तर! सत्तभ्रावाँ को आवाज़ दे ज़रा! जो लाना है जल्दी ले आए।"

थाली में दो कटोरे कहवा, मक्का के ढोढे पर मक्खन का पेड़ा लाकर सत्तभ्रावाँ ने आगे रखे तो दोनों ने अपने-अपने आँचरों पर प्याले टिका मुँह से लगा लिए।

इलायची-बादामवाला कहवा और ऊपर पर्त मुलाई की!

"धिए हाकमा, ग़ुलाम रसूल की रोटियाँ तो उतार ली हैं न?"

"हाँ, चाची!"

"पुत्तरजी, हाकमा वक़्त से हुई लगती है। दाई को बुला लाओ।"

हाकमा के लिए सत्तभ्रावाँ मिट्टी के तबाख़ में कहवा ले आई–"बहना, कड़ुवा घूँट करके पी जा। गऊ का घी डाल लाई हूँ। सहारा रहेगा।"

ग़ुलाम रसूल लौटा तो मुँह उतरा था।

"चाची, कर्म बीबी तो आज न मिलेगी। नौशहरेवाले शेख़ों के घर जच्चगी के लिए गई है।"

चाची उठ खड़ी हुई। शाहनी से कहा–"बच्ची, मैं जितने हाकमा को देखूँ, तुम चूल्हा लहका पानी रख दो। कसकर ढक्कन रखना तांबिए का, कोई धूल-मिट्टी न जाए!"

"ग़ुलाम पुत्तर, कोई कोरा घड़ा-चाटी हो तो ठीकरी के लिए निकाल दो। चिराग़ में तेल डाल आले में रख दो।"

चाची को चीज़-वस्त सौंप हाकमा बिछौने पर जा लेटी।

"मैं मर गई चाची, अब नहीं सहा जाता।"

हाथ धो चाची हाकमा पर झुकी। फिर सिर पर हाथ फेरा–"हाकमा धीए, आँखों में बसाए रख बीबी मरियम का पंजा और नाम ले ज़ाहिरा पीर सखी सरवर का!"

शाहनी ने मदद के लिए दीवटे की लौ आगे की तो तड़पती हाकमा को पुचकारकर कहा–"सहेलिए, सहारा कर। तू अकेली ही दर्द-पीड़ों में नहीं। अरी, ग़ुलाम रसूल के घर की नीवें हिल रही हैं। जठेरे उसके बहिश्तों से झाँक रहे हैं।"

चाची ने हाथ से बच्चड़े का सिर छू लिया तो फ़ुर्ती की–"खैरें-मेहरें! ले री हाकमा, मुबारकें हों!"

निक्की-निक्की सजरी रुलाई कोठरी में थरथराने लगी।

शाहनी ने अडोल ज़रा सा पट्ट खोला और बाहर खड़े ग़ुलाम रसूल से कहा–"मुबारकें, ग़ुलाम रसूलजी, ख़ैरों से अन्दर शाहज़ादा आन पहुँचा है।"

ग़ुलाम रसूल का गला भर आया–"ख़ैर मुबाकर शाहनी!"

ग़ुलाम रसूल के सोहणे मुखड़े पर पुरखों का रत्त झलक मारने लगा।

"शाहनी, तुम्हारा पाँव ही भागी भरा।"

वाहगुरु, वाहगुरु, सत्या उस दाते की! नहीं तो मनुक्ख अपना-सा जातक बना दुनिया में क़ायम कर सकता! रब्बजी, मेहरें तुम्हारी!"

शाहजी और ठानेदार साहिब अभी ख़ेत से न लौटे थे कि गाँव में सेंध लगने का शोर-

शराबा मच गया। जुट्ट के जुट्ट हवेली के आगे इकट्ठे होने लगे।

नवाब ने पट्ठे काटते-काटते भीड़ देखी तो हँसकर कहा–"बादशाहो, अभी तो ठानेदार जंगल-झाड़े गए हैं। आएँगे तो अरज़ी-परचा लेंगे।"

मुख़्तयार ने अपने तहमद को बल दिए–"लो सुनो लोको, नवाब की बात! अरे, पराहुने तुम्हारे हगने ही गए हैं न, भंगियों की तोप दागने तो नहीं गए!"

नवाब ने हाथ का टोका परे फेंक दिया और दाँत निकालकर कहा–"हद कर दी बादशाहो, कहाँ छोटा-मोटा सुबह का ज़लज़ला, कहाँ सिक्खों की तोप!"

"हाँ जी, ख़ैरों से कौन सा पेट है जिसमें तड़के मुसमुसी न हो! सहारा रखो। ठानेदार फ़ारिग होने गए हैं। आ जाएँगे।"

ठानेदार के दबदबे से फ़ज़ल की चौड़ी छाती में तल्ख़ी होने लगी–"लो जी, कोई अनोखी ढुई है सलामत अली कि अब उसमें ज़लज़ले भी पैदा होने लगे! सीधी तरह यह क्यों नहीं कहते कि कलवाली ख़ातिर-तवाज़ा से हल्के होने गए हैं!"

"वही समझ लो। आप जानो, अनाज के कीड़े को देर-सवेर पैरों के भार बैठ अपने गुरदे तो हौले करने ही पड़ते हैं! फिर हमने कौन सी बढ़ा-चढ़ा के बात की! पराहुनाचारी में ज़रा सजा के कह दी। और क्या!"

"ये ठानेदारी कुल्ले की बरक़तें हैं।"

"खैर मेहर है। अकसर थानेदार सिपाही को सलामी देनी तो बनती ही है न!"

मुहम्मदीन ने डंगरों की ख़ुरलियों में चारा डाला और हँसकर कहा–"आहो जी, अपने कौन से जन-ज़मीन के मामले कहीं उलझे पड़े हैं कि थानेदार का तुर्रा देखते ही फ़तेह बुलाने लगे!"

नवाब को आख्यान सूझ गया:

"किसी ने घोड़े से कहा था–'ओ लुंडया, तुझे चोर ले जाएँ!'

"कहने का मतलब यह कि दुनिया होती रहे मुंसिफ़-अहलकार, हमने तो ढोर-डंगर को चारा ही खिलाना है।"

मौलू को थानेदार बच्चूख़ाँ की याद आ गई।

"थानेदार सलामत अली का क़द-बुत रौबीला और सेहत भी तगड़ी है। बच्चूख़ाँ तो जब दौरे पर आए तो मुशकियारा और मुत्राली उसके साथ-साथ। बिचारे को पले-पले बैठने की हाज़त हो। किसी को कुछ कह सके न! छोटे शाह ने रोग सही कर लिया कि हो न हो बच्चूख़ाँ मुमेसिया है। बवासीर की दवा दी, तागे का टोटका किया और रब्ब-तव्वकली ठीक भी हो गया!"

सुल्तान ने खजूरे को कोहनी मारी–"देख ओए, उधर देख!"

शाहजी के साथ-साथ ठानेदार के क़दमों की टंकार सुनते ही भीड़ चौकन्नी हो गई।

पहल कौन करे?

शाहजी ने पूछा–"यह इकट्ठा कैसा?"

मियेखाँ जी ने ढंग से खेस ओढ़ा और बोले–"सुनने में आता है, रात जम्मी में सेंध लगी है!"

"होश में तो हो न! मुक़ाम हमारा पिंड में और हमारी ही माजूदगी में ऐसा हादसा?"

थानेदार सलामत अली की आवाज़ ऐसी कि तेल में भीगा बैंत हवा में घुमाया

हो!

मियेख़ाँ ने सिर का मंदासा ठीक किया और जम्मीवालों की ओर नज़र मारकर कहा–"सेंध, चोरी, डाका–जो भी हादसा हुआ हो, बयान कर दो।"

"तौफ़ीकोंवालो, रात का पिछला पहर होगा। लसूड़ेवाला खू गिड़ने लगा था। मैंने हम्बे-मामूल टँगने से उठा दोत्तही कन्धे पर डाली ही थी..."

थानेदार फुंकारे–"ताजख़ाँ, चोरों ने रस्सी भी तेरे टँगने से ही बाँध रखी होगी! ऐसी चमड़ी उधेड़ूँगा कि सारे बदन की टल्लियाँ खड़क उठें!"

"हाँ, सेंधवाली दीवार से मिली हुई किसकी दीवार है?"

इस्माइल दरज़ी थर-थर काँपने लगा।

आगे बढ़कर सलाम किया–"जनाब!"

"जनाब के कुठाले, ज़रा सब्र रख। तेरा दम्म-चूल्हा अभी भखवाता हूँ। सेंध लगी तो तेरी दीवार की तरफ़ से, चोर भागे तो वह भी तेरी पौड़ियों से! कपड़े-लत्ते फैला गए तो वह भी तेरी छत्त पर! ख़ुद ही फूट दे! मैं अभी मौका पर नहीं पहुँचा!"

इस्माइल की घिग्गी बँध गई–"जनाब, बन्दा बेक़सूर है!"

सिपाही को हुक़्म हुआ–"मद्दीख़ाँ, तिरछी काटकर दे इसकी खोपड़ी की! ओ टुंडे, तू भी उठ! पहचानता है न मुझे!"

"मोतियोंवालो, आप जैसे समर्थी को कौन नहीं जानता भला?"

"झटापट उगल दे!"

"जनाब, हाज़िर हूँ।"

"यह चंडाल चौकड़ी कल चोराँवाली में क्या रस्से बुन रही थी?"

"न जनाब! कहाँ चोराँवाली, कहाँ जम्मी!"

"ओए, तू अभी तम्बा नहीं, तम्बी है; वह भी आधे पाट की। मद्दीख़ाँ हूरें दिखा दे टुंडे को।"

इकलौती कलाई मरोड़ टुंडे की, मद्दीख़ाँ ने हम्माम दस्तेवाली ज़ियाफत एक ही दौर में ख़त्म कर दी!

थानेदार ने टुंडे को ज़मीन पर चित देखा तो आँख से इशारा कर दिया–बस!

और पूरे मजमे से बेख़बर हो शाह साहिब से बातें करने लगे।

टुंडे ने चोर अँखियों से दोनों को गुफ्तगू करते देखा तो खजूरे को आवाज़ दी–"ओए बहनू के यार, मेरे दाएँ पैर की जूत्ती कहाँ गई? ज़रा लाना तो ढूँढ़ के!"

मद्दीख़ाँ ने भभकी दी–"जूती नहीं, तेरी टाँग कंजरी अब बेवा होने की तैयारी में है!"

शाहजी मंजी पर बैठे-बैठे अपने दोस्त सलामत अली के करतबों का आनन्द उठाते रहे।

फोकट की सेंध-चोरी; मुफ्त का माल-मत्ता और बिना चोरी के पकड़ा गया चोर-बच्चा! अब फ़ेहरिस्त बनेगी उस माल की जिसका वाली-वारस सुरजनसिंह वल्द अर्जुनसिंह सैकड़ों मील दूर पटना साहिब में कपड़े की फेरी लगा रहा है।

रात रोटी-टुक्कर के बाद चाची मंजी पर लेटी तो बड़े दर्द-भरे सुर में गाने लगी:

"अरी पुत्र न मिलते माँगवें

न वे हाट बिकें
जो के मिलते माँगवें
मैं लेती दम्मी तोल!"

हाथ में दोहर लिए पसार की ओर जाते-जाते माँबीबी ने सुना तो कालजे हूक आ पड़ी।

"हाय री चाची! जिसने शाहों के घर आ अपना जिन्द-जहान घोल-घाल दिया, आज भूले-बिसरे सपनों को क्यों चितारने लगी?"

माँबीबी ने कूँई के आले में से दिवटा उठा चाची के पसार में झाँका।

लोई में मुँह-सिर लपेटे चाची दीवार की ओर मुँह किए लेटी थी।

माँबीबी ने दिउड़ी पर दीया रखा और चाची के पैताने बैठ पाँव दबाने लगी।

चाची ने नए सुर छू लिए:

"का की माई का को बाप
नामधारीक झूठे सभि साक
काहे कउ मूरख भखलाइया
मिली संजोगि हुकमि तू आइया।
एका माटी एका जोति
एको पवनु कहा कउनु रोति।"

माँबीबी बैठी-बैठी सोचती रहीं। ज़िन्द अभागी रात बराबर। आँखों के आगे कंजरी के रूप पर शौदाई हुआ घरवाला आ ठिठका तो रुलाई ने आ घेरा।

चाची महरी ने मुँह उघाड़ा और माँबीबी को पुचकारकर कहा–"न धिए, ऐसे बगलोल मरद को न रो। भाड़े के दर-दर से छित्तर खाकर लौटेगा यहीं–तुम्हारे पास। मेरी बात पल्ले बाँध ले।"

"चाची, अब के ठानेदार सलामत अली आए अपने ग्राँ तो मेरी ओर से शाहजी को कहना, बात करें। क्या पता उसके धमकाए-समझाए जना राह पर आए!"

"माँबीबी, ये मामले मर्द की मूँछों से नहीं, रब्बी जूतों से निबड़ते हैं। मेरी बात पल्ले बाँध ले। शौदाई तेरा या तो सयाले तक लौट आएगा अपने ठिए पर, नहीं तो दल्ला बन बेसवा के गली-कूचों में भटकेगा।"

"चाची, सुनते हैं, कंजरी भड़वी हिन्दुस्तान की है। जो ले गई जने को पाँच दरियाओं पार तो इस चोले में मुझ तक नहीं पहुँचता।"

"चुप री, शुभ-शुभ बोल! लीड़ों की झलकों पर आशिक नहीं मरते। कंजरी का प्यार टकों से। दर-दर ठोकरें खाकर आएगा तेरे ही ढिब!"

"तेरा मुँह मुबारक़ चाची! इन्हीं वचनों की टेक उसे बाँधे रहे! चाची, एक बात तो बताओ, मुझे तुम उदास जापती हो। इतने वैरागी सुर क्यों छो लिए!"

दिवटे की लौ चाची के नक़्श-नैन किसी बाती से लहराने लगे और बरसों पीछेवाली शाह गणपत की जवान महराँ आ विराजी।

ठुड्डी पर का तंदोला चमकने लगा।

"अरी, माया-मोह और क्या! माँबीबी, मरे हुओं की रूहें कहीं जाती थोड़े ही हैं! जितना सफ़र ज़िन्दगानी में करती हैं उतना ही मरे पीछे।"

"चाची, ऐसे भरम न कर।"

"सुन माँबीबी, मुजारों की पाँत बैठी न अँगना, तो बनेरे से झाँक नीचे देखने

लगी। एक झौला पड़ा कि कोई पुरानी रुत हो! पुराने दिन। देखती क्या हूँ, मेरा बाँका शाह अपना लड़का बना ड्योढ़ी पर आन खड़ा है! अरी, वही उसकी सोहणी पोशाक, वही घुँघराले बाल! मुख ऐसा ज्यों मेरा पुत्र हो!"

"चाची, भला यह क्या बुझारत!"

"माँबीबी, चित्त अपना माया-दर्पण। अरी, जिस पुत्र को कभी मेरी कोख न पड़ना था, वह साक्खयात मेरी आँखों के आगे आ खड़ा हुआ। उस एक पल-छिन्न में ज्यों बाप-बेटे दोनों से मिलन हो गया। आँख झपकी और वह कहाँ और मैं कहाँ!"

"फिर?"

"अरी, फिर क्या! दोबारा ढूँढ़ने-बुलाने लगी अपने मरहम को तो सामने खड़ा था माच्छियों का सुल्तान।"

"चाची, सुनते हैं, शाह अपना बड़ा मलूक नाज़ुक..."

"हाँ री, शाहों-सा चिट्टा दूधरंग, तीखे नक्श-नयन, पहनना-ओढ़ना ऐसा ज्यों हाकम हो!"

"चाची, बेबे कहा करती थी कि महरी-गणपत शाह के क़िस्से घर-घर गाए जाते थे।"

चाची महरी ऐसे हँसी कि समय की त्रिकालाँ पलटकर सुबह हो गई।

"माँबीबी, वक़्त बादशाहों का भी पातशाह। कभी शिखर चढ़े थे प्रीति-प्यार हमारे। भरी कचहरी मुझे जा खड़ा किया मेरे शाह ने। सासरे का माना परवाना क़बीला गुजरात अदालत टूट पड़ा–जित देखें तित खलकतें!"

"चाची, ऐसे भीड़-भड़क्के में तुम खुले मुँह पहुँचीं!"

"और क्या! अरी, खुल गई पोटली इश्क़ की तो परदे कैसे! इजलास पेशी हो गई। वकील ने पूछा–'मुसम्मात महरी, बेधड़क होकर कहो, तुम्हारे ख़ाविन्द के कुटुम्ब-क़बीले से खत्री शाह ने तुम्हें किन तरक़ीबों से अवगाह किया और कैसे बरगलाकर तुम्हें सत्त-संयम से डिगाया!"

"फिर क्या कहा चाची तुमने?"

"माँबीबी, महराँ ने नज़र उठा भरी कचहरी पर डाली। मुझे दीखे सिर्फ़ दो बन्दे। एक दीखा अपना शाह और दूजा हाकम आला अदालत। मेरे भाने बाक़ी सब पगड़ियाँ ही पगड़ियाँ।

"मैं बेखौफ़ी से बोली–'साहब जी, मुझे बेवा हुए तीन साल हुए। अदालत समझे कि न मैं खेलूँ गुड्डियाँ और न मैं सोलहवें साल। मैं बालिग हूँ। मेरे अक़्ल-होश ठिकाने हैं। अपना भला-बुरा समझती हूँ। अपनी मरज़ी से सरदारों की दहलीज़ लाँघ आई हूँ।"

"खप्पी वकील सासरे का फिर भी बाज़ न आया। पूछा–'क्या यह सच है कि शाह गणपत ने लालच दे तुम्हें सब्ज़ बाग़ दिखाए और बदमाशों की मदद से तुम्हें दरिया पार पठाया?'

"माँबीबिए, मैंने गर्दन उठा अपने शाह की सीध कर ली। जाने उन अँखियों में क्या भासा कि तन-बदन मीठी आँच में भखने लगा।

"सासरा टब्बर डाढा मचा था। वकील को हुत्थल दें–और बोलो! और बोलो!

"'पूरा कुटुम्ब-क़बीला तुम्हारे मर्हूम मालिक का, जिविं-ज़मीन, गहना-गट्टा, बर्तन-भाँडा, भरे-भराए घर की बहूटी हो–अपना दिल न भरमा।'

"शाहों के वकील ने जिरह की तो मुझे कुछ पल्ले न पड़ा। मेरी नज़र तो अपने

शाह के मुँह पर टिकी थी।

"हाकम ने पूछा–'मुसम्मात महरी, तुम्हें कुछ कहना है?'

"मैं बोली–'सरकार, यह सवाल-जवाब मेरे किन काम के! मैं तन-मन से शाहों की हो चुकी। अब मेरा जीना-मरना-रहना सब उनके संग।'

"बस जी, हाकम ने फैसला दे दिया अपने हक़ में।

"शाहों को बधाइयाँ मिलने लगीं।

"मैंने हाकम के आगे सिर झुकाया–'आला इन्साफ़ साहब बहादुर! यह ऊपरवाले रब्ब का फ़ैसला है जो आपके मुँह से निकला है।'

"शाहों के इमदादियों ने हम दोनों को घेर लिया। सुरगों में वासा हो इन शाह भाइयों के पिता का। पुज्ज के मोहतबिरी। पास आ मेरे सिर पर हाथ रखा और घोड़ों के लिए आवाज़ दे दी।

"इतने देखती क्या हूँ, मेरा सबसे छोटा देवर भीड़ को चीरकर आगे बढ़ आया।

"मुझे पैरीपौना कर भर्राये गले से बोला–'इज़्ज़त-पत्त की बात जानें बड़े-बड़ेरे, पर भरजाई री, तेरे बिना घर घर न रहेगा। मेरे जाने तो तुम्हीं घर की महारानी।'

"सच कहती हूँ माँबीबी, उस बालक के छूते ही मैं थर-थर काँपने लगी।

"शाह ने मुझे मझधार में देखा तो निक्के साहिबसिंह को थापी दे अलग कर दिया–'छोड़, छोड़ दे बच्चा! हमें देर होती है।'

"मुझसे न देखा गया। बाँह बढ़ा साहिबसिंह को पास खींच लिया और माथा सूँघकर बोली–'साहबसिंहा, तू छोटा है, अभी न समझेगा! ये पिछले जन्मों के फेरे-गेड़े किसी के बस के नहीं। कोई पिछले कर्मों का दे और कोई ले!'

"साहिबसिंह ने मेरी चादर का पल्ला पकड़ लिया–'न जा, छोड़कर न जा भरजाई! तेरे हाथ की चूरी बिना मेरे गले से निवाला न उतरेगा।'

"अगले पल देखती क्या हूँ बड़े जेठ मल्कीयतसिंह ने–नाम लेती हूँ, रब्ब दोष की माफ़ी दें–साहिबसिंह की बाँह मरोड़ धक्का दिया–'बदीदा, घर से बाहर पैर निकालनेवाली लुंडी ज़नानी को वास्ते देने से पहले मर तो नहीं जाता!'

"राह में औंधा पड़ा साहिबसिंह तब तक न उठा जब तक अपने घोड़े चल न निकले!"

चाची महरी ने लम्बा श्वास लिया–"अरी माँबीबी, मेरे उस पिछले घर सुख हो। जाने क्यों आज वह टब्बर याद हो आया। झूठ क्यों कहूँ, किसी चीज़ की कमी न थी वहाँ। जिवियाँ। भरे-पूरे कोठे। गायें-भैंसें। घोड़े-घोड़ियाँ और थम्म जितने तगड़े मेरे सिंह देवर-जेठ! प्रालब्धों के खेल, और क्या! शाह से ऐसी बँधी कि न छूटी!"

"चाची, कभी जी में पछोतावा हुआ?"

"न री! शाहों के घर जिन्दगानी घने सुखों में बीती। वह डाडा कामल मर्द–दिन में मैं उसे सरकार समझूँ और रात को वह मुझे। रुत-बहारों के मेवे भागों से! माँबीबी, वह जवानी की लटबौरियाँ पींगें नहीं थीं री, वे संजोग थे संजोग, जिन्होंने नानोवाल के मेले में हम दोनों को घेर लिया।"

"चाची, यह तो बता, शाह ने तुम्हारी कैसी मनभावनी की?"

"तक़दीरों के खेल! पहली दीठ-चितवन शाह की मुझ तक पहुँचे कि पहुँचे, इस तन-बदन और कुटुम्ब-कबीले में ज़लज़ला उठ आया! ऐसी घड़ी कि नसीबों के कुल्फ़ पड़ गए हम दोनों के पैरों!"

माँबीबी का ध्यान कहीं और जा भटका–"चाची, शाह एक निशानी छोड़ जाता तुम्हारे लिए तो क्या कमी थी!"

चाची महरी अँखियाँ पोंछने लगी–"अरी शाह का पीछा सुनता है। इस जान के लिए कोई कमी न रखी। पर री, जब बिछुड़ती घड़ी पहुँची शाह के सिर पर तो एकटक चुपचाप पसार के दर पर आँखें। उठ-उठकर देखूँ–कहीं जमदूत तो नहीं दीख रहे मेरे धनी को!

"रो-रोकर मिन्नतें कीं–कुछ तो कह मेरे साथिया! तुम्हारे बिना कैसे ज़िन्दा रहेगी महरी!"

"माँबीबी, मेरी आवाज़ सुन शाह के होश-सुरत परते! ऐसी नज़र फिराई ज्यों किसी मुक़द्दमे का फ़ैसला देना हो–'महराँ, तुमने मेरा लोक-जहान सँवार दिया, पर आगे की सुध न रखी। अँखियाँ मीटते ही पित्तर-पुरखों की पाँत मुक जाएगी!"

"सुनकर बड़ा रोई। कलपी। पर री, अब क्या होता! शाह जा पहुँचे अगली दरगाह और मैं रह गई अपना हिसाब पूरा करने को!"

चाची आँचर से नाक-मुँह पोंछने लगी–"माँबीबी, इस तन-मन को लगी हुई है तभी बच्ची के लिए बड़ा सन्ताप पाती हूँ। बाबा फ़रीद मेहर करे और इसकी झोली भरे। मेरे जाने तो उस दिन बाबे के दरबार में बच्ची के लिए ख़ुशियों के बोल थे!"

"चाची, कैसे सही किया! मेरा सबब लगे तो एक बार तो उसके आगे झोली फैलाऊँ!"

"सुन माँबीबिए, हम दोनों वहाँ पहुँचीं तो थान पर बड़ी भीड़! कूजा-भराई होते ही प्रसाद बँटा तो सबसे पहले बच्ची की हथेली भरी! बाबा फ़रीद बड़ी आला सत्यावाला! चमत्कारी!"

"चाची, अब कभी जाओ गुजरात घोड़ी लेकर तो मैं भी बड़े दरबार के दरस पा आऊँ!"

"अरी, बड़े दरबार पहुँचना है तो पाकपत्तन पहुँचेंगे।"

चाची कुछ सोचने लगी–"माँबीबी, सिंहों के घर सुख हो। ख़बरे क्यों दिल में चिन्ता जापती है। वह छोटा साहिबसिंह घड़ी-भर मेरी आँखों से ओझल न होता था। सोहणा मुँह-माथा और बल्लौरी अँखियाँ! वाहगुरु रक्खया करे! हाय री! मैंने भी कैसा कालजा सख़्त कर लिया! कभी उनकी ख़बर-सुरत ही न ली। साईं सच्चे दर्शन-मेले जीते-जागतों के। मरे पीछे किससे करने मुँह-मुलाहज़े और किससे मान-उलाहने!"

शाहों का चिट्टा घोड़ा बादशाह दिन ढले बजुर्गवालवाले जोटासिंह के तबेले जा रुका।

चिराग़े ने हाथ दिया। चाची ने रक़ाबों से पाँव निकाले और कूदकर नीचे उतर आई।

तन पर सूफ़ का जोड़ा और ऊपर चादर पश्म की।

"चिराग पुत्तर, अन्दर जा हवेली में ख़बर कर आ। कहना, शाहों के यहाँ से लड्डिक्की आई है।"

चाची को थड़े पर बिठा चिराग़ा ड्योढ़ी जा पहुँचा। पूरे गले आवाज़ दी–"शाहों के घर से पराहुने आए हैं!"

बनेरे पर से किसी ने झाँका–"क्यों वीरा, किसको पूछते हो?"

"सलाम जी! चाची महरी को लेकर आया हूँ!"

चाची ने टोका–"कह, लड्डिक्की आई है!"

मल्क़ीयतसिंह की घरवाली क़ुदरत कौर पहले बिटर-बिटर तकती रही, फिर हैरानी से पूछा–"क्या पीरोशाहियों के यहाँ से?"

"न जी! सरदार साहिबसिंह को मिलने उनकी भरजाई आई है!"

"हला हला! बन्तासिंह के यहाँ रुक्का पहुँच गया था क्या?"

"सरदारनीजी, नीचे उतर आओ। पराहुनी आपजी की थककर चूर है।"

नरमे के सूथन-झग्गे में क़ुदरत कौर नीचे उतरी तो चिट्टे रंग पर दबदबेवाली काठी और बड़े-बड़े बूबे। गलमे के बीड़े ख़ुले हुए और धड़ खैरों से इतना ज़बरजंग कि दस-बारह व्यम पा चुकी हो!

"कौन? कौन आया है रे?"

चाची महरी थड़े से उठ बैठी। भेंटने को बाँहें फैलाईं कि क़ुदरत कौर ने पहचानकर अपने माथे पर हाथ दे मारा।

"फिटे मुँह री! लड्डिक्किए, तू यहाँ! अक़्लें! अरी, चिट्टा चूँडा लेकर तू करने क्या चली आई! अब इस घर-ग्राँ कौन तेरे चाव-मल्हार करने बैठा है!"

चाची महरी पास हो आई–"क़ुदरते, मैं निज आती इस घर। बरसों नहीं आई। कल रात सुक्खमनी साहिब का पाठ करते-करते वाहगुरु ने चित्त को दर्पण दिखला दिया कि महरिए, साहिबसिंह तेरी राह तकता है। अगली-पिछलियाँ बिसराकर उसे देख आ!"

क़ुदरत कौर ने घूर के नज़र मारी तो आँखें भींज गईं।

"लड्डिक्किए री, साहिबसिंह की हालत कुछ चंगी नहीं।"

ड्योढ़ी लाँघ चाची चबारे चढ़ी।

"किस बैठके में पौढ़ता है मेरा साहिब?"

"इधर री, इधर। शीशोंवाली बैठक में!"

दीये की लौ साहिबसिंह आँखें मूँदे पड़े थे। पास बैठी घरवाली सन्तो और लाल चूड़े पहने बेटी बसन्तो।

चाची ने झुक हाथ साहिबसिंह के माथे पर रखा–"मैं सदके जाऊँ! साहिबसिंहा, देख तो कौन आया है!"

साहिबसिंह ने आँखें खोल दीं–"कौन? किसकी आवाज़ आई?"

"पहचाना नहीं साहिबा रे! मैं हूँ लड्डिक्की, तेरी भाभी।"

चाची ने डबडबाई अँखियों साहिबसिंह का माथा चूम लिया।

सिर पर धौल केशों की छोटी सी जूड़ी।

हाथ लगाकर ताप देखा। क्या रोग है! क्या दवा-दारू!

पुरानी संग्रहणी। दवा आलमगढ़िए हक़ीम की।

"साहिब को हस्पताल क्यों न ले गई?"

क़ुदरत कौर कुनमुन-कुनमुन रोने लगी–"मैं अकेली क्या करूँ! छोटे-बड़े भाई लाहौर मुक़द्दमे की पेशियों में और निक्का दिसावर करने क़ाबुल। ले-दे के बन्दा घर में साहिबसिंह। कल चित्त बड़ा डोला तो बसन्तो को घोड़ी भेज दी। आज ही आई है। आ री बसन्तो, ताई से मिल।"

लाल चूड़े पहने बसन्तो ताई के गले आ लगी।

महरी ने सिर पर हाथ फेरा। गुँथे फूल-सा मुखड़ा देखा और मुन्दरियोंवाला हाथ पकड़ हथेली पर थूक दिया।

"रक्ख साईं की! रब्ब बड़े-बड़े भाग लगाए!"

सन्तो जिठानी के गले लग सिसकारियाँ भरने लगी।

"कौन है सन्तो, कौन है? किससे आसीसें ले रही हो? आसीसों की पंड भी बाँध लो तो भी मैं अब बचता नहीं।"

चाची महरी की आवाज़ खड़की–"बहन क़ुदरते, दो-चार बताशे ला और कूईं का सजरा पानी भर ला। मैं अभी साहिबसिंह को चंगा करती हूँ।"

चाची ने कटोरी में बताशे घोल साहिबसिंह के मुँह लगाया तो कमजोर काया में जान पड़ गई।

साहिबसिंह ने सिरहाने से सिर उठा भरजाई का हाथ पकड़ लिया–"इसी घड़ी को जीता था मैं। नहीं तो कब का पार था।"

"अरे साहिबसिंहा, शुभ-शुभ बोल! दाता मेहर करेगा! उठकर चलने-फिरने लगेगा!"

दिवड़े के आलोक में साहिब भरजाई के मुखड़े को ताकता रहा। फिर घरवाली को आवाज़ देकर कहा–"सन्तो, पूछ भरजाई से, कभी उठकर चल-फिर भी सकूँगा!"

चाची ने कड़ी निगाह से घूरा और पुख़्ता आवाज़ में कहा–"सुन रे, कान खोल के सुन! जो तेरी तबीयत न परखी तो इसी बैठके मंजी बिछा लूँगी। सन्त कौरे, ज़रा गऊ का घी और फिरंगी-दारू तो ले आ।"

चाची ने हौलम-हौल ऐसी मालिश की कि साहिबसिंह के हाथ-पाँव गरमाने लगे।

कपड़ा ओढ़ाकर कहा–"नींद न आती हो तो सिर में घी रचा दूँ?"

"ना, आज इतना ही!"

"उठ सन्त कौरे, लेटकर तनिक कमर सीधी कर। मैं बैठी हूँ।"

बसन्तो ताई के हाथ-पाँव दाबने लगी।

"क्यों री धिया, ख़ुश है न अपने घर?"

"हाँ, ताई!"

"सास-ससुर चंगे हैं री?"

"चंगे!"

"और तेरा घरवाला?"

"वह भी!"

बसन्तो शरमाने लगी।

"भला री भला! ख़ुले दिल खाओ-हँडाओ। रस-जस पाओ।"

क़ुदरत कौर महरी के लिए थाली लगा लाई।

हाथ धो ग्रास लिया तो अँखियाँ छलछला आईं।

"हैं री, बहन क़ुदरते, इस घड़ी तो बीच के बीते बरस कोई क़िस्सा-आख्यान जापते हैं। न मैं वह, न वक़्त-समय वह। वाहगुरु किए हवेली सही-सलामत वहीं हैं।"

सन्तो ने जिठानी की हथेली पर टिकी थाली काँपती देखी तो हाथ से थिर कर दी।

"भरजाई, सारा टब्बर-परिवार एक तरफ़ और यह तुम्हारा देवर एक तरफ़। ब्याही आई तो भी रह-रह तुम्हारी ही बातें। न कभी दिल से तुम्हारी ममता छूटी, न

पिछली बातें बिसराईं।"

चाची महरी रोने लगी–"सन्तकौरे, मेरा रब्ब साक्षी है री! जब-जब रोटी पर मक्खन-घी रखती, मेरा साहिबसिंह पीछे से आ जैसे मेरा पल्ला पकड़ लेता–भरजाई, थोड़ा और! थोड़ा और! और दे न!

"शाह से लुक-छिप रोती रहती। सौ झगड़े-फ़िसाद आपस के, पर री, ऐसी भी क्या रंजिश कि जीते-जी मनुक्ख दर्शन-मेलों को सहक जाए!"

"मैंने कहा, जब तुम्हारे शाह के पूरे होने की ख़बर आई तो दिल ही दिल तुम्हारे लिए बड़ा झुरती रही। पर री, मरदों के आगे कुछ ज़ोर न चला। बहुतेरे तरले-मिन्नतें किए भाइयों के। ज़ोरावर के आगे पल-पल हाथ जोड़ूँ, पर एक न चली। सिर की सौंह खिला सारे रस्ते ही बन्द कर दिए।"

"हैं री, जिएँ-जागें भाइयों की जोड़ियाँ। मनुक्ख के मन को किसने बाँधा है! जिधर बह गया, बहने लगा। मैं ही चली आती पहले, पर री, दर्शन-मेले भी लिखियों के।"

ज़मानों बाद लड्डिक्की राँगली खिड़कियोंवाले पसार में लेटी तो शाह को हाथ से परे ठेल दीदारसिंह महरी के पास आन खड़े हुए।

लाड़ी को गुदगुदाकर कहा–"सुनते हैं, इस महरी मुटियार के बड़े चरचे हैं!"

दुलहन महरी हँस-हँस खिलखिलाती रही। फिर आँखें झपका-मटका कहा–"हाँ जी, मदीनेवाले बग्गे सरदारों की धी बजुर्गवालवाले कक्के सरदारों के घर ब्याही है–इसके तो ढोल गज्ज-वज्ज गए इलाक़े में!"

दीदारसिंह लाड़ी की इन मशकरियों पर जी भर-भर निहाल होते रहे।

पास जा हाथ लगाया तो पुराना तजरुबा खून से निथरकर अलग हो गया–फ़ासले उम्रों के!

चाची ने करवट ली–कर्त्ता तेरे रंग! कभी चित्त-चेत्ते में भी था कि मुड़ इस बैठके सोऊँगी। कहाँ दार जी, कहाँ शाहजी! सपने की न्याई ओझल हो गए! चल री महरिए, जब तक श्वास है, पिछलियाँ याद करती रह!

क़ुदरते-ख़ुदावन्दी का यक़ीन दिलाने के लिए मूसा ने बड़े-बड़े मोजज़े दिखाए। आसमानों को कैसा बुलन्द और बाआब बनाया। सूरज के जरिए रात और दिन की तारीक़ी और रोशनी का इन्तज़ाम किया। सतह ज़मीन को बिछाकर इस पर पहाड़ कायम किए। आसमान से पानी बरसाया और ज़मीन में सब्ज़ा उगाया। सतह ज़मीन की अगर एक वसीह फ़र्श से मिसाल दी जाए तो इस पर पहाड़ों को ऐसा समझा जाएगा कि गोया फ़र्श को अपनी जगह रखने के लिए मेखें गाड़ दी हों। आसमानो की हक़ीकत ख़्वा कुछ भी समझी जाए, मगर उनके वजूद और उनकी मज़बूती में किसी को शक़ नहीं। आसमानों की हर एक चीज़ अपनी मुकर्रा जगह के अन्दर निहायत मज़बूती से क़ायम है।

"नाम लो परवरदिगार का!"

मौलवीजी की आवाज़ पर हौल की मुनैनी-सी बुलबुली कौंध गई।

नाम लो परवरदिगार का।
लशकर आन पहुँचा है थानेदार का।

चौधरी फ़तेहअलीजी ने चौकन्नी नज़रों से देखा और इशारा किया–"ख़ुदावन्द की शान में रोक-टोक कैसी! बेख़ौफ़ जारी रहे!"

मौलवीजी ताज़े जोश से बोलते चले।

मसीत से बाहर निकलते ही थानेदार के रुक्के की तरह आगे सिपाही लालख़ाँ नज़र आ गए।

सबने साहब-सलामत बुलाई।

"लालख़ाँ जी, रब्ब सबका भला करे! आज कैसे पैंडा भूले अपने पिंड का?"

लालख़ाँ थाने की इमारत को सिर पर उठाए-उठाए घूमने के आदी थे। मूँछों को मरोड़ दी और तड़ी से सिर हिला दिया–"पुलिस का काम रास्ता भूलना नहीं, रास्ता ढूँढ़ना है।"

लालख़ाँ का तुर्रा देख सिकन्दर वड़ैच का दिल भभक उठा। मसखरी से कहा–"पुलिस का भुस्समार पटाखा भी गोला! उधर नज़र आया तुर्रा, इधर धमाका! क्यों जी लालख़ाँ जी!"

वज़ीरे ने कोहनी से झुझका मारा–"चुप ओए! हाँ, लालख़ाँ जी, आज कोई जिन्सी-ज़ाब्ती का टंटा तो नहीं उठ खड़ा हुआ? अपने जाने तो गाँव अपने का लाजिमा दरोग़ाना सब भुगत चुके!"

लालख़ाँ की मेहँदी-लगी सिपाहिया मूँछें भभकने लगीं।

"ओए रानीख़ाँ के, यह गिंजिशकी उड़ाना अपने बाप की बारात में! अभी साफ़ हुई जाती है सरकारी अहलकार पैंडाख़ाँ के क़त्ल की साज़िश!"

वज़ीरा और सिकन्दर दोनों ने कान पकड़ लिए–"तौबा, तौबा! आपकी नज़र रहे सीधी मोतियोंवालो, यह वारदात तो हट्टर इलाक़े के बदमाशों की लगती है।"

"नेग-दस्तूरी मिलते ही हट्टर और जट्टर दोनों इलाक़े तम्बों पर फूल की तरह खिल जाएँगे।"

चौधरी मौलादादजी ने पग्गड़वाला सिर हिलाया–"लालख़ाँ पुत्तरजी, गाँव तो आपका ताबेदार। ख़ुदा तरसी इन लड़कों को कोई अक़्ल की सीख दो।"

"रब्ब सबका भला करे। साहबजी लालख़ाँ, बरानी और सैलाब का ज़ायजा लेने नायब तहसीलदार पहले ही दौरा कर चुके हैं। यह अलल-बखेड़ा अब क्या उठ आया?"

लालख़ाँ के ख़ाकी तुर्रे के साथ-साथ ताज़ीरात हिन्द की खौफ़नाक दफ़ा फड़फड़ाने लगी–"ओए खच्चरो, छोड़ दो भोली बदमाशियाँ। पटवारी के धन्धों में थानेदार का क्या काम! कुरते उठाकर फूँक मारो छाती के बालों को। उस पर दफ़ा लगनेवाली है तीन सौ सात।"

"लाहौल-विला क़ूवत लालख़ाँ जी! अपना पिंड तो बेक़सूर है।"

"बदमाशों की मिस्लें लाने हमें क़ाबुल-कन्धार नहीं जाना पड़ता। जमाख़ातिर रखो, हमें यहीं मिल जाएँगी!"

नबिये ने खँखारकर बलग़म परे दे फैंकी–"मोतियोंवालो, आपके लिए वह भी क्या मुश्किल! मौके पर बैठे-बैठे ही दरिया अटक पार कर आओ।"

"न जी, न!" गफ्फू ने संजीदगी से टोका–"बादशाहो, ग़लतबयानी में फँस जाओगे। पूछ के देख लो लालख़ाँ जी से, वह इलाक़ा इनकी हद के बाहर है! वहाँ तो किसी और ख़ाँ साहिब की अमलदारी है!"

लालख़ाँ घूरते रहे और दिल ही दिल पेचोताब खाते रहे–अपनी लपेटनियों में न

लपेटा तो लालख़ाँ नाम नहीं!

पग्गड़, खेस और दोत्तहियो का जलूस दारे आन पहुँचा तो थानेदार सलामत अली की टश्श देखनेवाली थी। घेरकर चिट्टी सलवार और अहलकारी पगड़ी को सजाता पेशावरी क़ुल्ला। मंजी पर बैठे हक़ूमती वजूद ऐसा सजा कि देखनेवाले अश्श-अश्श कर उठे।

"सलाम बादशाहो! सलाम मोतियोंवालो! सलाम साहिबजी!"

थानेदारजी ने एक माशा-भर सिर हिलाया और मजमे को ख़ामोशी से घूरते रहे।

अखिये ने अपने जोड़ीदारों की आँखों पर तीतर उड़ते देखे तो हलीमी से पोता-पाती की–"कब तक ठानेदारजी की मुँह की रौनक़ें देखते रहोगे! गर्म-गर्म दूध लाओ, ज़रा थकान उतरे साहब बहादुर की। सरकारें जाने कब से दौरे पर हैं!"

थानेदारजी ने मरोड़दार आँखों से सफ्फू की टाँड दबोच ली और अखिये को धमका दिया–"ओए बहनू के यार, लच्छेदार हंडे सजाना छोड़ दे। खड़ा हो जा। जो पूछता हूँ, सीधा-सीधा जवाब दे!"

अखिये की नाक चौड़ी, जबड़े ऊँचे। आगे के दो दाँत काले चूहे के कुतरे हुए।

आवाज़ धतूरिए की-सी धुँधली बना ली–"सरकार का हुक़्म सिरमाथे।"

"हूँ। पिछले जुम्मे जलालपुरवाले जहाँगीरे के यहाँ क्या जश्न-जलवे थे!"

"जी मोतियोंवालो, मैं शादीवालवाली फूफी के यहाँ से परता तो जलालपुर रात हो गई। जहाँगीरे के यहाँ रुक गया..."

"हूँ। चंडाल-चौकड़ी के गोशे और हरामज़दगियाँ ज़रा दोहरा लो। फग्गू लंगा और भूरा स्यालकोटिया कौड़ियों की मूठ खेल रहे थे। और तुम तीनों बदमाश..."

"जनाब, अव्वल तो मेरे सिवा वहाँ कोई दूसरा माजूद नहीं था। दोयम अगर हो भी तो मुझे नज़र नहीं आया। रात अँधेरी थी। बादल छाए हुए थे। हाथ को हाथ न सूझता था..."

सलामत अली की आवाज़ कड़की–"बिना पूछे ही इबारत उगलने लगा। सच-सच बोल, कितनी झूठी गवाहियाँ दे चुका है?"

अखिये ने बड़ी सादगी से हाँ में हाँ मिलाई–"जनाब ठीक फ़रमाते हैं। हम भड़ुवों का तो आए-दिन का यह काम ही हुआ।"

"लालख़ाँ, लँडूरों को कुछ गर्मी ज़्यादा हो गई लगती है! निकाल बाहर करो इनके लोथड़े!"

लालख़ाँ ने पीठ पर जो बैंत मारने शुरू किए तो हर बैंत के साथ बस एक ही आवाज़ उठती रही–"वाह-वाह! वाह ओ वाह ही वाह! ख़ुदा, तेरे रहमक़रम से पुलिसवालों का सितारा और बुलन्द हो।"

चौधरी मौलादादजी ने इस अनोखी गुस्ताख़ी का हश्र सोचकर शाहजी की ओर देखा, तो शाहजी ने सिर हिला सलामत अलीजी की नज़र पकड़ने की कोशिश की।

"थानेदारजी, ढूँढेशाह की ढूँढ मची तो यह रहा ढूँढेशाह। इस नालायक़ के क़सूरवार होने में तो कोई शक़-शुबह है ही नहीं! बाकी अर्ज़ इतनी है कि इसका क़सूर बताने की मेहरबानी हो ताकि इसके जोड़ीदारों को भी सबक़ मिले।"

इधर सलामत अली की लाल तन्नवाली आँख झपकी, उधर लालख़ाँ ने हाथ रोक लिया।

"याद रहे शाह साहिब, पुलिस के सिर पर बरतानियाँ के इंसाफ़ की पगड़ी है। वह

हर हालत में इंसाफ़ करके ही रहेगी।"

पिंड के सयाने चेहरों पर आँखें ख़ुल-मिच करने लगीं।

मियेख़ाँ जी ने मुलायम गले से कहा–"पुत्तर सलामत अलीजी, आप ख़ुद सयाने हो। इन बदमाश बेलगों के लिए ज़रा खोलकर कहो तो बात बिचारी साफ़ हो।"

सलामत अली ने कर्मदीनजी की ओर देखा और मज़बूत हत्थ दो-तीन धौल अखिये की कनपटी पर जड़ दिए! फिर बड़ी शायस्तगी से कहा–"चाचा कर्मदीन, पोत्रे को मार पड़ती न देखी जाए तो इस बेलंगी पौद को समझा दो कि पुलिस के सामने झूठ दरोग-गोई नहीं चलते! अगर बरख़ुरदार उस रात अपने गाँव में ही मौजूद था तो पुलिस के धमकाने से जलालपुर कैसे पहुँच गया?"

ठानेदार ने बड़ी मोतबारी से तुर्रा घुमाया और बदमाशों पर नज़र फेंककर कहा–"कान खोल के सुन लें बदमाश, ग़लतबयानी का हश्र यही होगा!"

अखिये ने अपनी कोहनी से आँख पर आए बाल परे किए और दूसरे हाथ से पीठ छू ली। हाथ लौटाया तो उँगलियाँ ख़ून से सनी थीं। ऐसी ज़ालिम कुट्ट!

ठानेदार साहिब से नज़र मिलते ही अखिया वल्द सफ़िया ठट्ठाकर हँस दिया–"बल्ले-बल्ले, सरकार बढ़िया। अहल्कार बढ़िया। बैंत की मार बढ़िया।"

चौधरी फ़तह अलीजी ने कड़कड़ी आवाज़ नबिये को बुलाया–"जा ओए, तत्ते-तत्ते दूध में डली-भर घी डलवा ला अखिये के लिए!"

अखिये ने दारे के पीछे से दुल्ले को आते देखा तो बेख़ौफ़ी से गला फाड़कर कहा–"आ यारा, मोतियोंवालों के आगे तू भी शौक पूरा कर ले।"

दुल्ले ने एक निगाह पूरे मज़मे पर डाली। लम्बा टूँगकर अदा से दो-चार दलाँगें भरीं और अखिये की लहू-लुहान पीठ देखकर थूका और ललकारकर कहा–"वर्दीवालो, यहाँ के गब्बरोटों को तुमने मिट्टी का माधो समझ लिया! कान खोल के सुन लो, इस पिंड में थाल के उठाईग़ीर डंगर-चोर नहीं रहते। यहाँ रहते हैं निडर और बहादुर, जिन्हें पुलिस ख़ुद डर के मारे बदमाश बुलाती है।"

सलामत अली ने इस शोहदी दाढ़ी-फूट भभकी को हवा में उड़ा दिया। शाहजी की ओर देखा और दबदबे से शुकारकर कहा–"लालख़ाँ, फिलहाल इन्हें धूप सेंकने दो। दिन-ढले शाहजी की हवेली में हाज़र करो।"

पोते की मार से कर्मदीन की आन्द्रें धुखने लगी थीं। दूसरे दौर का सुना तो साफ़ हो गया कि जातकड़े की आज ख़ैर नहीं।

उठे और ठानेदार के पास जाकर कहा–"माशल्ला, क्या रोबीला मिज़ाज पाया है। ठानेदारजी, मेरा सलाम क़बूल हो।"

सलामत अली ने दिलचस्पी से देखा और सिर हिलाकर कहा–"एक-आध अच्छी आदत अभी तुममें बाक़ी है कर्मदीन चाचा, हम ख़ुश हुए।"

फिर भारा-गौहरा वज़न सँभाल हवेली की ओर चल दिए।

दोनों को साथ-साथ कदम उठाते देख मौलवी क़ुरबान अली को फ़ारसी रोशन हो गई। सिर हिलाकर कहा:

"कुनन्द हम जिन्स वा हमजिन्स परवाज़
कबूतर बा कबूतर बाज़ बा बाज़!"

त्रिकालाँ पड़ते ही उत्तरी वंड में ढोल खड़कने लगे।

अंगारों की धूनी के आसपास ढोलों के कंजक और कुंडल चमचम चमकने लगे। किसी के हाथ में डफ्फ, किसी में टंडी और किसी के आगे शुतरी।

मामू कसाई ने दोत्तही में से मुँह निकाला–"अरे लफ्फाड़ियो, आज क्या जलसा है? न होली, न दिवाली और ले बैठे शुतरी और शारना!"

"चाचा, मन की मौजें आज नहीं रुकतीं। रंग-रस को दिल न हो तो कानों में उँगलियाँ डाल सो जाओ। चाची ताम्बा का जी करेगा तो कर जाएगी इन सिरों का सिरवारना!"

साँसी मिरासियों के टब्बर आग के इर्द-ग़िर्द आ बैठे।

"गाओ जी गाओ, कोई जस्स गाओ!"

"ओए, जस्म किसका? पुरोहने पुलसियों का?"

"उल्टी बुद्ध यारो, क्या जस्स गाएँ ठानेदार के बाप-दादे-पड़दादे-लकड़दादों का, जिन्होंने बीबीपुर में टुकड़ियोंवाले खेस बुने थे!"

"होश कर, अभी तो थानेदार का पेशकारा ही चढ़ा है।"

"फ़िक्र नहीं बादशाहो, हमने भी कई तुर्रे और तुर्रेबाज़ देख डाले!"

हीरा साँसी का चचेरा भाई करतारा माच्छी सुलतान के साथ आ धमका। शुरकी के कान में कुछ कहा तो ख़ुशिये ने तरंग में आ बोल उठा लिए:

"पोस्ता दिल दोस्ता तेरा सोने मँढ़ावाँ बूटा
सौ रुपए की पिनक पिलाई हज़ार रुपए का झूटा।
पोस्ता दिल दोस्ता तेरा जड़ से उखाड़ूँ बूटा
बसते घर उजाड़ के तू हाथ में दे दे ठूठा।"

मिरासियों-कंजरों के जुट्ट मिलकर भंगियों के गाने गाने लगे।

इलाची कंजर ने शुतरी पर थाप दी तो गाँव की रात हर बन्द पर थर्राने लगी।

"गंग भंग दो बहनें साहबो
परबत में अस्थान
एक नहाए उतरे मैल
दूजे पीए पाप तरान।"

गुल्लू ने टोका–"ओ ठठोलियो-मिरासियो, लानत तुम पर! भूखे पेट गाने लगे शोभा और वह भी भुस्सी भंग की!"

लक्खी मिरासी के तम्बे से बोल फूट-फूट पड़ते थे। गुल्लू को थापड़ा दिया–"गुल्लू बादशाह, अकेली तेरी ही जवानी ऊपर चढ़ने को नहीं तड़प रही। ज़रा गाने की महक तो फैलने दे। शाहों के यहाँ विराजे ठानेदार सलामत अली के कान तक न पहुँचे ढोल-टँडीरे तो हमने बेफ़ायद ही महफ़िल सजाई।"

करतारे ने हँस-हँस ख़ुशिये की टाँड पर टोहका दिया–"ओए, पुलसियों से गुद्दी गुडुच्च करवानी है क्या! बात कहती है–तू मुझे मुँह से निकाल, मैं तुझे पिंड से निकालूँगी।"

"लो जी, अपनी तो मौज मन की। टप्पा नहीं तो ठुमरी। दोहा नहीं तो कवित्त।"

सुल्तान माच्छी ने चढ़ा रखी थी।

"उस्ताद, आज गा-गा के मुख़ालफ़ीनों के बम्बे बन्द कर दो!"

"लो जी बादशाहो, जो हुक़्म करो!"

फग्गू ने अपनी बूथी उठाई और लक्खी को आगाह किया–"वह आ गए पापी पुलसिए!"

लक्खी ने तुरत कवित्त छू लिया:

"गुणियों के सागर हैं
जात के उजागर हैं
भिखारी बादशाहों के
प्रभो के मिरासी हैं
सिंहों के रब्बाबी हैं
क़व्वाल परीज़ादों के
हम डूम मालज़ादों के।"

"बस-बस!" लालख़ाँ ने कड़ककर कहा–"उठा लो महफ़िल अपनी। हजूर ने याद फ़रमाया है।"

"हुक़्म क़ुल्लेवालों का! क्योंजी पुलिस बहादुर, क्या सारा साज़-सामान लेकर हों हाज़र ठानेदार के सामने?"

"ओए, सँभलकर मिरासिया, जिन-जिन शोहदों का नाम लेता हूँ, शाहों की बैठक पहुँचते बनें। भग्गू, लक्खी, गोंगलू, करतारा, सुल्तान!"

कंजरों की गोट्ठ का सत्तमाहा ख़ैरू सिपाही लालख़ाँ के पास आ ठुका और पूछा–"सिपाहीजी, क्या अखिये की फिर पेशी होगी?"

"अभी ज़रा ज़ख़्मों की टकोर कर ले! उसकी माँ की..."

दुल्ला मिरासी उठकर भँभीरी की तरह घूम गया। तालियाँ बजा-बजाकर कहा:

"याद आ गई जी
भड़वी याद आ गई।
हाय हाय याद आ गई।"

लालख़ाँ की आँखों में गुस्से का सुरमा देख दुल्ला भोला बन गया:

"लो जी, चले थे यार मजलिस जमाने।
पड़ गए हिस्से कोड़े खाने।"

गुल्लू ने हाथ जोड़ अर्ज़ की–"बहादुरजी लालख़ाँ, ज़रा मुँह तो गीला करते जाओ रसूखवालो!"

लालख़ाँ हेकड़ी से डटे रहे। न हिले। न क़दम उठाया।

"ला, ओ ला, प्याला भर ला आफ़ताबे में से!"

लालख़ाँ आने तक इन्तज़ार करते रहे। प्याला एक ही घूँट में गटक गए और हवा में बैंत हिलाकर कहा–"माँयहव्यो, ग़ैरक़ानूनी हरकतों से बाज़ नहीं आते। आफ़ताबों में कच्ची शराब रखते हो! सरकारे ख़बर पहुँच गई तो मुचल्के हो जाएँगे।"

"ख़ैर मेहर है जी! अपने सिर पर जब ख़ासुलख़ास सितारे-हिन्द साहबजी लालख़ाँ मौजूद हों तो भड़वी ताज़ीरात हिन्द की किसे परवाह!"

लक्खी मिरासी ने शारना छूकर यारों को दिलासा दिया–"पुलिस से भी क्या डरना यारो! उससे से तुम्हारा गंढ-चित्रावा हो चुका। हँसी-ख़ुशी जाओ हाज़री पर! भली करेगा साईं!"

चौकड़ी थानेदार की पेशी के लिए उठ खड़ी हुई तो लक्खी ने हाथ ऊपर उठा अल्लाह को याद किया:

"अल्लाह सच नबी बार हक़
दीदार अल्लाह का शफ़ात हज़रत की।"

खेसों-दोत्तहियों की 'बुक्कलें' मार जवान-जवाटड़े ऐसी मस्त शोहदी चाल चले कि लालख़ाँ का अपना दिल मचलने लगा:

'काश, इन बेवरदी कंजरों की टश्श-टंकार अपने पुलसिया पैरों में भी होती!'

फिर अपनी पेटी और तुर्रे का ख़याल कर इस हसरत को थूक दिया–'बदकार माँ के यार ख़ुद अपनी करनियों का फल भुगतेंगे!'

पता लगा, थाना तीसरे दिन भी पिंड में टिका रहेगा तो हाका-हाकी मच गई।

छोटे-बड़े टाबर दौड़-दौड़ माँओं-भाभियों को बताने लगे कि मोटे-ताजे मुच्छड़ थानेदार का मुक़ाम आज भी यहीं पड़ा रहेगा।

सुनकर घरवालियों ने झटपट आटे गूँथ तन्दूर तपा दिए। सौ ऊँच-नीच है। खा-पी जाएँ मरद तो संझा तक आधार बना रहेगा।

शाहनी के चूल्हे में पिछली रात से उड़द पकते थे। मक्का के ढोडे बना घी रचाया और मिट्टी की बाटियों में लस्सी-मक्खन डाल पुलसियों को बड़ी बेला जा पठाई।

चाची महरी मथा टेक कुटिया से लौटी थी। भुनती सूजी की खुशबू लेकर बोली–"बच्ची, ठानेदार सलामत अली को तो फिरनी से डाढा प्यार। कहे तो तावली-तावली चावल पीस देती हूँ!"

छोटी शाहनी हँसने लगी–"चाची, ठानेदार को किस चीज़ की कमी! उसे तो नित-नित पकवान! फिरनी न भी मिली उसे आज तो सूख तो न जाएगा।"

"छोड़ री, मैं तो चाव से कहती हूँ। एक तो ठानेदार, दूसरे शाहों का दोस्त-यार, उसकी जितनी ख़ातिर हो, थोड़ी।"

"इस हिसाब से तो कुक्कड़ कड़ाहियाँ चढ़ा दो। मुर्ग़ बने, मुरग़ाबी बने, यख़्नी पुलाव बने..."

चाची अनसुना कर चावल घोटने लगी। कूँडी-सोटे से ऐसा सम किया कि मीठ में रहे ही नाम सिर्फ़ फिरनी बीबी का।

माँबीबी ने शाहनी को छाछ का गड़वा भरते फिर देखा तो कहा–"शाहनी, दो चाटियाँ नीचे जा चुकीं। इतनी लस्सी! पीनेवालों के पेट तो न अफरा जाएँगे!"

"न री माँबीबी, इन धौंसियों की भली पूछी। रात जिगर में भट्टियाँ तपाएँ और दिने लस्सी-पानी से तपन बुझाएँ। अरी, वह पुलसिया क्या जो अपनी हस्ती में पीने-पिलाने के खूँटे न बाँध रखे!"

दिन-भर चोरी-चकारी के पीहने-पिट्टने पड़े रहे। न पता लगे पुलिस क़त्ल की वारदात की कंसो लेने को रुकी है, न लटूरों की ख़ारबाज़ी की वजह से।

शाम पड़े बाग्गे ने जा हवेली में अर्ज़ की–"शाहजी, शाहनीजी ने ठानेदारजी को याद किया है। घड़ी-भर को ऊपर झलकें दे आएँ!"

सलामत अलीजी शाहजी को देख मुस्कुराए। ऊँचे शमलेवाला सिर ऐसे हिला ज्यों किसी डिप्टी के आगे हाज़री हो।

हँसकर कहा–"थोड़ी देर को माफ़ी शाह साहिब! शाहनीजी को हमशीरा समझूँ या साली साहबा, दोनों रिश्तों से बुलावे का टालना सलामत अली के हक़ में अच्छा

नहीं! अपनी हाज़री ज़रूरी है!"

"मालिक हो बादशाहो, जो चाहो सो करो।"

सलामत अलीजी ने मुँह पर हाथ फेरा। साफ़ा ठीक किया–"शाह साहिब, रिश्ते से तो आप और हम दोनों हमजुल्फ़ ही हुए। दोनों बेटियाँ एक ही पिंड की हैं। बड़े कड़े दाने हैं इन आलमगढ़ियों के!"

ठस्सेदार चाल से पौड़ियाँ चढ़ते-चढ़ते सलामत अली दो अंगुल और ऊँचे उठ गए।

आवाज़ दी–"ख़ैर-सुख है न शाहनीजी?"

ठानेदार को देख ज़नानियों को हाथ-पैर पड़ गए।

माँबीबी ने मंजी खींच ऊपर चारख़ाना खेस बिछा दिया।

सलामत अली ने चाची को पैरीपौना बुलाया।

"जीते रहो। जवानियाँ मान। ला री माँबीबी, चिराग उठा ला!"

माथे तक कपड़ा खींच शाहनी पीढ़ी पर आ बैठी।

"सलामत अलीजी, मेरी फ़िरोज़ा बहन कैसी?"

"भली चंगी। यह समझो कि मुझमें और उसमें अब औन-पौन का ही फ़रक रह गया है। चोह की तरह फैल गई है थानेदारनी।"

चाची ने टोक दिया–"बस पुत्तरजी, मेरी बहूटी को नजर न लगाओ।"

थानेदार ने पास खड़ी माँबीबी पर एक दिलचस्प निगाह डाली–"माँबीबी, मियाँ तुम्हारा अभी कुंज्टाहवाली धुरी पर ही घूम रहा है!"

चाची महरी ने झट तार पकड़ लिया–"पुत्तरजी, अपनी बारीक़ अक़्ल और बड़े रसूख से बिचारी माँबीबी का गेड़ा ठेलो। इस तत्ती पर भी कोई रुत-बहार आए! घरवाला वैरी कंजरी के भाव पड़ गया!"

"चाची का हुक़्म हो गया माँबीबी, तेरा यह टंटा निबेड़ने की कोशिश ज़रूर करेंगे।"

शाहनी ने झोली में से दो-चार पोटलियाँ निकालीं। आगे करके कहा–"लो जी, यह सँदेसा मेरी बहनू के लिए!"

"ज़रूर सीलम पट्ट के पराँदे और अज़ारबन्द होंगे!"

'फ़िरोज़ा बहन ने बाँकड़ी और गोखरू मँगवा भेजे थे!"

चाची महरी का ध्यान झट थानेदार के बाल-बच्चों की ओर जा भटका।

"ख़ैर सदके पुत्तरजी, मेरी पोत्री कितनी बड़ी?"

सलामत अली मानो अचानक उमर के हवाई घोड़े से उतार लिए गए हों।

"आयशा बेटी माँ के कन्धे तक पहुँची ही समझो।"

"रब्बा भाग लगाए! ब्याह-बारात अब कौन दूर!"

शाहनी ने मौका सँभाल लिया–"बस चाची, बहनोई अपने ऊपर क्या आन विराजे कि देखते ही कुड़म-समधियाने का आर-ठार करने लगी। अभी तो इनके माथे पर ख़ुदो-खुद सोहणे दामादोंवाली झलकें हैं। घोड़े पर चढ़ जिन राहों से निकल जाएँ, राह सज-सज जाए।"

सलामत अली ख़ुश हुए।

"मैं शाहजी की लिहाज़ो-लिहाज़ी दोस्तों-देवरों मखौल नहीं करता तो आपकी ओर से सालियोंवाली छींटाकशी क्यों?"

शाहनी मीठा-मीठा हँसने लगी।

"जी, मेरी बहनू से कहना–पतली हो जा। नहीं तो बच्चे की शादी-ब्याह सिठनियाँ खानी पड़ेगी!"

दुआ ख़ैर, जेल की मेहनत-मशक्कत से फ़ारिग हो बरख़ुरदारख़ाँ घर लौटा तो दादी करमबीबी ने गाँव-भर में खजूरों की चंगेर घुमा दी।

जो मुँह लगाए, बेबे को मुबारक़ें दे।

"मुबारकें बेबे, ख़ैर सदके, पुत्तर घरों को लौटा है।"

"रब्ब की नज़र हुई सवल्ली बेबे, अब देख मुरादें पोत्रों की।"

"हाँ री! अल्लाह के फ़ज़ल से जातकड़ा अपनी जिवियों को लौटा है। मेहर ऊपरवाले की!"

"बेबे, तेरे हाथ की रोटी खाएगा तो पुत्तर आप ही पल्लर जाएगा।"

पिंड की मुटियारों को बरखुरदार की छेड़छाड़ न भूली थी।

शीरीं ने राह चलते बेबे से पूछ ही डाला–"बेबे, सुनते हैं, जेलवाले ग़र्कजाने जेल में डाढी मेहनत करवाते हैं।"

"न मेरी बच्चड़ी, बरख़ुरदार अपना जेल में हौलदार लगा हुआ था।"

चन्नी ने शीरीं को कोहनी मारी–"हला बेबे! यह तो सज़ा न हुई, अहलकारी हो गई।"

बेबे अपनी रौ में बोलती रही–"धियो, जेलवाले बड़े ख़ुश थे मेरे बरखुरे से। रिहाई का हुक़्म निकला तो दरोग़े ने घर से सेंवइयाँ-हलवा भेजा बरखुरदार के लिए।"

चन्नी मुँह में चुन्नी दबा हँसी रोकने लगी।

बेबे ने देख लिया–"क्यों री कुड़े, यह क्या सैनत मारी शीरीं को! सोचती होगी, दाग़ी होकर छूटा है! फिटे मुँह री! मेरे बच्चड़े पर जिना-ज़बर का इल्ज़ाम नहीं था! उसने अपनी जिवियाँ बचाने का दंड भुगता है। जो अपनी जन-जिवियाँ न बचा सके, उसे हलाल का नहीं, हराम का समझो।"

शीरीं की आँखें चमकने लगीं–"बेबे, यह तो हुई न बात गुरदेवालों की। चन्नी तो मूढ़मती है, इसके कहे का ख़याल न कर।"

शाहनी धर्मशाला से माथा टेककर लौटी थी। राह में बेबे को देख मुबारक़ें दीं–"मुबारक़ें बेबे, मुबारक़ें! ख़ैरों से घर में चिराग़ परता है।"

ख़ैर मुबारक़ शाहनी! बरख़ुरदार मेरा आप आएगा सलाम करने शाहनी को।"

"कर्मोंवाला बरखुरदार जिए-जागे। रब्बा भाग लगाए। बेबे, अब घर-दर बना दे पोत्रे का। सुखी-सांदी तुम्हारे बेहड़े भी रौनकें लगें।"

"तुम्हारा ही मुँह मुबारक़ मेरी बच्ची! सरफ़राज़ मेरे को तो उम्र-कैद। तब तक इसी का मुँह देखूँगी।"

बेबे करमो घर की ओर मुड़ी तो शीरीं से बोली–"धिए, मूठ-भर सेंवइयाँ तो माँ से माँग ला। बरखुरा बड़ा रीझता है घी-सेंवइयों पर। बना दूँगी तो खुशी से खाएगा।"

झोली में सेंवइयों की मूठ डाले शीरीं आई तो बेबे बड़ी ख़ुश हुई। लड़की को दुआएँ दीं–"बलिहारी जाऊँ री! अल्लाह सोहणे भाग लगाए!"

शीरीं ने चूल्हा ठंडा देखा तो पूछा–"कोई काम हो तो बता दे बेबे, करती जाऊँ। कहे तो चूल्हा लहका दूँ?"

"मैं सदके जाऊँ धिए, चूल्हा जला हँडिया ऊपर धर दे। पक जाएँगी सेंवइयाँ तो ऊपर से घी-शक्कर डाल दूँगी।"

शीरीं ने हँडिया चढ़ा आटे की कनाली खींच ली–"बेबे, आटा भी गूँध जाती हूँ।"

बेबे बैठी-बैठी चोखी नजर से देखती रही। ख़बरे कैसे दिल के चोर-दरवाज़े से शीरीं को घर के अन्दर खींच लिया।

कोहनी टिकाए मंजी पर पड़े-पड़े पूछा–"कुड़े शीरीं, तेरी माँ ने अब तक तेरा ब्याह क्यों न किया?"

शीरीं ने अँखियाँ उठाईं–"बेबे, सेंवइयाँ दूधवाली कि घी शक्कर की?"

"बरख़ुरदार दूधवाली ही ख़ुश होकर खाता है।"

"बेबे, कोई लौंग-इलायची निकल आएगी घर से?"

"न री! मैं बूढ़ी-ठेरी अकेली। न खिचड़-पुलाव, न फिरनी-सेंवइयाँ! रमज़ान में जो रोज़े रखे तो दूध का घूँट भर लिया। बहुत हुआ तो साथ पँजीरी फाँक ली।"

शीरीं ने चूल्हे में से लकड़ी खींच ली।

"जरा ध्यान रखना बेबे हँडिया का, कुत्ता न मुँह मार जाए। मैं अभी आई।"

बेबे करमो पड़ी-पड़ी सोचती रही–सुघड़ सवानी घड़ी-दो घड़ी भी आन खड़ी हो घर में तो आँगन-चूल्हा चम्म-चम्म करने लगे। रब्बा, मैं क्या इस कवार को बुलाने गई थी! आप ही ढुकी आई।

शीरीं की आहट पर बेबे ने पूछा–"क्यों री धीया, क्या ले आई?"

"बेबे, यही दो-चार इलायचियाँ और कौड़ी-भर बादाम। इलायची पड़ी थी घर पर, बादाम माँग लाई शाहों के यहाँ से।"

बेबे उठ बैठी। चूल्हे की अँगियारी में दमदम दमकता शीरीं का मुखड़ा देख आँखों में ऐसी सोहनी झलक पड़ी ज्यों लड़की न हो, वत्तर लगी खेती हो।

"वाह री धिया, तू तो बड़ी फ़य्याज़ है, मेहमाननवाज़ है! इतना तो बता, काम-धन्धे को इधर चली कैसे आई?"

"बेबे, एक-दूजे का हाथ बँटाना कोई गुनाह है भला?"

"न री! चन्न वह जो चान्नना करे।"

शीरीं ने हिम्मत कर पूछ लिया–"बेबे, बरखू अब टिककर रहेगा न पिंड में?"

बेबे ने माथे पर त्योड़ियाँ चढ़ा लीं। पहले लड़की को घूरती रही, फिर हँसकर कहा–"हैं री, मैं कौन अचरज-दादी हूँ जो मेरे पोपले मुँह के ज़ोर से मेरा पोत्तरा यहाँ टिका रहेगा! चलेगा ज़ोर तो तेरे जैसी मटक्कनी मुटियार का ही!"

शीरीं हल्की फुल्ल हो उठ खड़ी हुई। झाड़कर सिर पर दोहर की और क़दम उठा लिए।

"चंगा बेबे, मैं तो अब चली। चाचा खू से आता होगा। जाकर तन्दूर तपाऊँ। कहे तो रोटियाँ उतारकर दे जाऊँ?"

"जीती रह! बड़ी-बड़ी उमर हो! ले री, रुक जा। यह आन पहुँचा है बरखुरदार।"

"न बेबे! अब क्या रुकने का काम। हँडिया उतार सेंवइयों पर बूरा बुरक देना।"

"सदके! देख पुत्तरा, तेरे लिए दौड़-दौड़कर आप तो लाई सेंवइयाँ और आप ही बादाम इलायची।"

बरख़ुरदार ने शीरीं का राह रोक लिया–"क्यों जी, जो जना हवालात में रह आया हो, तुम उसे नहीं पहचानतीं?"

दुपट्टी का लड़ मुँह में डाल शीरीं पहले हँसती रही, फिर माथा चढ़ा आँखों से तरेरा–"हट परे! शहरियों की-सी लग्ग-लपेड़ी बातें! जैसे हम न जानते हों कि हवालातों में गीदड़ नहीं बघियाड़ जाते हैं!"

सिर हिला-हिला बेबे बड़ी ख़ुश हुई–"सच कहती है शीरीं:

शेरों की क़ुव्वतें बड़ी
कौन उठाए शेरों की बद्दिदयाँ।"

"हवालातें बेबे, हवालातें!"

"हल्ला जी।"

बरखुरदार की छाती पर निक्की-निक्की फुलवाड़ी खिल आई। हाथ बढ़ा शीरीं का पराँदा पकड़ लिया और सिर पर लाड़ से धप्पा मारकर कहा, "शीरीं, तुम्हें मिली पीरी। कल फ़ज़र तुम बेबे के पास इसी जगह इसी थाँ नज़र न आई तो तेरे चाचे-बाबे समेत घर-दर यहीं उठा लाऊँगा।"

"मुड़ रे, मुड़। न छेड़ मेरी धी को। जा पुत्तर, घर राह तकते होंगे।"

नटखट शीरीं आँखों से एक मिट्ठी भभकी देकर, वह जा और वह जा!

बरख़ुरदार ने झग्गा उतार टँगने पर टाँग दिया।

"क्यों रे, तेरे भाने महीना जेठ-हाड़ है जो गले से कपड़ा उतार डाला!"

बरख़ुरदार के गले का नामा चम्म-चम्म चमकने लगा। दीवार पर टँगी चारपाई बिछाई। पल-भर बैठा। फिर उठ खड़ा हुआ।

"क्यों रे क्यों, ज़रा दीदा लगा के बैठ। अब किन सोचों में?"

बरख़ुरदार ने चूल्हे की ओर देखा–"बेबे, शीरीं हँडिया उतारने को कह गई है। उतार दूँ न?"

"हाँ रे!"

बरख़ुरदार ने हँडिया उतार नीचे रखी और चूल्हे के पास बैठ हाथ तापने लगा।

करम बीबी ने देखा तो ऊँचा-ऊँचा बोलने लगी–"क़ख न जाए तेरा! अरे, कभी बदन से कप्पड़ उतारता है, कभी आग सेंकता है। बरख़ुरदार, सौंह है तुम्हें मेरे सिर की। घर लौटा है तो दिल लगाने की कर। दिल न भरमा। जा, कुछ देर यारों, मित्तर-प्यारों में बैठ आ।"

बरख़ुरदार उठ खड़ा हुआ।

"बेबे, सैकड़ा दो शाहों से मिल जाए तो वाही कर ज़मीन को, तम्बाकू लगा दूँ। कन्धारी बीज न भी मिले, देसी ही लगा दूँ।"

सुनकर बेबे करमो के कलेजे ठंड पड़ गई। रब्बा, जट्ट पुत्तर अपनी जिवियों पर नज़र टिका ताकने-सोचने लगे तो ख़ैरों से फिर आई रुत बहाराँ।

"पुत्तरा, इरादा किया है तो अल्लाह के फ़ज़ल से बरक़तें-ही-बरक़तें।"

बरख़ुरदार ने पाँव उठा घर के बाहर रखा तो पोत्तरे की पीठ देख करमों को अपना बेटा सरफ़राज याद हो आया। हाय री, मुहांदरा तो बच्चड़े का एक तरफ़ रहा, क़द-काठी भी बरख़ुरदार की हू-ब-हू बाप जैसी।

करम बीबी के दिल-मन ऐसा उबाल उठा कि बेसब्री में सरफ़राज को ऐसे हाँक दे मारी ज्यों पुत्तर झोटी के लिए ख़ुरली में पट्ठे डाल रहा हो!

"सरफ़राज़ पुत्तरा, देनेवाले खप्पियों ने तुझे उम्र-कैद तो दे दी, पर रे, तेरी माँ ने भी कम जिगरा नहीं रखा। आ रे, आ। अब घर लौटनेवाला बन। तेरी बेबे बूढ़ी और

कितना जिएगी! बरस-छमाही ही न! आ जा। छूट भी आ!”

पहले नौरात्रे घर-घर जौं और कनक की खेती बोई गई।

नहा-धो स्नान कर दरिया पर, घरवालियों ने छोटे-बड़े आलों में मिट्टी बिछा बीज डाल दिए।

किसी ने आले के आगे सुच्चे पट्ट का पटोला टूँग दिया। किसी ने मिट्टी के कूजे में, किसी ने कोरे घड़े के बिब्बरों में।

जय भुवनोंवाली देवी, तेरी जय! जय साँचे दरबारवाली, तेरी सदा ही जय!

ईद और दशहरे की तिथियाँ अग्गड़-पिच्छड़ निकलीं तो छोटे-बड़े हियरों में हुलास उमड़ने लगा।

कोरे कपड़े दरजी-दरजनों के हाथों में खड़कने लगे।

लट्ठे के लाचे तहबन्द, खाशे के कुरते-झग्गे, दरेश और पटपटी की सूथन-सलवारें, छोटी लुंगियाँ-तहबन्दियाँ–पिंड-का-पिंड दर्शनसिंह की हट्टी पर टूट पड़ा।

“छींट निकाल ओ वीरा, छोटी बूँद की!”

“कोई छपीला खद्दर दिखा दे चाचा!”

“काली सूफ़ दे मेरी सूथन के लिए!”

“बहन वज़ीरो, बहूटी के लिए बुख़ारा क्यों नहीं लेती!”

“लो ताई, धी को दिवाली पर जोड़ा भेजना है तो दरियाई ले क़ाबुली!”

“न, मुझे तो स्याही दिखा धूप-छाँहवाली! दुपट्टा हो जाएगा डोरिए का!”

“वीरा, लाचे दे दो। एक लाल। एक हरा। नीचे लगाने को कन्नियाँ दे दे धारीदार।”

“ले जैना बीबी, दुपट्टी भी ले लो। ओढ़न ताज़ा न होगा तो दूजे कपड्डों की भी क्या फब्बन!”

दर्शनसिंह ने जैना बीबी के कानों में झूलते फम्मनों पर एक चमकीली नज़र डाली और हँसकर कहा–“इस बार भी जिन्स ही कि...”

“वीरा, गऊ के घी की पक्की दो-सेरी। पहनने को कोई ढंग का कपड़ा दे!”

गज्जसिंह ने सत्तो खत्राणी के आगे चमकी का थान फैला दिया–“लो, फब्बीली भी और सजीली भी!”

“न रे, कोई मज़बूत हंडौना कपड़ा दिखा! इसकी न तन्द, न तानी!”

“दर्शनसिंह, मुल्तानी छींटें फैंक। निरा लोहा है, भरजाई! आदमी हँड जाए पर कपड़ा न छीजे।”

करम बीबी ने दूर से हाँक दी–“ले रे वीरा, ये सूत की अट्टियाँ! तेरे भानजे पीछे पड़े हैं, नए झग्गे पहनेंगे! बता, कोई ज़फ्फर चारख़ानी ही बता।”

रसूली गबरून माँगने लगी तो गज्जसिंह ने पूछा–“धिए, बता तो सही न, बनाना क्या है!”

“गौहर के पजामे के लिए!”

“मेरी बच्ची, यह न ले। यह ले फाँटादार बड़े अर्ज़ का।”

चिड़ों की कुन्ती छोटा सा घूँघटा निकालकर बोली–“वीरजी, चौके-भाँडे की मलमल के दो दुपट्टे!”

“भरजाई, मेरी बात का बुरा न मानना। कपड़ा-लीड़ा किसी ने अगली दरगाह नहीं ले जाना। अपने ऊपर यह किरसकारी चंगी नहीं। ला दर्शनसिंह, छब्बी की मलमल के दो दुपट्टे फाड़ दे!”

दुपहरीं ख़ुले कोठों पर मुटियारें रँगरेज़नें बन गईं। कूँडों में रंग घोल-घोल ओढ़नियाँ रँगी जाने लगीं।

“अरी, चुन्नी डाल प्याज़ी के कूँडे में और अबरक़ डाल क़लफ़ के कूँडे में!”

“हैं री, काली मित्री के लिए इतना गूढ़ा रंग! उसे नहीं फबना!”

मोहरे की बेबे अपनी बहूटी का दुपट्टा उठा लाई–“गूढ़ा गुलाबी घोला हो तो वचनो की ओढ़नी भी निकाल दो।”

“बेबे, बहू को हवा लगने दिया कर। भरजाई को ऊपर भेज दे। आप रँग लेगी।”

शिब्बो ने चुन्नी निकाल क़लफ़ के कूँडे से कौओं को उड़ाया और हँसकर कहा–“वचनो भरजाई कुढ़-कुढ़कर रोग लगा बैठी तो पछोत्ताओगी!”

बेबी पी गई। निक्की-सी मुस्कान बिखेर दुपट्टा मंजी पर डाल दिया और जाते-जाते कहा–“लो री चिड़ियो-कुड़ियो, तुम करो वार्तालाप! मैं वचनो को भेजती हूँ।”

शिब्बो हँस-हँस दोहरी हुई–“हाय री, मैं मर गई! आज तो बेबे को सीधे गिट्टि लगी!”

बेरीवालों की रेशमा आ गई। चिट्टी मलमल को सुतली से गाँठें दे दे पोटली बना डाली।

“क्यों री रेशमा, क्या लहरिया रँगने लगी है?”

“न, लहरिया नहीं, टिमका है।”

“किस रंग का?”

“फ़िरोज़ी।”

सहेलियाँ हँसने लगीं–“वाह री गुल डोडो, फ़िरोज़ी के बिना कोई रंग ही पसन्द नहीं!”

रेशमा ने कूँड में चूँडी-भर फटकरी डाली और दुपट्टे को रंग में भिगो दिया।

छोटी-बड़ी कुड़ियाँ आसपास आ जुटीं। गोदियों में नाक बहते भाई-बहन। रंग की पुड़ियाँ ऐसे देखें-परखें ज्यों रँगरेज़ी ही सीखनी हो!

हाथ में मलमल की ओढ़नी लिए माँबीबी आन पहुँची।

“क्यों री रेशमो, दोरंगी लहरिया भी जानती है क्या!”

“क्यों नहीं! आ रँग दूँ। जना ईद पर आएगा तो ऐसा लिपटेगा ज्यों किसी टूने-तावीज़ का बँधा हो।”

रेशमा को बन्देज़ी भरते देख माँबीबी ने पूछा–“भला कहाँ से सीखी यह कला?”

“माँबीबी, परके साल अपनी ख़ाला के पास गई मुल्तान। हमसाए उसके कक्केज़यी पठान। सवानी उनकी ऐसे-ऐसे बेल-बूटे चितारे कि रहे नाम रब्ब का।

“गुलाबी में डालो लाल तो बने आतशी गुलाबी।

“पीले में हरा तो बने अंगूरी।

“लाल को काले में डोबा दे दो, बने उनाबी।

“जंगाली में डाला हरा तो बने फ़िरोज़ी।

"सालू रँगना हो तो पहले मजीठ उबाल लो, फिर कपड़ों को डोबा दे आँवलों में, थोड़ी सी फटकरी बुरक दो।"

"बड़ी गुणिया है री! सासरे जाएगी तो लोक-जहान पूछेगा।"

इधर रंग-बिरंगी ओढ़नियाँ हवा में सूखने लगीं, उधर लड़कियों को हाँकें पड़ने लगीं–"अरी आओ री, दूजे कामों में भी हाथ बँटाओ। राँगली चूनरें खाने-पीने के काम न आएँगी!"

उत्तरी वंड ईद की सेंवइयाँ बँटने लगीं। माच्छियों के तन्दूर पर सेंवइयाँ निकालने की जंद्री लग गई।

ऊपर से गुँथा मैदा डाल जन्द्री की सख़्त हत्थी दबाएँ और नीचे ढींगरियों के जाल पर पतली-महीन सेंवइयाँ बन-बन फैलती जाएँ।

अपने तन्दूर पर भीड़ देख सुलेमान की बाच्छें खिल गईं।

सुलेमान ने छोटे शरीफ़ू को घुड़क दिया–"इधर-उधर अँखियाँ न मटका-फिरा। काम कर। ला बेबे अकबरी, मुझे दो आटा। हत्थों-हत्थ निकालता हूँ।"

"जियो-जागो पुत्तरा, मेरी तो सेंवइयाँ नहीं, जौ का चून है। भट्टी में ही भुनेगा।"

मीरन ने टोपा-भर मैदा आगे किया तो सुलेमान ने आँख मार दी–"तुम्हारे टोपे रहें सलामत!"

"तुम्हारे भी तन्दूर तपते रहें सुलेमान! और मच्छियाँ भुनती-तलती रहें!"

हाजीजी की हज्जन ने अपना तबाख़ आगे कर दिया–"जवानियाँ मान पुत्तर सुलेमान, जल्दी से निकाल दे मेरी भी!"

शरीफ़ू ने नज़र घुमाई–"हज्जन चाची, जान तो एक श्वास में निकल जाती है, पर सेंवइयों को वक़्त लगता है।"

सुलेमान ने भाई को कोहनी मारी–"ज़्यादा हेच-पेच में न पड़!"

चाची ने समझा, बड़ा भाई मेरे लिए छोटे को फटकार रहा है। चुमकारकर कहा–"माँ रज्ज गई। सहजे से करो!"

कादर कलाल मीरन की खोज में इधर आ निकला था। सुलेमान को देखा तो मच्छर गया–"कोह सुलेमान, आज किसकी चीची उँगली पर!"

नूराँ जट्टी बड़ी टैंश में खड़ी थी। अपनी पच्छी आगे-आगे की और अपना सुडौल नाक सुलेमान की सीध कर बोली–"सुन रे, ईद रोज़-रोज़ नहीं आती। सीधी तरह या तो सँभाल तन्दूर या यार-लटूरों से कर लम्मतरानियाँ!"

सुलेमान पहले वक्तों की याद में ख़ुशामद करने लगा–"मेरे सिर की सौंह है नूराँ जो बिना सेंवइयों के परतो। लाओ!"

पच्छी पकड़ाते-पकड़ाते नूराँ ने ज़ालिम अँखियों से सुलेमान को हड़प्प कर डाला–"जर के माच्छी सुलतान, तुमने क्या समझा, तन्दूर गरमाते-लगाते तुम हड्डेदार हो गए हो!"

सुलेमान पहचान गया इस लम्बड़दारी अदा को–"इस बार माफ़ी हो जाए नूराँ! सुलेमान तुम्हारा पुराना ख़ादिम!"

नूराँ हँसने लगी–"हैं रे दिल-फैंकू, तूने किस-किसकी खिजमत न बजा छोड़ी!"

सुलेमान मच्छर गया–"नूराँ, मच्छी छोटे पूँग की हो या डरूरी हो, जाल में

तड़पेगी हमेश!”

सुलेमान ने जन्द्री का कुलफ़ घुमाया, फिर आसपास बच्चों के कान बचाकर हौले से कहा–“लम्बड़दारने, मच्छी-मच्छी में फ़रक। बुरा न मानना। खुंडी छुरियों में अब धार कहाँ!”

नूराँ, जो यारनी जट्टी के नाम से मशहूर थी, अपने हत्थकंडों पर उतर आई–“चुप ओए इश्की टिड्डे, गंड-गुलामी में बड़ी-बड़ी जवानियाँ ढेर हो गईं। तू किस बाग की मूली है!”

सुलेमान ने हँस-हँस सलाम बजाया–“सदके तेरी लम्बी जवानी पर नूराँ! भले तू गलूली फैंक इस मुँह पर, हम तो तेरे पुराने-पुख़्ता आशिक़!”

नूराँ लाड़ से हँसने लगी–“छोड़ रे छोड़! यह तो कह, तेरी लच्छो बाँदरी कहाँ?”

पूरा पसार सुनहली धूप में झिलमिल-झिलमिल करने लगा।

शाहनी को पहले तो दीखे दो मिनारे। जगमग-जगमग। फिर दिखा लौ से लिपा हुआ एक सुच्चा आँगन। अँगना में घुटनों चलता एक लहुडा बालक। उसके कानों में काली सीलम की फुम्मनियाँ। कमर में काली तड़ागी। ऋषिकुमार उतर आया हो कहीं से! ठुमक-ठुमक। यह क्या? कृष्ण कन्हाई के पैरों में जैसे कोई घुँघरू बजते हों! पीछे-पीछे गउओं का झुंड। काली गाय आँखों के आगे आई ही थी कि शाहनी की नींद खुल गई।

“श्रीराम! श्रीराम! सपने में यह क्या मोहनी सूरत दिखाई दी! चारों ओर लौ ही लौ। रक्ख साईं की!”

शाहनी बिछाई छोड़ उठ खड़ी हुई। लोई ओढ़ी और पसार से बाहर निकल आई।

चौके की कुंडी खोलने को क़दम उठाया ही था कि पाँव डगमगाने लगे।

शाहनी सँभली, फिर सिर घूमा और चक्कर खाकर थम्म से जा लगी।

“चाची, ज़रा आना। मेरे देह-चित्त ठीक नहीं लगते।”

हड़बड़ाई-सी चाची बाहर निकल आई–“किसने पुकारा? अरी किसने आवाज़ दी?”

बच्ची को थम्म के पास बैठे देखा तो हवास उड़ गए–“यह क्या मेरी बच्ची! सुबह-सवेरे यहाँ क्या बैठी है!”

“चाची, घूँट-भर पानी तो देना!”

“क्यों री जेठी...” छोटी शाहनी बाहर निकल आई।

शाहनी कुछ कहने को हुई कि गले में खाया-पीया बाहर निकल आया।

माँबीबी फ़िकर से बोली–“अजवायन का पानी उबाल लो चाची!”

दूधारने से अंगार उठा चाची ने चूल्हा लहकाया और आप ही आप बुड़बुड़ाने लगी–“कोई पूछे चित्त-मन ठीक न हो तो...”

छोटी शाहनी पास झुक चाची के कान में बोली–“सत्त अजवायन काहे को! समझ भी जा न चाची! मैं चली माथा टेकने।”

“चाची, भली-चंगी थी मैं रात को तो। खबरे अब क्या...”

“हुआ-हुआ री! भरम छोड़। नहा-धो चौके-चूल्हे लग!”

शाहनी उठ खड़ी हुई। हाथ में उबटन लिया और करतारो को आवाज़ दे कहा–“बल्ली, बर्तन-भाँडे धो, आटा गूँध। मैं नहा के आई।”

चाची की आँखों में शिखामणी जलने लगी। लाड़ से झिड़ककर कहा–"आ री उत्तमगंधो, तावली-तावली आ। मुझे देर होती है।"

दोनों नीचे उतर गईं तो माँबीबी ऊपर से देखती रही। फिर हाथ ऊपर उठाकर कहा–"फ़ज़ल मौला, मेहर अल्लाह!"

जम्मीवाला कूँआ गिड़ने लगा था। खेतों पर सजरी धूप रह-रह उजास करती थी। हवा के हलकोरों में नरमा कपास की डोडियाँ इतरा-इतरा जाती थीं। सुच्चे नीले आसमान की सीध दरिया की चमचमाती नीली लीक धरती पर ऐसे दीखती थी ज्यों धरती और आकाश के बीच की मुँडेर हो।

दोनों ने रेती पर कपड़े उतारे और पानी में उतर गईं।

अँजुरी-भर सूर्यदेव को नमस्कार किया–"सब लोक-ब्रह्मांडों में बड़ा तेरा तप-तेज महाराज...!"

चाची ने भर-भर पानी में तारियाँ मारीं।

शाहनी ने सामने पहाड़ों की सीध सिर नवाँ जयकारा बुलाया–"गौरा भवभामिनी, तेरी सदा ही जय!"

फिर छींटे दे-दे मुखड़े पर डुबकी लगाई तो क्वारी धूप में बदन प्रजात का टुकड़ा बन जल में हिल-हिल हिलोरें लेने लगा।

"बस हुआ बच्ची! सिर नवा पीर-फ़कीरों से ख़ैर माँग!"

शाहनी ने समझ लिया कि चाची जान गई।

आँखें मीट बाबा फ़रीद का ध्यान किया–"तेरे ही रहम-करम से बाबा, नहीं तो यह ऊसर धरती हरियाती! मेहर रखना। इस दिन को धुर चढ़ाना।"

दरिया के कंडे-कंडे चलतीं दोनों गाँव की ओर मुड़ीं, तो शाहनी ने बुल्लेशाह का बारहमासा छू लिया:

"फागुन फूले खेत ज्यों बन तन फूल शृंगार
होर डाली फुल्ल पत्तियाँ गल फूलन के हार
होरी खेलन सँइयाँ फागुन मेरे नैन
झलारो वग्गन
औखे जीवँदिया दिन तग्गन सीने बान
प्रेम के लग्गन
चेत चमन में कोयलिया नित कू-कू
करे पुकार
मैं सुन-सुन झुर-झुर मर रही
कब आवे घर यार।"

अराइयों के खेत से उठ दो मुटियार मूरतें चहकीं:

"सलाम शाहनी!"

"सलाम चाची!"

मुड़कर देखा–राबयाँ, फ़तेह और शीरीं।

"क्यों री चिड़ियो-कुड़ियो, साग-वक्खर बीनने आई हो?"

"जी शाहनी!"

"अरी, तेरे छन्द-कवित्त कैसे?"

राबयाँ का मक्खन मुखड़ा धूप में दम्म-दम्म दमकने लगा–"एक सुना दूँ चाची?"

"हाँ री हाँ, सुना! शाहनी का जी हिरखेगा।"

"लो सुनो:

रंग रस जीनेवालों के
रे साजन प्रीत प्यारों के
जिनके हृदय सूरज
उनकी मुट्ठी धूप
मस्तक उनके चन्द्रमा
जिनके घर में पूत।"

शाहनी ने राबयाँ को ऐसी आँख भर देखा कि लड़की जैसे कोई साध-सन्तनी हो। जानी जान हो। सपने में निरखी लौ याद हो आई।

"जीती रहो। रब्ब बड़े-बड़े भाग लगाए। हाँ री राबयाँ कुड़े, काम-धन्धे से निबट घड़ी-दो घड़ी मेरे पास आ बैठा कर!"

"जी, शाहनी!"

चाची और शाहनी आगे बढ़ आईं तो चाची बोली–"अराइयों की धियों को रूप ऐसा कि देख-देख तिरस मिटे जी की!"

"सच कहती हो चाची! छोटी राबयाँ की बुद्धि तो ऐसी कि चान्नन ही चान्नन हो! नज़र न लगे लड़की को, मुखड़ा निरा फुल्ल गुलाब!"

"धन्य है जन्मनेवाली माँ। हस्साँ अराइयों की ने ज्यों धुर पहाड़ों के सुथरे हवा-पानी से लड़कियों के वजूद बना डाले! हस्साँ क्या कम सोहणी थी! किस्म! कहते हैं न कि जान-प्राण बन्दे को रब्ब देता है और रंग-रूप माँ और बब्ब देता है।"

"चाची, जानती हो, राबयाँ के लिए शाहजी क्या कहा करते हैं?"

"क्या री!"

"कहते हैं, लड़की को देख लें एक नज़र तो चित्त करता है देखते ही जाओ हरणाखी को!"

"यह भी शंसा न हुई, स्तुति हो गई।"

"जो भी कहो, शाह अपने की आँख बड़ी पारखी।"

कचहरियों के अहातों में जट्ट शाहूकारों के ठट्ट-के-ठट्ट ऐसे ताने-बाने बुनें कि मुक़द्दमों में कोई मार जाए। कोई मर जाए। कोई थान से जाए। कोई सर जाए।

पीर-कौड़ी के खेल की तरह कभी अन्दरी टोली मात दे डाले बाहरी को। कभी बाहरी दाँव में दे टँगड़ी।

इलाक़े के जट्ट शाहूकार सब रल-मिल करें मुक़द्दमे और खट्टी कमाई करें वक़ील-अहलमद। गवाह भड़वे किराए के ट्टूट!

क़त्ल-डाका, उधारबन्दी, असल-ब्याज और सूदखोरी में जिवियाँ हड़प्प। क़र्ज़ लिया, भू गहने रखी। न टोंबू, न काग़द। हुई लिखत शाह के हाथ की तो जो जट्ट कहे सो झूठ, जो शाह कहे सो सच्च। पगड़ियों के ज़ोर-जबर बड़े-बड़े रौब-दाबवाले मुक़द्दमे भुगत गए।

गुजरात कचहरी के अहाते में बैठे-बैठे धूलाँवाले चौधरी फ़तेह अली ने मदीनेवाले ख़ुशी मुहम्मदजी को पहचानकर आवाज़ मारी–"ख़ुशी मुहम्मदजी, राजी-बाजी हो न? आज ख़ैरों से कौन से मुक़द्दमे की तारीख़ भुगता आए! ख़ैर-सल्लाह, दो-चार मिस्ल तो लगी रहती हैं न कचहरी में!"

"हाँ जी, चूकनावाली ज़मीन की तारीख़ थी। अगली पड़ गई। सुनने में आया है, आज अदालत-आला शहर से बाहर है!"

"किसकी कचहरी की बात है?"

"वह जी अपने दरिया कलानवाले शेख अहमद के छोटे फ़रजन्द गुलाम मुस्तफ़ा!"

कचहरी का पुराना घुस्सर गौरालीवाला पहलवान ख़ाँ सुनकर बोला–"कोई और वजह होगी तारीख़ लगने की। अदालत आला बराबर शहर में माजूद है।"

"आपको यह कैसे ख़बर?"

"बादशाहो, अदालत आला सवेरे-सवेरे मंडी में भिंडी ख़रीद रही थी!"

बड़ा हास्सा पड़ा।

"देखो न जी, जज-मुंसिफ़ कचहरी के बाहर घूमते नज़र आ जाएँ तो समझो, दबदबा-खौफ़ आधे रह गए। और जो आ जाए नज़र अदालत भिंडी थोम खरीदती, तो इजलास का गुम्बद ग़ायब!"

ऊँचे कड़ियल जवान ने पास आ सलाम किया–"सलाम कहता हूँ चाचा साहिब!"

"जीते रहो। बरखुरदार, बड़ी-बड़ी उमर हो। भला आपजी की पेशी किसके यहाँ थी?"

"शेख़ अजमत उल्लाह साहिब के यहाँ।"

"भुगत गई?"

"न जी, अगली तारीख़ मिल गई।"

फ़तेहदीनजी ने सिर हिलाया–"यह तो कचहरियों के चाव-मल्हार हुए न! हाँ, घर में सब सुख-सान्द है न?"

"जी, अल्लाह की मेहर है।"

"पुत्तरजी, जो दीवानी मामला शरीक़ों के साथ चल रहा था, क्या पहुँचा किसी नक्के पर?"

"न जी! मुक़द्दमें के दौरान साफ़ हुआ कि पट्टीवाली रत्तारिया ज़मीन चाचा नबी मुहम्मदजी ने गहने डाल रखी है।"

"यह तो वही बात हो गई–लड़ाई पड़ी शरीक़ाँ और मालिक बने गवाह!"

नानोवालवाले जल्ले और सम्मू की जोड़ी अहाते के अन्दर दाख़िल हुई तो देखनेवालों की अँखियाँ चौंधिया गईं। कसरती जवान काठी। चेहरे पर लून और खून। तीन डकैतियों में से साफ़-शफ़ाफ़ निकल भागनेवाले शेरों को कौन न सराहेगा!

पास आ दुआ-सलाम की और चौधरी फ़तेहअलीजी से पूछा–"चौधरी साहिब, आपके पिंड का साँसी बाशा किन हालों में! उड़ती-उड़ती कान में पड़ी थी कि इलाक़ा जेहलम में बड़ा ग़दर मचाए हुए है।"

"साँसी पुत्तर का क्या! आज यहाँ कल वहाँ!"

जल्ले ने संज़ीदगी से सिर हिलाया–"बादशाहो, साँसियों के पैरों तले फिरकियाँ। आज सन्दलबार, कल नीलोबार, परसों छच्छ ख़ुशाब।"

खुशी मुहम्मद जी ने गहरी दिलचस्पी से जवानों को देखा और भोले भाव कहा,

“क्यों जी, क्या डाचियाँ हमारी रेल-गड्डियों से भी तेज़ चलती हैं? सुनने में आता है कि बोड़े हों ख़ालस अरबी तो इंजनवाली गड्डी को पछाड़ दें।”

चोर-सफ़रों के माहिर जल्ला और सम्मू ओठों पर ज़बान फेरने लगे। खच्चर बनकर कहा–“बादशाहो, अपना छोटा-मोटा सफ़र तो इन्हीं पैरों पर। झूठ क्यों कहें, आप्पाँ ने तो बजीराँबादवाला पुल ही नहीं लाँघ के देखा।”

चौधरीजी इनके पोतड़ों से वाक़िफ़। हँसकर कहा–“पुत्तरजी, आप तो फ़क़त नींद में ही शेख़ूपुरा, पटियाला, करनाल पहुँच जाते हैं।”

जल्ले और सम्मे ने दाँत निकाल दिए–“सच फ़रमाते हैं चौधरीजी, सिर्फ़ ख़्वाबों में ही।”

पेशी भुगता शाहजी भी आन पहुँचे।

ऊँचा क़द। गुलाबी चेहरे पर चिट्टी पाग। साथ-साथ हाथ का अँगोछा बने भागोवालिए दो गवाह।

“आओ जी, आओ शाह साहिब! आपके बिना मजलिस अधूरी थी।”

भागोवालिए सौदागर सिंह और उजागरसिंह ने जल्लू और सम्मू पर ऐसे नज़र दी ज्यों एक ही जिंस की गठरियाँ हों।

“आज तो गवाहियाँ पूरी हो गईं न शाहजी! अगली दो-एक पेशियों में मुक़द्दमा निबड़ जाएगा!”

सौदागरसिंह ने उँगलियों के कड़ाके निकालने शुरू किए तो शाहजी झट समझ गए। टके निकाल आगे किए–“जाओ बरखुरदारो, मूले हलवाई के यहाँ जा लस्सी-पानी पी आओ!”

लड़कों की गवाही खरी हुई। सतवचन कहकर पाँव उठा लिए।

“शाहजी, यह भागोवालिए बड़े पहुँचे हुए छटीरे मालूम देते हैं।”

“चौधरीजी, इनका कुछ न पूछिए। इनका हिसाब अशमत्रर और तुशमत्ररवाला है। अच्छी तरह पहचानता हूँ, पर आप जानो, मुक़द्दमे में रंग भरने को यही भजनिए काम आते हैं।”

“वाह-वाह शाहजी! क्या फ़रमाया है! इन्हें खड़ा किया कचहरियाँ और गाने लगे भजन!”

शाहजी हँसे–“चौधरी साहिब, हुआ यह कि पिछली सरदियों नौशहरेवाली ज़मीन की मिस्ल लगी हुई थी ख़ाँ साहिब अल्लाह-यार की कचहरी में। पेशी के दिन आकर देखता हूँ तो दोनों गवाह नदारद। देखा-पूछा। पता लगा, दोनों किराए के टट्टू दूध-जलेबी के ठूट्ठे लिए खड़े हैं। मुझे देखा तो हँस दिए–‘माफ़ी शाहजी, आपको दिखानेवाला मुँह बाक़ी नहीं। आपके मुख़ालफ़ीनो ने हमें पटा लिया है। फ़क़त माँयाहब्ये इन जलेबी के ठूट्ठों पर!’

“मैंने दोनों को थापड़ा दिया पीठ पर और कहा–‘बरखुरदार, अपना कुछ नहीं बिगड़ा। ईमान गया सो तुम्हारा और अपने पक्के गवाहों की फ़हरिस्त से तुम्हारे नाम काट दिए मैंने सो अलग।’”

वज़नी गलों की हँसी और खाँसियाँ अहाते में गूँजने लगीं।

“शाह साहिब, फिर?”

“फिर क्या! बस, पाँव पड़ गए। मैंने दूध-जलेबी के पैसे हाथ पकड़ाए और साल-भर पक्का कचहरी में बुला-बुला इजलास में खड़ा न किया। आख़िर नसीहतें निकालीं तो

आज इन्हें कचहरी में हुंग्गड़ी पड़ी।"

जलालपुर जट्टावाले चौधरी वसावाख़ान आन पहुँचे। साहब-सलामत हुई।

"खैर-सुख है न शाहजी! सुनाओ!"

"शुक्र है मालिक का।"

"अड्डे पर ख़बर थी बादशाहो कि सरकार चोरी-डाके बारे ज़बर क़दम उठा रही है! अहलकारों को अगर जानी नुकसान पहुँचा तो हकूमत पिंडों पर जुरमाना करेगी!"

कुंजावाले झुग्गा ख़ान अपनी नोखी कसरती चाल में ख़रामाँ-ख़रामाँ पहुँचे तो मुँह-माथा देख सब पहचान गए कि चौधरीजी फ़ौजदारी जीत के आए हैं।

सबने हाथ पकड़-पकड़ मुबारकें दीं।

"रब्ब रसूल की नज़र रहे सीधी बादशाहो, साँच को आँच नहीं।"

शाहजी ने आगे बढ़ हाथ मिलाया–"झुग्गा ख़ानजी, ख़ैरों से फ़ौजदारी जीतने की खुशियाँ रोज-रोज मयस्सर नहीं होतीं। जीतने का रुआब ही साफ़े को अंगुल-भर ऊँचा कर देता है!"

जेब से भनकड़ निकाल रक्खे को दिया–"ऐसे सोहणे मौक़े पर मुँह तो मीठा हो चौधरीजी का! गुजराँवालिए की दुकान का बदाना ले आओ।"

झुग्गा ख़ाँजी सज गए।

"शाहजी, कुछ पता तो लगे किसी डिप्टी मुख़्तार से, जुरमानेवाली बात कहाँ तक ठीक है!"

"चौधरीजी, ख़ुफिया गारदवाली वारदात में चार-छः गाँवों को हरज़ाना तो भरना ही पड़ेगा।"

चोराँवाली हाजी शाह ने चोह-म-चोह लेनी चाही–"शाह साहिब, इस क़त्ल के बारे तो अपने ख़याल में एक ही बात आती है कि या तो साज़िश है किसी एक पूरे पिंड की या फिर दिलावर ख़ाँ से तआल्लुक रखनेवाली किसी डग्गी छिनाल औरत की।"

वसावा ख़ाँजी ने तीखी नज़र से देखा–"यह तबादलाए-ख़यालात तो नहीं जान पड़ता। यह तो बाक़ायदा पुलिस की तरफ़ से गुनहगारी की पेशकश लगती है।"

शाहजी हँसे–"बादशाहो, कदर-अन्दाज़ होने के लिए कज़फ़हमी छोड़नी पड़ती है। आप मालिक हो, बाक़ी साँपों के आगे दीये जलाने को तो पुलिस भी हमारी कम नहीं।"

झुगा ख़ाँजी को बात पसन्द आई–"बहुत खुब! शाह साहिब, दिलावर ख़ाँ तो सिधार गए बिचारे। अब तो सरकारी झाड़ा-फूँकी ही बाक़ी है। देखें, गुनाह किस पिंड-ग्राँ के मत्थे मढ़ा जाता है!"

घर-घर गेहूँ की बालियाँ थम्मों पर सज गईं। मौली के लाल डोरे से बँधे अन्न महाराज के सिट्टे ऐसे सजे कि देख-देख मन-आँखों की भूख मिटे।

शाही के घर हलवे-पूरी की कड़ाही चढ़ी और सुगन्ध जा पहुँची ब्राह्मण पांदों के घर।

पहला न्योंदरा। शाहनी ने लीप-पोत चौंका सुच्चा किया। आसन बिछा चौकियाँ रखीं। हल्की आँच पर खीर का देगबरा चढ़ाया। कड़ाही में सूजी भुनने लगी।

चाची ने मूठ-भर बादाम और किशमिश डाले कि देख-देख करतारो की जीभ

रसाने लगी।

"शाहनी, ज़रा मीठा तो चखा दो!"

चाची ने टोका–"सब्र कर री करतारो! अभी कड़ाही सुच्ची-सुच्ची है। पहले ब्राह्मण पांदे को तो जीम लेने दे!"

शाहनी हँसने लगी–"बरस-बरस के दिन कोई मन्त्र-सलोक उच्चार। थोड़ी देर हौंसला रख री, पांदे के आने तक तेरी तृष्णा न सूख जाएगी!"

करतारो मरगई निःशंक हो खिड़खिड़ करने लगी–"शाहनीजी, रब्ब के घर में भी बाम्हनों का रसूख। यहाँ भी भरे भांडे दूध-घी के पांदों के लिए ही। करतारो बिचारी के दिल का थान सुंजा सूना।"

शाहनी ने कड़ाही उतार नीचे रखी और चाची को हौले से कहा–"चाची, टँगने पर से मेरा सूथन-कुरता दो करतारो को। नहा-धो पहने, दिल में ठंड तो पड़े।"

चाची पसार से जोड़ा ले आई। करतारो की बाँह पर डालकर कहा–"जा री, कूँई पर नहा-धो आ। फिर आकर पूरी बेल! भगवान पांदा आता ही होगा।"

काशनी छींट में पीली टिमकीवाला जोड़ा पहन करतारो ऊपर आई तो अपनी फब्वन पर हँस-हँस इतराए।

पांदों की क़तार जीमने बैठी तो बनेरे पर हथेली टिकाए करतारो जातकों से हँसी-ठट्ठा करने लगी।

"खाओ रे खाओ! न खाओगे तो वेद कैसे पढ़ोगे! वेद न पढ़ोगे तो सुखी-सांदी लोगों के ब्याह कैसे पढ़ाओगे!"

भगवान पांदे का लड़का श्रीनाथ टिकटिकी लगाए करतारो को देखने लगा। फिर अपने चाचे की ओर मुँह करके कहा–"चाचाजी, कुल्लूवालवाले साहिब दित्ते के साथ क्यों न बहन करतारो का साक-सम्बन्ध करवा दें!"

"हाय री, मैं मर गई!"

करतारो ने हाथों से आँखें छिपा लीं और दौड़कर छोटी बैठके जा लुकी।

शाहनी ने हँस-हँस श्रीनाथ की थाली में हलवा डाला–"मैं सदके जाऊँ! पांदेजी, इस छोटे से मस्तक में इतनी अक़्लें! क्यों न हो, जातक ठहरा काशीवालों का!"

पांदेजी ने थाली पर से सिर उठाया और गहर-गम्भीर आवाज़ में कहा–"शाहनी, इस लड़के के मुँह से संजोग बोले हैं ख़ुदो-ख़ुद। साहिब दित्ता दुहाजू है तो क्या! दरवाज़े उसके लवेरा बँधा है। करियाने की हट्टी है। और क्या चाहिए बन्दे को–कुल्ली, जुल्ली और गुल्ली!"

शाहनी ने खीर का कटोरा भर आगे किया और हुलसाए कंठ पूछा–"पांदेजी, जने जजमान की उम्र कितनी होगी?"

चाची महरी ने बीच में ही टोक दिया, "ख़ैरों से उम्र दुहाजू की जितनी भी हो, हमें मंजूर। आज दिन-वार अच्छा है। भगवानेया, संझा तक हमारा गरी-छुहारा पहुँचा दे उनके घर।"

खिला-पिला वेद-पुत्रों को शाहनी ने दक्खना दी और गरी-छुहारेवाली सगुणों की लाल पोटली पांदेजी के हाथ में थमा चाँदी के पाँच टके हथेली पर रख दिए–"पांदाजी, बिन माँ-बाप की इस लड़की का पुण्य-कारज आपके हाथों हो जाए तो अपनी बेफ़िक्री हो। हमारी ओर से जो जुड़-बन आएगा, कोर-कसर न रखेंगे।"

पांदेजी ने पगड़ी छू चाची से पूछा–"कुल्लूवालवाले लड़की की उम्र पूछें तो क्या

कहूँ?"

तेवर चढ़ा चाची ने पांदे को घूरा–"मैंने कहा भगवानेया, हम जो पूछें उम्र दुहाजू की तो तुम भी पूछ लो लड़की की। बताएँगे बराबर। बस नाम ले नौ ग्रहों का इस सिरमुनिया का सगुण चढ़ा आ।"

पांदे का ध्यान न परता–"शाहनी, याद तो करो, कितनी उम्र होगी अपनी कन्या की?"

चाची ने मन ही मन कोई गिनती की–"होगी कोई सोलह-अठारह!"

शाहनी ने कौड़ियाँ लाँघना मुनासिब न समझा। पोले मुँह कहा–"चाची, करतारो कुछ बड़ी होगी।"

भगवान पांदे ने निस्तारा किया–"इसके माँ-बाप पूरे हुए महामारी में!"

चाची महरी ने घबराकर विच्च-विचौली की–"भगवानेया, हो गई न बात साफ़! उँगलियों पर बरस गिन डाल और कुल्लूवाल की बाट पकड़ने की कर!"

शाहनी की हाँक पर करतारो अन्दर आई तो आते ही बर्तन-भाँडे माँजने लगी। शाहनी को लड़की पर लाड़ आने लगा–"हैं री, बर्तन-भाँडों में जोबन गुज़रा जाता था! रब्ब करे, इसके भी जूड़ी-संजोग ख़ुलें!"

हुलसी करतारो उपलों की राख से काँसी के कटोरे चमकाने लगी।

चाची ने घुड़का–"कुछ ढंग से री! इतना न हिला कर। अन्दर अब अँगिया पहना कर। कल बाल धो-धा सिर दिखाना। कहीं जूँ-लीखों का लश्कर तो नहीं जमा तेरे झाटे में!"

दीवे-जले पांदेजी आन पहुँचे।

परने के छोर से बताशे निकाल शाहनी के हाथ में रखे–"बधाइयाँ शाहनी, मुँह मीठा करो। करतारो की बात पक्की हुई।"

शाहनी ने चाची को आवाज़ दी–"देवरानी, बिन्द्रादई को..."

"बधाइयाँ री, बधाइयाँ! करतारो की मँगनी हुई है कुल्लूवालवालों के घर। माँबीबी, ज़रा हाँक तो देना लड़की को!"

तद्दरों में मुंजी का भड़ोला उठाए करतारो ऊपर आई तो भगवान पांदे को मंजी पर बैठा देख दिल में खलबली मच गई।

"करतारो, तनिक सुरख़रू हो इधर तो आ! पांदाजी तुम्हें आशीष देने आए हैं।"

ओढ़नी से सिर ढक-ढका करतारो पास आ ऐसे खड़ी हुई कि सबकी चेरुली हो।

"हाथ जोड़ दंडौत कर री पांदाजी को! तेरा सगुण लाए हैं!"

हक्की-बक्की करतारो पहले बिटर-बिटर ताकती रही। शाहनी की बात अकलबुद्ध तक पहुँची तो लपककर शाहनी के गले आ लगी, और ऊँची-ऊँची घुमाइयाँ लेने लगी–"न शाहनीजी, मैं न जाती पराए घर! हाथ जोड़ती हूँ, मुझे न भेजना!"

छोटी शाहनी पहले हँसने लगी, फिर ऊपर से फटकारकर कहा–"चुप री, तू अनोखी है क्या? रानी हो डावरी, सभी साजें अपने कंत प्यारों से!"

करतारो का हियरा हुलास-भरा उमड़-उमड़ आया। चित्त न चेत्ता और बैठे-बिठाए यह भागीभरा दिन आन पहुँचा!

आँचल से आँखें छिपा करतारो चाची के साथ जा लगी।

"मैं नहीं चाची, मुझे न भेजना पराए घर।"

माँबीबी ने झिड़का–"चुप री, अकल कर। ऐसी सुल्लक्खी घड़ी अवा-तवा नहीं बोलते! रब्ब का शुक्र कर। भोले भाव बालक के मुँह से तेरे जूड़ी-संजोग ख़ुल गए!"

शाहनी ने दूध का कटोरा पांदाजी के आगे किया–"मुँह जूठा करो महाराज! क्या कुल्लूवालवालों ने कुछ पूछा-ताछा?"

"भगवाना कोई लग्ग-लपेड़ नहीं रखता। बात सब खोल दी। लड़की भली है और शाहों की छाँह में..."

एक ही डीक में कटोरा ख़ाली कर पांदाजी ने न परने से मुँह पोंछा, न हाथ से मूँछें।

चाची महरी समझ गई। शाहनी से कहा–"बच्ची, गऊ का घी डाल दूध और ले आ। भगवान पुत्तर ज़रा थकान तो उतारे।"

पांदाजी ने बड़ी ठंडी निस्संग आवाज़ में कहा–"शाहनी, ज़रा गिरी-छुहारा डाल धीमी-धीमी आँच तत्ता होने दो दूध। इतने कुछ सुना दूँ:

श्री गणेशाय नम:
पीताम्बरधरं विष्णुं कृष्णवर्णं चतुर्भुजम्
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये।
नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत।
व्यासं वशिष्टनप्तारं शकते: पौत्रमकल्मषम्।
पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम्।
व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे।
नमौ वै ब्रह्मविधये वासिष्ठाय नमो नम:।
अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरि:।
अभाललोचन: शम्भुर्भगवान बादरायण:।"

दीपक की लौ भगवान पांदे के गले से विष्णु सहस्रनाम का उच्चारण सुन कुछ ऐसा सुन पड़ा कि कोई अबूझे दैवी वचन दोनों लोकों को बाँधे हुए हों। जय-जय संस्कृत महारानी, अपने जैसे मूर्ख जन चाहे कुछ ना समझें-बूझें, फिर भी सुनकर मन के अन्दर-बाहर चान्नन ही चान्नन।

सबने हाथ जोड़ सिर नवाया तो करतारो ने भी माथा टेक लिया।

"जियो बेटी, जियो! अगले घर जा फलो-फूलो! याद रखना:

नाग शोभे मदकर नीर शोभे इन्दीवर
रैन शोभे हिमकर नारी शील रति ते।
शोभत तुरंग जब धाम शोभे उत्सव
शोभे व्याकरण वाणी नदी हंस गति ते।"

दिलों में जीने की रीझें जगा बैसाखी के ढोल ऐसे गूँजने लगे ज्यों हाथ-पैरों में ताज़े खून लहराने लगे हों!

पीपल, बोढ़, कीकर, फलाह और नीम के सजरे सोहले पात धूप में यूँ चमकें-दमकें ज्यों दूध-पीते बच्चों के मुखड़े टहनियों पर जा लगे हों! अलग-अलग कसारोंवाली पकी

फसलें बहुरंगी झलक मारें ऐसी कि हल्के-गूढें रंग की ओढ़नियाँ धूप में सूखने फैली हों!

घोनी का लाल कसार। डागर का कलिक्खन लिए हरा। बिना कसार की मोनी। किसी पर रुत की पीलाई। किसी पर पकने की ललाई।

माढ़ीवाली खेतियों में वाढी करनेवाले जट्ट जने चलते-फिरते पेड़ों से दीखते।

कट-कट दूधिया कनकों के ढेर लगने लगे।

दुपहरीं शाहों के यहाँ से सिरों पर चाटियाँ-चंगेरें उठाए माँबीबी, करतारो और बाग्गा दूर से आते दिखाई दिए तो भत्ते वेले के लिए मुँह-हाथों के पसीने पुँछने लगे।

अल्लाह रक्खे ने दूर से हुंकारा दिया–"आओ कर्मावलियो, ज़रा त्रिखा पैर उठाओ। बाग्गेया, तेरे घड़े में ज़रूर घी है, पर इसकी बारी पीछे। पहले तो पीने दो न लस्सी!"

सफ्फू ने माथे का पसीना तहबन्द के लड़ से पोंछा और मिट्टी का कटोरा माँबीबी के आगे बढ़ा दिया–"ला फूफी! अपने लिए तो तेरा ही हाथ मुबारक!"

माँबीबी ने त्यौरी चढ़ा ली–"क्यों रे भतीजड़े, फूफियाँ क्या सिर्फ़ लस्सी पिलाने को?"

कटोरा ख़ाली कर सफ्फू ने फिर आगे बढ़ाया और हँसकर कहा–"फूफियों का एक और भी काम होता है। कहो तो बता दूँ?"

"बता छोड़ भतीजड़े, कहीं मेरे ही मन अरमान न रह जाए!"

"कान इधर कर फूफी! कटोरा-भर छाछ का भतीजे के लिए, डली-भर मक्खन भी डालती हैं फूफियाँ!"

"लो बिसर गईं बातें! आख्यान क्या और आख्यान की ख़ुम्बी क्या! भतीजे, तूने इसके लिए इतनी लम्बी बात सजाई!"

वज़ीरे ने पास आ करतारो से छेड़छाड़ की–"बहन करतारो, आज तो मेल घी-शक्कर का है न!"

"वीरा, सोलह आने सच्च! आज तुम्हारे लिए आई हैं दो-दुप्पड़ी रोटियाँ और घी-शक्कर!"

कर्मदीन ने हाथ से गेहूँ की भरी उठा ढेर पर फेंक दी और तम्बे से पसीना पोंछ पास आ बैठा।

"बीबी रानी, जट्ट-जटुंगरों को ज़रदे-पुलाव नहीं चाहिए। उन्हें तो चाहिए मोटी-तगड़ी रोटियाँ और गला हरा करने को घी-शक्कर!"

करतारो रोटियों पर घी-शक्कर रखने लगी।

जविन्दे ने ओठों को छाछ से तर किया और करतारो से पूछा–"बहन करतारो, लहरें-बहरें दरिया में कि जिवियों में?"

फत्ता हँसने लगा–"लहरें दरिया में और बहरें जिवियों में। क्यों बहन करतारो?"

करतारो ने पहले माथे पर त्रिउड़ी चढ़ाई, फिर सिर घुमा बुड़बुड़ाने लगी–"जाने मेरी जुत्ती!"

अल्लाह दित्ते ने हँसकर कहा–"करतारो भोलिए, रुत-बहारें फुदकनहार! इन पर गुस्से-गिले नहीं करते।"

माँबीबी ने करतारो को खीजते देखा तो हुज्जतियों को डोबा दे दिया–"सुखी-सांदी वीरो, करतारो की झोली में आसीसें डालो। बीबी की मँगनी हुई है कुल्लूवाल।"

करतारो ने लाज के मारे चुन्नी में मुँह छिपा लिया।

माँबीबी नटखटियाँ करने लगी–"पहले बधाई, पीछे शीरनी। करतारो लम्बी इन्तज़ारों के बाद सासरे चली है। दिल से आसीसें दो। तुम्हें हर वाढी पर खिलाती-पिलाती रही है।"

अल्लाह रक्खे के मुँह का लुकमा गले में फँस गया। लस्सी का प्याला नीचे रखा, तहबन्द से हाथ पोंछे और करतारो के सिर पर हाथ रख कहा–"अपने घर बसो-रसो। रब्ब भाग लगाए।"

करतारो सचमुच में सिसकारियाँ भरने लगी।

वज़ीरा, फत्ता, गुल्लू, जुम्मन–सब घेरकर खड़े हो गए।

माँबीबी आधी रोए, आधी हँसे।

"हैं रे बेअक्लो, पहले क़िस्सा तो बनने दो। अभी तो मँगनी हुई है, जब ख़ैरों से डोली चढ़ेगी तब रोना!"

करतारो ने आँखें पोंछ लीं और चंगेर से निकाल रोटियाँ वरताने लगी।

मेहरअली को आते देखा तो माँबीबी बोली–"हैं रे मेहरअली, तेरी ख़ाला लगती हूँ। कभी दुआ-सलाम तो किया कर!"

"सलाम करता हूँ ख़ाला!"

गबरू जवान मेहरअली धूप में भख-भख पड़ता था। गंधमी रंग पर अनोखी चमक जवानी और मेहनत की।

रोटी पर शक्कर-घी रख माँबीबी ने तो मेहर ने ठठोली की–"किस-किसको खिलाओगी ख़ाला! सारे पिंड की ही ख़ाला और फूफी बनी बैठी हो!"

"सुन भान्जे, आज मैं लाड़-प्यार का नहीं, मेहनत-मशक़्क़त का खिलाती हूँ। रब्ब राक्खा तुम्हारी मेहनतों का। भर-भर काटो फ़सलें और ढेर लगाओ ऊँचे।"

"हला ख़ाला! तुम तो ऐसी उच्चरती हो ज्यों हम आप ही अपनी जिवियों के मालिक हों! गाह पड़ें, जोगें चलें, त्रिंगल फिरें, दानों के ढेर लगें–खेत तो शाहों के ही न! अपने हिस्से तो यही मेहनताना–वाढी की कुछ भरियाँ!"

माँबीबी के कान खड़े हो गए।

"क्यों रे गजैबी गोले, तू अनोखी वाढी करने चढ़ा है! जिसके पास जिवियों की मालकी हो, वह फ़सलें न ले तो और क्या मुजारे लें। काम्मी मुजारों को तो बाँट मुताबिक मेहनताना लगा ही हुआ है।"

मेहरअली ने छाती पर हाथ फेर बगलों में दबा लिए, फिर अड़ियल घोड़ों की तरह शुंकारकर कहा–"शाहों की देनदारी में तो हम घुटनों-घुटनों ख़ुबे हैं। कस्सो की वाली ज़मीन शाहों के खूँटे से छूट जाए तो डटकर करें मेहनत और कुछ खाएँ और कुछ बचाएँ।"

"मुड़ रे मेहरा, समझ कर कुछ! शाह पैसे-धेले से तेरी मदद करते हैं, औकड़ समय ढकते हैं और तू इन बदगुमानियों में!"

मेहरअली ढिठाई से सिर हिलाने लगा–"ख़ाला, तुम आप शाहों की खिजमत में–यह लेखे-जोखे न समझोगी!"

फ़रमानअली को पुत्तर की बातों पर लाड़ हो आया, पर झिड़ककर कहा–"कहते हैं न, जट्ट यमला और ख़ुदा को ले गए चोर। मुजारे असामियों के लिए हिम्मत बरक़त शाहों से। जिसकी मालकी उसकी ज़ोरावरी। पुत्तरजी, जिसका दित्ता खाइए तिस कहिए शाबाश!"

मेहरअली ने ज़मीन पर फैले सत्थर की ओर देखा–"जी, जिवियों की मेहनत-मजूरी जट्ट किसान के जिम्मे और घुड़चढ़ी-निगरानी शाहों के! घोड़े पर चढ़ इधर-उधर खेतों पर नज़र मारी, मशीरी की और हर फ़सल के दाने अपने कोठों में भर लिए! पसीना बहाया तो काम्मियों ने!"

"बस ओए मेहरा, अफ़लातूनी न झाड़! रोटी-टुक्कड़ जो सिदक से मिल रहा है, उससे भी जाएगा।"

मेहरअली शुंकारने लगा–"चार आना सूद एक रुपए पर और एक पंड दानों की बीघा ज़मीन पर। बाक़ी जो बचा-ख़ुचा, उसमें कम्मी-कमीनों की उम्रें पार।"

फ़रमानअली ने लस्सी का कटोरा ख़ाली कर नीचे रखा और डपटकर कहा–"पुत्तरा, वित्त में रह। काँटोंवाले झाड़ी-बूटी के बेर उगाने चला है क्या? ओ भोलया, शाहों की मल्कीयतें लाल बहियों में और हमारी अपने वजूदों में! शाह जितना हाथ फैलाए सो उसका। जट्ट जितना पसीना बहाए सो उसका।"

माँबीबी ने भी घुड़की दी–"मेहरअली, जट्ट पुत्तर होकर तेरी ऐसी हकूमती अदा! अभी तो ख़ैर-सल्ला मसीते दो-चार सपारे ही याद किए हैं। अरे, शाहों की मालकी चोरी-चकारी और डाकेज़नी से नहीं जो उन पर गुस्से-गिले कर रहा है!"

मेहरअली ने घी लगी दुप्पड़ के चार टुकड़े किए और निवाला मुँह में डालकर कहा–"दूध-मलाई धनाढ शाहों की और छाछ-लस्सी हमारी! लानत हमारी मेहनतों पर!"

"बस ओए शोख़ीख़ोरे, चिड़ियों के दूध पर नज़र रखी तो हाथों से ख़ाली तोते उड़ाएगा।"

मेहरअली ने ऐसा मोहतबिर मुँह बनाया कि बाबे का पुत्त लगने लगा। आँखों पर हाथ की ओट करके ऊपर देखा–"चाचा, दुपहरी जिसे ख़ुलीआँखों से देखा नहीं जाता वही सूरज-मूरज पेशी वेले आप ही ढल जाता है।"

सुनते ही फ़रमानअली की साँस ख़ौफ़ में क़ैद हो गई।

इतनी ज़ोरावरी और जोम जवानी का! बरखुरदार अपना क्या शाहों से लिए नए-पुराने कर्ज़ उतारेगा? नालायक! अंगुल दिखा दी वह भी सूरज को कि ढल जाएगा! साथ ही बाप को धौंसा कि तू भी!

झुँझलाकर कहा–"पुत्तरा, जट्ट की पोटली में कर्ज़-उधार न हो तो वह किस शहंशाह से कम! ख़ुदावन्द क़रीम भी सब्जे उगा-लहरा फ़सलें दूसरों को सौंप देता है। याद रख मेरा कहना, बेशक़ अपने को जाट समझ, खिज़मतगार समझ, पर शाह नहीं। ख़ुदा नहीं। तू मेहनतों का मालिक है।"

सफ्फू के कलेजे में ख़ुब्ब गई–"यारा, तुझे तो रब्ब भी इन चिट्टी पगड़ियोंवालों का जोड़ीदार लगता है।"

अल्लाह रक्खे ने धमकाया–"अरे भड़ुवो, की न फिर काम्मी-कमीनोंवाली बात! घी, खाँड और अनाज शाहों का और उन्हीं की बदखोई हमारे मुँह! सुना हुआ है न कि कटोचों के यहाँ काम्मियों का आटा और खुशामदियों को चावल! पर अपने शाह ऐसी दुजैगी नहीं करते। हर बरस वाढी पर खाए हुए घी-चावल अगली वाढी तक रूह को परचाए रहते हैं। बुरी वस्त है जो हम शाहों का लूण-मीठा खाकर उनकी निन्दा-चुग़ली करें। सच्च बात तो यह कि शाह शाह हैं अपने मुक़द्दर से! जट्ट जट्ट हैं अपनी तक़दीर से!"

मेहरअली ने जैसे अपनी गुत्थी से आख़ीरी मोहर निकाल दी–"ठीक है, पर जी तदबीर कहाँ गई?"

मेहनत मस्तानड़े जट्टों के जुट्ट-के-जुट्ट शाहों के घर आन पहुँचे तो सजरी लिपाईवाला आँगन लश-लश करने लगा। हाथ-पाँववाले मर्द जनों के वजूद ऐसे चमकें-लिशकें ज्यों कुम्हार के तपे बर्तन!

मोटे-गाढ़े तम्बे और गलों के नीचे फैली बालों की क्यारियाँ। गंधमी चेहरों पर कलमें और मूँछें ऐसी सोहवें जैसे कड़ियल ज़ेवर!

तन्दूर के पास मीठी गन्ध फैलाते चावलों के देगबरे, खाँड-शक्कर के घड़े और घी के कुज्जे-कुप्पे। आँगन में फैली मिट्टी की कुनालियाँ ऐसी दीखें ज्यों धड़कती ज़िन्दगानियाँ साध-सद्धरों की आस लगाए बैठी हों!

बास्मती की मुशकें हवा में लहराने लगीं।

जविन्दे हलवाई ने पोनी से चावलों की कणी देखी तो शाहजी बोले–"ख़ुला घी डालना जविन्दे चाचा! पैन्दे तक चावलों में रच्च जाए।"

"लो जी, कहो तो घी-चावल की खीर बना डालें। अपने किए तो बड़े प्रेम से पकाए हैं।"

"चाहिए भी ऐसे ही। जने जवानों ने वाढी में पसीने बहाए हैं। उनके दिल-देह की तृप्ति तो दरकार है न! रसद हो पूरी चोखी तो फिर कमी काहे की!"

ऊपर बनेरे पर बच्चों-जनानियों की भीड़ आ ढुकी।

जने जट्टों की पाँतें आँगन में फैलने लगीं और वजूदों के आगे कुनालियाँ सजने लगीं।

जविन्दा हलवाई भर-भर कड़छे निकाले चावलों के और शाहजी उँडेलें घी और छोटे शाह मूठ भर-भर खाँड-बूरा बुरकने पर।

"जी-भर खाओ जवानो, कोई कसरवन्दा न रहे। हाँ वजीरया, कटोरे जितनी तेरी हथेली और एक तूत जितनी तेरी बुरकी। यह तो कोई बात न बनी!"

साथ बैठा सफ्फू हँसने लगा तो चिट्टे मज़बूत दाँत चावलों को तड़पाने लगे।

रहमत लम्बी-लम्बी उँगलियों में चोखी मूठ समेटे और मुँह में डाल ले!

मियेख़ाँ ने देखा तो हँसकर कहा–"शाहजी, रहमत पहलवान नशाइयों के मेले में मलंग पहलवान को पछाड़ चुका है!"

शाहजी ने दो-चार बाटियाँ भर चावलों की और डाल दीं और ऊपर से तर किया घी और बूरे से!

"बरखुरदार खाँ, जीत गए की जीत और निभाए गए की प्रीत! खाने में हारना मत!"

"तौबा करो शाहजी! खाँड-चावल से भी भला कोई हार माने!"

जलाल की बन आई–"शाहजी, सिक़न्दरे का पेट तो ख़ैरों से खेत है। जो खाए समा जाए।"

शाहजी ने ख़ुश होकर थापड़ा दिया–"बल्ले, बल्ले! ओ खूबसूरत जवाना, तेरी मशहूरी गाँव के माथे!"

चौधरी फ़तेहअली निक्का-निक्का हँसने लगे–"शाहजी, बात तो चौखी तब बने जब

जलाल अपना भी कुछ कर-धर के जलालुद्दीन हो जाए!"

बूरेवाला थाल हाथ में लिये-लिये काशीशाह इधर मुड़े और बोले–"जो जलाल वही जलालुद्दीन। फ़र्क़ सिरफ़ पुकारने में!"

बड़े शाह ने सिर हिलाया–"नहीं काशीराम, फ़र्क़ नाम में नहीं, काम-कार में। लो सुनो, पेशा डाकेज़नी तो नाम जलालू। तासीर में फ़िराक़दिली तो नाम जलालुद्दीन। हाथ में तसबीह और ज़बान पर नाम मालिक का तो नाम सैयद जलालशाह!"

काशीशाह मालिक को याद करनेवाले सूफ़ियाना लहज़े में बोले–"तारीफ़ उस रब्ब की जिसने जहाँ बनाया!"

शाहजी ने छोटे भाई की ओर सुहानी नज़र मारी और मान से कहा–"काशीराम! कुल, धर्म और घर की मर्यादा तुम्हारे जैसों के हाथों में! तुम्हें देखकर मैं दो-दो अंगुल ऊँचा हो जाता हूँ।"

काशीशाह ने बड़े भाई के आगे हाथ जोड़ लिए–"भ्राजी, जो कुछ भी हूँ आपकी छत्रछाया में! नहीं तो मैं किस जोग!"

दोनों भाइयों की मीठी बातें सुन ऊपर बनेरों पर बैठी जनानियाँ अँखियाँ भर लाईं।

शाहनी ने आँचल से ख़ुशी के आँसू पोंछ डाले और देवरानी के कन्धे पर हाथ रख बोली–"सुना है री, देवर मेरा कैसे-कैसे मिट्ठड़े बोल बोलता है! जिए-जागे यह राम-लखन की जोड़ी।"

दोनों देवरानी-जिठानी ऊपर से निहारती रहीं। पाँतों में बैठे धरती-पुत्र और चिट्टी पागों में फबते दोनों भाई। धन्य-धन्य री पृथ्वी महतारी, नित-नित हरियाती तेरी गोद! आगे-पीछे बरक़तें और सोहणी फ़सलों के संजोग!

"मैंने कहा बच्ची, गए बरस तो इस अँगना ठट्ठ के ठट्ठ थे! इस बार की भीड़ क्यों पतली?"

"चाची, यह ख़ैरों से अभी आधा पूर है। पछेतरी पटरानियाँ कनकें तो अभी खेतों में खड़ी हैं। आधे जवान गबरू तो उन्हीं की टहल-सेवा में।"

चाची महरी ने नीचे नज़र मारी–"हैं रे, आज अपना मेहर नहीं दीखता!"

मेहर के चाचे ने चाची की आवाज़ सुन ली। नीचे से ही हाँक दी–"जातक को सलामतगढ़ भेजा है चाची! कल परतेगा।"

"लो, कचहरी-अदालत में तारीख़ तो न थी कि यज्ञ-उत्सव में न शामिल हुआ!"

फ़रमानअली ने और भी ऊँची हाँक दी–"चाची, मेहर के मामू के पुत्तर ने आना था खयूड़े से। हर साल कटासराज से सुच्चे गुलाबों की पाँखुड़ियाँ लाता है। एक पंड यह भी ले आएगा तो गुलकन्द डालनेवाले बनेंगे।"

शाहजी ने ताया मैयासिंह से पूछा–"अपना क़ाबुल क्यों ग़ैरहाज़र?"

"न पुत्रजी, ग़ैरहाज़र कोई नहीं। कूएँ तक गया था। अभी आया खड़ा!"

क़ाबले का जोड़ीदार मरहम हँसा–"शाहजी, घी-चावल की मुश्क पर कौन है जो धाम न खाने आए!"

ताया तुफ़ैलसिंह ने तीती नज़र इस लटबौरे पर डाली और डपटकर कहा–"ओए, पल्लू कस तम्बे के! आदमियों में बैठना सीख!'

उत्तरी वंड का सुल्तान आ पहुँचा तो देखनेवाले अश-अश कर उठे। डाढी दरशनी काठी। कुनाली में हाथ डाला तो गाँव-भर की अँखियाँ सराहने लगीं।

“हैं री ख़ैर सदके, फब्बन देखो। नौशा लगता है नौशा। हाँ री, चढ़तल देख। उजले पक्ख ज्यों लहरें चढ़ आई हों जवानी की! नाक तलवार से घड़ा हुआ!”

धारियोंदार तहबन्द बाँधे लबाणों का विरसा पहुँचा तो आमने-सामने दो मुर्ग़ अपनी-अपनी कलगियों पर इतराने लगे। शाहजी ने भाँप झट माथों की सिलवटें निकाल दीं–“खाओ-पियो! जी हरे करो!”

दूर से ढोल बजाता नबिया मिरासी आन पहुँचा तो छोटे-बड़े बच्चों का लाम-लश्कर ठुमक-ठुमक पाँव और हाथ मारने लगा।

हवा से नोच ढोल की थाप को मद्दी ने अपने पैरों को ताल पर सजा लिया।

कौड़े ने कान पर हाथ रखा और गूढ़ी-गहरी आवाज़ में बोल थरथराने लगे:

“चढ़ गए चेत पड़ी फुहार
यारो बड़ी बहुत सरकार
धमके क़ाबुल और कन्धार
डेरे लग गए अटकों पार
आख़िर मरना
फिर क्यों डरना!”

मरज़ाई चक्कवाला मुक़द्दमा जीतने की गहमा-गहमी में शाहों ने बहियाँ खोल डालीं और हिंसों में तक़दीरों के वारे-न्यारे करने लगे।

पीतल की दवात में किलच की क़लम डोबकर काशीशाह बड़े भाई की ओर मुड़े–“बूढ़े जालवाले मौलवीजी का रुक्का है। मुरारदास ऊँटोंवालों के हाथ भेजा है। कहता है, मसीत के लिए मदद हो जाए तो गाँव में मिनारे उठ जाएँगे।”

“सूफ़ीजी, अपनी राय बताओ। इन मामलों में तो मरज़ी आप ही की चलेगी।”

“भ्राजी, ऐसे पुण्य काम में सोच कैसी! मन्दिर-मस्जिद मालिक के ही थान हैं!”

“मुन्नव्वर तवीवाली ज़मीन का टोंबू होना बाक़ी है।”

“तारीख़ लगी हुई है, अगली दो-चार पेशियों में निबड़ जाएगी।”

“चीचियोंवाली छाही ज़मीन से सिर्फ़ पचास मानी दाने आए हैं। रुलदू का हाथ तंग है...”

बड़े शाह ने सिर हिला दिया–“कमी ब्याज में जमा कर छोड़ो। रुपए पीछे चार सेर तो देना ही बनता है उसका।”

“हाँडूवाली मिस्सी ज़मीन...”

“काशीराम, क़ादिर बक़्श और फत्ता इसकी मालकी पर नज़र रखे हुए हैं। पुरानी बही निकाल लेना। चाचा साहिब के वक़्तों के वारे-न्यारे हैं।”

“किलचपुर का मामला ज़रा पेचीदा है। सुल्तान ने अरज़ी-परचा कर दिया है।”

“कितनी ज़मीन है?”

काशीशाह स्यालकोटी कागज़ को पलटने लगे–“पचास-पचपन घुमाँ के क़रीब है।”

“कितना सिरे चढ़ा हुआ है?”

छोटे शाह ने एक गहरी नज़र बड़े भाई पर डाली–“मूल रक़म एक सैकड़ा, कुल आन पहुँची है हज़ार पर।”

शाहजी लाड़ से सुडौल सिर पर हाथ फेरने लगे–"किसी ने सच कहा है, शाह का रुपया दूसरे की हथेली पर पहुँचकर चौगुना हो जाता है।"

"बिचारे ग़रीब जट्ट किसान को इतना दोहरा कहाँ तक वाजिब है भ्राजी!"

शाहजी छोटे भाई के मुँह पर आँखें गड़ाए रहे, फिर बड़ी दाना आवाज़ में कहा–"दिल से यह भरम निकाल दो काशीराम। साहूकारा पेशा है। किसी ने दिलजोही के लिए नहीं बनाया-चलाया।"

छोटे शाह चुपचाप लिखत को देखते रहे।

"मँगतू ने बिना पूछे दो टोलियाँ कटवा डाली हैं।"

"लम्बड़दार को इत्तलाह कर डालो। आप समझ लेगा।"

"जम्मीवाला ख़ैरू दस-बीसी के पीछे पड़ा है। कहता है, ढग्गे ख़रीदेगा। रोज़ तड़के आ घेरता है।"

"पहले का असल कुछ हौला किया?"

"कुछ-न-कुछ देता ही रहा है!"

"काशीराम, नरमदिली से चल निकला साहूकारा! अगली फ़सल तक न चुकाया तो इसकी ज़मीन बंधे रखनी पड़ जाएगी!"

"बन्दा मुसीबत में हो तो क़ानून भी ढिलाई करता है!"

शाहजी ने अपना चौड़ा सुडौल सिर हिलाया–"क़ानून के मुताबिक़ काश्तकारी जिवियाँ हिन्दू नहीं ख़रीद सकते। सिक्ख, लबाणो और मुहालों को छोड़ ग़ैर-मुसलमान नई मालकी क़ायम नहीं कर सकता। सरकारी लिखत के मुताबिक काश्तकार हैं अराई, अवान, बलोच, गुज्जर, जट्ट, क़ुरेशी, लबाणै, मुहाल, मुग़ल, पठान और राजपूत सैयद!

"अपना तो पूर्णा ही न पड़ा फ़ेहरिस्त में! सरकार की मंशा है कि ज़मीन उनकी जो उसकी वाही करें। बताओ, रुपए-धेले की ताक़त के बिना जट्ट किसान कहाँ से देगा मामला और कहाँ से करेगा ढक-साल!"

"भ्राजी, गहने बंधे पड़ी ज़मीनें वापस जाएँगी, तो आप ही नई वाहियों से छूट जाएँगी!"

"ऐसे हालात में कोई दूसरा राह-रास्ता है हम लोगों के सामने?"

"थल्ली वंडवाला बख़्तावर पिछले पोह सैंकड़ा उठा गया था। इस बार दस मानी दाने डाल गया था। आप कहें तो उसके आधे पर लक़ीर मार दें। भार हल्का हो जाएगा ग़रीब का!"

शाहजी सिर हिलाते रहे और हँसते रहे–"भगतजी, तुम्हारे हाथों ख़ुल रही हो किस्मत किसी की, तो बताओ, मैं क्यों रोकूँ? तुम्हारा दिल दरिया है पर हिसाब-हिंसों को कौन पुगाएगा! इन जट्ट मुजारों के औकड़ वेले कौन टपाएगा!"

"हम तो निमित्त हैं, करणहार-कर्त्ता तो ऊपरवाला है!"

"काशीराम, बन्दों के सिरों पर एक नहीं, दो की ज़ोरावरी है। एक मालकी ऊपरवाले रब्ब की और दूसरी हकूमत नीचेवाली सरकार की!"

"ऊपरवाला ही बड़ा है। उसकी नज़र रहे सीधी तो दुनिया का ज़र्रा-ज़र्रा पुख़्ता। जो बढ़ जाए जुल्मत तो घड़ी-पल में बड़ी-से-बड़ी सल्तनतें नेस्तनाबूद।"

"काशीराम, तुम निर्लेप फ़कीर हो। मैं दुनियादार। तुम्हारी दया-रहमवाली वृत्ति को क्यों बदलूँ! सौ-पचास पर लक़ीर मार भी दोगे तो उसके भंडारे में कमी न आएगी। फिर शास्त्र मर्यादा कहती है–दान से आता है, जाता नहीं।"

काशीशाह गम्भीर हो गए–"भ्राजी, दिन में एक बार सुक्खमनी का पाठ ज़रूर कर लिया करें। इस छन-भंगुर जगत में नाम ही कमाई है। माया दमड़े नहीं!"

शाहजी कहीं और विचरने लगे–"बड़े चाचाजी का कहना याद करता हूँ तो समझ-बूझ दिमाग की निथर जाती है। कहा करते थे–सिर्फ इकोतर सौ लेकर इस ग्राँ में आन बसे थे हमारे पुरखे। जो छुआ सोना बनता गया! अब दुनिया आख्यान करती है–लोगों का तेल नहीं जलता, शाहों का मूत्र जलता है।"

"बरक़त उस मेहरोंवाले की।"

काशीशाह ने हाथवाली बही की डोरी बाँधी और भाई को याद दिलाया–"महरम ख़ाँ वाले पराच्छे के घर जाना है आपको अगले जुम्मे। लड़के की सुन्नतें हैं।"

बड़े शाह ने ध्यान ही ध्यान में कई असामियों-मुज़ारों के कुल जोड़ दोहरा डाले। गहरी तृप्ति से आँखें मूँद लीं और धीरे-धीरे गुनगुनाने लगे:

"चिड़ी चोंच भर ले गई
नदी न घटयो नीर
दान दिए धन ना घटे
कह गए भगत कबीर!"

छोटे शाह मन ही मन मुस्कुराए। दौलत-माया में इतनी आसक्ति!

बड़े भाई को याद दिलाया–"पराच्छों के घर से पाँच रुपए तम्बोल अपनी लिखत में दर्ज़ हैं!"

बड़े शाह पर बड़प्पन छा गया–"काशीराम, सगुण-भाजी सगुण-भाजी के साथ। एक मानी बास्मती और एक मन खाँड भिजवा देना नवाब के हाथ। बड़ी सहक-इन्तज़ारों के बाद उनके घर पुत्तर की शीरनी बँटी है।"

हवेली में बैठे छोटे शाह काग़ज़ के पुड़ों से दवा, जड़ी-बूटियाँ, काहड़े निकाल-निकाल लोगों को देते चले।

"लौ पीराँदित्ता, य़ह ब्रह्मडंडी पानी में उबाल निरने पेट सात दिन पी डालो। ख़ारिश-फोड़े-फिन्सी सब दूर हो जाएँगे।"

"हला शाहजी! परके साल आपने पित्त पापड़ा दिया था, पर लड़ाई-झगड़े में पड़ा ही रह गया।"

काशीशाह हँसे–"इलाज तो तुम्हारा खून सफ़ा करनेवाला था। तुमने दवा-दारू छोड़ उल्टे खून-ख़राबा कर लिया!"

पीराँदित्ते का चौड़ा जबड़ा कई पल छोटे शाह की आँखों में अटका रहा।

"शाह साहिब, फ़ौजदारी होते-होते ही बची।"

"शुक्र रब्ब का। लो बशीर बादशाह, सौंचल की पत्ती है। खाँसी में आराम देगी।"

फ़कीरे लोहार ने पाँव आगे किया–"जी, कोई ज़हरीला कीड़ा-मकोड़ा काट गया लगता है। उँगलियाँ नीली पड़ गई हैं।"

"फ़कीरया, अक़्क़ के पत्तों से धोकर ऊपर लोहा घिस्स दे। कोई ज़हरीला डंक लगता है। डाकदार को दिखा आ जलालपुर। प्रभाती नवाब घोड़ी ले के जाएगा। उसके पीछे बैठ जाना।"

"मैंने कहा जी, कहीं टुंडा डाकदार टाँग ही न काटकर ख़लासी कर दे!"

"फ़कीरे, टेलर डाकदार जट्ट बूट नहीं जो पैर काट रुढ़ी पर फैंक देगा! सोच-समझ के इलाज करेगा। सोने से पहले अक़्क़ के पत्ते दो खा छोड़। कोई ज़हर होगा तो खींच डालेगा।"

गंडासिंह ने हवेली की दहलीज़ लाँघ ज्यों ही क़दम अन्दर रखा, एक करारा डकार दे मारा।

फ़कीरा हँसने लगा–"चाचा गंडासिंह, मुँह चुगलाते-चुगलाते ही उठ बैठे! क्या कोई फ़ैसला था कि डकार मारेंगे तो शाहजी की हवेली ही में..."

"रोटी मुकाई ही थी कि काके हरफूले ने आ ख़बर दी कि गाय ने बच्छा दिया है। वाहगुरु की मेहर, बच्छा बल्ला है।"

"मुबारक़ें जी, बड़ी-बड़ी मुबारक़ें!"

"काशीरामा, गुड़ के घोल में साबुन देना है। पुराना गुड़ तो निकल आया कोठरी से, पर साबुन नहीं। लेने आया हूँ।"

"यह लो साबुन की टिक्की। छटाँक-दो से ज़्यादा न डालना। साबुन ज़रा तेज है।"

गंडासिंह के जाते ही खेस में मुँह-सिर लपेटे नाथा आन पहुँचा–"पैरीपौनाजी!"

"नाथया, सुख तो है! रुत ख़ुल गई, इतना भारी कपड़ा काहे को!"

"गठिए से जुड़ा पड़ा हूँ। कोई चंगी औषध दो तो उठने-बैठने से तो न जाऊँ।"

"गऊ के घी में थोम का सेवन सात दिन और सित्था सोंठ की मालिश। बराबर आराम आएगा।"

नाथे ने जाने को क़दम उठाया:

"पिछली सरदियों तुमने बाहूफली खाई थी, अब तो उस रोग से छुट्टी है न?"

"ठीक हूँ, पर ऐसी बीमारी कि बन्दे की सारी आब मारी जाए! शरीर किसी काम का नहीं रहा।"

"नाथया, नाम लिया कर रब्ब का! सब रोगों का एक ही दारू!"

"जी!"

दोहरी ओढ़नी में मुँह-सिर समेटे वधावासिंह की बड्डी घरवाली सामने आन खड़ी हुई तो छोटे शाह बड़े पशेमान हुए–"भरजाई, इस वेले यहाँ! सुख तो है?"

शुदैन बनी नच्छत्र कौर ने सिर का कपड़ा उघाड़ दिया और दौहत्थड़ मार छाती पर पीटने लगी–"मुझे मोहरा दे दे देवरा, सौतन मुझसे नहीं देखी जाती! लाख समझाती हूँ, पर कालजे में भब्भड़ मचे रहते हैं। मेरा दोक्ख इतना ही न कि अभागी कोख न ख़ुली।"

काशीशाह कई पल चिन्ता में खोए रहे, फिर समझाकर कहा–"भरजाई, कुटिया जा सेवा ले ले। पाठ किया कर। यह दुनिया-माया सब झूठी है।"

नच्छत्र कौर की अँखियाँ तड़पने लगीं। बालों की लटें नोच-खसोट करलाने लगी–"देवरा, तू साधु पुरुख है। तेरे मुँह से निकला वचन वृथा न जाएगा। या ऐसा मन्त्र दे, घरवाला सौतन से बेमुख हो जाए या मेरे कालजे चैन पड़े।"

"भरजाई, मुँह पर लगाम दे और सिर पर कपड़ा कर!"

नच्छत्र कौर ने सिर ढाँप झोली फैला दी–"देवरा, जो चाहता है मैं परत घर को लौटूँ और कूएँ में न डूब मरूँ तो कोई ऐसा मन्त्र दे कि मेरे अन्दर चैन पड़े। सौतन के साड़े ने मेरी अक़्ल-बुद्ध मार दी है।"

काशीशाह ने आँखें मूँद शीश झुकाया और ग़रीबनवाज़ के आगे विनती की–"इस

बेगुनाह के तड़पते दिल को सब्र दे दो ग़रीबपरवर!"

आँखें खोलीं, जतनों से बँधी पुड़िया सन्दूकची से निकाली। गुलाब की सूखी पाँख़ुड़ी सिर से छुआ नच्छत्र कौर की हथेली पर रख दी–"भरजाई, अब तुम ज़ाहिरा पीर की छत्रछाया में! तुम्हें अब न कोई दोक्ख, न चिन्ता, न ग़म। बाग्गया, जा भरजाई को घर तक छोड़ आ।"

नच्छत्र कौर ने हाथ जोड़े–"देवरा, आज से तुम मेरे गुरु पीर। मछली-सी तपड़ती आई थी। ज़ाहिरा पाँख़ुड़ी गुलाब की, जलती छाती हल्की फुल्ल हो गई है। उसका भाना मुझे मंजूर।"

काशीशाह ने हाथ जोड़ दिए–साहबे-कमाल, परवरदिगार, यह जल्वा तेरा है। तेरे नाम से सवाब ही सवाब।"

बाहर घोड़े की टाप सुनी। बड़े शाह कचहरी तारीख़ भुगता लौटे थे।

काशीशाह उठकर बाहर आया। बड़े भाई को पैरीपौना बुलाया। मुश्की को थाप्पड़ा दिया।

दोनों भाई पौड़ियाँ चढ़ गए तो नवाब ने घोड़े का तंग ढीला किया। सहलाया और चारे-भरी ख़ुरली के आगे ले जा खड़ा किया।

मुहम्मदीन ने शाहजी के तख्त पर खेस बिछाया, आले में चौमुखी दीया रखा और नवाब से कहा–"यारा, शाह अपना सचमुच में पहुँचा हुआ सन्त-फ़कीर है। कैसे रोती-तड़पती आई थी बधावासिंह की घरवाली और कैसे सन्तोख-सिदक से परत गई!"

"छोटे शाह में तो सत्या है पीर-फ़कीरोंवाली, पर एक बात बता–खसम-तरीमत का साक-रिश्ता भी क्या हुआ! जिन्न-भूतवाला ही न, जो डाढा बनके बोलने लगे! रूप-रंग देखा है नच्छत्र कौर का जगमग-जगमग और वधावासिंह औलाद के लिए दूसरी कर लाया!"

"छोड़ परे। आप दोनों छड़े-छाँड ही चंगे भले। न जनानी अंग लगी, न मति भ्रष्ट हुई!"

नवाब को फ़ातिमा याद आ गई–"जो भी कहो मुहम्मदीना, इंसाफ़ तो न हुआ। किसी को मिलें मौज-मज़ा लेने को चार-चार बीबियाँ और हम-जैसों की जिन्द अकेली! चुप-चुप रोए पेट!"

"मरदों के कभी पेट भी रोते हैं! भोले बादशाह, मरदों के हिलते हैं जिगरे। रब्ब ने भी कुछ सोच-समझ के ही यह खेल रचाया। जेकर बच्चे पड़ते मरदों के हिस्से तो छातियाँ मरदों की रोज़ दो-टूक होतीं। बाप ख़ुद औलाद को तोड़-तोड़ खाता। यह तो माँ के ढिढ का पेटा है। एक बार थन से दूध पिलाती है तो उम्रभर सींचती है टब्बर को।"

नवाब ने लम्बा कश खींचा–"बराबर शाहों की नक़ल करने लगा है। इतनी सयानफ़ कब से?"

मुहम्मदीन हँसा–"इक्की-दुक्की कान में पड़ती रहती है। कोई याद रह गई तो मुँह पर आ गई।"

"यारा, मौज़ें शाहों की। टका दें और सैकड़ा लें। रब्ब-रसूल कभी अपने को भी शाह-जिमिंदार बना छोड़ता तो लहरें-बहरें थीं!"

"होतीं कैसे! पैगम्बर साहब की तरफ से सूद की क़सम हर मुसलमान को! शरह के ख़िलाफ़ है।"

"भरम छोड़ो। हम छड़े, न घर-घाट, न बीबी-हंडियाँ। जो शाहों के यहाँ मिला है,

वही वाह-वाह! और क्या, कौन हमने बाल-बच्चों के ब्याह सुधाने हैं!"

"ज़बान की तो छोड़। दिल भी तो कुछ कहता होगा कि नहीं! अल्लाह पाक़ ने सब तौफ़ीकें अमीरों को सौंप डालीं!"

"छोड़ यारा, तक़दीर में लिखी हों शाहनी के हाथों की रोटियाँ, तो बता कौन सी फ़ातमा-हुसैना अपनी हंडियाँ चढ़ाने आएगी!"

"इतना ही अरमान लगा रखा है दिल में तो कुछ कर डाल! उधार उठा ले शाह से और निक़ाह पढ़ा डाल। सुना हुआ है न–दमड़े हों पल्ले तो रात से पहले सजे ब्याह!"

"नहीं यारा, अब नहीं बदलतीं तक़दीरें अपनी। चार साल बिना वाही के पड़ी रहे खेती तो बंजर जदीद और आठ हो जाएँ लवारसी में तो बंजर क़दीम। बता, अब मेरे-तेरे जैसे ठूँठों में क्या उगेगा, न धन-दौलत की लहरें-बहरें, न अल-औलाद की ख़ुशियाँ। कहीं रब्ब की तरफ़ से अपनी जिवियाँ और तक़दीरें धुल-पुँछ जाएँ तो और बात है। नहीं तो डंगरों को नहलाया-धुलाया, चारा डाला, खूँटों से बाँधा-खोला और सो गए।"

ख़बरों में ख़बर शाहदाद के क़त्ल की। अचानक पिंडों में ऐसी तरथल्ली मची कि रहे नाम रब्ब का!

काँगड़े के ज़लज़ले में भी ऐसे भूभ्भल-भू न मचे थे जैसे लप्प-लप्प मचे पोठीवाले शाहदाद ख़ाँ के क़त्ल पर!

अन्धेर साईं का लोको, शाहदाद ख़ुफ़तार की नमाज़ को मसीत में सिजदे में बैठा ही था कि क़त्ल हो गया।

शाहदाद भतीजे जफ़र के साथ पहली क़तार में खड़ा था। दस-बारह नमाज़ी पिछली क़तार में थे। आले में चिराग़ जल रहा था।

सबसे आगे थे इमाम साहिब। सिजदे में घुटने टेके ही थे कि शाहदाद की गर्दन पर पीछे से टोका पड़ा और वह चीख़ मारकर गिर पड़ा–"हाय, ओ मार दिया वैरियों ने..."

"पकड़ो...पकड़ो...दौड़ो..." मसीत में भगदड़ मच गई।

इमाम साहिब चिराग़ हाथ में ले शाहदाद पर झुके। खून में लथपथ शाहदाद की आँखों में ज़िन्दा रूह उतर आई थी, रुक-रुककर कहा–"मुझे मेरे घर ले चलो!"

"क्यों नहीं चाचा!"

जफ़र ने कन्धों से खेस उतार शाहदाद की गर्दन सोखी और मिन्नत की–"नाम ले दो चाचा अपने दुश्मन का! जिसका नाम लोगे वही सज़ा पाएगा!"

शाहदाद की आँखें इमाम साहिब के हाथ में थमे चिराग़ पर टिकी रहीं।

किसी ने मुँह में पानी की दो बूँदें डालीं तो पलक उघड़ी। आसपास झुके चेहरों को पहचानने की कोशिश की और तड़पकर कहा–"मेरा मुत्तबन्ना न ज़फ़र, न बोस्ताँ,"–कहते-कहते हाथ-पाँव छुटक गए और सिर निढाल हो ढीला पड़ गया।

शाहदाद ख़ाँ को ज़मीन पर से उठा मंजी पर लिटा लिया गया और चार जने मंजी को कन्धों पर टिकाए मसीत से बाहर निकल चले।

इमाम साहिब ने मौक़ा को छोड़ना मुनासिब न समझा। जफ़र को दिलासा दिया–"वारदात जो हो चुकी उसकी इत्तला थाने भिजवा दो। मेरी माजूदगी मौक़ा पर ज़रूरी है। पुलिस निशान देखेगी। शनाख़्त करेगी।"

ज़फ़र पल-भर को रुका। गले में सारी मनुहार निचुड़ आई–"इमाम साहिब, आप

गवाह हैं। मैं चाचा के साथ अगली क़तार में था और बोस्ताँ पीछे।"

"वक्त न गँवाओ। बेटा, ऐसे मामलों में जो आँख से देखा जाता है वह कान से नहीं सुना जाता। जो कान से सुना जाता है उसे आँख से सही नहीं किया जाता। रब्ब का नाम ले एक आदमी थाने दौड़ाओ, दूसरा हक़ीम गामे शाह को। दाना-पानी होगा तो शाहदाद उसके हाथों उठ बैठेगा।"

"सौंह अल्लाह पाक़ की इमाम साहिब, मैं अगली क़तार में था और बोस्ताँ पिछली में–इसके तो आप गवाह हैं!"

इमाम साहिब बिना कुछ जवाब दिए मसीत की ओर बढ़ गए तो ज़फ़र ने लपककर अफ़ज़ल से धुस्सा लिया और मसीत के बाहर पड़ी जूतियाँ पोटली में डाल लोगों के साथ हो गया।

उधर वारदात की ख़बर थाने पहुँची, इधर शाहदाद दुनिया से कूच कर गए।

उधर पिछली क़तारवालों के जूते उठे, इधर इमाम साहिब ख़िलाफ़-बयानी के हिज्जे करने लगे!

लुके-पिछे बोस्ताँ के वालिद शादी ख़ाँ को समझाया:

"अहमक़ जूता छोड़कर भागा है। शिकंजे से बचकर नहीं निकल सकता।"

शादी ख़ाँ ने रुपए खनकाकर खरे किए और मौलवीजी से क़ौल-करार पाया। शाहदाद ख़ाँ के आख़ीरी बयान को हल चला पानी लगा दो और न नाम लो ज़फ़र का, न बोस्ताँ का। बाक़ी करवट ऊँट की हम देख लेंगे।"

पुलिस पहुँची गाँव में सुल्तान बेला।

शाहदाद खाँ की लाश को चारपाई समेत उठाकर डॉक्टरी के लिए रवाना कर दिया गया।

क़त्ल का हादसा। पुलिस मुशकें लेती मौक़ा पर पहुँची। कच्चे-पक्के बयान लिए और इस सारी कारवाही में इमाम साहिब सजे रहे।

शाहदाद की दोनों बीवियाँ अपनी ड्योढ़ी में बैठी-बैठी करलाने लगीं–"अरे, मौत न छोड़ेगी तुम्हें भी! सिज़दे में क़त्ल कर दिया बादशाह सुल्तान को! अरे दुश्मन-वैरियो, तख़्ते पर फंदे पड़ेंगे तुम्हारे गलों में! कट-कट गिरेंगी गरदनें!"

शाहदाद की छोटी बीवी हलीमा वैण करने लगी–"ओ रे मेरे बादशाह दूल्हो, वैरियों ने मेरी बादशाहत उजाड़ डाली। एक लाल खेलता गोदी में तो इस खूनी दिन सिदक न कर लेती!"

बड़ी मरियम ने घुड़क दिया–"चुप री, हौंसला रख। तू तो ख़ैरों से पेट से है। शाहज़ादा ख़ुद वैरियों की मुँडियाँ उतारेगा। बाप का बदला ले के रहेगा।"

हलीमा हिचकियाँ ले-ले विलाप करने लगी–"ओ रे मेरे बच्चे, नबी रसूल तुम्हें हाथ दे! असल का होगा तो वैरियों का बीज मार के दम लेगा!"

रात को मरियम ने सौतन को समझाया–"अरी, कब हुई थी तू कपड़ों से? हो गए न ख़ैरों से महीने चार!"

"हाँ, ख़ाला, तीन से ऊपर।"

"सुन री कान खोल के हलीमा! मरनेवाले का बच्चा हमारे पास। जिसने उसकी जिवियों की ओर नज़र उठाई, पकड़ उनकी आँखें निकाल डालूँगी!"

फिर आवाज़ हौली कर कहा–"लड़ने-भिड़ने दे दोनों शरीक़ों को। न ज़फ़र मालिक इस घर-जिवियों का, न मालिक है बोस्ताँ।"

गाँव-गाँव ज़िक्र पड़ गए क़त्ल के। पुलिस भड़वी लाख तफतीश-तहक़ीक करे, मुक़द्दमा तो शाहदाद के क़त्ल का बन्ने तोड़ गया।

इधर ज़फ़र पढ़ाए गवाह, कि शाहदाद ने बयान में मुत्तबन्ने का नाम लिया। उधर बोस्ताँ के लिए शादी ख़ाँ उलझाए-सुलझाए।

"उसको क़त्ल की ज़रूरत ही क्या थी? परके साल सरकारी कागद पर शाहदाद ने बोस्ताँ को लड़का क़बूल कर लिया था।"

पूछनेवाले पूछते–"परचे की नक़ल या असल तो होगी आपके पास?"

शादी ख़ाँ हुक्का गुड़गुड़ाते इत्मीनान से 'हूँ' करते। कभी बीच-बीच में बोलकर हामी भरते–"बराबर। बेशक़।"

इस बीच मरियम बी सैयद सरमस्त से हलीमा के लिए तावीज़ लिखवा लाई।

ज़फ़र की माँ बहुत बहनापा दिखा मरियम को दिलासा देती–"हौंसला रख। फ़िकर न कर। मेरा अपना पुत्तर हवालात में बन्द है। शरीक़ शादी ख़ाँ ने मूठ रुपयों की चढ़ाई है पुलिस थानेदार को, तभी मेरे पुत्तर को शुबह में अन्दर कर लिया! अन्धेर पड़ा है क्या! हाकम आप निस्तारा करेंगे। इंसाफ़ करेंगे। मेरा पुत्तर जो चारपाई पर डाल चाचे को घर लाया वह क़ातिल हो गया और जो नंगे पाँव मौक़ा से दौड़ भागा, वह खूनी बेगुनाह हो गया!"

मरियम हलीमा को दूध में अंडा डालकर देती–"पी री, डीक लगाकर पी जा। तेरे संग-संग अपना जवाँमर्द भी साँस लेता है।"

जिनके जूते ज़फ़र ने उठाए थे, उनके नाम पुलिस ने दर्ज़ किए–शाह वली, सैयद अली, शेर जमान और ख़लील। दिलचस्प बात एक और भी थी। बोस्ताँ की एक जूती इमाम साहिब के क़ब्जे में थी और दूसरी ग़ायब थी।

थानेदार यार ख़ाँ ने इमारत के तीनों मीनारे सूँघकर चौथे पर हाथ रख दिया।

पिछली क़तार में बाईं ओर खड़े अफ़जल ने जब बोस्ताँ के दोस्त मुहम्मद सादिक़ का नाम ले दिया तो तीनों ख़ाने चित हो गए।

पहचान होते ही यकायक मामले को नाँवे का तगड़ा वत्तर लग गया।

इमाम साहिब ने सुना तो ख़ुदख़ुदी लग गई। बिन बुलाए थानेदार के पास जा पहुँचे और कहा–"जनाब, मैं मौक़ा पर ख़ुद माजूद था। शाहदाद ख़ाँ के आखीरी अल्फ़ाज़ थे–"मेरा मुत्तबन्ना ज़फ़र है, बोस्ताँ नहीं।'"

थानेदार बड़ी हरामज़ादी हँसी हँसे–"इमाम साहब, आप क़त्ल के मुक़दमे में आख़ीरी बयान की क़ीमत जानते हैं न?"

"जी! ज़्यादा तो नहीं पर इतना ज़रूर जानता हूँ थानेदार साहिब कि होनेवाला मुत्तबन्ना भी ऐसी साज़िश के बाहर होने का दावा नहीं कर सकता।"

थानेदार यार ख़ाँ ने फणियर नाग की तरह फण उठाया–"ज़फ़र और बोस्ताँ के पत्तों में उन्नीस-इक्कीस का ही फ़रक़ है। इमाम साहिब, जो पत्ता कम पड़ता है वह आपके पास नहीं। अब आप जाकर आराम कीजिए और वक़्त से अजान दीजिए। रखिए अपने को गाँव में ही। आपको कभी भी याद किया जा सकता है।"

इमाम साहिब डाँवाडोल हो शादी खाँ की बैठक जा पहुँचे और सारा क़िस्सा बयान कर दिया।

शादी ख़ाँ हुक्के से लम्बे-लम्बे कश खींचने लगे।

सलाह सूत्र करने के बजाय मौलवी जी से इतना ही कहा, "ख़ैर मेहर है। लुग्गों

को करने दो जो करते हैं।”

शादी ख़ाँ दूसरे पहर उठ खड़े हुए। तबेले से घोड़ा निकाला और दिन चढ़ने से पहले-पहले गोरालीवाले दमोदर शाह को लेकर शाहजी के यहाँ आन पहुँचे।

मुक़दमे के टाँके-बखिए देख-सुन शाहजी ने मदद की हामी भर दी। नक़द हज़ार गिनकर हाथ पकड़ाया–लेन-देन साफ़, मुहब्बत पाक़।

छोटे शाह ने टोंबू लिखवा लिया–“शादी ख़ाँ की जामके नक्केवाली ज़मीन शाहों के पास बँधे और सिर्फ दो आना ब्याज रुपए पर!”

रुपयों की खनक जा पहुँची ठाने और पुलसियों ने बोस्ताँ की ओर पीठ कर मुँह ज़फ़र की ओर मोड़ लिया।

मरियम बी के दरवाज़े थानेदार की घोड़ी आ रुकी तो मरियम ने पलक न झपकी। थानेदार यार ख़ाँ से आँखें मिलाए रही और मंजी पर बैठी-बैठी सिदक से बोली–“ठानेदारा, क़त्ल के मुकद्दमे में चाहे सौ-सौ तारियाँ मार, पर क़ातिल एक ही। हमारे भाने अलिफ़ हो या बे। अपने शहंशाह ने जाना था सो हमें छोड़कर चला गया। नाम रहे रब्ब रसूल का, वजूद उसका इस अँगना खेलेगा। हमारे लिए वह ज़िन्दा ही ज़िन्दा।”

थानेदार ने ऐसी-तैसी फेर दी–“मरियम बी, यह किसे पता बूँद किसकी है! है भी कि नहीं! इन खेलों को देखनेवाले तुम्हारे ससुर-ख़सम तो माजूद नहीं।”

“थानेदार, अपने क़ुल्ले के ज़ोर तेरा मिजाज़ लट्ट-लट्ट जलता है। सहारा कर ज़रा, जिस जिमि जायदाद की ख़ातिर अपना सरदार क़त्ल हो गया, उसका वारिस आप मुँह से बोलेगा। आप दुश्मनों की छाती पर मूँग दलेगा।”

थानेदार को मजा आने लगा। मरियम को घूरकर देखा, फिर हलीमा को, और ओठों पर हँसी फिरा दी–“रब्ब से भी साँठ-गाँठ कर रखी है क्या, कि होगा तो लड़का ही होगा!”

“क्यों न होगा ठानेदारा! ज़रूर होगा! जिसके सिज़दे में अपने सरदार की गरदन गई, वह अल्लाह पाक़ उसके ख़ानदान पर क्यों न इनायत करेगा!”

थानेदार ने सजरी बेवा की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया–“मरियम बी, मामला पेचीदा है। याद तो करो कभी पिछले बरसों में शाहदाद ख़ाँ ने अपना मुत्तबन्ना बनाने को कोई लिखत-परचा किया था?”

“कभी नहीं। ठानेदारा, जना अपना ऐसा करता भी क्यों? ख़ैरों से हड्डी में फ़ौज खड़ी करने का दम था। यह तो मैं लथड़ी साथ लगी रही। शरीक़ों में खुसपुस होने लगी, हमारी जिवियाँ देख ग़र्कजानों के मुँह में पानी आने लगा तो मैं भांजी ब्याह लाई उसके लिए। रब्ब की नज़र सीधी, हलीमा अपनी अब दोहर में है!”

आसपास लोग आ जुटे थे।

मरियम बी लस्सी का कटोरा ले आई और थानेदार को पकड़ाकर कहा–“शरीकों ने वैर कमाया जिवियों के लालच में। ठानेदार, सुनने में आया है पुलिस माथासड़ी ने अपने जने का आख़ीरी बयान दर्ज़ नहीं किया! ठानेदारा, हमारी तरफ़ से जुर्म की चाटी में दस बार हाथ डाल और हर बार मक्खनों के पेड़े निकाल। पर हाकमा, क़ातिल को फाँसी के तख़्ते पर पहुँचाना तेरे जिम्मे है।”

"जमा खातिर रहे मरियम बी! मुज़रिम को पकड़ के रहेंगे।"

"पीछे न रहना हड्डेदारा! इतना जान रख, तेरे पुलसियों ने कोई दूसरा मत्ता पकाया तो दोज़ख की आग में पलसेटियाँ मारेगी पुलिस पंजाब की।"

तम्बाकू की मुशकें और हुक्कों की गुड़-गुड़।

"हर कश के साथ महक अन्दर और धुआँ बाहर। या इलाही, सिफ्तें आपकी। क्या-क्या शै बनाई है आदम के बेटों के लिए!"

"बेशक मौलादादजी, ख़ुदावन्द क़रीम ने पैदा किया कहीं तम्बाकू, कहीं मुंजी, कहीं गन्ना, कहीं कपास, और जी रब्ब आपका भला करे, कहीं दूध, कहीं शराब।"

चाचा कर्मइलाही ने हुक्के की नड़ी मुँह से निकाल दी और दीन मुहम्मद पर तीती त्योड़ी फेंकी–"मेरी मुंडी धड़ से अलग कर देना जो किसी मुक़द्दस क़िताब में यह लिखा बता दो कि शराब भी अल्लाह ताला ने ही बनाई है!"

शाहजी आँखों में मीठी-मीठी फटकार भरकर सिर हिलाते रहे। फिर हँसकर कहा–"किस दुनिया में हो कर्मइलाहीजी! अपने दीन मुहम्मद ख़ैरों से लाहौर होकर आए हैं। अब इन्हें किसी की शाग़िर्दी की ज़रूरत नहीं। लाहौरी फ़रिश्तों ने सारा इल्म ही इनकी दिल की क़िताब पर लिख डाला है!"

दीन मुहम्मद की मूँछें भोले गुमान से फुरकने लगीं–"यह तो आपकी मशकरी हुई शाहजी, पर क्या बताएँ आपको! शहरों में शहर लाहौर। बहिश्त है जी, बहिश्त!"

"दीन मुहम्मद, तो सही यह हुआ कि बहिश्त हो आए हो। हूरें भी देखने को मिली ही होंगी। कोई पड़ी टूटी-भज्जी हूर आपकी झोली में भी!"

"रहे रब्ब का नाम! बादशाहो, लाहौर में टूटी-फूटी हूरों का क्या काम! अपनी पिंड की बुड्ढी-बुढ़ेरियाँ थोड़ी हैं हूरें कि किसी का झाटा चिट्टा, किसी की आँखें चुँधी! किसी पर गठिए की मार, किसी पर फालिज़..."

मैयासिंह हँस-हँस दोहरे हुए–"यह तो हुई न हमारी बेबों-बूढ़ियों की बात। आप बात करो लाहौर की जवान हूरों की! क्यों दीन मुहम्मद, क्या सड़कों-सड़कों नज़र आती हैं ये परियाँ!"

दीन मुहम्मद चढ़ गए–"बराबर बादशाहो! इधर देखो तो गुलाबी, उधर देखो तो उनाबी! यह आई पीली तो वह आई नीली! रंग-बिरंगे परांदे डुलाती ऐसी-ऐसी झलकें अनारकली में कि हम जैसा जट्ट-बूट तो क्या, चंगा-चंगा गश खाकर गिर पड़े। ख़ुले मुँह, ख़ुले सिर। आगे-आगे बाँक डोरियाँ और पीछे-पीछे इनके मुरीद लट्ठुम्मन!"

मजलिस में बड़ा हास्सा पड़ा!

चौधरी फ़तेह अलीजी भी निक्का-निक्का हँसते रहे। फिर बड़ी सयानफ़ से पूछा–"दीन मुहम्मद, यह बताओ कि देखने-सुनने में कैसी हैं लाहौरनें?"

"कुछ न पूछो। गाल गुलानार और रंग महा गोरे..."

हमीदे ने जुमला पूरा कर दिया–"रंग गोरे और ज़ायके जनानियों के खंड बोरे!"

सयानों के खाँसियाँ छिड़ गईं और जवान ख़ुल के क़हक़हे लगाने लगे।

किसी बुजुर्ग ने झूठ-मूठ टोक दिया–"ओए हमीदया, चाचे-तायों के सामने ऐसी बेशरमी!"

"क़सूर की माफ़ी चाचा साहिब! अनजाने में ही भूल-चूक हो गई।"

कृपाराम हाजीजी के ग़िर्द हो गए–"आप भी कुछ बताएँ हाजीजी! आप भी ख़ैर सदके बसरे हो आए हैं! क्या-क्या न देखा होगा वहाँ–हूरें, परियाँ..."

हाजीजी ने आलिमाना सिर हिलाया और संजीदगी से बोले–"हमने भी देखी। अक़सर सामने पड़-पड़ा जाएँ तो बन्दा आँखें तो नहीं मीट सकता!"

बख़्तावर ने शरारत से झटपट उठकर तहमद ढीला किया, फिर दोबारा कसकर अपनी जगह पसर गया–"हाजीजी, टोह-टाह के भी देखी कि सिर्फ़ दीदःबाज़ी में ही रहे!"

मिये ख़ाँ ने ख़बरदार किया–"बरख़ुरदार, हाजीजी से बात करने का यह शऊर!"

बख़्तावर ने कान पकड़ नसीहत निकाल ली।

"बसरे की हूरें सारी ही चिट्टी-गोरी हैं कि पक्के रंगवाली हब्शनें भी हैं?"

हाजीजी अपनी रौ में–"रब्ब जाने। चलते-फिरते देख लो नक़ाबों को।"

"कुछ तो नज़र आया होगा?"

"इतना ही कि सब हट्टी-कट्टी वाह-वाह जवान! कूचे-बाज़ारों में कोई थुल्ल कुमारी नज़र नहीं आई।"

"थुल्ल कुमारी क्या शैह है बादशाहो!"

"वही जी, जवानी जो भैंस बराबर मोटी हो, वही थुल्ल कुमारी हुई!"

फिर हुक्के की गुड़-गुड़ और ख़ुश्क गलों की खाँसियाँ मंजियों पर फुदकने लगीं।

गुरुदित्तसिंह उकता गए। हाथ फैलाकर कहा–"ओ छोड़ो परे थुल्ल कुमारियों के ज़िक्र! प्यारियों-दिलदारियों की बात करो!"

मुराद अली नौशहरेवाले पराच्छों के साथ हर साल मेवा ख़रीदने क़ाबुल जाते थे।

मौक़ा मिलते ही अपनी बारी सँभाल ली–"बादशाहो, क़ाबुल की क्या पूछते हो! वहाँ तो कौन बेग़म है, कौन ख़ानम है, यही पता नहीं लगता। पहन-पहनावा एक-सा!"

क़ाबुल की ये सिफ्तें मुराद अलीजी से दर्जनों बार सुनी जा चुकी थीं। फिर भी दोस्त को गरमाने के लिए चौधरी फ़तेहअली बोले–"कुछ क़ाबिले यक़ीन नहीं लगती यह बात। आख़ीर को बेग़म और ख़ानम में कुछ तो फ़र्क होगा ही न!"

"सौंह अल्लाह पाक़ की, सबके तन पर लकदक सुच्चे कपड़े। न कोई मालिक दिखे, न दिखे ग़ुलाम।"

नत्थासिंह ऊँघ गए थे। ज्यों ही आँखें खोलीं, सुनी-सुनाई छेड़ दी–"सुनते हैं, क़ाबुल में भी पंजाब अपना गज्ज-बज्ज के बैठा हुआ है। छोटा-मोटा शहर तो नहीं, दिसावर हुआ। रेशम दरियाई, पट्ट-ग़लीचे, फल-मेवे सारे हिन्दोस्तान को वहीं से। अपने पराच्छे, खोजे और खालसे बड़ी तगड़ी हट्टियाँ डाले हुए हैं।"

कृपाराम बोले–"सुनते हैं, क़ाबुल में पहले हिन्दूशाही थी। अनंगपाल और जयपाल दो मशहूर राजे हो गुज़रे हैं।"

मौलवी इल्मदीन का इल्म उभर आया–"कहने में तो यह आता है कि क़ाबुल पहले टक्कों के पास था। फिर गया वड़ैचों के पास। फिर ज़ोरावरी हो गई गख्खड़ों की। फिर जांजुओं की चढ़-बन आई। यह लुढ़क-पुढ़क तो चलती रही न! तातार, मुगल, पठान..."

शाहजी ने अपनी स्यालकोटी मदरसे की तालीम का सवाया लगा दिया–"मौलवी जी, नाम दो-दस नहीं, दर्जनों हैं। तवारीख़ भरी हुई है। अपने मुल्क की ड्योढ़ी तो रहे हैं न क़ाबुल-कन्धार। आगे दरियाए-सिन्ध की 'सिंह की बाब', फिर अपना देश पंजाब–

लशकर बढ़ते रहे यहाँ से हिन्दोस्तान की तरफ़। हमलावरों के ताँते लगे रहे..."

"हाँ, शाह साहिब, बेशुमार क़ौमें तख़्त-ओ-ताज सजा गईं इस मुल्क पर!"

शाहजी ने बड़ी अक़्लमन्दी से तवारीख़ का मुँह ही दूसरी ओर मोड़ दिया–"बात तो असल यह है कि इस धरती पर हज़ारहा हमलावर आए और गए पर आखिर को लाहौर लाहौरवालों के पास और क़ाबुल क़ाबुलवालों के पास! कहने का मतलब यह कि शहंशाह-सुल्तान बदले, बादशाहतें बदलीं, हकूमतें बदलीं, पर मुंढो, न बदलीं मुल्कों की ख़लकतें! क्यों चौधरीजी!"

"वाह-वाह शाहजी, बात हुई न कोई!"

मौलादादजी ने दाद दी।

फ़तेहअलीजी भी पीछे न रहे–"बराबर जी। ख़लकतें तो मुल्कों की शहंशाहों के कोहेनूरी ताजों से भी बड़ी हुईं न! सोचने की बात है। शहंशाह ताज पहन के तख़्त पर बैठ जाए हकूमत करने को और सामने रिआया-ख़लकत न हो तो निरा स्वाँग ही हो गया न मिरासी का!"

गंडासिंह बोले–"शाहजी, बात तो ले-दे के वही हुई न कि जट्ट के पास जिवियाँ न हों तो जट्ट होने का गुमान भी क्या हुआ! वाहने को जिविं-ज़िंमीन हो तो जट्ट जट्ट है।"

मौलादादजी ने ख़ुशनुमाई की–"बात दो टूक है आपकी। सरताज पेशे ही दुनिया में दो हुए। खेती-वाही करनेवाली जट्ट-किसानी और दूसरी इंसाफ़ी हकूमत।"

"बात सोलह आने सच है। सरकार चाहे पुख़्ता हो चाहे फुकरी, किसानों से जिवियों के मामले उठाती रहे तो मुल्क चलता रहेगा!"

ताया तुफ़ैलसिंह ने साफ़े को टोहा और आँखें खोल लीं–"ओ, मैं ज़रा ऊँघ गया और आपने मिल-मिला के अपनी ही कतर-ब्योंत कर डाली! तुम्हारे भाने या जट्ट किसान और या सरकार। हम हटवानियों का चादर-आदर कुछ नहीं! चलो हम तो हुए अरोड़े कराड़, इस हिसाब से इन क्षत्रीशाहों का क्या होगा? इन्होंने तो कभी जिवियाँ वाह के नहीं देखीं!"

मैयासिंह हँसने लगे–"मैंने कहा, खेती शाहों की भी होती है, पर दूसरी तरह की। इस खेती में दमड़ों के बीज और दौलत की फ़सलें!"

कर्मइलाहीजी ने मुँह से हुक्के की नड़ी निकाल ली–"ख़ालसाजी, शाह तो पैसे-धेले की मदद से सबका ढक-साल करते हैं! यह क्या बोली-ठोली दी!"

कक्कूख़ाँ का कोई पुराना हिसाब-किताब बाक़ी था। कहा–"शाहों को तो छोड़ो, इस हिसाब से तो अंग्रेज़ भी हटवानिए अरोड़े ही हुए न!"

शाहजी ने मज़मून बदल दिया–"मौलादादजी, इस बार लायलपुर के डंगरमेले में अच्छी रौनकें लगीं। थाल-बार और छज्ज से ख़लकतें पुज्ज के पहुँचीं। होगा कोई लाख-अधलाख आदम।"

"इब्राहीमा, सोहावा ऊँट कितने का बैठा?"

"जी, हैदर मल्कान का खच्चर ब्लोच खट्ट गया मुझसे। दो सौ माँगता था। तीसी छुड़वाई। एक सौ सत्तर गिने खरे और ऊपर से डट्ट लगाया एक कुप्पे का! बीस-पच्चीस की थूक फिर भी लगा ही गया।"

"भरम न कर इब्राहीम, सौदा कसरवन्दा नहीं रहा!"

कर्मइलाहीजी बड़े सिदक से बोले–"शाहजी, अपनी फेरवान गाय भी चंगी ही

मिल गई। सवानी बड़ी ख़ुश है। निक्के नयानों के लिए दूध हो गया। पीते रहें रज्ज के। हाँ, फब्बन घोड़ा आपका भी वाह-वाह रहा। शाह साहिब, आपने पंजकल्याण पर क्यों न हाथ डाला!"

मौलादादजी हँसने लगे–"बंगाल रसाले का वह पदम घोड़ा...माथे पर तारा...शाहजी ने आँख-भर ताका नहीं! क्यों जी, आप कर बैठे सौदा करनैलकोल की बुढ़ड़ी मेम से!"

"मौलादादजी, घोड़े दूसरे भी माड़े नहीं थे, पर यह रोहालचाली–हाथ में पानी-भर कटोरा ले बैठो और तेज़ दौड़ाओ, मजाल है बूँद भी गिर जाए! फिर लेने की एक वजह और भी थी। सामने जा खड़ा हुआ मैं घोड़े के, हल्की सी थापड़ी दी–गाज़ी न चौंका, न हिला, न हिनहिनाया। बस हो गया अपना!"

"घोड़ा एक और भी बड़ा अव्वल था, पर था मुश्की। मुश्की को तो हाथ वही डाले न, जो शनि का धनी हो। नहीं तो मुश्की आर और सवार पार।"

नजीबा नवाब मुहम्मदीन के पास बैठ गया था। सुनी-सुनाई अपनी बना ली–"करनैलनी कोल का बाढ़ा बड़े रंगों में। कहते हैं, करनैलनी की लड़की घुड़सवारी कमाल की करती है। लायलपुर का नौजवान डिप्टी फ़िदा है इस लड़की पर।"

शाहजी हँसने लगे–"नजीबया, यह तो वक़्त ही बताएगा कि दोनों की रास मिलती है कि नहीं!"

बख़्तावर कुछ कहने को हुआ ही कि ऐन मौके पर कालू ने अनोखी आवाज़वाली हवा छोड़ दी।

हमदे ने टीप दे दी–"कालू बादशाह, तुम्हें हगास की शिकायत हो गई लगती है।"

बख़्तावर ने दंदियाँ निकाल दीं–"खेत जाने का आलस किया होगा। वह सुना हुआ है न भँभीरी का तुक्कड़ा–हगने पर है:

यारो तीनों हग्गन मंदे
पोह माह की अधड़ी राती
जेठ हाड़ की शिख़र दुपहरी
सावन मीहं वसंदे
यारो तीनों हग्गन मंदे!"

बुजुर्ग-सयाने ज़ोर-ज़ोर से सूटे मारने लगे और छोटे हँस-हँस दोहरे हुए।

कृपाराम ने दाद दी–"बादशाहो, झूठ क्यों बोलें! कवित्त तो आला बाँधा है शायर ने। पोह माह की आधी रात बन्दे को जो हाजत हो जाए तो..."

बख़्तावर पैरों के भार बैठ गया और चहककर बोला–"हो जाए, तो हो जाए! कवित्त पढ़ो और खेत तक हो आओ। इसके लिए कोई सवारी तो नहीं चाहिए न!"

ताया तुफ़ैलसिंह किसी और ही ख़याल में अटके थे–"देखना तो अब यह है कि मेम पछाड़े डिप्टी को कि डिप्टी पछाड़े मेम को।"

हाजीजी खीज़ गए–"कौन-सा वह अपने ज़िला-तहसील का डिप्टी है! और कौन करनैल मेमड़ी हमारी फूफी ख़ाला है! न हमारी मिल-वर्तन लायलपुर के ओहदेदारों से कि हमें कोई सगुण-तम्बोल का फ़िकर हो!"

तुफ़ैलसिंह चिढ़ गए–"इल्मदीना, कभी तो हँस-खेल जी ख़ुश कर लिया कर! बड़े फ़रमा गए हैं, सड़ना-कुढ़ना सेहत के लिए चंगा नहीं। क्यों हक़ीमजी!"

हर बीमारी-रोग पर चरायते का पुड़ा देनेवाले एतबारसिंह अपना साफ़ा टटोलने

लगे–"मुझसे कुछ पूछा?"

"न जी, मस्त रहो। अभी अगले जहान जाने को कोई पिंडवाला तैयार नहीं।"

नजीबे की खोज में पहलवानी पल्लू लटकाता गामा आन पहुँचा तो कड़ाके से सबको साहब-सलामत बुलाई।

गामे ने इस बार गुजरातियों से दंगल जीता था।

कर्मइलाहीजी ने शाबाशी दी–"पुत्तरजी, इस बार धाकड़ गुजरातियों को चित करके आए हो। पिंड अपने का तो तुर्रा घूम गया!"

शाहजी ने सराहना की–"शहरिए भी आए थे बड़ी आकड़ों में पर गामे उस्ताद, जिस पल पीठ लगाई है तुमने लुंडपुरवालों की, मैं और अपना जम्मीवाला क़ादिर हाथ-हाथ ऊँचे उठ गए!"

"क्यों नहीं शाहजी, शोहरत तो ख़ैरों से अपने ग्राँ की हुई!"

काशीशाह ऊपरवाली चोर-सीढ़ियों से उतर बैठक में आ शामिल हुए।

शाहजी बोले–"काशीशाह, गामा पहलवान अब अपने पिंड का निशान है। घी का कुप्पा और बदामों की पंड लगा दो इसे। ज़रा जिस्म बने!"

"जी!"

फ़तेहअली ने पग्गड़ हिलाया–"यह हुई न हौंसला-अफ़ज़ाई! पुत्तर गामया, सलाम कर शाहजी को!"

"बरख़ुरदार, बस हो जाएँ तैयारियाँ शाहपुर के मेले की!"

"शाहजी, इस बार शाहपुरियों की पीठ लगा ली तो पीर डंडाशाह के दरबार में ज़रूर हाज़िर होऊँगा!"

सावन की जल-बिम्बियाँ यह आ और वह जा! फणकारे मारते पनीले मींह ऐसे घिर-घिर आए ज्यों ग़ाज़ी मरदों के लश्कर! बादल गरजें-कड़कें कड़ाको से मानो फ़ौजों की टुकड़ियाँ! बिजली लप्प-लप्प चमकें ज्यों तलवारें! चमा-चम्म! झमा-झम्म!

मदरसे में बैठे बच्चों ने हाथी-जैसा मँडराता बादल जुम्मेवाले खू पर देखा तो दबादब बस्ते सँभालने लगे।

"निकलो भई, निकलो, फ़ौजें आ गईं!"

मौलवीजी ने भगदड़ देखी तो देखते ही धौंसा दिया–"ओए रानी ख़ाँ के ढेके, ख़बरदार! कोई मदरसा न छोड़े। चलो, चलकर अन्दर बैठो।"

मौलवीजी की आवाज़ में ऐसा टंकार कि अभी दिन उघड़ा हो। कड़ककर कहा–"गौहर शनास, लड़कों को दो टोलियों में बाँट दो!"

"जी जनाब!"

"हाँ, काले कोच्छड़ों का बोद्दा किधर है?"

"जी, यह रहा मैं हाज़िर!"

"है न तेरा दिमाग़ इस वक़्त रोशन!"

"जनाब, कुछ लगता तो है!"

"तो चलो, कच्ची-पक्की को बड़ों से अलैहदा कर दो।"

गौहर शनास और बोद्दे ने भारी हत्थीं सिरों पर मार चपेड़े झटापट टैनों को गुट्ठे लगा दिया।

छोटे बच्चे मच गए:

लायक से बढ़िया फ़ायक
अगड़म से बढ़िया बगड़म
हाज़ी से बड़ी हज्जन
मूत्र से बड़ा हग्गन।

मौलवीजी की आवाज़ कड़की–"चुप्प!"

बोद्दे का छोटा भाई रोडा न डरा। न चुप हुआ:

शमाल में कोह हिमाला
जनूब में तेरा लाला
मशरिक में मुल्क ब्रह्मा
मग़रिब में तेरी अम्मा।

गौहर शनास ने पकड़कर तख़्ती उसके हाथ से, पीठ पर दे मारी–"ओए, अब भी चुप्प कि नहीं?"

मौलवीजी ने आवाज़ दी–"नहीं मानता तो बना दे मुर्ग़ा!"

छोटी सी आवाज़ आई–"मैं मान गया हूँ न मौलवीजी! कान खींच लिए हैं अपने। बस।

"अच्छा! बोधराज, इन कमचोरों को भी धार पर चढ़ा दे!"

"जी जनाब!"

बोद्दा अपने और मौलवीजी के मिले-जुले रौब में सवाल दागने लगा:

पंछियों में सैयद–	कबूतर
पेड़ों में सरदार–	सीरस
पहला हल जोतना–	न सोमवार, न शनिवार!
गाय-भैंस बेचनी–	न शनीचर, न इतवार!
दूध की पहली पाँच धारें–	धरती को!
नूरपुर शहान का मेला–	बैसाख की तीसरी जुम्मेरात को!
चिर-पहाड़–	रावलपिंडी से पाँच कोस दूर!
जो चमके बिजली बैसाख की पहली सुदी–	तो भर-भर दाने कोठों में!

कोने में बैठे हौलू ने तुक मिलाई–"पल्ले दाने तो कमले भी सयाने!"

जोगे ने गौहर की सैनत मारी–"अँधेरे में एक-दूसरे का मुँह नहीं दीखता उस्ताद जी, तो जवाब कहाँ से ढूँढ़ के लाएँगे!"

मौलवीजी हँसे–"अहमक़! ओए, जिसके दिमाग़ में रोशनी हो वहाँ बराबर गुल जलती रहती है। चल गौहर पुत्तर, जला दे चिराग़।"

लड़कों में ख़ुसपुस होने लगी।

शेरे से न रहा गया–"मौलवीजी, मेंह के तो परनाले बह रहे हैं! थल्ली वंड के खोब्बे में से कैसे निकलेंगे?"

मौलवीजी ने हुक्के की गुड़-गुड़ ज़ारी रखी।

रक्खे ने शेरे की गुद्दी पर टोहका दिया–"ओए, देख बाहर!"

पूरा जमघट हल्ला करने लगा:

"ओले पड़ गए टपा-टप्प
फ़ौजें चढ़ आईं दबा-दब्ब!
दौड़ो यारो दौड़ो
चलो मदरसा छोड़ो!"

मौलवीजी ने अँधेरे में ही दो-चार सिर गरमा दिए।

"बैठ जाओ सीधी तरह भूतनो, ऐसा मारूँगा कि मलोले खाओगे!"

बड़े लड़के हिनहिन करने लगे और छोटे झूठ-मूठ सिसकारियाँ भरने लगे!

मौलवीजी कड़के–"चौप्प ओए चुप्प!"

गौहर ने चिराग़ जला मौलवीजी के पास घड़े की चप्पनी पर रख दिया तो तुलबा की भीड़ में ख़ुद मौलवीजी चिराग़ की तरह चमकने लगे।

"गुलज़ारीलाल, मरगल्ला पहाड़ियाँ कहाँ हैं?"

"रावलपिंडी के पास, जनाब!"

"भला जरनैल निकलसन बहादुर की यादगार कहाँ है?"

"जी, वहीं, मरगल्ला दर्रे के पास!"

"शाबाश!...गौहर शनास, सिंह की बाब कहाँ है?"

"जनाब, दरिया काबुल और सिन्ध जहाँ मिलकर नीलाभ बन जाते हैं, वहीं है सिंह की बाब!"

"रोडया, काला चिट्टा पहाड़ कहाँ है?"

"अटक के पास!"

"अटक के पास?" मौलवीजी ने कान पकड़कर उठा दिया–"पहले कहते हैं जनाब या जी! क्या समझे!"

रोडे ने कनपटी पर हाथ रखा और मुस्तैदी से कहा–"जी, जनाब!"

ताकी के पीछे से आवाज़ आई:

"आलू अलूचा फ़ालसा
काबुल में पहुँचा ख़ालसा!"

"गौहर शनास, शुर्ली है यह! पकड़ के ले आ मेरे पास इसे!"

चटाक-पटाक मौलवीजी ने दो लगाए–"आज के अलूचे तो दो खरे हो गए?"

"जनाब!"

बड़े लड़के गुलों के नाम लें:

गुले-लाला
गुले-यासमन
गुले-पलाश
गुले-शब्र अफ्रोज़
गुले-सूरी
गुले-हज़ारा
गुले-जाफ़री!

कच्ची जमात के बस्सो दाई के लड़के हौलू ने महीन सी हेक निकाली–"जी, मैं भी एक बताऊँ?"

गौहर ने एक रसीद की पुड़पुड़ी पर–"अलिफ़-बे आता नहीं और शायरी करने चला है! बैठ जा!"

मौलवीजी ने बड़े प्यार से बुलाया–"हौलू पुत्तर, इधर आ! मेरे पास!"

हौलू ने नाक से बहते सींड को बाजू से पोंछा और डरते-डरते पास आ खड़ा हुआ।

"बोलो, क्या कहना चाहते थे?"

"जी, एक गुल का नाम बताऊँ?"

मौलवीजी ने सिर हिलाकर इज़ाजत दी।

"गुले-ख़ुदरो!"

मौलवीजी ख़ुश हुए–"पुत्तरजी, कहाँ से सुना?"

"जनाब, आपसे!"

"लड़को, अपना कहना यह है कि हौलू की खोपड़ी में है कोई बीज काम का! गौहर शनास, सन्दूकची में से क़लम निकाल दो। इनाम है हौलू का!"

क़लम लेकर निक्के हौलू को ऐसी शर्म आई कि मुँह में उँगली डाल नाखून कुतरने लगा।

बादलों की गड़गड़ाहट में बिजली यकायक इतने ज़ोर से कड़की ज्यों मदरसे के बाहर ही गिरी हो!

कच्ची-पक्की के बच्चे-बेटड़े डुसकने लगे–"हाय ओ बेबे!"

"जी, मेरी माँ ढूँढती फिरेगी!"

"जी, मेरा चाचा फिकर करेगा!"

"मेरा लाला..."

मौलवीजी हुक्के की नड़ी मुँह से निकाल हँसने लगे–"ओए खोत्ते के पुत्रो, डर से तुम्हारी पजामियाँ तो नहीं गीली हो गईं! बैठे रहो आराम से जब तक मींह न थमे। दमोदरा, उठकर बताओ, गुजरात का क़िला किसने बनवाया था?"

दामोदर ठिंगने ने ताबड़तोड़ इबारत शुरू कर दी–"गुजरात का क़िला हिन्दोस्तान के मुग़ल शहंशाह अकबर ने बनवाया था।

"मुगल सल्तनत के दिनों में चलन यह था कि जहाँ हुकूमत क़िला बनवाने का फ़ैसला करे, उस पर होनेवाला आधा खर्चा वहाँ की रियाया दे और आधा दिल्ली की हुकूमत।

"बादशाह सलामत ने शहर की सलामती के लिए क़िला बनवाने का ऐलान किया तो इलाक़े के जट्ट बिगड़ गए। उन्होंने ख़र्चा उठाने से साफ़ इनकार कर दिया।

"अकबर बादशाह ने गुज्जरों के सरदारों को समझाया-बुझाया तो वे मान गए।

"वड़ैच पिंड डिंगा के चौधरी फ़तेह मुहम्मद ने रुपया-पैसा इकट्ठा करने का सारा ज़िम्मा अपने सिर पर ले लिया।

"दीनगाह के अमीर गुज्जर आदम ने बोरियाँ भर-भरकर दौलत दी।

"क़िला जब बनकर तैयार हुआ तो बादशाह सलामत ने ख़ुश होकर शहर का नाम गुजरात अकबराबाद कर दिया।

"जट्ट बड़े नाराज़ हुए।

"दिल्ली शिकायत लिख भेजी कि मुल्क के पादशाह को किसी भी एक फ़िरके को दूसरे के ख़िलाफ़ ऊपर चढ़ाना मुनासिब नहीं। महल जितना गूजरों का है उतना ही जट्टों का भी है।

"जवाब आया–जो नाम रखा जा चुका, बदला नहीं जा सकता। हाँ, जट्ट अपनी तरफ़ के इलाक़े का जो भी नाम रखना चाहें, हम उन्हें मंजूरी देंगे।

"जट्टों के मूरिस क्योंकि 'हेरात' से आए थे, उन्होंने अपने इलाक़े का नाम रख लिया हेरात।

'एक बार बादशाह कुंजाह के आसपास हीरा-हिरण का शिकार खेलने गया। जंगल की खूबसूरती देखकर फ़रमाया–'असली हेरात में बढ़िया-से-बढ़िया घोड़े और गुजरात हेरात में बढ़िया-से-बढ़िया काले हिरण।' दरबारियों से पूछा–'किस हेरात को बढ़िया माना जाए–इसको या उसको?'

"'बादशाह सलामत, दोनों ही एक-दूसरे से बढ़-चढ़कर हैं।'"

मौलवीजी ने फत्ते को बाहर झाँकते देखा तो आवाज़ दे दी–"फत्तया, दर्रों के नाम गिना!"

"ख़ैबर, ख़ुरर्म, टोची, गोमल और जी रब्ब आपका भला करे, ईरान!"

"ईरान कि 'बोलान'?"

फत्ते को जाने की जल्दी थी सो लापरवाही से कहा–"अहो जी, कुछ भी हो हमारी तरफ़ से। अब छुट्टी कर दो। घर पहुँचते बनें। आसमान देखो। अन्धेर घुप्प घेंर!"

मौलवी जी गरजे–"ओ जट्टा, ईरान और बोलान में तेरे भाने कोई फ़र्क़ ही नहीं? कर हाथ..."

उठा के मौलवीजी ने ऐसी छड़ मारी कि लड़कों के तालू सूख गए।

"बन्तेया, नाम गिना अपने इलाक़े के जंगल-बेलों के!"

"चक ग़ाज़ी, लंगा रुक्ख, धूल रुक्ख, मारी खीखरन, पिंड तातार, भक्ख पब्बी, सादुल्लापुर..."

मौलवीजी ने उठकर एक कनपटी पर चपेड़ मारी–"ओए सुअरा, यह क्या टैश और टश्श है तेरी! बिना रुके बोलता चला जाता है ज्यों ख़ुद ही उस्ताद हो! पेट से ही पढ़कर निकला हो!"

बन्ते को आग लग गई। कान पर हाथ रखे घूरता रहा।

"मोटी बुद्धवाले, अगर जवाब तुम्हें याद है तो उगलने की क्या जल्दी है! नाम ऐसे दोहराए जाते हैं, जैसे रफ़्ता-रफ़्ता याद आते चले जा रहे हैं! फिर कभी ग़लती न हो!"

हबीब को आवाज़ पड़ गई–"हबीबेया!"

"जी, आज हबीब ग़ैर-हाज़िर है। उसकी भैंस सूई है।"

निक्के को सूझ गया–"मौलवीजी, अब तो आपके लिए दही-लस्सी आया करेगी!"

"केशोलाल, समुद्र के नाम ताज़ा कर!"

"बहरुल काहिल
बेहरे-सीन
बेहरे-अख़्ज़र
बेहरे-असवद
बेहरे-दकियानूस..."

"कुन्दज़हन! औकियानूस को दकियानूस! इधर आ!"

केशोलाल ने कान पकड़ लिए–"भूलेक्खा पड़ गया मौलवीजी! आज माफ़ी दे दो! गिनकर सौ बार याद करूँगा!"

"ओए, तेरी यह अटक बहुत पुरानी है। फिर भूला तो?"

"न जनाब, याद कर लूँगा!"

फत्ता उठकर पास आ गया–"मौलवीजी, आपाँ चले! मेरी तो आज छुट्टी कर छोड़ो!"

"मूर्खा, ख़ुदख़ुदी काहे की! छुट्टी तेरे कहने से होगी कि मेरे कहने से?"

फत्त जट्ट अड़ गया–"आज तो, जी, ये बातें बेफ़ायदा ही हैं न! इस बरसात में हमारे ढोर-डंगर कौन देखेगा!"

उत्तरी वंडवाले मुद्दरे ने भी मौका ताड़ा। टपोसी मार उठ खड़ा हुआ–"मौलवीजी, फिटे मुँह मेरा–मेरे वल्द जुते थे खेतों में। लो जी, मैं गया..."

देखा-देखी छोटे टींडे-गींडे भी मच गए। हाथापाई शुरू हो गई।

मौलवीजी ने गौहर को पुचकारकर कहा–"पुत्तरजी, इन्हें जाने दो! ओ टिड्डो जायो, जाकर माँओं से तत्ते-तत्ते पूड़े खाओ!"

छोटे लड़कों ने दो-दो की जोड़ियाँ बना लीं। पजामियाँ टूँग सिरों पर तख़्तियाँ रख घरों को दौड़ चले।

झोटे नूँ गाह
बुद्धो नूँ राह
मर्द नूँ चक्की
घोड़े नूँ चट्टी
चरे राह कुराह
ओ झोटे नूँ गाह।

मौलवीजी बड़े प्यार सिदक से अपने कच्चे शागिर्दों को जाते देखते रहे। फिर पक्कों को आवाज़ दी–"गौहर पुत्तरजी, ज़रा चिलम तो ताज़ा करो! दूधारने में अँगियारी ज़रूर होगी। हाँ, सयाने लड़के 'पंडनामा' खोलकर पढ़ें और बाद में पढ़ें गुलिस्ताँ बामानी।"

रागियों के जगतार ने बहाना बनाया–"आपके लिए मेरी बेबे ने ख़ीर चढ़ा रखी थी। मैं लेने न पहुँचा तो मार-मार मुझे फट्टड़ कर देगी।"

"नालायको, सोचता होगा, खीर के नाम से तेरी छुट्टी कर दूँगा! ऐसे फ़तेह पेंच डाले मुझ पर तो सूअरवाली थूथनी गोंध दूँगा!"

एकाएक शुर्ली ने हाँक मार दी–"दौड़ो, दौड़ो, मौलवीजी की हँडिया में बिल्ली मुँह मार गई!"

गौहर ने हँडिया पर झुके-झुके शुर्ली को चूँडी काट दी और मौलवीजी को सुनाकर कहा–"बिल्ली ने हँडिया की छूनी ही कवासी है, मुँह नहीं मारा! देख लो, मलाई का थर वैसा का वैसा बँधा है!"

सुनकर मौलवीजी की भूख जाग पड़ी।

"पुत्तरो, ज़रा सखी सरवर लक्खनदाता को ताजा करो। फिर तुम्हें छुट्टी देते हैं!"

गौहर और बोद्दे ने एक साथ ऊँची आवाज़ में बोल उठाया तो बाक़ी लड़के भी तर्ज़ पर आ गए:

पंज सदी के अव्वल या की चार सदी के आख़ीर
मुल्क अरब से फ़ित्ना उठकर क़ायम हो गया आख़ीर
जैनब दीन बाप सैय्यद अहमद तरक वतन तब किया
अरब छोड़ पंजाब में शाह कोट सान सा लिया
सैय्यद होने इन साहिब में शुबह न शक्क है भूल
सैय्यद हुसैनी इनको जानो मानो अल रसूल।

शाहनी की चिर-सूखी कोख की महत्ता प्रकटी तो पहनने के कुरते-झग्गे सब छोटे पड़ गए।

चाची महरी इस्माइल दर्जी से काली सूफ़ के दो ख़ुले झबले सिलवा लाई।

"माँबीबी, अरी ज़रा कोरे कपड़े पानी में नितारकर डाल दे। संझा तक सूख जाएँगे।"

शाहनी के लिए काला कप्पड़ माँबीबी के दिल-मन न भाया।

कुईं की ओर जाते-जाते कहा–"चाची, तुम्हारी तुम्हीं जानो। खत्राणियों को काली सूथने पहनते तो देखा है, पर काले कुरते कभी नहीं। ख़ैर रहे रब्ब की चाची, पर मुझसे पूछो तो सोगवारी रंग है।"

चाची महरी पहले माँबीबी को घूरती रही, फिर हौले से कहा, "काली अँधियारी रात के बाद चमके दिन का सूरज! आई समझ?"

"सच्ची-मुच्ची चाची, तुम्हारी अक़्लों की भी क्या रीस!"

शाहनी अपनी बाँह पर सिर रखे मंजी पर पसरी थी। टुक दोनों की ओर देखा और हँसकर कहा–"चाची! देखो मुझे, दोपहर लेटे-लेटे ही गँवा डाली। माँबीबी, मेरी पिटारी तो दो। बैठे-बैठे सूत ही अटेर डालूँ।"

चाची ने वर्ज दिया–"काम-धन्धे भागे नहीं जाते मेरी बच्ची! कोई पोथी-गुटका पढ़ तो ख़ैरों से गब्ब कोठरी में भी चान्नन हो।"

शाहनी ने पूछा–"माँबीबी, आज राबयाँ न आई। बुल्लेशाह ही सुनाती। कल तो लड़की ने आनन्द कर दिया। ऐसे मीठे बोल उठाती है बारहामासे के कि तन-मन जी-जी जाए!"

"सच्च कहती हो बच्ची, अराइयों की को रब्ब की देन! गला ऐसा सुरीला कि हिरख सोण-मोद-भोग पुर-पुर आए सुरों में! कानों में मिट्ठड़े बोल पड़ते ही रूह हरिया उठे मनुक्ख की।"

पौड़ियों की ओर किसी की आहट हुई।

"आ री राबयाँ, बड़ी लम्बी उम्र है तुम्हारी!"

मुल्तानी छींट के सूथन-कुरते पर अधमैली दुपट्टी। रूप दूधिया ऐसा कि हाथ लगे मैला हो।

सिर पर से दोहर उतार राबयाँ ने माथे पर आते सुनहरी बाल समेटे और शाहनी से पूछा, "सिर झस्स दूँ न! घी की कटोरी ताक़ी में रख गई थी।"

"हस्साँ नाइन आती ही होगी। बल्ली राबयाँ, तुम गातीं भली!"

चाची ने टोक दिया–"लड़की को हाथ-पाँव हिलाने दिया करो। काम करने की रब्बत पड़ेगी। धिए, करतारो की बड़ाई सुनती हो न! बड़ी तारीफ़ें हैं उसकी अपने पिंड में। घरवाला बड़ा ख़ुश। सुचज्जी ने ऐसा सुघड़ घर सँभाला है!"

राबयाँ छोटा-छोटा मुस्काती रही। खड़ी हो पीछे शाहनी का चुटला खोलने लगी।

सिर में घी डाल उँगलियों की पोरों से बालों की जड़ों में रचाती थी कि शाहजी आन पौड़े।

शाहनी ने सिर पर कपड़ा कर लिया।

राबयाँ मंजी की पाटी पर पाँव टिकाए मूरत बनी खड़ी रही।

शाहजी लड़की को देख-रेख बड़प्पन से हँसे–"राबयाँ, सुरों में मोती पिरोना छोड़कर किन कामों में आ लगी! शाहनी, ऐसी गुणी लड़की से ऐसे काम न करवाया

कर।"

शाहजी राबयाँ को निरखते रहे–"रब्ब की बक्शश इसके माथे! जीती रहो! जीती रहो! शाहनी, राबी बड़ी उत्तमा है। इस पर सरस्ती का विरद हत्थ!"

शाहनी चाव-चाव लड़की को देखने लगी।

सिर के आँचर से बाहर आते कक्के-कक्के सुनहरी बाल और काचे रंग पर नई-नवेली रुत का गुलाबी झलक:

चाची ने पुचकारकर कहा, "सुना धिए, सुना कुछ शाहजी को! दिल से तेरी सराहना करते हैं!"

राबयाँ शाहनी की ओर देखने लगी।

"बोल बल्ली, कोई मिट्ठी वाणी इन कानों में भी पड़े!"

राबयाँ ने कुँवारी चितवन शाहनी की ओर ताका, फिर ओढ़नी ढंग से ओढ़कर बुल्लेशाह की काफ़ी छू ली:

मैं सूरज अगन जलाऊँगी
मैं प्यारा यार मनाऊँगी।
सात समुन्दर दिल के अन्दर
मैं दिल से लहर उठाऊँगी।
मैं प्यारा यार मनाऊँगी।
मैं बादल हो-हो जाऊँगी।
मैं भर-भर मेंह बरसाऊँगी।
न मैं ब्याही न मैं क्वाँरी
पर बेटा गोद खिलाऊँगी
इक दूणा अचरज गाऊँगी
मैं प्यारा यार मनाऊँगी।

"श्रीराम! श्रीराम! जिए जागे री राबयाँ! क्या सुर, क्या गला और क्या बाबा बुल्लेशाह!"

शाहनी ने जल-भीनी अँखियाँ पोंछीं तो देखा, शाहजी की आँखों में कोई सूरज दमकता-चमकता हो! माथे पर हरियावल उग आई। सिर हिलाकर बोले–"राबयाँ मिट्ठ-बोलनी! अलिये ने बताया, तूने सी-हरफ़ी लिख डाली है। इस बार स्यालकोट फेरा लगा तो उस्ताद इनायतशाहजी को दिखाएँगे।"

राबयाँ के मुखड़े पर कोई फुहार पड़ने लगी। चुन्नी का छोर पकड़ दाँत में दबा लिया और अँखियाँ नीची कर शरमा दी।

शाहजी ने सिर हिलाया–"शाहनी, लड़की के गाने का सत्कार कर। इसे कुछ दे।"

पेट पर बिछे रसीले मिश्री बोझ को सँभाल शाहनी चारपाई से उठी तो संग-संग दिल में हुलासी और उदासी घिर आई।

पसार में जा लकड़ी की पेटी खोली तो लड़की के लिए शाहजी की तरीफ़ सुन अपने जियरे को घुड़क दिया–'मुड़ री, इस छोटी सी कंजक से द्वैत कैसा!"

शाहनी ने मलमल के भोछन में लिपटी मिरची के बूटेवाली फुल्कारी निकाली और लाकर राबयाँ की झोली में डाल दी–"राबयाँ री, इस बार सयाले में ओढ़ना।"

राबयाँ की आँखें चमकने लगीं–"मैं मर जाऊँ शाहनीजी! कैसे ओढ़ूँगी! यह तो शादी-ब्याहवाली है!"

चाची महरी ने लाड़ से झिड़की दी–"बस री, तू शादी-ब्याह से परे! तू इन सबसे अनोखी!"

शाहजी को बैठक की ओर क़दम उठाते देख शाहनी को जाने क्या सूझा। रोककर कहा–"राबी से सावन सुन जाओ! गा री गा, वह दोहरा गा!"

"सावन माह सुहावना जो धरती बूँद पई
अनहद बरसे मेघला जो मन की तृप्त गई
मल्हाराँ सोहन सारे सावन, दूती दूत लगे उठ जावन
नी घर खेलन कुड़ियाँ गावन, मैं घर रंग-रँगीले आवन।
मेरीयाँ आसाँ रब्ब पुजाइयाँ,
ताँ मैं उन संग अँखीयाँ लाइयाँ
सँइया देन मुबारिक आइयाँ
शाह इनायत अंग लगाइयाँ।
भादो भावे तब सखी, जो पल होए मिलाप
जो घट देखूँ खोल के, घटि-घटि के विच आप।"

गाते-गाते राबयाँ का स्वर थर्राने लगा। आँखें भर आईं।

माँबीबी का अपना दिल उमड़ आया। पास आ लड़की का माथा चूमा–"सदके जाऊँ! सुच्चे बोल तेरे ओठों पर फूल बन जाते हैं री!"

शाहजी की ओर देख शाहनी बोली–"यह शहद-घोलनी तो हमारे ग्राँ के माथे पर दौनी हुई न दौनी!"

चाची ने भोले भाव टोका–"बस बच्ची, हमारी लड़की का सिर न फिरा। तारीफ़ें नहीं, इसे आसीसें चाहिए! जा मेरी राबी, सलाम कर बड़ों को!"

राबयाँ पहले शाहजी के आगे रुकी, फिर हाथ उठा शाहजी को सलाम किया।

मुखड़े पर दो मणियाँ अनोखी दिप्प-दिप्प करती रहीं। कई देर।

चाची ने देखा–"बच्ची, सलाम पहुँच गया शाहजी को! हाथ नीचे कर ले!"

राबयाँ ने शरमाकर मुँह दोनों हाथों में छिपा लिया।

शाहजी चुपचाप अपनी बैठक की ओर बढ़ गए।

शाहनी ने देखा तो मंजी पर बैठी-बैठी हँफने लगी। किसी से कुछ कहे-सुने कि गुम-सुम हो गई। आँखें मिच गईं और सिर निढाल पाटी पर जा लगा।

माँबीबी दौड़ी–"चाची, झटापट आ! कोई पानी लाओ री, छींटी दो! शाहनी का दिल छिप गया है!"

मेघ पनीले बरस-बरसा सुरख़रू हुए। चढ़े नद-नाले भँवरों से खेल-खाल उफ़ानों से नीचे उतर आए।

सजद बीबी ने लकड़ी की सीढ़ी से कोठे पर जा पानी की मार टोही। नज़र उठा आसमान का सुथरा नीला रंग देखा और अपनी भतीज-देवरानी बेग़म बीबी को हाँक मारी–"बेग़मा री, गल्ले-पीहन से जल्दी निबड़ ले। आज कोठे-भित्तियों पर लिपाई होगी।"

चक्की पर बैठी बेग़मा ने पहले हाथ तेज कर लिया, फिर आवाज़ दे जिठानी से पूछा–"घानी तो अभी कल पड़ी, आज ही लीपा-पोती कैसी! मिट्टी को भीगने तो दो।"

फूफी खीज गई–"क्यों री, अभी से कतराने लगी! रात-भर दोनों भाई घानी में खड़े रहे। हाथ लगा के तो देख। जनों ने पैरों से गूँथ मिट्टी को मलाई कर डाला है।"

"तूड़ी भोह भी तो मिट्टी में रल-मिल जाने दो। जल्दी क्या! आज नहीं तो कल सही।"

"आई री बड़ी आई अक़्लोंवाली! भाइयों ने पैरों से कूट-कूट मिट्टी को रेशम कर दिया है। अब कहीं बहाने से ताप न चढ़ा लेना।"

बेग़मा ने खीजकर पीहन उसार दिया और टूटी हुई चाटी का बब्बर ले दूधारना लीपने लगी।

सजद बीबी ने टोका–"अरी भतीजड़ी, यह छोटी-मोटी चुम्मा-चाटी बाद में करना। चल, उठा डम्बा और मिट्टी ऊपर डाल।"

बेगमा मचल मोर रही। लीप-पोत दूधारना धूप में रखा और पुराने भडोलों की लिपाई करने लगी। सजद बीबी ताड़ गई, आज काम से दवाल नहीं देवरानी।

सिर पर दुपट्टी डाली और घर से बाहर जाते-जाते कहा–"रोटियाँ उतार भत्ता पहुँचा आना खेत में। मैं शाहों के यहाँ से लाल मिट्टी ले आती हूँ।"

पीठ मुड़ते ही जिठानी की बेग़मा बुड़बुड़ाने लगी–'मौला, फूफियों के घर कोई न ब्याह के आए। मगर गई फूफियाँ ज़हर की ठूठियाँ।'

रसूली ने झाँका–"बेग़मा भरजाई, मैं तो चली कपाह बीनने शाहों के खेत। यह मुट्ठ-मुट्ठ गुटी तिल्लर कपाह खिड़ी है। हफ़्ता-आठ दिन लगा लूँगी चोन पर। तुम भी चलो–पंड-दो पंड कपाह तो मिल जाएगी न चुनने पर!"

"न रेशमा, फूफी सरकार का फ़रमान निकल गया है। कोठे की लिपाई, फिर गोती, फिर पोचा। गई है शाहों के यहाँ से रत्ती मिट्टी लेने।"

रसूली ने ख़ाला सास को काबू किया था। समझाकर कहा–"मुझसे सीख। मुझसे सबक़ ले। कर यह कि एक बार फूफी को आँखें उठा घूरती चल। तेरी अपनी नज़र की हया जो निकल गई तो आधा रण साफ़।"

"रेशमा, उसके बाद?"

"उसके बाद क्या! बुड़बुड़ाने की जगह निःशंक हो ऊँचा-ऊँचा बोलना शुरू कर दे। बस, रण जीत लेगी! चलने लगेगा हुक़्म!"

"छोड़ री, तू क्या जाने! जना मेरा फूफी पर जान देता है।"

"दे, ख़ैर सदके दे, पर जब मुँह मारने आए तेरे ढिब तो दूर कर दे। परे...परे..."

बेग़मा हँस-हँस दोहरी हुई–"बड़ा हत्थ-छुट है री! एक धप्पा मार दे, चार दिन उँगलियाँ चमकती हैं।"

"रहें चमकतीं! बस, हाथ न लगाने दे! सुन, मैंने कैसे सँभाला। इधर तो मेरी ख़ाला से लड़ाई, उधर मैं रोज़ सो जाऊँ उसी की कोठरी में। जना मेरा कभी बर्तन-भाँडे खड़काए, कभी कुत्तों को दुत्कारे। मैं मचल मारकर पड़ी रहूँ। एक दिन भत्ता देने गई तो जने ने उठकर मेरी गुत्तड़ी पकड़ ली–'ऐ बीबी, सीधे राह पर आ जा, नहीं तो ख़ता खाएगी!"

"मैं झुझका मार पीछे हट गई–'देख ओ जनया, माँ तेरी और ख़ाला मेरी। अगर वह बने जुल्मी सास मेरी तो लड़ाई न मेरी, न तेरी। उससे निपटने दे मुझे और ख़ैरों से मंजी अपनी घर से उठा ले। बाबे के साथ सो खू पर और मैं सोऊँगी घोड़े-बेचनी अपनी सासड़ी के संग!'

"भरपाई बेग़मा, यह सुनते ही घरवाले को तो हल्क कूद गया। घसीट मुझे नीचे दे मारा। मैं न रोई, न करलाई। कपड़े झाड़ उठ खड़ी हुई और सहजे से बोली–'माँ-पुत्तर दोनों मिलकर कर लो बूटेमारी। खुदावन्द तुम्हारे कूँओं का पानी सुखा देगा। जिवियों के बीज गला देगा। खड़ी फसलों में कीड़े लगा देगा।"

रसूली मानो बेग़मा से नहीं, अपने गबरू से बातें करती हो। एकाएक हँसने लगी–"बेग़मा भरजाई, वह दिन था और आज का दिन है। जने पर जैसे कोई टूना-टोटका हो गया। पास खींच पुचकारने लगा–'न-न रसूलिए, खेती को बद्दुआ न दे। मैंने कौल-करार किया तुमसे। बेबे ऊँची-नीची करे, तेरा ख़ाविन्द तेरे साथ हमेश!'"

बेग़मा की आँखें फड़कने-मटकने लगीं–"फिर री, फिर क्या हुआ? जल्दी बता!"

"सुन! शामी वेले तन्दूर तपा मैं आटे की कनाली लाई तो सासड़ी मेरी रोज़ की तरह बोलने लगी–'सूरखानिए री रसूलिए, गीली मन्छट्टी क्यों डाली तन्दूर में? मार धुआँ-ही-धुआँ! कोई अक़्ल-समझ कर!'

"इसके पहले कि मैं पलट के कुछ कहूँ, मेरा जना माँ के पास आ खड़ा हुआ और ज़ोर-ज़ोर से खड़कने लगा–'कान खोल के सुन ले बेबे, रसूली से कोई ऊँच-नीच की तो समझ रख, इस घर में अकेली करलाती रह जाएगी!'

"ख़ाला बिफ़री–'क्यों रे क्यों?'

"बेबे, वह यूँ कि आज से घर-हँडिया की लम्बड़दारी मैंने रसूली को दे दी है। बहूटी तेरी जो भी राँधे-पकाए, खा-पी आराम किया कर। काम की रब्बत न छूटे तो पीहन कर। चर्ख़ा कात। नमाज़ें पढ़। रोज़े रख। बेबे, हुक़्म-हासिल तेरा बहुतेरा चल गया। अब सब्र कर ले।

"भरजाई बेग़मा, मेरी सासड़ी को तो ज्यों पाला मार गया। मंजी पर पड़े-पड़े रोती रही।

"फ़ज़र उठकर मुझसे घी-गुँधी आवाज़ में बोली–'धिए, बड़ी-बड़ी हकूमतें न रहीं, मेरी सूबेदारी किन गिनतियों में! आप पका और खा हँडा। मुझे जो कहेगी करने को, मैं हाज़िर हूँ। हाँ, इतना बता दे करमावलिए, किस मलवाने से जादू लिखवाकर लाई थी!'

"बेग़मा भरजाई, मैं क्या कहती कि जादू मुँह-बोला मेरा अपना और लिखनेवाला जट्ट पुत्तर भी तेरा अपना।"

रसूली के गए पीछे बेग़म बीबी सुखल्ली हो मिट्टी के खिलौने घड़ने लगी। बारहसिंगा बनाया, शेर बब्बर घड़ डाला। ऊँट की थूथनी निकाली ही थी कि सजद बीबी मिट्टी का पुड़ा उठाए आन पहुँची–"है री बद की नस्ल, न तन्दूर, न बालन! क्यों री कम्मचोरनी, यह टेढ़-मेढ़ किसलिए? चल, उठकर तन्दूर तपा!"

बेग़मा के सिर रसूली चढ़ बोलने लगी–"कान खोल के सुन ले फूफी! अब नहीं चलनी तेरी नादरशाही! आज नहीं मैंने करनी लिपाई-पुताई!"

सजद बीबी ने घूरा–"क्यों री क्यों, जिन्न-भूत तो नहीं चढ़ गए तेरे सिर?"

"न फूफी! न जिन्न-भूत, न पानी-परछाँवा! हुज्जत हिक़मत अब तेरी ख़ात्मे पर! चल गई जितनी चलनी थी!"

"मुड़ री, ज़बान पर फन्द दे। कुत्ते-खानियों की तरह भौंकती जाती है!"

"फूफी सरकार, अब तक तो न बोलती थी, अब बोलूँगी! किसी की ग़ुलाम-बाँदी

नहीं। डट्ट कर काम करती हूँ। माल डंगर को गत्तावा डालती हूँ। गोबर पाथती हूँ। झोटी को छप्पड़ ले जाती हूँ...”

“बस री, अपने वज़ीफ़े गाने छोड़ दे। जट्ट किसान की जातकड़ी न हुई कि मुग़लों की शाहजादड़ी हो गई! चल, भोच्छनी उतार और लिपाई पर लग।”

“कान खोल के सुन ले फूफी, मैं आज़ाद हुई। अब तुम्हारी लानत-मलामत न सुनूँगी!”

सजद बीबी हाथ मलने लगी–“फिटे मुँह री! इतना कुफ्र न तोल। तू मेरे भाई की औलाद, तुम्हें मैंने सौ-सौ लाड़ लड़ाए। अरी भतीजड़ी, तूने मेरा यह क़द्र पाया!”

बेग़मा उठ खड़ी हुई, गठीली छाती को छिपाए काला झग्गा ऐसे लहराया ज्यों जवानी पर रात! गुस्ताख़ आवाज़ में टनोका लगाया–“खा-खा तेरी फटकारें पेट में ग़म का गोला बन गया! सुन ले फूफी, जो तुमने अपने टेव न छोड़ी तो मैं भी असल की नहीं अगर अपनी झुग्गी अलग न कर लूँ। आख्यान करती हो न कि गंजी नहाएगी क्या और निचोड़ेगी क्या! वही होकर रहेगा।”

सजद बीबी सकते में आ गई। चुपचाप तन्दूर तपा पेड़े घड़े और बैठी-बैठी सोचने लगी–’हाय-हाय री, वक़्तों के पैंतरे! जिसका जना मर्द हो चढ़ता सूरज, ख़ैरों से उसी का हुक़्म-हासिल चलेगा! मेरा बन्दा ढलने पर पहुँच गया। बाक़ी क्या रहा! यही स्वाद बकबकौना! सब्र कर ले री सजदी! रब्ब का शुक्र मना। रहने को कुल्ली, ओढ़ने को जुल्ली और खाने को गुल्ली। पुत्तर की तरह देवर पाला, पर मौला तेरे रंग! कल तक मैं इसे उँगली से लगाए रही, आज बेग़मा उसके कन्धे चढ़ बैठी। चल री सजदो, दिल को न लगा। कन्धे चढ़ी सवानी मर्द से ज़रूर कुछ-न-कुछ लेकर रहती है। चल, जितना निभ गया सो ही बहुत!’

लाहौर जंजीर का मालिया शैतान को मार दे।
आशक परी शाह छेर परी को बाँध दे।
एक स्याह मोर स्याह सीतल परी को बाँध दे।
रेवा को बाँध दे, जमुना को बाँध दे, सरस्वती को बाँध दे
किशना नरबदा मोमती को बाँध दे
नरसिंह को बाँध दे
जैन ख़ान साधू दरयासिंह को बाँध दे...

हीरा साँसी ने गरजते बादल और चमकती बिजली तले खड़े-खड़े सारे जिन्न-भूतों को अपनी जंज़ीर में बाँध पुरखे शांसमल का ध्यान किया और करारी चाल पैड़ियाँ उतर सीधे चौके में जा बैठा।

सिर पर लाल दुपट्टी डाले जीवाँ ने थाली परोस दी। घी गुड़्ड़च्च रोटियाँ, आम का चूपा और दही की कटोरी।

हीरे ने आख़ीरी बुरकी मुँह में डाली। दीवे की रोशनी में लप-लप करती जीवाँ की लाल ओढ़नी देखी। जीवाँ की आँखों में दो मणियाँ।

हीरा साँसी ने फुरकती मूँछों से जीवाँ का पहले नाक भेंटा, माथा, फिर गले में झूलती चाँदी की जंज़ीरी को चूमकर कहा–“जय लोछिब्ब माँ, जय हाजी हयात!”

नंगा बदन। तन पर सिर्फ़ लँगोटी। जीवाँ हीरा के चारों धाम देख उसकी आदि-

दात पर रुक गई।

हीरा साँसी ख़ुश होकर हँसा। जीवाँ की सूथन पर थापड़ा देकर कहा–"अरी ओ मेरी किस्मती, यहीं लौटूँगा दिन फूटने से पहले।"

"साहब नबेढ़ू, तुम्हारा कैफ़दान इस भुतनी कन्ने...यहाँ...यहाँ..."

हीरा साँसी ने फुदकते पाँव ड्योढ़ी लाँघी और बाहर से कुंडी चढ़ा दी।

जीवाँ अन्दर खड़े-खड़े भूत परास्त करने को दोहराती चली:

"नदी को बाँध दे औले को
दरिया की लहरें बाँध दे
उतने से बाँध दे टोटका
जब उसे शेर बाँध दे।
बिच्छू का दाग़ पकड़ के बाँध दे
दन्दन ज़हर बाँध दे।"

कड़कती बिजली और घोर घघ्घर बरसात में हीरा साँसी गाँव से ऐसे बेखटके बाहर निकल गया ज्यों चिड़िया इस पेड़ से उस पेड़ तक उड़ी हो। खेतों से होता हुआ अडोल पानी में उतर गया।

ऊपर बरसते मेंह का पानी, नीचे तल चनाब का। सीधी-उल्टी तारियाँ। लहरों में हाथ-पाँव की हरक़त ऐसी ज्यों मछलियों के जाल।

पार पहुँच नज़र दौड़ाई–सामने बेगोवाल।

घुप्प अँधेरा। आसमान की काली-कजरारी चादरें धरती की मुँडेरों पर झुक आई थीं।

बिजली की झम्म-झम्माती तड़क में दूर से आती डाची को हीरा साँसी ने अपनी नज़र में क़ैद कर लिया। कुल्लूवाल से इधर आती डाची पर माल-मत्ता! हाथों की तालियाँ फड़कने लगीं।

अर्कमे ख़लीफ़ा ने इस हवामार डाची को राह पर क्यों डाला? कौन न खसोट लेगा राह में!

हीरा साँसी ने जाने-पहचाने कंढे से बेरियों की ओर क़दम बढ़ाया।

चुड़ैलवाले कूएँ के पास तूड़ी का ऊँचा ढेर देखकर हीरा के पाँव रुके। लम्बा साँस खींचा मनुक्ख की गंध। कान लगाया। गीले चारे की पंड में हल्की सी सरसराहट। क़दम उठा साँसी ने ढेर में से हाड़-मांस की पिंडली ऐसे पकड़ ली ज्यों कोड़-किरली उठाई हो!

"ओए, कौन? माँ का यार, किस पर आँख रखने को यह धंध-फंद!"

"ब-निगाहे करम जी, मैं रला खोजी!"

हीरा साँसी ने पिंडली खींच देह-की-देह बाहर निकाल ली।

"ओए, दरिया सामने और मूत्र में से मछलियाँ! दौड़ने की कोशिश की तो टोटे करके भँवर में डाल दूँगा।"

"मुझे ज़िन्दा रहना है हीरा उस्ताद! तुम्हारा हाथ-बँधा ग़ुलाम हूँ।"

"ओ रलेया, बता, तेरी माँ के ख़सम पुलसिए आज किस पिंड में अटके हैं?"

"दादू खोजी की ख़बर से कोटली लोहाराँ!"

"ओए, सच्चो-सच्च! जो बोला झूठ तो..."

"सौंह अल्लाह की! पुलसियों को ख़बर ऐसी कि आपका रुख भागोवाल!"

हीरे ने गर्दन पकड़ी ली–"पुत्तरा, गिच्ची घुट्ट छोड़ूँगा। किसी पापी पुलसिए ने

कल तक मेरे आसपास अपना बोथड़ा निकाला तो तू गया!"

"बराबर बादशाहो!"

हीरे ने रले को कसकर बाँह से लपेटा कि एकाएक बिजली की चमकार से रले खोजी की पोशाक उजागर हो गई। मुहांदरा पुलिस के सजावल ख़ाँ का, नाम रले खोजी का, काम चारों की गारद का।

साँप की-सी तेज़ी से हीरा साँसी ने सजावल ख़ाँ की गर्दन हाथों से दबाई और पुलसिया सँभले कि सँभले, पाँव उखड़ गए और काठी भुस्स बनकर नीचे ढह गई।

"लो जी सजावलख़ाँजी, हमने तो अपनी मेहनत कार-कमाई कर डाली। अब आप दरियाओं के सन्नाटों में मौज मारो।"

पत्तन से उतर हीरो साँसी शरींहवाले कूएँ पर पहुँचा तो अपनी आँखों के जुगनू कानों में आ लगे। दूर कहीं कुत्ता भौंकता था। हीरा झट पाँव समेट कोंकणियों के पीछे हो गया। एक कौड़ी ही गिनी थी कि बिना सवार के डाची पास से निकल गई। कहीं सजावलख़ाँ की तोपनी तो नहीं!

त्रिखे क़दम उठा डाची को जा पकड़ा। माल से भरी-लदी। नकेल पकड़ सवारी ले ली और डाची का मुँह पत्तन की ओर मोड़ दिया।

कल्लर के बीचोबीच गहनटठान में घुस हीरा साँसी ने डाची के गले की टल्ली बजाई। कुंडी खुलने का खड़का हुआ। किसी ने बाहर झाँक तगड़ी आवाज़ में कहा–"कौन है पोरसवान इस अन्धड़-पानी में?"

"अलिया, उस्ताद शांसमल का सेवक!"

खेस से मुँह-सिर लपेट अलिया पास आया। आँखों की सुरमई जोत से हीरा साँसी को पहचाना और 'हला' कर बेड़ी की ओर बढ़ गया।

भार तौलकर एक भारी क़दम ठहरा तो साँसी की समझ-बूझ ने मुंडी उठाई।

डाची से कूद ठंडे गले से ललकारा–"किन सोचों में हो अलिया उस्ताद! सवार और सवारी दोनों पार उतरेंगे। घाटे का सौदा नहीं। रब्ब के फ़ज़ल से गफ्फें हैं, गफ्फें!"

अलिये ने जोख़िम की भिनक पड़ते ही गले का थूक अन्दर निगल ली और सहजे से कहा–"अँधेरों के सरदार हो। जो कहो, मानेंगे!"

डाची के क़दम रखते ही नाव एक ओर डोल गई। अलिये ने माल से भरी छट्ट उतारी। नीचे रख वज़न सही किया तो हीरा साँसी मल्लाह के सामने बैठ गया।

"लो जी, दरियाओं पर ज़िन्दगानी के पीर ख़्वाज़ा ख़िज़र की हकूमतें। नाम लो दरिया पीर का और बेड़ी को भँवरों से पार उतार लो। ख़्वाज़ा ख़िज़र सब भली करेंगे!"

ऐन धार के बीच पहुँच अलिये ने मुँह खोला–"ऐसे कामों में भी ऊपरवाले की ही बरक़तें। साँसी उस्ताद, पहले पहर मिंह मौलाधार बरसा। अब छोटी-मोटी कन-मन। पार पहुँचते वह भी थम जाएगी।"

हीरा साँसी दरिया को नहीं, मल्लाह को नापता रहा। फिर पूछा–"अलिये, माल कि पत्ते?"

"उस्ताद, आपाँ माल का क्या करेंगे!"

"चलो, तुम्हें जो चाहिए, वही पहुँच जाएगा।"

"क्यों नहीं, ख़ैरों से हिसाब-किताब साफ़ करने का अक़ीदा तो क़दीम से चला ही आ रहा है!"

नाव किनारे जा लगी। डाची उतरी। सामान लदा और हीरा साँसी डाची पर जा

बैठा।

लगे रहें खोजी और करते रहें शनाख़्त।

अलिया ज़ालिम साँसी की गुप्त भभकी समझ गया।

“साँसी उस्ताद, आपाँ ने तो न देखी डाची, न डाची-सवार।”

अलिये ने खेस की ताज़ी बुक्कल मार किश्ती मोड़ ली है और अँधेरे में ओझल होते हीरा साँसी को देख सिर हिलाया और जी हल्का करने को बुड़बुड़ाया–‘ये बदकारियाँ या फट्टे या सट्टे या अट्टे!’

बरसती-गरजती रात में कुल्लूवालवाले सावन शाह के यहाँ सन्न लगी कि डाका पड़ा–यह जाने पुलिस या जाने खोजी! हीरा साँसी तो जिन पैरों घर से निकला था, उन्हीं पैरों परत आया।

बाहर से कुंडी खोली और आँगन में पहुँच अन्दर से चढ़ा ली।

अँधेरे ही अँधेरे में घर-भर को सूँघा और कोठरी में जा जीवाँ को भींच लिया।

“छोड़ दे, छोड़ दे रे पर्बता!”

हीरा ने छातियों को छुआ–“ये कांगरेर!”

जीवाँ ने बाँहों का गुंजल मार लिया–“हट रे, हट जा लुटेरू!”

हीरा ने हथेलियाँ छाती तले दाब दीं–“निरी बरेती!”

“दुर्रे...दुर्रे...!” जीवाँ ने जैसे कुत्ते को फटकारा-दुत्कारा हो।

हीरा ने ढाप लिया–“यह चोह मेरी! चल री बुढ़नी, सिम जा। सिमसिम...”

जीवाँ ने बाँहों पर सिर टेक दिया–“ओ भरतार, नीचे खोब्बा है, खोब्बा!”

हीरा ने छेड़ा–“चल री चल, उतार मेरा ऋण!”

जीवाँ खिड़-खिड़ हँसने लगी–“रोकड़ में कि जिन्सी में?”

“जो तू चाहे।”

रतियारी वाहिनी में गोते मार हीरा साँसी थमा तो जीवाँ ने पूछा–“क्यों रे, लेखे चढ़ गया?”

“हाँ, काल करिच्छा उड़ गया।

फिस्सी मार बीच सरोवर।”

“ख़ैर होलम दूर बलाई।”

एकाएक जीवाँ ने कान दिया और हीरा को ठेलकर कहा–“फुट जा पापिया!”

दोनों साँस रोके ऐसे पड़े रहे, जैसे अधमोए हों!

कोई कोठे की मुँडेर से लमककर नीचे आया। कोठरी की ख़ुली कपाटी से झाँका और वह जा, और वह जा...

हीरा साँसी और ज़ीवाँ मंजी पर पसरे रहे।

धूपें घर-गाँव-खेत-खलियान में चमकने लगीं तो हीरा साँसी उठ आँगन में आया। दरवाज़े पर लटकती कुंडी देखी तो सब समझ गया।

जादूमन!

कुंडी उतार साँसी जादूमन कह गया कि पुलिस ताक में है। बेखटके न रह।

हीरा साँसी दिल-ही-दिल हँसा। कपड़ा-लीड़ा तवी पार। गहना-छल्ला गुजरात-सर्राफ़े। बर्तन-भाँडे सन्दलबार। डाची जा बँधी बद्दों की। रहे सजावल ख़ाँ, वह सो गए

गहरे।

हीरो ने जीवाँ के कान में कुछ बुड़बुड़ाया तो जीवाँ ने चारपाई की नंगी चौखट उठा घर के सामने पटक दी और आसपास के पड़ोसियों को सुनाकर कहा–"अरे बेपैंदे के बर्तना, इस बरखा-मेंद में मैं भुंजे सोती-मरती हूँ। एक मंजी तो बना दे नकरमे।"

हीरा का हमसाया बाहर निकल आया–"कुत्ती सुबह-सवेरे भौंकने लगी। अरे चारपाई को सड़ाँगा बाँध, पिड़ियाँ डाल तो रात तक निबड़ जाएगी।"

जीवाँ फिटकें भेजने लगी–"अरे लोगो, यह चिचड़ा भरतार मुझे नोच-नोच खाए कि कोई काम करके दिखाए!"

हीरा ने धमकाया–"चुप। उल्लू के दीदोंवाली। गोबर में भूसी डाल और लिपाई कर ले अपने बोथड़े की!"

"जा रे जा ओ जांगलू!"

पड़ौस से जात्री और मुन्दरा ख़ाँसी बाहर निकल आए और धमकाकर कहा–"ओ जीवाँ, सपियादी लगाम दे ज़बान को। गबरुए ने कुट्ट-मार की तो हमें न कहना!"

जीवाँ चिल्लाने-करलाने लगी–"चुप ओए मेरे जांगलू के यारो! मेरा लमतीर न कुछ कमाए, न लाए। सौ बार लानत-मलामत भेजूँगी।"

हीरा ने पास आ जीवाँ की गुत्तड़ी खींच दी–"अरे भेड़कुट्टन, मेरी मूँछ पर हाथ डालती है! ऐसा दंड दूँगा..."

"जा ओ लबड़घोघी रोंगटिया, धो आ मुँह माँ के मूत में!"

हीरा ने ऐसे घुसुन्न मारे कि आन-की-आन में पिंड इकट्ठा हो गया।

आसपास के सगोती आ ढुके।

"चुप री औत्तरी, मुँह कन्ने लगाम दे!"

"काहे रे! मेरे दीदों ने देखे उच्ची नक्कवाले टुल्ले!"

सुनते ही साँसियों की गोठ को साँप सूँघ गया।

हीरा ने झट चेतावनी दी और जीवाँ के बाल पकड़ घर के अन्दर धकेलने लगा–"कुत्तेखानी, मुँह पर लगा दूँगा माफ़रा!"

जीवाँ ने झुझका दिया–"बैरिया माधो, फुट्ट जा!"

हीरा ने कोठे की पैड़ियों की ओर दलाँग मारी ही कि पुलसिए पापियों ने घेर लिया।

जीवाँ ने हार न मानी। हाथ हिला-हिला चिल्लाने लगी–"मैं न तुझे रोती रे! कौन मेरे अँगना तेरा जातकड़ा खेलता है बेऔलादिए!"

जात्री ने मुँह पर हाथ रखा–"चुप!"

"पल्ले बाँध ले रे खसमा मेरे! फत्ते शहीद की माड़ी बैठ इस-तिस की मौत न बुलाऊँ तो मेरा नाम जीवाँ नहीं!"

हीरा साँसी ने सिपाही के सिर पर से थूक दिया–"काम्मो की वाली माई की सौंह लट्टबौरिये, जो मैं लौट के तेरी झज्झरी सूँघूँ!"

"शाह साहिब, अगर मलवाने को रसूलवाही ही देनी है तो क्यों न बन्दा मलवाने से जादू लिखवा ले और क्यों न फिर कानों पर टूँग-टूँग फिरे!"

शाहजी हँसे–"बात तो तुम्हारी ग़लत नहीं नजीबया, पर तुम जानो, नेगदस्तूरी

तो दुनिया में क़ायम-सलामत है ही न!"

"शाहजी, माहतड़-साथ बन्दे की तो बात यह कि सिराहंदी सोए तो, पवांदी सोए तो, पीठ-कंड बीच में ही टिकेगी। पर उच्चतवालों की तो हमेशा ही सलामती है।"

"नहीं नजीबे, बात ऐसी नहीं। नेक असल और बद असल का फ़रक़ तो याद हर किसी को रहना चाहिए। अगर रहे तो धरम-घड़ी बराबर बन्दों का वक़्त सही करती जाती है।"

"काशीशाह, आप तो हुए सुच्चे सच्चियार और बातें आपकी आलिमाना! बाकी ख़लकत तो कभी हेठ कभी ऊपर।"

बड़े शाहजी ने गहरी नज़र से नजीबे को देखा और सिर हिलाकर कहा–"नजीबे, कूएँ खोदनेवाले टोब्बे देखे हैं न! पहचान है उनकी काही और कस्सी!"

नजीबे का मुँह तो मुँह, दाँत भी हँसने लगे–"शाहजी, तारीफें आपकी। कहनेवाले मुबालगा नहीं करते कि शाह पलक से पाताल पहुँचता है।"

"नजीबया, मुंज की माल देखी है न! वही लाती है खींच-खींच पानी झल्लर का।"

"सदके बादशाहो, सदके! मुँह पर बात अभी आई नहीं और आपने सही कर ली। शाहजी, बात यह है कि चक्क पड़ना अभी बाक़ी है और पैसों का टोटा हो गया है। हो जाए कुछ मेहरबानी आपकी तो कूएँ का रूप-रंग बने।"

"नजीबया, क्या कूएँ की संझाली चलेगी हबीबे के साथ?"

"शाहजी, हबीबे के साथ तो चल भी निकले एक दफ़ा, पर साझीदार तो ख़ैरों से तीन हो गए!"

पाँव के भार बैठा नजीबा ज़मीन पर लकीरें निकालने लगा–"चूतड़गढ़वाली बीमारी ही समझो। एक की तौफ़ीक़ न जुड़ती थी, दूजे की रह न आती थी। तीनों ने समेटा-समेटी कर नाँवा जमा किया और कूएँ पर लगाने की सोची।"

काशीशाह चौकन्ने हो इस लग्गी-बद्धी आसामी को देखते रहे।

शाहजी ने बात आगे ठेली–"नजीब बादशाह, तुम्हारा पैंतरा समझ नहीं आया। नाँवा पल्ले न हो और बन्दा रह-रह तहमद ढीला करता फिरे!"

नजीबे ने कानों को हाथ लगा लिया–"तौबा करो शाह साहिब, अपना वसीला ऐसा कहाँ! हाँ, यह कहो कि जट्ट बूट की बुद्ध मोटी तो इनकार नहीं। मुँढ़ खू का कुछ ऐसा बँधा कि आए दिन पानी की तक़रार हो कक्कूख़ाँ से। एक दिन हम दोनों भाइयों ने सोचा, क्यों न रोज़-रोज़ की ख़लासी मुका छोड़ें!

"मुँह-अँधेरे कक्कूख़ाँ खड़ा था वत्तर लगाने अपने खेत की मुँडेर पर। गँडासा ले मैंने उधर क़दम भी उठाया, पर रब्ब जाने कैसे हुआ, क्या हुआ, मैं इरादे से थिड़क गया।

"हबीब के पास पहुँचा तो पूछा–'क्यों, कर दिया चलता?'

"'न!' क़दम ही रुक गया तो बता भ्रावा, हाथ कैसे उठता!'

"सुनते ही हबीबा उठ खड़ा हुआ। सिर पर मंदासा बाँधा और हाथ बढ़ाकर कहा, 'ला, इधर कर टोका।'

"हबीबे ने दो-चार क़दम ही उठाए होंगे कि उल्टे पैर परत आया। दुचित्ता-सा बोला–'नजीबे, कक्कूख़ाँ की बड़ी हुई लगती है। क़दम मैंने भी उठाए, पर दूध की अटक सामने आ खड़ी हुई। माँ से सुना करते थे कि इसे महीने का छोड़ ख़ाला ख़ुदा को प्यारी हो गई थी। बारी-बारी हम दोनों को माँ ही दूध पिलाए। नजीबे, हाथ उठाता भी तो कैसे! क़ुदरत का फ़ैसला समझो। दूध ज़ोर मार गया लहू पर!'

"शाहजी, हम भाइयों ने उसी दिन सोच लिया कि मिल-जुलकर कोई सूरतवसीला निकाल लें।"

काशीशाह ने शाबाशी दी–"बहुत चंगा नजीबया! रब्ब ने सुझाई और तुमने पकड़ी। अमीरू अपना पहले ही कालेपानियों पहुँचा हुआ है!"

"कोई ख़बर अत्तर अमीरे की! पाँच-छह साल तो निकल गए!"

"हाँ जी। वहाँ भी उसकी पहलवानी लम्बड़दारी।"

"चलो बना रहे! नजीबे, कालेपानियों के हवा-पानी नाकस। ज़हरीले मच्छर ऐसे कि बन्दे का रत्त-रस चूस डालें। सज़ा पूरी होने तक बन्दा वक़्त टपा जाए तो बस ढाँचा-ही-ढाँचा रह जाता है।"

"शाहजी, सुनने में आया है कि छम्बवालों और डेरा जट्टकी की अच्छी चौकड़ी जमी हुई है।"

"अपनी फूफी की जँवाई, वही जी कोटली लोहारोंवाला वज़ीरा, उसी ने किसी के हाथ रुक्का भेजा था। लिखा था कि अल्लाह के फ़ज़ल से वहाँ भी खड़े का ही खालसा है। मनाही है पर करनेवालों ने वहाँ भी गिन्नियाँ जमा कर रखी हैं। देखें, अमीरा किन रंगों में!"

"नजीबया, तुम सब भाइयों में वह बहादुर और जवाँमर्द!"

"सच्च है शाहजी, छाती यह उसकी पीड़ा पहाड़ और गुर्दा मौजवार! जो आ गई दिल में करने की तो फिर क्या! यह आर और वह पार!"

शाहजी ने ऐसे बहादुर का इस्तिक़बाल करना ज़रूरी समझा–"बेशक अमीरा, अपना दिलदार और बहादुर बिरादरी का फ़रजंद है। सज़ा भुगता घरों को लौटे!"

"आपका मुँह मुबारक़ शाहजी! सुनने में आया है कि सरकार ने कालेपानीवालों के लिए नया कानून निकाला है। अगर बारह-तेरह सौ नम्बर सालाना जमा कर ले तो संगीन जुर्मवालों को बाक़ायदा रियायत दी जाएगी।"

काशीशाह हिसाब लगाने लगे–"रोज़ के दो-तीन नम्बर भी हों तो ख़ैर सल्लाह लौटने का दिन यह रहा!"

नजीबा अपनी खूँख़ार काठी के बावजूद छोटा सा बलूँगड़ा लगने लगा–"शाहजी, यह तो खिलंदड़ी ही बात हुई। बन्दा मदरसे न बैठा तो कालेपानियों जा पहुँचा। जी, वह खारियाँ के कालेपानीवालों का पोत्तरा बड़ी टंकारों से घरों को लौटा है। सीधा पिंड नहीं आया। राह में अमृतसर रुक गया। सेहत बना पिंड पहुँचा तो देखनेवाले अश-अश कर उठे!"

शाहजी सिर हिलाते रहे–'इस भोले जट्ट से क्या कहें कि उम्र को लगा क़ालेपानियों का दाहा निरा घुन है।'

काशीशाह ने बड़े भाई से पूछा–"खारियावालों का टब्बर कालेपानीवाला कब से कहलाने लगा?"

"यह मशहूर क़िस्सा हो गुज़रा है। इन लड़कों का पड़दादा नज़र मुहम्मद वल्द दिल मुहम्मद महाराजा के वक़्तों धुर कोट कमालिया सें लहंदे उतरा था। बड़ा धूमी-धाकड़ बन्दा। बस जी, इलाक़े में तूती बोल गई। रणजीतसिंह महाराजा ने कारनामे देखे-सुने तो टुकड़ी का सरदार बना दिया। फौजों में इसने बड़े-बड़े टाकरे किए। फिरंगी हकूमत जब पंजाब में जमी तो चुन-चुन हमारे बहादुर दबोचे। नज़र मुहम्मद को भी डाकाज़नी और क़त्ल में फँसाकर कालेपानी भेज दिया। उसी का टब्बर है यह

कालेपानीवाला।"

नजीबा दिप्प-दिप्प करने लगा–"वाह, कोई बात हुई न!"

'नज़र मुहम्मद और नूरपुरवाले सरवरशाह ने अंडमान जेल में पंजाबी क़ैदियों की मदद से अंग्रेज़ दारोग़ा को मारने की साज़िश कर डाली। बस, मशहूरी हो गई।"

नजीबा हँसने लगा–"शाहजी, यह भी अपने गुल्ली-डंडे के टुल्लवाला हिसाब है। या मार लो या मरवा दो। पिद जाओ, नहीं तो पिदवा लो अपने को। सीधा रास्ता तो एक है ही कि सरकार के जँवाई बने रहो और रोटियाँ तोड़ते रहो। बाक़ी तो जी, ज़ोर-जबर हो तो वहाँ भी कुछ-न-कुछ चोज चुगता ही रहता है बन्दा!"

"नजीबे, घुटनों-घुटनों दिन चढ़ गया! ऊपर जाकर लस्सी-पानी पी आ!"

नजीबा उठ खड़ा हुआ–"असल काम तो बातों में ही रह गया। शाहजी, जो चल जाए क़लम आपकी तो खू वाला काम सर जाए।"

छोटे शाह ने दिलासा दिया–"हबीबे को ले आना साथ, त्रिकालाँ पड़े!"

बड़े शाह बोले–"ध्यान से सुन मेरी बात नजीबे! एक खू में तीन संझालियाँ अच्छी नहीं। कर भी लो तो पुगेंगी नहीं।"

"शाहजी, यह झमेला निबड़े कैसे? हाथ में धेला-अधेला कुछ नहीं! जो था वह लग गया।"

"नजीबे, जहाँ सौ वहाँ सवा सौ। कल तड़के आ के ले जाना!"

"हाज़र तौफ़ीक हो शाह साहिब, रब्ब बहुत दे!"

सुनकर नजीबे के पाँव न पड़ते थे ज़मीन पर।

हबीबे को जाकर बताया तो उसने सवानी को आवाज़ दे मारी–"घी लगा के दुप्पड़ पका चंगी-सी और लस्सी में शक्कर बुरक ला।"

"भ्राजी, हमारे हक़ में तो तीन भाईवाल ही अच्छे थे। लौटानेवाले तो बनते।"

शाहजी के चेहरे पर मुस्कुराहट फैल गई। बड़े भाईवाली सयानफ़ बरक़रार रखी–"काशीराम, यह रक़म कभी लौटेगी?"

उँगलियों की पोरों पर शाहजी कुछ हिसाब-किताब लगाते रहे और हँसकर कहा–"ऐसे टब्बर से ज़मीन-जिविं लौट सकती है, कर्ज़ नहीं!"

"भ्राजी, जट्ट किसान अब ज़मीन काहे को छोड़ने लगे! फिर कानून अब इनके साथ!"

"नहीं छोड़ते। छोड़ सकते ही नहीं। पर भगतजी, छुड़वाने-हथियाने के लिए तरक़ीबें लड़ानी पड़ती हैं।"

काशीशाह की पेशानी पर एक हल्का सा तेवर उभर आया–"नजीबे-हबीबे का तो काम बन गया, पर कक्कूख़ाँ क्या करेगा? क्या इन भाइयों की दीदाबोसी ही करता रहेगा?"

"नहीं, वह हाथ-पैर मारेगा तो उसे भी देख लेंगे!"

"फौजियो, मुबारक़ें! मुबारक़ें हों, घर आने की मुबारक़ें! बादशाहो, पूरे तीन साल बाद दरस दे रहे हो। अपने लश्करों में दिलजोइयाँ! धन्य हो, धन्य हो प्यारेयो!"

"जहाँदादजी, अँखियाँ थक गईं राहें देखते। गोरों के साथ इतनी रास्ती हो गई कि घरों को लौटने को मन ही न करे!"

"अब क्या क़ैफ़ियत दे आपको चाचा मुहम्मदीन! इतना समझ लो कि जिस दिन छुट्टी मंजूर हुई, उसी दिन टपोसी मार ली।"

जहाँदादजी ने अपने साथी को मजलिस में पेश किया:

"बादशाहो, यह हैं अपने अजीज़ दोस्त साहिब ख़ाँ। अपने 40 पंजाबी पल्टन के ही हैं। यह समझ लो कि हम सालों-साल इकट्ठे रहे हैं। हमारी भरती भी एक ही दिन एक ही जगह है। अर्ज़ यह है कि दोस्ती-यारी निभानी कोई सीखे इन शाहपुरियों से!"

कर्मइलाही मज़बूत क़द-काठी देखकर ख़ुश हुए:

"बादशाहो, दोस्ती-यारियों की बरक़तें बड़ी, पर पुत्तरजी! शाहपुरी पग्गे आपकी ज़रा आँखों में खटकती है!"

साहिब ख़ाँ ने झट झुककर सलाम किया–

"जनाब, हुक़्म करें तो उतारकर क़दमों में न रख दें!"

शाहजी हँसने लगे:

"बस जी, नज़र उतर गई। चाचा कर्मइलाही, आपकी सयानफ़ के क्या कहने! जोड़ी भी तो यारों की ख़ैरों से ऐसी कि देखभाल भूख उतरे।"

मौलादादजी छोटे भाई और उसके दोस्त की तारीफ़ें सुन-सुन ख़ुश हुए!

"जी सदक़े, जी सदक़े!"

गंडासिंह ने मशकरी की:

"क्यों जी बन्दूकोंवालयो, ख़ैरों से इतनी देरों बाद आए हो, अपना घर-पिंड तो पहचान लिया है न!"

जहाँदादजी बड़ी गर्मजोशी से हँसे:

"सज्जनो, आप 33 पंजाब और हम 40! ज़्यादा फ़रक तो न हुआ! आप तो जानते हैं, फ़ौजी बन्दे दुनिया-जहान घूमने निकल जाएँ पर दिल अपना पोटली में बाँधकर अपने पिंड के पुराने रूख पर लटका जाते हैं!"

"सुभान अल्लाह! वाह-वाह भ्रत्थ, क्या बात की है! दिल खुश कर डाला है!"

शाहजी ने भी जहाँदाद ख़ाँ पर शंसा बरसा दी:

"जो कोई ग्राँ का प्यारा अपना चित्त-मन लटका जाए पेड़ की डाल पर तो सरदी-गरमी पिंडवाले भी अपने ग़ैर-हाज़िर सज्जन-प्यारों को याद करते रहते हैं। क्यों फ़तेह अलीजी, झूठ तो नहीं न?"

"बराबरी सही। जिस तरह अपने सुच्चे कपड़ों को धूप-हवा लगवाई जाती है न, बस वैसी ही समझ लो अपने मित्र-प्यारों की यादें!"

ताया मैयासिंह को सोहणी सूझ गई:

"ज़रा मेरी भी सुन लो! इस धरती का अन्न-पानी मुँह लगानेवाला दिल सुच्चे सोने से आला और बढ़िया! धूप-हवाएँ लगवाओ, न लगवाओ, यहाँ किसी दिल को जंग-जंगाल लगने का काम नहीं। खुला ख़ुलासा।"

दोनों दोस्त सुनकर ऐसे ख़ुश हुए कि उठकर मैयासिंह को फ़ौजी सलाम मार दी।

ताया मैयासिंह का दिल नरमा कपाह हो गया।

"सौ फ़सलों की खट्टी कमाई खाओ। मैयासिंह रोज़ अरदासा करेगा वाहगुरु के दरबार में!"

शाहपुरिया साहिब ख़ाँ बड़ा नटखौना बना छोटा-छोटा हँसता रहा।

कृपाराम आए तो अपने साथ कोकला मिरासी ले आए।

"शाहजी, अपने फ़ौजी सूरमाओं की आमद में पहले तो हो जाए गाना..."

गंडासिंह शड़ापी मार मंजी से उठे और कृपाराम को गर्दन से पकड़ लिया:

"ओए मेरे वैरिया, मैं पिंड परता तो क्यों न हाज़र किया तूने मिरासी मेरा जस्स गाने को! बोल, जल्दी बोल!"

मंजियों पर बड़ा हास्सा पड़ा।

कृपाराम को कुछ सूझ गया। हाथ जोड़कर अर्ज़ की:

"फ़ौज बहादुर, आपकी आमद पर कोठे से हवा में गोलियाँ दागी गई थीं जो सारे पिंड ने सुनी थीं।"

"सुन लो लोको, सुन लो इस खच्चरे की बातें। बन्दूक मेरी, गोली मेरी और यारा, मंडल में चलनेवाली हवा ही ख़ाली तेरी थी न!"

कृपाराम ने गुनहगारी में हाथ जोड़ दिए:

"माफ़ी ख़ता की, माफ़ी! झूठ क्यों बोलूँ सिंह बहादुर, उस दिन तो निरी दिल की खुशी ही मेरी थी।"

"बस ओ बस, अब इससे बड़ा सच्च न बोलना।"

शाहजी ने साहिब ख़ाँ की ओर देखा:

"बादशाहो, कोकले को इज़ाजत दें तो गाना शुरू करें!"

साहिब ख़ाँ ने माड़ा-सा सिर हिलाया:

"जी!"

कृपाराम ने कोकले को आवाज़ दी:

"चल ओ कोकले, शुरू हो जा! कोई फड़कता-खड़कता सुना वरदीवालों को!"

"जो हुक़्म बादशाहो!

पिंड झुके चौकीदार अग्गे
चौकीदार झुके लम्बड़ादार अग्गे
लम्बड़दार झुके अहलकार अग्गे
अहलकार झुके सरकार अग्गे
सरकार झुके तलवार अग्गे
तलवार झुके सिपहसालार अग्गे
सिपहसालार झुके फ़तेह तेग अग्गे
फ़तेह तेग झुके बादशाह अग्गे
बादशाह झुके सच्चे पातशाह अग्गे!"

बैठक झूम उठी:

"वाह ओ वाह पुत्तर कोकले! यह बन्द कब जोड़ा?"

"शहंशाहो, आज ही। सोचा, गोरा फौज़ों के सिपहसालार घरों को आए हैं, तैयारी ज़रा तगड़ी ही करें।"

कोकले ने सलाम किया, झोली फैलाई। बाग्गे ने शाहजी के इशारे पर गुड़ की भेली दी। जहाँदादख़ाँ जी और साहिबख़ाँ जी ने एक-एक टका डाल दिया।

"शाह सलामत! विलायती फ़ौज़ों के मालिक! रब्ब-रसूल की मेहरों से बाजों-गाजों के साथ घरों को लौटते रहें अपने सूरमे!"

जहाँदादख़ाँ जी ने तारीफ़ की:

"बड़ा रौबदाबवाला तुक्कड़ था। मिरास अपने पिंड की अच्छी हुशियार हो गई

है।”

गुरुदित्तसिंह हँसे:

“मैंने कहा छावनी साहिब, नेग-दस्तूरी तो कोकले की बनती ही थी, बाक़ी यह कवित्त मैंने पार के साल ननकाना साहिब गुरुद्वारे में सुना था।”

काशीशाह ने ढीला किया:

“बोल ज़रूर सुने होंगे। मुझसे पूछो तो कोकले ने चंगा सोज़ से गाया है। जो सुर-ही-सुर में पातशाह और बादशाह की तौफ़ीक़ अलग-अलहदा कर दे, उसमें कुछ तालीम तो है न!”

मौलादादजी को बात बड़ी पसन्द आई:

“वाह-वाह, क्यों नहीं!”

गुरुदित्तसिंह और मौलादाद भी भरती दफ़्तर का मुँह-माथा देख आए थे, पर डॉक्टरी तक पहुँचते-पहुँचते फ़ौज़ के ख़्वाब भू-भस्स!

अरमान से कहा:

“जहाँदादजी, आप ही कोई गर्मागर्म सुनाओ। आप्पाँ भी पुलिस-फ़ौज में भरती हो जाते तो इसी आबरू-इज़्ज़त से घरों को आते।”

कृपाराम ने समझाया:

“खालसाजी, इतना अरमान और भरम इस उम्र में शोभा नहीं देता। ख़ैरों से काका पृथीसिंह को पेटी पग्ग मिली हुई है।”

जहाँदादजी ने पूछा:

“काका अपना किस कंपनी पलटन में है?”

“वही जी 33 पंजाब की लबाणा आजकल जेहलम छावनी में पड़ी है। जहाँदाद जी, आपका भी डेरा जट्ट रसाला ही है न?”

“न जी! अपनी रज़मंट 40 पंजाबी। 40 पंजाबी मशहूर मुल्की पलटन है। कोई जात-ज़िरगा नहीं जो इसमें न हो। इसमें जट्ट, राजपूत, बुनेरवाल, स्वाती, गिलज़ई, दुर्रानी, बजौरी, भट्टानी, यहाँ तक कि इसमें गोरखे तक शामिल हैं।”

काशीशाह ने पूछा:

“अख़बार कहता है कि हकूमत कबाइलियों को काबू करने की जी-तोड़ कोशिश कर रही है।”

“जी। सड़कें-छावनियाँ कई बिछाई-सजाई गईं, पर जी, ब्लोच कबाइली बाज़ नहीं आते। बड़े ज़ालिम। साहिब ख़ाँ, याद है न, जब महसूदियों ने ज़ोब गारद पर गोली चला दी थी?”

“ग़ालिबन यह उसी साल की बात है जब मियाँ पविन्दों का काफ़िला गोमल से होकर ख़ुरासान की ओर बढ़ रहा था। बैसाख का महीना था। कारवाँ सुस्ताने को रुका। ऊँट खोल दिए गए। आग जलाकर देगें चढ़ाने की तैयारी हो रही थी कि ज़ल्ली खेल वज़ीरियों ने हल्ला बोल दिया। वज़ीरी 70 तो ऊँट ले गए और जो मुक़ाबले को बढ़ा, फिस्स-चित्त!”

काशीशाह को पैसा अखबारवाली ख़बर याद आ गई:

“यह तभी की बात तो नहीं जब महसूदों को एक लाख जुरमाना लगाया था सरकार ने?”

“जी, तभी।”

गुरुदित्तसिंह को कुछ ख़याल आ गया:

"बादशाहो, फ़ौज में आपस की दुश्मनियों के वारे-न्यारे भी होते रहते होंगे?"

"बराबर। आप जानो, यह रोग तो बन्दे के साथ लगा ही हुआ है न। गए साल गुजराँवाले के भट्टी नायक को विरक लैन्सनायक ने गोली मार दी थी।"

"विरकों और भट्टियों की पुरानी दुश्मनी! दोनों के मुंढ बीकानेर और भाटनेर के ही हैं।"

"शाहजी, विरकों की सुनी हुई है न आपने! रेलगड्डी उन दिनों नई-नई चली थी। घरवाली ने देखा, ख़सम की पगड़ियाँ फट-फटा गई हैं। बन्दा रोटी खाने बैठा तो कहा:

"'साफ़ों का जोड़-जुगत कर डालो। दोनों फट गए हैं।'

"विरक बच्चा थाली छोड़कर उठ बैठा:

"'ठहर, मैं अभी आया।' उधर कोई गड्डी स्टेशन पर खड़ी थी। हाथ में ख़ुट्टीवाला बाँस लेकर विरक दूर से ही अन्दर डाले और मुसाफ़िरों की पगड़ियाँ उतार अगले डिब्बे की ओर बढ़ता जाए। जितने में नंगे सिरोंवाले मुड़कर देखें, बाँस पर छः-आठ पगड़ियाँ हो गई थीं। उधर शोर पड़ा, इधर विरक परत के घर थाली के आगे जा बैठा।

"घरवाली झुरने लगी–'ओ जनया, रोटी छोड़कर उठ बैठा। कौन सा घड़ी महूर्त टला जाता था!"

"विरक खीझ गया–'ओ चुप। अकल तेरी गुत्त के पीछे। गड्डी खड़ी थी टेशन पर, बन्दा काम करके सुरख़रू हुआ। दूसरी गड्डी लँघेगी शाम को, तब तक आँखों के डेले घुमाता रहूँगा कि अब आई–वह आई–लो, आ गई!"

बैठक में बड़ा हास्सा पड़ा।

"बादशाहो, साफ़े-पग्ग लाने की तरक़ीब देखो ज़रा।"

"क्यों नहीं जी, विरक बच्चे बड़े कलाबाज़। इन्हीं पर कहावत है–पुत्तरजी, चोरी न करसो तो खासो क्या!"

मुंशी इल्मदीन पूछ बैठे–"क्यों जी, क्या पलटनों में भी चोरी-चकारी होती रहती है?"

"होती है। डेरा इस्माइलख़ाँ, ग़ाज़ीखाँ, कोयटा चमन की तरफ़ पिस्तौल की चोरी काफ़ी। जी में आ जाए तो उठा ली। 40 पंजाब जब कोयटा चमन तैनात थी तो हर रोज़ एक हादसा।"

साहिब ख़ाँ बोले–"इन कामों में ब्लोच का दिमाग बड़ा तेज। जब तक बदला न ले ले, कंडे की तरह धुलता-सुलगता रहता है।"

जहाँदादख़ाँ ने याद दिलाया:

"ताबूतवाला क़िस्सा हो जाए साहिब ख़ाँ!"

"बादशाहो, उन दिनों 40 पंजाब डटी हुई थी चमन। एक ब्लोच जवान ने अरज़ी दी कि रिश्तेदारी में मौत हो गई है। लाश दफ़नाने के लिए उसे तरीह जाना होगा।

"दरख़्वास्त मंजूर हो गई। होनी भी थी। गोरे अफ़सर अपने जवानों से अच्छी सलूकदारी रखते हैं। इत्तफ़ाक़ ऐसा हुआ कि ब्लोच जब ऊँट पर ताबूत रखवा ही रहा था, कमान-कमान उधर से निकल पड़ा। उसे कुछ शक हुआ। हुक़्म दिया–'खोलना माँगता ताबूत, देखना माँगता।'

'ब्लोच नज़दीक आया। हौली मगर सख़्त आवाज़ में कहा–'हुक़्म वापिस कर लो

साहिब। ताबूत की इज़्ज़त में हम जान दे देगा या ले लेगा।'

"कप्तान ने ब्लोच को गेट-पास देने का हुक़्म कर दिया। शाम को बन्दूकों की गिनती हुई। एक कम।

"ब्लोच छुट्टी से आया। बन्दूक कन्धे पर थी।

"कप्तान के आगे पेशी हुई तो ब्लोच मुकरा नहीं। कहा–'साहब, पुराना दुश्मनी था। हमारे वालिद के क़ातिल को मारना ज़रूरी था। अब साहब बहादुर जो सज़ा देगा, वह मंजूर।'"

सुनकर गुरुदित्तसिंह का जीव उबलने लगा। काका पृथीसिंह इस बार छुट्टी पर आए तो कुछ बात बने। टाँडेवाले काथासिंह की ख़लासी लाज़मी है। भरी बिरादरी में अपने टब्बर की जही-तही फेरकर बैठा है।

गंडासिंह बड़ी गहरी निगाह से गुरुदित्तसिंह के फूलते नथुने देखते रहे। फिर तरक़ीब से उसे चौकस किया–"बदला लेना तो राह-रस्म हुआ उनके लिए। ब्लोचों की ख़ुन्दक बड़ी डाढी। सुनो। एक किसी नबीशाह को बन्नू के अत्तरसिंह ने गुस्से में जख़्मी कर दिया। बस, ज़ख़्म के साथ-साथ ब्लोच का कलेजा धुखता रहा। ठीक हुआ तो पहला काम यह किया कि अत्तरसिंह और उसके पूरे ख़ानदान का ख़ात्मा कर दिया। फिर सरे-बाज़ार ऐलान किया–'ख़ून का बदला ख़ून!'"

जहाँदादजी शाहजी की ओर मुड़े–"शाह साहिब, फौज़ों के अपने ही ख़तरे और अपनी ही ख़ातिरें।"

"जहाँदादजी, ख़ैरों से सवारियाँ पिंड ही उतरी हैं सीधे कि कहीं रास्ते में चहल-टहल भी हुई?"

"रब्ब की दुआ-ख़ैर, लखनदाता सखी-सरवर के दरबार में अपनी हाज़री हो गई।"

"वाह-वाह, सखी-सरवर के हजूर में पहुँच जाए बन्दा तो और क्या चाहिए!"

"सबब लग गया। साहिबख़ाँ जी ने मन्नत माँगी हुई थी। इनके साथ अपनी तक़दीर भी ख़ुल गई।"

छोटे शाह बड़े ख़ुश हुए–"भला कम्म। रोटी-रिज़क तो बन्दे के चलते ही रहते हैं। बाक़ी नज़र-नयाज़-मन्नत सब उस रहमतवाले की बंदगी की ही शक़्लें हैं।"

"शाह साहिब, लखनदाता के हजूर में सवाब ही सवाब। जी ज़ाहिरा दरबार सखी-सरवर का।"

"बहुत बड़ी ज़ियारतगाह है! एक तरफ़ ग़रीबन्नवाज़ सरवरशाह का थान। दूसरी तरफ़ बाबा नानक का। बादशाहो, सखी-सरवर साहिबजी की वालिदा माई आयशा का चरख़ा-पीढ़ी देखकर आँखों को ठंड पड़ जाती है। लो, और सुनो। पास ही एक ठाकुरद्वारा है। एक तरफ़ अपने भैरों का मन्दिर है।"

काशीशाह ने सिर हिलाया–"अपनी आँखों से न देखा हो तो बन्दा यक़ीन करे। साबित यह हुआ कि ये तक़सीमें-फिरक़ेदारियाँ तो बाद की बातें हैं। मनुक्ख ने खुद बनाई है। रब्ब-रसूल और कर्त्ता-कारणहार सब एक ही है।"

कर्मइलाहीजी को कुछ सूझ गया–"बादशाहो! इधर पंजपीर, उधर पंज पांडव! इधर पंज औलिया, उधर पंज प्यारे!"

मैयासिंह पांजे पर चौकस हो गए–"बरख़ुरदारो, इस अपने पंजाब मुल्क का भी रब्ब के साथ कुछ मेल-ठेल ज़रूर होगा। पूछो भला क्यों! वह यूँ कि रब्ब ने भी उठा के

मुल्क पंजाब को पंजदरिया लगा डाले। उस धरती का क्या कहना सज्जनो, जहाँ क़ुदरत से ही पांजा पड़ा हो!"

काशीशाह ताया मैयासिंह पर बड़े ख़ुश हुए। उठकर घुटनों को हाथ लगा दिया–"तायाजी, बात वह जो वक़्त पर सजे!"

मौलादादजी ने भी ख़ुशनुमाई की–"शाहजी, वतन तो अपना बड़े नक्ख-दक्खवाला हुआ न! ज़मानों से बहादुर कौमों की आवाजाही लगी रही। बड़े-बड़े पीर, औलिया, मुरीद और शहीद हो गए।"

"शाह साहब, एक और अनोख़ी दास्ताँ है वहाँ की। सखी-सरवर के तीन मुजावर-कुलाँग, काहीन और शेख़। इन तीनों की अल-औलाद की हाज़री है दरबार में। कहते हैं, सखी साहब के मुँह से निकला वचन है कि इन तीन शाखाओं में कुल मुजावर एक वक़्त पर सोलह सौ पचास ही रहेंगे। न एक कम, न एक ज़्यादा।"

"बादशाहो, रब्बी पुरुख को रब्बी रौशनाई।"

जहाँदादजी ने लखनदाता के दरबार से आई चूरमे-भरी कुज्जी नवाब के हाथ घर से मँगवा ली और छोटे शाह को सौंपकर कहा–"आप वरताओ, सबके मुँह लगवाओ। रब्ब करे, यहाँ मजलिस में बैठा सब कोई ग़रीबनवाज़ के दरबार में हाज़िर हो!"

सबने चूरमा मुँह लगाया–"लखनदाता, तेरी रहमतों के सदके!"

गंडासिंह ने जहाँदादजी को इशारा किया–"फ़ौजियो, आपने अभी कुछ ख़ुशख़बरी भी देनी है पिंडवालों को। आज ही दे डालो। यह न हो, मेरी तरह हफ्ता लग जाए। मैं पेंशन-परची ले के आया तो ख़बर देने को मुँह न ख़ुले। रोज़ रात कोठे पर चढ़कर बन्दूक से फ़ायर कर दूँ। पिंडवाले सोचें, मुझे पल्टनी आदत पड़ी हुई है। लगातार पाँच-छ: दिन चलता रहा यह क़िस्सा। एक सुबह अपने शरीक़ झंडासिंह ने आवाज़ दे दी–'ओए गंडासिंह, ज़रा जिगरा रख। सब फ़ौजियों की पेंशन-परची निकलती है। तू अनोखा ही पेंशन लेकर नहीं आया। हवा को किसने रोका जो रोज़ रात को गोली दाग देता है!'

"फिर लोगों को सुनाकर ऊँची आवाज़ दी–'सुन लो लोको, नायक गंडासिंह 33 पंजाब पेंशन पाके आया है। आज इसके घर मुबारक़ें-बधाइयाँ दे आना।'

"सो जहाँदाद, कोई भरम न करो। ख़ैरों से प्रभात तड़के ने भी पहुँचना ही हुआ शिखर पर।"

"बराबर। बादशाहो, अल्लाह के फ़ज़ल से पूरी इज्ज़त-आबरू के साथ हम दोनों फ़ौज़ से पेंशन पा आए हैं।"

बैठक एक पल को तो हक्की-बक्की रह गई।

मौलादादजी ने छोटे भाई को हाथ दिया–"रहने को क्या, अभी पाँच-सात बरस और भी रह ही सकते थे। चंगा है अपने घरों को परते हैं, रौनकें लगेंगी।"

शाहजी ने समय सहेज लिया–"मूल बात तो यह हुई बादशाहो कि अपने बरखुरदारों के लिए जगह भी खाली करनी पड़ती है मनुक्ख को। दूसरे घरों में छोड़ी हुई घरवालियाँ और जिवियाँ पले-पले मालिकों को पुकारती रहती हैं। एक-न-एक दिन उनकी सुननी भी ज़रूरी है। जहाँदादख़ाँ जी, ग़लत तो नहीं?"

"शाह साहिब, बिलकुल सही और सच्च!'

चौधरी फ़तेहअली ने पूर्णा डाल दिया–"पुत्तरजी, मौज-मज़े और विक्रमाजीती बहुतेरी हो गई। अब अपनी जिवियों में लश्कर बिछाओ। मजलिसों में सजो और पिंड

को सजाओ।”

बाबा फ़रीद की बरक़तें
बधाइयाँ जी बधाइयाँ
अल्लाह बेली करम लाए
चढ़तसिहं भागसिहं के पोतरों को
सोहणी रात आए
बेल बढ़े
दीदार बढ़े
लाखों पर क़लम
गुत्थियों के मालिक
साहिबसिंह की शाख बढ़े

गुड़ और बताशों की चंगेरें उठाए शाहजी की भारी गौहरी बहनें नन्दकौराँ और चन्दकौराँ आँगन में आ खड़ी हुईं।

“मुबारक़ें जी, मुबारक़ें, ख़ैर मुबारक़ें!”

मौलू मिरासी की आवाज़ ड्योढ़ी पर से गूँजी:

नवाब धियान की बेल
बीबी धियान की बेल
जातकड़े की चाची सौ-सौ सगुण मनाए!
जातक की फूफियाँ सौ-सौ बरस जीएँ!
सात ख़ैरें भतीज़ड़े के मुँह धोएँ!

नन्दकौराँ और चन्दकौराँ ने बारी-बारी चाँदी के टके मौलू और फत्तू की हथेलियों पर रक्खे। दोनों बहनें ख़ुशी से भर आई अँखियों से हँस-हँस गुड़ और बताशे बाँटने लगीं।

बाबो ने ऊँची आवाज़ हवेली सिर पर उठा ली:

हरिया री माए हरिया री बहनो
हरिया ओ भागी भरया
जिस दिहाड़े मेरा लाडला जम्मया
सो ही दिहाड़ा भागी भरया।

घोड़ियों के सुहाने सुर सुन छोटे-बड़े, बच्चे-बालक बताशे लेने आ जुटे।

छोटी शाहनी बिन्द्रादई भर-भर मूठें बाँटने लगी–“लो रे लो, तुम्हारा जोड़ीदार आया है। मुँह मीठा करो। खेलो-कूदो। ख़ुशियाँ मनाओ।”

शाहनी के पसार से निक्की-निक्की सजरी रुलाई की आवाज़ बाहर आई तो नन्दकौराँ और चन्दकौराँ एक-दूजे को देख मुस्कुराईं।

“सुन री, अभी तक चुप नहीं हुआ। ज़िद्दड़ होगा, ज़िद्दी।”

“मोहरें रब्ब की जिस यह सुलक्खी घड़ी दिखाई।”

शाहजी ऊपर आए तो बहनों ने मुँह मीठा करवाया।

“बधाइयाँ वीरजी, बधाइयाँ!”

शाहजी ने दोनों बहनों को घेर लिया और हँसकर कहा–“अब हमारी पूछ कहाँ होगी! भाई-भाभी से मिट्ठड़े फूफियों को भतीजड़े!”

बाबो मिरासन ने झोली पसारी–"बड़े दरबार, शाहों के वांछित फल मुट्ठी। शाहजी, बाबो के कंगन खरे!"

शाहजी ने जैसे आँख से ही हामी भरी और नीचे जाते-जाते कहा–"नन्दकौराँ, सबका जी ख़ुश करो।"

बाबो और जैनब दोनों अँगना में पत्थला मारकर बैठ गईं और बन्दिश में घोड़ी छू ली:

सुनो री सहेलड़ियो
अरी बहनेलड़ियो
इक जुलाहे का बेटड़ा
मेरे लाडले का यार वह
माँ का बरखुरदार वह
सौदागरी आया।

अराइयों के जुट्ट ने ड्योढ़ी पर आवाज दी:

शाहों के बाग सावे
मीरी पीरी के मालिक
बड़े-बड़े इक़बालवाले।

बूढ़े रहमते ने ख़ुशी में हाथ ऊपर किए–"शुक्र है। शुक्र है ख़ुदावन्दा तेरा! शाहों के बाग़ आबाद!"

नन्दकौराँ ने गुड़ की भेली पर चाँदी का टका रख रहमत के आगे किया–"ख़ैर सदके चाचा रहमते, मुबारक़ें तुम्हें!"

अन्दर से चाची महरी निकली और चौके से भखती अँगियारी दूधारने में लगा हरमल और हींग धुखाकर फिर पसार जा घुसी।

नीचे घोड़ों की टाप सुन पड़ी।

माँबीबी ने छज्जे पर से झुककर देखा–शाहजी की बड़े बहनें वज़ीरदई और पार्वती घोड़ों से उतरीं।

बाबो ने ऊपर से आवाज़ दी–"अरी बधाइयाँ री शाहों की धियो-बहनो, सुखी-सांदी तुम्हारी रीझों की घड़ी आई। गज्ज के माँगो जो-जो भाई से माँगना है। पहले कौल-क़रार कर लो, पीछे पौड़ियों पर क़दम रखना। पीछे भाई-भरजाई मुकर गए तो सासरे क्या मुँह दिखलाओगी!"

बसरा दाई पसार से बाहर निकली तो फूली न समाती थी।

लड़के की फूफियों ने बादामोंवाले दूध का कटोरा थमाया तो बसरा बीबी भारों पर पड़ गई–"मुरादों की इस सोहणी घड़ी खाली बादामों की दस गिरियों से न चलेगा। सहक-सहककर भतीजड़ा मिला है। धूम-धड़क्के से लो और टंकारों से दो। मैंने कहा री फूफियो, कोटिप्पकोटि जूनियों बाद कुल-पूत घरों में उतरते हैं। हाँ!"

बहनों ने नाल मीलने के अलग-अलग लाग दिए। सिरवारने किए तो बसरा बोली-ठोली से बाज़ न आई–"अरी ऊँची लम्बियो बहनो, तुम ख़ैरों से ऊपर-थल्ले की पाँच। जब-जब शाहनी को देखती, मेरे दिल धड़की लग जाती। शाहों की हड्डी में कुड़ियों की पौद-पनीरी। जिएँ-जागें काशीशाह जातकड़े, उनकी ओर देखकर आस बँधती। अल्लाह, और नहीं तो काशीशाह के पुत्तरों के लड़ने-झगड़ने के लिए एक शरीक तो भेज ही देना! सो धियो-धियानियो, ऊपरवाले ने सुन ली मेरी। भरजाई से मेरी

सिफ़ारिश करना, बसरी को लच्छियाँ घड़वा दे।"

"क्यों नहीं माँ बसरी, तुमने तुकी-छिपी ज़िन्द को हाथ लगा शाहनी की गोदी में डाल दिया। तुम्हें जो न मिले थोड़ा।"

"लच्छियाँ तो मेरा जच्चगी का लाग। लाल की ख़ुशी में माँगूँगी मैं दस-सेरी भैंस। रोज़ दोहूँगी और पी-पी दूध दिल हरा करूँगी।"

बसरी ने जाते-जाते चाची को आवाज़ दी–"चाची, जच्चा रानी के सिरहाने लोहा हथियार रखना न भूलना।"

चाची महरी डुल्ल-डुल्ल पड़ती थी। सिर हिलाकर कहा–"जो हुक़्म। आज तो तेरा कहा हुक़्म फ़रमान है।"

बसरी ने झूठमूठ का गुस्सा दिखाया–"रहने दे चाची, रहने दे। ख़ाली बातों से ही दिल न ख़ुश कर छोड़ना। लाग-इनाम ढंग से लेने दे। बड़ी इन्तज़ारों के बाद निक्का तेरे घर रोया है।"

चाची ने जैनब और बाबो को घुड़की दी–क्यों री कलावन्तियो, गहमा-गहमी में सबकुछ भूल-भाल गई हो क्या! कोई सोहणा-सुहावना सुर उठाओ!"

"हुक़्म हो गया न दादी सरकार का। अब नहीं रुकतीं। कहें तो नौबत की तरह बजती रहें:

नौरंग चूड़ेवालियाँ
मेरी जच्चा रानियाँ
सुहे जोड़े पहन सुहागनाँ
मोतियाँ माँग सजावनी
बैठ अँगना गोद भरावनी
मेरे लाल जियो
लख साल जियो!"

सुखनाहन!

ख़ैर मेहर, शाहनी ने पाँव-तले हल रख स्नान किया और नहा-धो चौके चढ़ी।

शाहों के घर गहमा-गहमी में मानो एक संग कई नच्छत्रों का आगमन हो गया।

असाहरवाला तारा मस्जिद के मिनारों के पीछे लुकन-छिपन करता ही था कि पूरब से उत्तरादी हवाएँ सूरज महाराज के सुच्चे-उजले लिशकारे लिए हवेली पर उतर आईं।

शाहनी को बाग़ फुल्कारी की दोहर ओढ़ा चाची महरी ने पहले शाहनी की हथेली में थू कर नज़र उतार दी, फिर निक्के के माथे पर काजल का काला टिमका दिया और पसार के पट्ट खोल दिए।

"बधाइयाँ शाहनी, बधाइयाँ!"

शाहनी ने गोद में लाल उठाया और हौली-हौली ममताली चाल चौके की ओर बढ़ गई।

पीले ऊनी आसनों पर माँ-बेटे ऐसे विराजे ज्यों धरती ने अपनी गोद में गगन का चाँद लिटा लिया हो!

भगवान पांदे ने सजरे लिपे-पुते सुच्चे चौके में अगनदेव को साख्यात किया और

आहुति दे शुभ मन्त्र उच्चारने लगे।

शाहजी आए तो सिर नवाँ मन-ही-मन दाते का ध्यान किया–"जो माँगा था सो आपके दरबार से पाया।"

शाहनी ने पुत्र की माँ होनेवाली गर्वीली दीठ से साईं को निहारा–"रब्बजी, आपने इस ग़रीबनी की लाज रख ली!"

गोद में अडोल सोए पड़े लाल के सिर पर हाथ फेरा तो छातियाँ दुधारने लगीं।

पांदेजी ने कटोरे में दूध, दही, शहद, गंगाजल, तुलसी मिला पाँच रत्नों का अमृत मुँह लगवाया तो सगे-सम्बन्धियों की भीड़ ऊपर आ जुटी। शाहनी के आगे सगुणों के ढेर लग गए।

पांदेजी ने मन्त्र उच्चार शाहजी के माथे पर केसर-टीका लगाया तो चिट्टा-गोरा मुहांदरा सज–सज उठा।

शाहनी ने देखकर आँखें चुरा लीं। मन-ही-मन वाहगुरु से ओट माँगी–तू जानी जान मेरे साहिबा, तूने मेरा समय सजा दिया!

सिरवारने होने लगे। नन्दकौराँ ने गुलाबी पाग पर दस टके रखे–"पांदेजी, मन में बड़ी साध थी, बड़ी भरजाई को जातक जन्मे तो कानों से आपके श्लोक-मन्त्र सुनूँ।"

चन्दकौराँ ने हरी कोरवाले धुस्से पर रुपए रखे–"धुस्सा ज़रूर ओढ़ लेना। लाली की बुआ का जी ख़ुश होगा।"

भगवान पांदे ने इधर-उधर नज़र मारी–"जातक के चाची-चाचा और काकों को बुलाओ। उनका भी सगुण हो।"

चाची महरी ने हाँक मारी–"जाओ री, ख़ैरों से बिन्द्रादई को बुलाओ! आकर सिरवारना करे। कहीं भगवान पांदे को कसर न लग जाए!"

गुलाबी दुपट्टे में छोटा सा घूँघट निकाले, गले में बुगतियों की माला डाले बिन्द्रादई छोटे शाह के पीछे-पीछे आई तो चाची महरी को बिन्द्रादई पर बड़ा लाड़ आया–"हैं री, अपनी छोटी ऐसी सुचज्जी नार लगती है ज्यों इसके घर आए दिन ढंग-पज्ज होते हों!"

"तुम्हें दोहरी मुबारकें बिन्द्रादई! अगली पाँत शरीक़-बिरादरों की जुड़ी है! गुरुदास, केशोलाल–आओ रे, इधर आओ! पांदेजी, बच्चड़ों को टीका करो!"

दोनों बच्चों के माथे पर केसर-चावल शोभने लगे तो चाची ने सिरवारना कर अठन्नी पांदेजी के आगे डाल दी।

काशीशाह को चरणामृत देते-देते भगवान पांदा फिर संस्कृत के सुच्चे सुरों पर आ गया।

बिन्द्रादई शाहनी के कन्धे से लग फुसफुसाई–"जिठानी, देखती चल पांदे को! अभी चाँदी का कटोरा माँगेगा।"

भगवान पांदे ने संस्कृत उच्चार-उच्चार सामग्री की आहुतियाँ डालीं और बड़ी सधी आवाज़ में कहा–"दूध-भरा चाँदी का कटोरा देने की रीति चली आई है शाहों के घर। तत्ता-तत्ता दूध भर लाओ कटोरे में!"

छोटे शाह ने चाँदी का कटोरा घरवाली की ओर बढ़ा दिया तो बिन्द्रादई उठकर दूध भर लाई। पहले शाहजी का हाथ छुआया, फिर शाहनी का, और भगवान पांदे के आगे कर दिया।

घूँघटवाली आँख से पांदेजी की ओर ओट कर छोटी शाहनी ने मशकरी की–"अब

कोई और लाग-लोट तो बाक़ी नहीं रह गया?"

शाहजी मन-ही-मन छोटी भरजाई पर ख़ुश हुए। कुछ भी कहो, जलालपुर की बेटियाँ बड़ी पारख!

माँ-पुत्र की कलाइयों पर मौलियाँ बँध गईं तो पांदेजी के आशीष-वचन कहते-कहते शाहजी आसन से उठ खड़े हुए।

शाहजी ने सीढ़ियों से उतरते-उतरते साफ़े के लड़ से आँखें पोंछ लीं।

ड्योढ़ी में पहुँचे कि सामने भित्त से अन्दर आती राबयाँ दीखी–'देवपुत्री-सा यह सोहना मुखड़ा!"

"सलाम शाहजी!"

"राबयाँ बल्ली, ऊपर जाओ! रौनक़ लगी हैं!"

"जी, शाहजी!"

राबयाँ की फाँकड़ी आँखें शाहजी के मस्तक पर जुड़ गईं। पलकें न हिलीं, न डुलीं, न झपकीं।

शाहजी ठिठके से गैब चक्खु-से इस कंजक कँवार को देखने लगे। छोटी है पर छोटी नहीं।

लम्बी-चोखी दीठ के बाद राबयाँ ने पौड़ियों की ओर क़दम बढ़ाया तो शाहजी को भासा; कोई महालाली उड़ती-उड़ती सगुण चितार गई है।

शुभ हो! शुभ हो!

नाई रमज़ान लाहौर से पिंड पहुँचे तो छोटे-बड़ों ने ऐसी गज्ज के साहब-सलामत बुलाई ज्यों सूबा लाहौर के सूबेदार सरबुलंदख़ाँ यही हों।

हरा तहबन्द, धारियोंदार कमीज और ऊपर चिट्टा साफ़ा। यह नाइयोंवाली पोशाक तो न हुई!

"आओ जी राजा रमज़ान! कप्पड़-वेस तो ख़ालिस लाहौरियोंवाला आपका! हो भी क्यों न! ख़ैरों से रिहायश जो हुई शहर लाहौर की!"

रमज़ान ख़ुश हो-हो अपने पर हँसने लगा–"देखो जी, वहाँ रहते तीन-चार साल हो गए पर बादशाहो, लाहौरिए कंजर देखते ही पूछते हैं–'क्यों जी, ज़िला शाहपुर गुजरात कि जेहलम! किस पिंड के रहनेवाले हो?'"

"कोई पूछे, हमारे मुँह-माथे ऐसी क्या बनौत बनी है कि दूर से अपने पिंड का नाम प्रकट हो जाए–बन्दा जलालपुरिया है, आलमगढ़िया या भागोवालिया।"

शाहजी ने सिर हिलाया–"बराबर रमज़ानया, आँखें देखते ही सही कर लेती हैं कि जना अपना हलंदे का है, पोठोहार का, मुल्तान या माँझे का। मतलब यह कि मिट्टी-पानी आप उठ-उठ बोलते हैं। फिर क़द-बुत और आदमी की वजह-कतह भी।"

चौधरी मौलादाद ने मुँह से हुक्के की नड़ी निकाली–"रब्ब आपका भला करे, अपने इलाक़े का तुर्रा और तम्बा कोस-दो कोस से नज़र आने लगता है। डेरा जट्ट का पानी ही ऐसा–काठी ज़बर और पहनना-ओढ़ना मोटा।"

"चौधरी जी, ख़ैरों से अपने दरिया पार के स्यालकोटियों के बारे में आपकी क्या राय?"

"स्यालकोटिए चाल-ढाल में शौक़ीन-ज़हीन और गुफ़्तगूँ में बारीक़।"

मौलवी इल्मदीनजी ने सिर हिलाया:

"माशा अल्लाहजी, स्यालकोटियों के तुल कौन! झूठ क्यों कहें, स्यालकोट में तो बड़े-बड़े आलम-फाज़ल, फुकराँ शेख़ सैयद, वैद-हक़ीम, शायर-कातब हो गुज़रे हैं। शाह साहिब, आपने तो वहीं मदरसे में तालीम पाई, मैं कुछ ग़लत तो नहीं कह रहा?"

"न इल्मदीनजी, स्यालकोट तो सेहरा हुआ न पंजाब का!"

मीराँबक़्श नौशहरेवाले सैयद सलामत की सोहबत में बैठा करते थे। उन्हें किस्सा याद आ गया–"कहते हैं, शाह अब्दाली को स्यालकोट बड़ा भा गया। बार-बार स्यालकोट आने-जाने की रब्बत पड़ गई शहंशाह को। जब दिल्ली-लाहौर को डरा-धमकाकर क़ाबुल जाने को हो, रुख स्यालकोट गुजरात कर ले। इधर गुजरातियों को तो इशारा करे कि फ़ौजों के लिए रसद जुटाओ और उधर स्यालकोटिए शायरों से शायरी सुने। उनको इनाम और ख़िल्लतें बाँटे।"

मौलवी इल्मदीन की पुटपुटी फड़कने लगी। लो हौसला देखो मीराँबक़्श का! तवारीख़ी ख़जाने उनके पास और पहल कर ली मीराँबक़्श ने।

झटापट मैदान में कूद पड़े–"बिलकुल दुरुस्त। स्यालकोटिया शायर इशरत दुर्रानीशाह के जलाल पर ऐसा रीझा कि उसके लश्कर के साथ क़ाबुल जा पहुँचा। इशरत साहिब पहले शाह नादिर की तारीफ़ में 'नादिरनामा' भी लिख चुके थे। क़ाबुल पहुँचे तो लिख मारा शाहनामा-ए-अहमदिया।"

चौधरी फ़तेहअली हँसे–"और जी, शायरों से जुड़-बन भी क्या आना है! बन्द जोड़े, तुक्के और तुक्कियाँ मिलाए और कवित्त और क़ाफ़िय: घड़ लिए!"

नजीबे ने मुंडी हिला दी–'इन सुरमचुओं के पास कौन सा दम-धड़क्का या ज़ोर-जिगरा कि उठा के फसलें खड़ी कर लें या तख्ते उलट-फेर होने पर हाथों में शमशीरें उठा लें! इनका तो, बादशाहो, काम ही दूसरा हुआ न! तुक मिला टप्पा जोड़ा और अगले की आँखों में सुरमा लगा दिया। सुरमा-सलाई मिली सो गाँठ बाँध ली और मुड़-मुड़ सलामें लेने लगे–इरशाद...इरशाद...!"

हँसी-हँसी में बड़ी मंजियाँ हिलीं और बड़ी खाँसियाँ छिड़ीं।

शाहजी बोले–"नजीबे, बात तो तुम्हारी चंगी जमी, पर है जट्टोंवाली। शेरो-शायरी इतनी निक्खिद चीज़ नहीं।"

मौलवी इल्मदीन फिर पुराने मज़मून पर जा अड़े–"बादशाहो, स्यालकोटियों को तो सरोपे दे डाले आपने, कुछ गुजरातियों की भी चंगी-बुरी! शाहजी, आपके साक-सम्बन्ध तो ख़ैरों से गुजरात में ही हुए। फिर अपने पिंड की तहसील भी वहीं!"

"फ़तेहअलीजी, गुजराती बन्दे बड़े ऐबचीं और बदगुमानी मशहूर हैं। मिजाज़ से बातूनी और दूसरे के बख़िए उधेड़ने में माहिर। छठी पातशाही गुरु हरगोबिन्दजी घोड़े पर सवार हो गुजरात सर्राफ़े से निकले तो हुज्जती गुजरातियों ने अपनी आदत से मजबूर हो शहर की तमीज़-तहज़ीब पर ऐसी-तैसी फेर दी। अपनी हट्टियों पर बैठे हुए हटवानिए कभी गुरु साहिब के घोड़े का बखान करें, कभी उसकी काठी की तारीफ़, कभी घोड़े की चाल और साज़-बाज़ की!

"यह चवलपन गुरु साहिब को क्योंकर पसन्द आता। उनके माथे पर तेवर उभर आए।

"इधर गुजरात शहर के वाली हज़रत शाहदौला ने ख़ानकाह में बैठे-बैठे पूरा तमाशा देख लिया। उठे और गुरु साहिब के घोड़े के आगे जा खड़े हुए। शहरियों की तरफ़

से माफ़ी माँगी–'गुरु साहिब, इन नालायक़ गुजरातियों को इस बार बक़्श दीजिए!"

"गुरु साहिब भी रब्बी पुरुख। घोड़े से उतर हज़रत शाहदौला पीर के हाथ पकड़ लिए–'आपने कहा कि मैंने–पीर साहिब, एक ही बात है!'"

"वाह...वाह...क्या कहने हैं! ऐसी इलाही ताक़त कि बन्दा ख़ुदाई शान को देखता रह जाए! जो रब्बी जलाल से एक उम्र में तीन-तीन बादशाहतें बदलते देख ले, वह कोई छोटी-मोटी हस्ती तो नहीं हो सकती!"

काशीशाह ने सूत्र पकड़ लिया–"शहंशाह अकबर, जहाँगीर और शाहजहान–तीनों हकूमतें देखनेवाले जिस धरती पर प्रतक्ख मौजूद हों, ऐसे वलीयुल्लाह के क्या कहने!"

अग्गड़-पिच्छड़ गंडासिंह और जहाँदादख़ाँ आन पहुँचे।

"बादशाहो, गल्ल-बात ख़ैरों से कहाँ पहुँची है!"

"आओ जी, आओ, बैठो! अपने राजा रमज़ान आए हैं लाहौर से।"

कृपाराम ने लशाया–"रमज़ानया, कुछ ताज़ी-सजरी सुनाओ लाहौर की। कहते हैं न, जो लाहौर नहीं गया वह जम्मया ही नहीं! उस हिसाब से तो हम सतमाहे ही हुए!"

राजा रमज़ान चढ़ गए–'जी, शहर लाहौर हुआ सूबे का दारूलखिलाफ़ा। कुछ-न-कुछ शोर-शराबा पड़ा ही रहता है, पर आजकल एक क़त्ल के बारे बड़ी सनसनी है।"

सारी मजलिस के कान खड़े हो गए।

"एक धनी ख़ालसे ने पक्की उम्रे शादी कर ली। आप ख़ालसा पचास के पेटे में और लड़की सत्रह-अट्ठारह की। हुआ वही जो होना था! आशिक़ से मिल लड़की ने ख़ाविन्द को क़त्ल करवा दिया! टोटे करवा लाश रावी में फिंकवा दी।"

"बल्ले-बल्ले! यह सोलह और पचास की जमा-तफ़रीक़ अच्छी साबित तो न हुई!"

हुक्कों की गुड़गुड़ में यकायक ज़ोर पैदा हो गया।

"क्यों जी, सुभान कौर क्या इस फंदे से बच निकलेगी!"

"दोनों आशिक़ और माशूक़ हिरासत में हैं। सुनने में आया है, बड़े तगड़े वकील खड़े किए गए हैं। सरदारनी की पैरवी करनेवाला वकील लाजपतराय बड़ा नामी है। कहते हैं, ज़िरह में बड़ा पक्का।"

शाहजी बोले–"फ़तेहअलीजी, क़त्ल के मुक़द्दमे में अगर काफ़ी बड़ा सुराग नहीं तो सिर्फ़ वकीली दबदबे से ही मुक़द्दमे का पैंतरा नहीं बैठता। अच्छे वकील के हाथ में फ़क़त इतना ही कि तख़्ते से उतार मुव्वक़िल को कालेपानियों भिजवा दे।"

दीन मुहम्मद गुजरात आते-जाते अख़बारी ख़बरें सुनते-सुनाते थे–"शाह साहिब, आपको याद होगा, काँगड़े के भूचाल के बाद इन्हीं वकील साहिब को सरकार ने रायबहादुरी देने की पेशकश की थी। लाला लाजपतराय ने यह कहकर इनकार कर दिया कि बक़्शी सोहनलाल का हक़ बनता है इस सनद पर।"

कृपाराम ने पग्गड़ ठीक किया–"ऐसे काम के लिए गुरदा चाहिए। आख़ीर को बादशाहो, ख़िल्लत-ख़िताब किसे बुरे लगते हैं!"

मौलवी इल्मदीनजी ने हँडिया में हींग डाल दी–"इसकी वजह कुछ और थी। लाला जी कांग्रेसी हल्क़ों के सरगना हैं। सोचा होगा, ख़िताब-ख़िल्लत पगड़ी पर बँध गया तो ख़ैरख़्वाही के रिश्ते से बँध गए हकूमत के साथ।"

लड़कों का ताज़ा पूर रमज़ान से गुफ्तगू करने का मौक़ा ढूँढ़ रहा था।

दित्ते ने मौलू को थापी दी–"पूछ ले ओ, पूछ ले। कहीं धुकधुकी ही न लगी रहे!"

फज्जे ने बेशरमी कर डाली–"सुनते हैं, शहर लाहौर में बड़ा याराना चलता है!"

रमज़ान ने ओठ तर किए पर बुजुर्गों का ख़याल कर बड़ी लापरवाही से कहा–"दूसरे ज़रूरी कामों के साथ अक़्सर यह भी चलता ही रहता है। आख़ीर को तो जी, आदम की ज़ात ठहरी। ज़िन्दा रहेगी तो बादशाहो, इश्क़ करने से भी पीछे क्यों रहेगी!"

सुनकर बड़े-बड़ेरों ने जल्दी-जल्दी कश लगाने शुरू कर दिए।

जवान गबरू रमज़ान को शाबाशी देने लगे–"वाह ओ वाह अपने पिंड के राजा रमज़ान, खूब फ़रमाया है!"

मौलादादजी ने लड़कों की यह उछल-पुछल देखी तो नाई को उसकी जगह पर टिका दिया–"रमज़ानया, लाहोरियों की हजामतें बना-बना अपने पिंडवालों के भी कान कुतरने लगा है! लड़कों को निक़म्मी-फ़ोश बातें न बता।"

रमज़ान घुड़की खाते ही असली नाई बन गया–"गुनाह की माफ़ी बादशाहो! मेरी ऐसी हिम्मत! न जी न, तौबा करो!"

कर्मइलाहीजी ने पूछा–"क्या बड़ा नामी मदरसा है जहाँ लड़कों की हजामतें करते हो?"

"जी, बहुत बड़ा। जापता ऐसे हैं ज्यों सूबे के सारे ख़ानदान-कबीले पढ़ने पर ही लग गए हैं। और तो और, अफ़गान शाहज़ादे भी वहीं पहुँचे हुए हैं। क्या सोहणी सेहतें, क्या काठी और चढ़तलें शाह साहिब, ख़ाला अपने साथ लाहौर ले गई, नहीं तो मिशन कालेज कहाँ और हम हमात्तड़-साथ कहाँ!"

गोसाईं-पांदों ने जजमानों के लिए दुशहरा-दिवाली के तिथि-वार उच्चारे, लड़के गबरुओं ने कौड़ियाँ निकाल लीं।

मियें ख़ाँ के तबेले के सामने मंडलियाँ जम गईं। गंजीफ़े और ताश पत्तों की जगह कौड़ियों और ठीकरों के दाँव लगने लगे।

टुंडे ने बाएँ हाथ से पासा फेंका–"ओए, लश्कर चढ़ आए!"

"ओए, दम्म न तोड़ो," निक्के ने सिर की जूड़ी ख़ुजाते-ख़ुजाते पासा फेंका–"जो बोले सो निहाल!"

गौहर ने पीर-पैग़म्बरों का नाम ले मूठ माथे पर लगाई और खोल दी–"या अली!"

"लो जी, छिक्कड़ी आ गई गौहर शनास की!"

कौड़ियोंवाले खेलने लगे पैसा पूर। यह आया सत्ता!

"लो सात कौड़ियाँ, कौड़ा उठा लो और यह घोके भी।"

"यह लो दाईया," कौड़े ख़ाँ ने कौड़ी खेली–"कौड़ा आया!"

बोधे को मूठ आ गई! फत्ते के पीठ पर थापड़ा दिया–'ओए यारा, किसको दिल में धारा था!"

बोधे ने मूठ अपनी ओर सरका ली और हँसकर कहा–"देवी लच्छमी को।"

रोडे के मुँह में पानी आ गया–"क्या करें, लच्छमी माँ हिन्दुओं के ही काम आती है!"

लड़के हँसने लगे–"यारा, बात तो ठीक कही है तूने।"

बोधे ने अपने पूर में से एक कौड़ा निकाल रोडे को दिया–"रोडेया, मूठ में रख और ध्यान कर लच्छमी माँ का। चार हाथोंवाली देवी कमल पर बैठी है!"

बारी-बारी गंडे और सत्ते पड़े। रोडे ने मूठ उठा अडोल नीचे खोल दी:

"लो जी, पूर आ गया रोडे को!"

पिंडीदास ने देखा और इतराकर देवी का जयकारा बुला दिया–"जय देवी लच्छमी! बरक़तोंवाली!"

फत्ते से न रहा गया–"ओए बोधेया, देवी हिन्दुओं के हाथ में काबू है, तभी तुम्हारे घरों में माया-ही-माया!"

"बोल, रोडे पर कृपा नहीं की देवी ने?"

"की तो सही, गलती हो गई होगी।"

"यह पकड़ कौड़ा, तू भी देख ले! बस जयकारा बुलाना पड़ेगा!"

"जय देवी लच्छमी!"

फत्ते की आँखें फैल गईं–उसकी मूठ आ गई थी।

फत्ते ने पैसे उठा तहमद की गाँठ में रखे और उठकर कहा–"यारो, मेरी छुट्टी! मैं न अब खेलूँगा! एक बार जीता हूँ तो हारूँगा नहीं!"

बोधे की बाँह झँझोड़कर कहा–"मेरा सलाम कहना करामाती माई लच्छमी को!"

टोली बुड़बुड़ाने लगी–"जीत-जीतकर उठते जाओगे तो लोको, खेलेगा कौन?"

मद्दी ने हौले से कहा–"जाने दो, बेबे इसकी मांदी है। कस्स से पड़ी है। घर में न पैसा, न धेला, न दाने!"

"कहीं से उठा क्यों नहीं लेता? ज़रूरत वेले क्या शरम! फत्ते से कहो, शाहों से उठा ले।"

मद्दी से न रहा गया। ख़ुन्दक से कहा–"बस ओए, यह सूदवाली शह हमें न बता। ढोर-डंगर तो कभी-कभार वच्छी-वच्छा देते हैं। उधार का सूद दिन-राती जन्मता-बढ़ता रहता है।"

पिंडीदास को जोश आ गया–"ओए जट्टा, तुम्हारे फ़ायदे की बताएँ तो भी हमीं पर लानत-मलामत! एक तो पल्ले से देते हैं, तुम्हारा समय रखते हैं, ऊपर से हमीं को कोसते हो! हद मुका दी!"

"ख़ैरात बाँटते हो क्या! बाबे से पोते तक पहुँचते-पहुँचते असल का सूद और सूद का असल कर डालते हो!"

पिंडीदास ने मद्दी की आँखों में ताप देखा तो बड़ी मस्कीनी से कहा–"अहसान-फ़रामोशी की भी हद हो गई यारो! शाह न हुए कि कसाई हो गए!"

उधर शाहों की हवेली में मंजियाँ सजने लगीं।

कृपाराम आए, सबको पैरीपौना बुलाया और टंकारो से कहा–"शाहजी, लाली पुत्तर की पहली दिवाली है। ख़ैरों से कुछ वनगी मिठाई की धूम-धाम हो जाए।"

सुनते ही गंडासिंह का दिल हरा हो गया–"बादशाहो, अगर बने हलूफे के लड्डू और खाँड गलेफ़े मट्ठे, फिर तो मौज और मज़ा!"

मौलादादजी को बालूशाहियों से प्रेम था–"शाह साहिब, गुरुदास की जम्मनी पर

खाए थे मक्खन-वड़े। रब्ब झूठ न बुलवाए, आज तक स्वाद-ज़ायका मुँह में है।"

चौधरी फ़तेहअली हँसने लगे–"बालूशाहियों की अच्छी याद आई मौलादादजी, पर अपनी पसन्द कुछ और ही। शाहजी, मूले हलवाई ने अन्दरस्से की गोलियाँ निकाली थीं। क्या कहना उनका!"

मुंशी इल्मदीन शहर कसूर होकर आए थे। झटपट शीरनी का ज़ायका मुँह में आ गया–"बादशाहो, कोई कुछ भी कहता रहे पर जो शीरनी है, वह दूजी शै नहीं!"

जहाँदादख़ाँ हँसे–"इल्मदीनजी, बुरा तो मानना न कहे का–मिठाइयों का शहंशाह लड्डू जब तक थाल-चंगेर में क़ायम है, बिचारी शीरनी बेग़म की बिसात क्या! वह तो सूखी-सख़्त मजबूत दाँतों की ही मोहताज है।"

शाहजी को सुन आप मज़ा आने लगा। भाई से कहा–"काशीराम, सबकी मनपसन्द वनगियाँ बनवाओ। जम्मूवाले मलाईचन्द हलवाई को बुला लो!"

मौलादादजी ने फिर फुलझड़ी छोड़ दी–"काशीशाह, बुला तो रहे हो ट्रिड्डे मलाईचन्द को, पर जी, हम जैसे जट्ट-बूटों के लिए जम्मूवाली फुलिया बताशियाँ ही न बना दे!"

गुरुदित्तसिंह ने लाड़ से दाढ़ी पर हाथ फिराया और हँसकर कहा–"शाहजी, बात यहाँ पर टूटी कि मौलादादजी को पीड़ी रुड़कनेवाली वस्त पसन्द है। इन्हें रोड़मे दानों पर खंड चढ़वा दो।"

कर्मइलाही हँसने लगे–"इन भाइयों के दाँत अभी सही-सलामत हैं, फुल्ल मखानों की जगह कड़ी रोड़मी गोल मिठाई पसन्द है।"

कृपाराम ने कुद्दका लगाया–"बात यह है गुरुदित्तसिंह, तुम्हारे दाँतों को आदत पड़ गई है नर्म-नर्म कड़ाह-प्रशाद खाने की। सब बता दो, ग़लत तो नहीं कहा!"

कड़ाह-प्रशाद के ज़िक्र से ही हलवे के रस-चिकनाहट गुरुदित्तसिंह की आत्मा तक जा पहुँचे। सिर हिलाया–"ठीक है। बादशाहो, बाबे ने प्रशाद भी बनाया-बरताया सिक्ख संगतों के लिए तो घी-खंड का हलवा। गुर-सिक्ख जब-जब छके, दिल की तृप्ति हो।"

हाजीजी ने अपना दबदबा बनाए रखने को कहा–"मेरा कहना यह है कि शाहजी रसद दे दें और मिठाई बने नौशहरेवाले मियाँ क़ादिर के हत्थों। सुना है, रावलपिंडी में दब्ब कर हट्टी चलती है उसकी।"

"जो, छैनामुर्ग़ी मशहूर है पिंडी की। पर झूठ क्यों बोलें, होती रहे मशहूर छैनामुर्ग़ी, पर कोई आधारवाली वनगी नहीं। मुँह में डाली और घुल गई।"

बात चौधरी फ़तेह अलीजी के मन लगी–"रब्ब आपका भला करे, तोले-माशे की निक्की-निक्की टुकड़ियाँ दाँतों में ही ग़ायब। सच पूछो तो यह मिजाज़ी शहरियों की मिठाई है। शाहजी, आप बताओ–बन्दा बरस-छमाही मिठाई वनगी का टुकड़ा उठाए और उसका कोई दम-वज़न न हो! अपना कहना तो यह है कि छैनामुर्ग़ी तो उम्मीदवार जच्चा-ज़नानियों का दिल-परचावा है।"

बड़े क़हक़हे लगे। दीये की हल्की-हल्की लौ बैठक गुंजान हो उठी।

गंडासिंह ने नहले पर दहला मार दिया–"इन्हें चाहिए पशौरी साबुन की टिक्की-जैसा वज़नी कलाकन्द। या फिर बड़े-बड़े कत्तलम्में।"

फ़ज़ल ने हँस-हँस एक और चुटकला सुनाया–"अपने थल्ली वंडवाले मीराँबक़्श पार के साल डिंगे से सौंफ-अजवायन के मीठे पुड़ ले आए। सवानी को समझाया–'यह डिंगे की मशहूर शै है। कभी बहुत दिल किया तो दो-चार दानों की चुटकी भर ली।"

"पर बादशाहो, यह हिदायत किसने माननी थी! सवानी चरख़े पर बैठी-बैठी ही पूरा पुड़ा फाँक गई। एक दिन चौधरीजी को याद आया तो आवाज़ दी घरवाली को–'ज़रा लाना तो वह डिंगे की मिठाई। मुँह तो मीठा करें!'

"बेगाँ भरजाई ऊँचा-ऊँचा बोलने लगी–'जनया, आवाज़ तो ऐसी तगड़ी दी ज्यों हम माँ-बेटे ने मिलकर पंजसेरी पँजीरी की डकार ली हो। फिर कभी मौक़ा लगे शहर जाने का तो कोई काम की चीज़ उठाना। ये पतंगी काग़ज़ों में लिपटी पुड़ियाँ नहीं। अरे, बन्दा भड़ुवा कुछ मुँह डाले तो पेट पुरखा कुछ क़बूल तो करे! अन्दर कोई माल जाए। रूह पर रोब पड़े कि कुछ खाया-पीया है!'

"बिलकुल वाजिब। बेगाँ भरजाई की बात भावें मोटी है, पर सच्च है।"

शाहजी ने पनियारीवाले फग्गू का किस्सा छेड़ दिया–"अपने मौजोकीवाले भतीजे फग्गू को गवाह बना कचहरी ले गए। फग्गू ने पहले तो खाई मिस्सी रोटियाँ बरक़त भेरेवाले के तन्दूर पर। साथ ख़ैरों से दही की दो बाटियाँ और लस्सी के कटोरे।

"खा-पी डकार मारा और रलेशाह से कहा–'मैंने कहा जी, मीठे का बड़ा लोभी हूँ। गवाह बन गुजराँवालियों की दुकान का बदाना न खाया तो शाहजी, आप जानो, गवाही देने का भी क्या मज़ा आया!'

"शाह ने पाव पक्का बदाने का दौना खिलाया पर फग्गू बरख़ुरदार हाथ खींचने में न आया। आख़िरकार हलवाई ने रलेशाहजी की ओर देखा और हँसकर फग्गू से कहा–'ओ यमलया, कुछ होश से। दस्त-पेचिश से पड़ जाएगा तो अगली गवाही का मौक़ा ख़ैरों से अगली दरगाहे ही मिलेगा। हाँ, इस गवाही को आख़िरी याददाश्त बनाना चाहते तो बात दूसरी है।'"

छा बेला फ़कीरे लुहार के यहाँ से मुबारक़बादियों के सुर गूँज उठे

जम्मी जम्म शादियाँ
मुबारक़ बादियाँ
बावन फ़रजन्द सलामत
सलामत वादियाँ।

शाहनी मंजी पर बैठी लाली को दूध पिलाती थी। सुनकर बच्चड़े के सिर पर हाथ फेरने लगी।

पास बैठी माँबीबी मोठों में से रुढ़क निकालती थी। सुना तो हाथ का छाज रोककर कहा–"अल्लाह बेली, तेरे किए यह मीठी घड़ी आई हुसैना को! मेरे जाने आज लड़के की झंड उतरनी है।"

चाची महरी का हाथ दूध-दही में था। वहीं से पुकारकर कहा–"बच्ची, ताजी-ताजी बधाई दे आ! सिर्फ़ पड़ोसियों का लड़का ही नहीं, ख़ैरों से अपने लालीशाह का बिरादर है। फ़कीरे ने मन्नत माँग बाबा फ़रीद से इसे हाँडा बनाया है। रब्ब रक्खया करे। बिचारों के ऊपर-थल्ली चार जातक जाते रहे।"

नवाब भत्ते वेला ऊपर आया। लाली को दूध पीते देख हँसकर कहा–"तो शाह साहिब लगे हुए हैं अपने काम पर!"

"शाहनी हँस दी–"रात-भर नहीं जागा। अब कसरें पूरी कर रहा है।"

"शाहजी फ़कीरे के घर बधाई दे आए हैं। शाहजी को देखते ही बाबो मिरासन ने

झट घोड़ी के सुर उठा लिए। पा लिया इनाम। पुज्ज के खच्चर। और शाहनी, फ़कीरे को तो मौजें हो गईं। पंजसेरी शक्कर, आध मानी चावल और घड़ा घी का। अब ख़ैरों से फ़कीरा दिल खोल चढ़ाए देंगे। मुहब्बत-सलूक से खिलाएँ लोगों को खंड-चावल।"

"बच्ची, लड़के की तली पर कुछ रख आ। एक तो लाली का साथी, दूसरे नाम से तुम्हारा शरीक़।"

लाली को माँबीबी की झोली में डाल शाहनी ने पसार में जा पेटी खोली। दो-चार टोटे-टुकड़े कपड़ों के निकाले। गरी-छुहारा झोली में डाल लोहारों के यहाँ मुबारक़ें देने चली।

फ़कीरे की माँ करभरी पोत्तरे को कुच्छड़ में डाले बैठी थी। जातक के निक्के-निक्के कानों में फुम्मन्नियाँ। सिर सफ़ा-चट्ट। शाहनी ने बच्चे के सिर पर हाथ फेरा और मूठ में सगुण का टका धर दिया।

करभरी पहले हँस-हँस शाहनी को देखती रही, फिर चुन-चुन गालियाँ देने लगी। "थू कौड़ी रे सूरनी के। शाहनी हाथ से टका दे रही है और तू बद मूठ नहीं खोलता। माँखाने, पकड़ ले, रख ले खीसे में। शाहों के टकों की जाग लग गई तो घर माया के ढेर लग जाएँगे। असली हाँडा बन जाएगा, असली!"

शाहनी ने सिरवारना कर जातक का, पनघड़ बाबो को पकड़ा दिया तो बाबो घोड़े-खोलनी दादी करभरी पर बोलने लगी–"लो देखो शाहनी, नाई ने खेरों से झंड उतार दी और मुँह में न शक्कर, न शीरनी! आज के सोहणे दिन भी माँ करभरी को बस गालियाँ ही गालियाँ!

"शाहनी, दादी कभी जातकड़े को फटकारती है–'अरे भड़वे, नाक-कान बिंधाकर यह न समझ लेना कि तू मुसलमान नहीं रहा! अरे तेरा कख न जाए, तू हाँडा मुसलमान है। गाज़ी मरदों-सा बहादुर होना, नहीं तो थाँ मार दूँगी।'"

शाहनी हँस-हँस दोहरी हुई। मुट्ठी खोल जातक की हथेली पर थू कर दिया–"खैर सदके, बाबा फ़कीर की मेहरें! जीता रहो! बड़ी-बड़ी उम्र हो!"

शाम मिश्री का कूजा लिए हुसैना आन पहुँची–"लो शाहनी, चाची, मुँह मीठा करो।"

चाची महरी ने कूजा ले हाथ में चूम लिया–"मुबारक़ें हुसैना धिए! हैं री, तेरी सासड़ी करभरी की गालियाँ पुर गईं कि नहीं? उसे कहना मेरी तरफ़ से, जातक के कान में नबी रसूल का नाम भी डाले। यह न हो, पुत्तर तेरा ख़ाली दादी के ही करतब सीख ले! पाव-पाव पक्की गालियाँ ही निकालता रहे!"

हुसैना हँसने लगी–"जातक का तो बहाना है। बाक़ी गालियाँ तो चुन-चुन फूफी मुझे ही देती है!"

"चल री, जिगरा किए रह। तुम दोनों दुखों की मारी हो। सहक-सहक यह घड़ी आई है, सास से कोई बखेड़ा न करना।"

शाहनी ने मिश्री के छोटे-छोटे टुकड़े पर पच्छी में डाल दिए–"ले री हुसैना, पहले मुँह लगाए लड़के की माँ, फिर चाची-ताइयाँ।"

हुसैना ने चाची महरी की ओर इशारा किया–"पहले लड़के की दादी, फिर चाचियाँ-ताइयाँ और फिर मैं–फ़कीरे और उसकी माँ की लौंडी-बाँदी!"

चाची महरी पास आन खड़ी हुई–"हैं री, जो तो है यह तेरी हँसी-मशकरी तो सौ भला, नहीं तो चन्ना अब सब्र कर ले। बूढ़े वेले किसने बदलना। करभरी अपने स्वभाव के

वश।"

मोहरे की बेबे आन पहुँची। आवाज़ हौली करके कहा–"हुसैना, तेरी सास पहले ऐसी नहीं थी। इसका पहला मरद इससे बेमुख क्या हुआ कि यह अपनी सुध से हिल गई। बस, पले-पले गालियाँ। फिर फ़कीरे के बाप से निकाह हुआ तो ज़रा सँभली। नसीब पुत्तर पड़ा पेट तो बिचारा वज़ीरा पूरा हो गया सरसाम से। दुःखों की मारी है बिचारी।"

चाची महरी चरखे के आगे जा बैठी–"तक़दीरें, और क्या! चल, पुत्तर की ख़ैर मना। तेरी सास को भी बड़ी इन्तज़ारों से यह घड़ी नसीब हुई।"

चाची ने शाहनी को हाँक दी–"बच्ची, मेरी बात सुन। कल सूत अटेरती थी तो ऊँघ आ गई। देखती क्या हूँ, जुलाहा सूहे रंग का खद्दर दे गया है और मैं तावली-तावली गुत्थी में से पुट्ठ की लच्छियाँ निकालती हूँ!

"बस, नींद उघड़ गई। जी में आता है दोनों जातकों की बहूटियों के लिए फुल्कारियाँ क्यों न छोह लूँ। एक-एक बूटी भी रोज़ डालूँगी तो इनकी घुड़ चढ़ी तक मुक़म्मिल हो जाएगी।"

शाहनी ख़बरे कैसी अँखियों चाची महरी को देखने लगी कि चाची हँसकर बोली–"बच्ची, जो तेरे दिल-मन आया है वह ग़लत नहीं। कौन तब तक बैठी रहूँगी। यही न! लम्बी बाट ने एक-न-एक दिन मुकना ही है।"

"चाची, कहाँ से कहाँ ले बैठी बात को!"

छोटी शाहनी जिठानी की मदद पर आ खड़ी हुई–"चाची, जो अपने पिंड में लाला वड्डे और बेबे निक्की जैसे वड्डे-बड्डेरे माजूद हैं तो ख़ैर सदके तुम अभी निश्चिन्त रहो।"

"नज़र कुछ धुँधली पड़ गई है, पर पास से वाह-वाह देख लेती हूँ। लो री, मेरे मन की बात सुनो–चंगा दिहाड़ा देख फुल्कारियाँ शुरू करती हूँ। मेरे हाथों तोड़ चढ़ गई तो लाड़लों की वरी में ढोना न भूलना। बिन्द्रादइए, तेरे पुत्रों की बहूटियों के लिए तेरी जिठानी काढ़ेगी फुल्कारियाँ।"

हुसैना ने ऊपर हाथ उठाए–"ख़ुदावन्दा क़रीम, तेरे निगाह-क़रम से यह मुबारक घड़ी आए। जी सदके, ओढ़ाऊँगी तुम्हारे हाथ की फुल्कारी हाँडे की बहूटी को। ख़ैरों से पहले आकर तुम्हें सलाम करेगी!"

"शाह साहिब, आप ख़ैरों से शहर हो के आए हैं। भला क्या गर्म थी कल गुजरात सर्राफ़े!"

"जहाँदादजी, एक ही क़िस्सा सबकी ज़बान पर! मदीनेवाले वड़ैच का!"

चौधरी फ़तेहअली ने सिर हिलाया–"कोई क़त्ल का मामला है क्या?"

शाहजी ने सुथरी आवाज़ में सब शक़-शुबहा मिटा दिए–"यार-प्यारा तलियों की लड़की को ले उड़ा।"

"शाहजी, क्या लड़के के नाम की भी भिनक पड़ी कान में? वड़ैचों के एक घर को तो मैं भी जानता हूँ। दो भाई हैं–मन्दा और समन्दा।"

"ग़ालिबन वही हैं मौलादीदजी। परके साल मन्दे को क़त्ल के लिए उम्र-कैद हुई थी।"

"अब हो गई बात साफ़। पकड़ा गया है कि नहीं वड़ैच पुत्तर? भाग निकला तो टल्लागंज के पार, पकड़ा गया तो अन्दर!"

"असल बात तो जाननेवाली यह है कि लड़की बालिग़ है कि नाबालिग़?"

फ़तेहअलीजी बोले–"बन्दा इस नाकस मामले में पकड़ा जाए तो फिर दम्म-दिलासे का ही खेल समझो। भूल-चूक लड़की की बोहनी भी हो जाए तो खींच-खाँच साल-छमाही तो इधर-उधर कर लिए जाते हैं।"

कक्कूख़ाँ साफ़े को लपेटनियाँ देने लगे–"ऐसे मुक़द्दमे में अमूमन चश्मदीद गवाह नहीं मिलते।"

शाहजी ने दूसरा सिरा पकड़ लिया–"पुलिस ने दफ़ा दर्ज़ करनी होती है, इसलिए जाँच-मुआयना तो बराबर करवाती है!"

ताया मैयासिंह को कोई पुराना हादसा याद आ गया–"बादशाहो, दफ़ा तो दर्ज़ होती है पीछे, पहले बारी-बारी सिपाही, हौलदार और थानेदार सब मुफ़्त की मिठाई मुँह लगा छोड़ते हैं।"

"तायाजी, यह तो टंटे हुए न पीछे के। पहले तो बात सही यह हुई कि यारों के याराने बुरे।"

मौलू कभी-कभार इश्क़िया ठप्पे जोड़ लिया करता था। खीझकर कहा–"एक मुहब्बत ही रह गई थी दुनिया में पाक़-साफ़, उसे भी बादशाहों ने पलीत कर डाला।"

नजीबा हँसने लगा–"मौलू बादशाह, सुना हुआ है न–साक तो सलाख। प्रीत तो पलीत। सगे-सम्बन्धी तो हुए न ऐसे ज्यों सोने की सलाख हो। और दोस्ताना-याराना बन्दे का आज है, कल नहीं। दिल में फ़रक आ जाए तो प्रीत को पलीत होते कोई देर लगती है!"

कृपाराम छिड़ गए–"चन्नजी, लगियों के पन्थ न्यारे। शाहजी, याद है न, अपना आलमगढ़िया चौधरी खत्रीशाह फँस गया जवाहराँ धोबन में। भूत इश्क़ का। कौन बचाए! भाइयों ने चौधरी को डराया-धमकाया पर मुहब्बत? किसने मानना था! चौधरी ने अपने हाथ से फ़ारिगख़ती लिख दी। माना परवाना चौधरी शाह रह गया धोबन के लिए।"

"बल्ले बल्ले, आशिक़ी जिगरों से!"

आलमगढ़िए शाह शाहजी के शरीक़ भाई थे, सो शाह साहिब ने गुरुदित्तसिंह और गंडासिंह के आते ही मज़मून बदल दिया–"आओ खालसो, बैठो। सजो। आज किन कामों में रुझे रहे?"

"मंजी की चूल हिली हुई थी। ठोक-ठाक की और इधर का मुँह कर लिया।"

चारख़ाने खेस की बुक्कल मार गंडासिंह चारपाई पर शेर की तरह पसर गए। ताड़ लिया, बैठक में कोई ख़ास क़िस्सा चालू नहीं, बस शुरू हो गए–"बादशाहो, सुनो क़िस्सा चार यारों का। हुआ यह कि रणजीत सिंह महाराजा को खोजी-ख़बरगीरों ने ख़बर दी कि महाराज, चार बाँके यारों की धूम मची हुई है। चारों दर्शनी जवान। सूरत-सीरत में अव्वल और आला!"

चौधरी फ़तेहअलीजी पहले भी सुन चुके थे यह क़िस्सा किसी शादी-ब्याह में, पर ख़ालसे की ख़ुशकलामी करनी ज़रूरी समझी–'गंडासिंह, अगर यह मनघड़न्त क़िस्सा नहीं तो उन चार के नाम तो कहीं लिखत में होंगे न!"

"बराबर जी। लो सुन लो नाम उनके। भूलने का तो कोई काम ही न हुआ।

भूपिन्दरसिंह सन्धू, जीतसिंह, रामसिंह और हरदाससिंह।

"महाराजा का हुक्म हुआ–'चारों को दरबार में पेश करो।'

"चारों जवान पेश हुए। कड़ियल बदन। नाक-नक्शा सोहणा। चाल-ढाल बढ़िया।

"महाराजा ने हुक्म दिया–'चार यारों को एक ही रसाले में भरती किया जाए और रसाले का नाम रख दिया जाए–चार यार रसाला!'"

शाहजी ने एक मनका और पिरो दिया–"बादशाहो, यह चार यार रसाला ख़ालसा वक़्तों में बहादुरी के लिए बड़ा मशहूर हुआ।"

मौलवी इल्मदीन कुछ और सोच बैठे–"असल बात तो यह शाहजी, कि गंडासिंह जी के ननिहाल महाराज के गोले शाहज़ादों की जागीर में है। आए-दिन तभी वहाँ के क़िस्से-कहानी सुनने को मिलते हैं।"

"मौलवीजी, बहादुर जाँबाज़ों की यादें तो आप ही ताज़ा होती रहती हैं। फिर ये दोनों शाहज़ादे महाराज को बड़े अजीज़ थे। महाराज ने एक को दिया स्यालकोट का इलाक़ा और दूसरे को कड़ियाँवाले का।"

मौलवी इल्मदीन तवारीख़ में दख़ल रखते थे। क्यों पीछे रहते–"बाद में जम्मू के राजा गुलाबसिंह के कहने पर ढोकलसिंह सिपहसालार ने लाहौर फ़ौज की मदद से दोनों भाइयों पर चढ़ाई कर दी। ज़ोर-ज़बर से दोनों की जागीरें हथिया लीं। दोनों शाहजादे तब मजबूर होकर कोटलीवाले बाबा महताबसिंह की शरणी पहुँचे थे।"

शाहजी ने एक और जानकारी जोड़ी–"कुँवरों को इन हालात में देख मुसलमान नजीबों की टुकड़ी ने उन पर हमला करने से इनकार कर दिया था। बादशाहो, यह ज़माना वह था जब अपने इलाक़े का कारदार ज़मीनों के मामले जम्मू सरकार को भरता था।"

"शाहजी, इससे तो सही यह हुआ कि इलाक़ा अपना डोगरों के कब्ज़े में भी रह चुका है!"

"पढ़ने में आता है कि जम्मूवाला जल्ला मिश्र का बड़ा मंसूबी था। बड़े-बड़े गोशे और मंसूबे किए। जुल्म ढाए। कहते हैं न, ब्राह्मण बरछे से नहीं, गुस्से से मारे!"

मैयासिंह सोते-सोते जाग पड़े–"वड्डे लाले से सुना करो इसकी बातें। इस जल्ले ने तो अन्त मचा दी। यहाँ तक कि अमीर दोस्त मुहम्मद के एलची की सिक्ख दरबार में ऐसी-तैसी फेर दी।

"पांदे-पंडित गद्दी पर बैठ जाएँ हकूमत करने को तो अपना हुक्म-हासिल देख के जरते नहीं। और मचते हैं।"

शाहजी ने मजलिस के आगे बाबर का दरबार खींच दिया–"किसी संगीन जुर्म में पकड़े गए नौजवान को बाबर के दरबार में पेश किया गया तो बाबर बादशाह ने पूछा–'नौजवान, बहलोल लोदी कैसा बादशाह है?'

"जवान ने झट जवाब दिया–'हजूर, घोड़े बक्शनेवाला।'

"बादशाह ने अगला सवाल पूछा–'और बहलोल लोदी का लड़का सिकन्दर लोदी?'

"'बादशाह सलामत, वह सरोपे बक़्शनेवाला!'

"'नौजवान, अब बेख़ौफ़ होकर कहो कि बाबर कैसा बादशाह है!'

"नौजवान ने बेधड़क जवाब दिया–'पादशाह बाबर गुनहग़ारों के सिर बक़्शनेवाला!'

"इस हाज़िर-जवाबी पर बाबर बड़ा ख़ुश हुआ और हँसकर कहा–'नौजवान, तुम आज़ाद हो। तुम्हें बाबर बादशाह ने बक़्श दिया।'"

"सुभान अल्लाह शाह साहिब, निचोड़ तो यह निकला बात का कि घर-घराना और ख़ानदानी राजों-महाराजों, शहंशाह-पादशाहों में भी!"

मौलादादजी ने ढीले पग्गड़वाला सिर हिलाया–"कहते हैं न, असली मुर्ग़ और असल मुग़ल दूर से पहचाने जाते हैं। बदोबदी कोई बाबर का पुत्र-पोत्तरा थोड़े ही बन सकता है!"

मीराँबक़्श के दिल में कचहरी की धुकधुकी लगी थी–"शाहजी, सफ़ेदपोश अख़्तर हुसैन और ज़ैलदार उमरदीन के मुक़द्दमों का क्या हुआ!"

शाहजी हँसने लगे–"मीराँबक़्श, हुआ वही कि मुग़लानी बेग़म सोई रही और लाहौर छेकड़ तीस लाख में बिक गया।"

"यह क्या क़िस्सा है बादशाहो!"

काशीशाह ने सिर हिलाया–"लाहौर ने बिकना ही था। मीर मन्नू की मौत के बाद मुग़लानी बेग़म लाहौर सूबे की ज़नानशाह बन बैठी। गद्दी पर हाकम हुई ज़नानशाह तो चौफेरे आ घिरे ज़नान-मन्त्री। बेग़म ने चुने सलाहकार ख़ुसरे ख्वास। मियाँ ख़ुशफ़हम, मियाँ अर्ज़मन्द और मियाँ मुहब्बत!"

कर्मइलाही जी खौलने लगे–"लख लानत! बादशाहो, यह तो लाहौर के आला तख्त ताज की हत्तक हो गई न! डग्गी छिनाला ज़नानी सूबेदार बन बैठी!"

चौधरी फ़तेहअली ने हामी भरी–"सच कहते हो कर्मइलाही जी! कहा है न किसी ने कि लंड-भंड सब इकट्ठे!"

गंडासिंह बड़ी देर हँसते रहे–"फ़र्ज़ करो, ज़नानशाह ने दिया कोई हुक्म। आगे से जवाब वज़ीरों का यही:

हाँ हजूर तालियाँ
जी हजूर तालियाँ
तो हजूर तालियाँ!"

ऊँचे-लम्बे हास्सों के बाद हुक्के फिर चल निकले तो मीराँबक़्श फिर पुराने नुक़्ते पर आ गए–"शाहजी, अख़्तर हुसैन क्या बच निकलेंगे?"

"मुश्किल है। ग़बन के मामले टेढ़े। इस दफ़ा से बच निकलना आसान नहीं। सरकार अंग्रेजी इस मामले में बड़ी सख़्त है।"

"बादशाहो, सरकार कोई भी हो–मुग़ल, पठान, सिक्ख या फिरंग, रियाया को काबू करने की तरक़ीबें तो उसके पास बहुतेरी!"

कौड़ेख़ाँ का नाना-पड़नाना सिक्खा-शाही में लम्बड़दारी करता था। सो बड़े दबदबे से हाँकी–"माल वजुहात, पेशकश, ज़ाबिताना दरोग़ाना, मुकद्दमीं–मामला बीच में से एक और टंटे-बखेड़े सौ! कहने को ख़जाना हकूमत का पर ऊपर से मुँह मारनेवाले भी सौ!"

टालियोंवाले खू से हाजीशाह आन पहुँचे। सबको साहब-सलामत बुलाई और छोटे शाह से कहा–"कल रात हैदर अपना डिंगे से परता है। इत्तफ़ाक ही समझो, वह और डाची दोनों मांदे पड़े हैं।"

मैयासिंह उँगलियों पर गिनने लगे–"पुराना गुड़ पाव पक्का, मूठ-भर अजवायन और पोस्त के डोडे पानी में उबालकर दो डाची को। तुरन्त फ़ायदा होगा।"

काशीशाह ने ऊँची आवाज़ में कहा–"चाचा हाजीशाह, ताया मैयासिंह ने डाची के लिए ठीक दवा बताई है। बाक़ी रहा हैदरशाह, तो उसे ख़बरदार कर दो। डाची और उसके सवार की मांदगी एक ही दिन और एक ही वक़्त पर ठीक नहीं। आगे-पीछे कोई वारदाती टूना-टोटका हो तो बात दूसरी है।"

हैदरशाह का नया-नया जोड़ीदार जो उसकी डाची की बदौलत पहला-पहला खेल खेलनेवाला था, छोटे शाह की बात सुनकर सहम गया। हो-न हो, छोटे शाह के पास कोई ग़ैब्बी ताक़त ज़रूर है, नहीं तो शाह अपना मंसूबा कैसे जान लेते?

यमला बन के कहा–"सुनते हैं जी, हैदर अपना पिंडदादन ख़ाँ का पहरू बनकर बड़ी तगड़ी डांग खड़काने पर है!"

"हाँ जी, चंगा रुतबा पाया है उसने। ख़ान बहादुर रसालदार फ़ज़लदाद ख़ाँ के अस्तबल की लम्बड़दारी छोटी-मोटी तो न हुई!"

फ़कीरे ने मशकरी कर दी–"बादशाहो, तबेले के राक्खों की तो लहरें-बहरें। फिर कौन फ़ज़लदाद ख़ान बहादुर तबेले में बैठे रहते होंगे। उनकी ग़ैरहाज़री में तो हैदरशाह ही हुआ न ख़ान बहादुर रसालदार। ओ जी, पशुओं को क्या पता कि मालिक अस्तबल का यह है कि वह!"

बड़ी मंजियाँ हिलीं, बड़े क़हक़हे लगे।

शाहजी ने फ़कीरे को शाबाशी देना ज़रूरी समझी–"फ़कीरया, जान पड़ता है, जन्म-घुट्टी में तेरी दादी-नानी ने शहद की जगह तुम्हें कुछ खट्टा-मिट्ठा चटाया है!"

"याद तो पड़ता है शाहजी, एक तो था सुच्चे फूलों का गुलकन्द और साथ था आम के अचार का चूपा!"

मौलादादजी ने घुड़क दिया–"बड़ा हास्से ख़ाँ बनता है। सभा में बैठने की तालीम न भूल जा!"

नवाब ने बारी-बारी चिलमें ताजी की तो गुरुदित्तसिंह बुड़बुड़ाने लगे–"गुड़गुड़-बुड़बुड़, हर वेले चिलम और हुक्कड़ी! पूछो बन्दों से, तम्बाकूनोशी से अपने ही कालजे फूँकने पर लगे हो!"

चौधरी फ़तेह अली हँस-हँस दोहरे हुए–"खालसाजी, आपको तो तम्बाकू का धुआँ नहीं सुहाता, पर जिन माहतड़-साथों को चिलम का दम लगाए बिना दम ही न आए, वे बिचारे अपने दम को दम कैसे दें!"

"ओ दमों के लोभियो, मेरी तरफ़ से मारते जाओ दम–सूटे और गुड़गुड़ की आवाज़ सुन शताबी-शताबी आन पहुँचेंगे जमदूत।"

कृपाराम ने उठकर गुरुदित्तसिंह के घुटने छू लिए–"तम्बाकू का गुस्सा मनुक्खों की इस बैठक पर तो न निकालो! थूक डालो!"

कर्मइलाहीजी ने टेक बढ़ाई–"गुरुदित्तसिंहा, ये ज़िन्द-जहानवाली बैठकें अपने पिंड की, भोले भाव ऐसे ही सजते रहें! चलती रहें!"

मौलादाद ने गुफ़्तगू चढ़ते की और मोड़ दी–"शाहजी, अपने लालीशाह की आमद में कोई रंग-तमाशा ज़रूर हो!"

"बराबर बादशाहो, ज़िन्दगानी का फल बेटा। इससे सवाया मौक़ा और क्या है रस-रंग का!"

चौधरी फ़तेहअली निक्का-निक्का मुस्कुराए–"सवाल नाच-मुजरे के आने या न आने का नहीं। सवाल तो इतना ही है कि गुजरातवाली उम्दा आए कि वज़ीराबादवाली

मुमताज़!”

शाहजी ने छोटे भाई की ओर देखा–“इस महक़मे के मालिक काशीराम। भगत जी की मंशा होगी तो आपका यह काम बन जाएगा।”

कर्मइलाहीजी ने सिफ़ारिश की–“सूफ़ीजी, गाना-मुजरा तो आप जानो ज़ियारतों पर भी! परचावा तो बीच में इतना ही न कि नाम ले रब्ब का बन्दा नाच-तमाशा भी देख डाले।”

ताया मैयासिंह ने अपना सारा ज़ोर इसी पलड़े पर डाल दिया–“काशीरामा, नाच-मुजरे की भाँज न मार देना। आँखें मीटने से पहले एक झलक बीबियों की हमें भी देख लेने दे।”

छोटे शाह बड़ा मिट्ठा हँसे–“तायाजी, आपकी फ़रमाइश नहीं, फ़रमान है हमारे लिए!”

गंडासिंह ने कान के पास मुँह ले जाकर कहा–“आप बीबियाँ ज़रूर देखोगे। काशीराम, इसी जून में दिखा छोड़ो ताये को। कहीं अरमान न लगा रहे!”

“कर्मइलाहीजी, जट्ट किसान के भाने मुंसिफ़-मिम्बर एक ही बात। उसको दर्ज़ा-ब-दर्ज़ा क्यों जाँचना-फलोरना। वह कोई फ़ौज़ी कन्धा तो नहीं कि बन्दा देख के सही करे कि पट्टी पर चमन चीन चढ़ा हुआ है या लाहसा चित्राल।”

“सोलह आने सच्च। शाह साहिब, वह सुनी हुई है न आपने। टाँडेवाले लबाणे बलकारसिंह का पुत्र क़ुरबानसिंह चित्राल लश्कर से परता तो दिन चढ़े फ़ौजी वरदी-पोशाक कस के घर-घर अपनी झाँकी देता फिरे। जोड़ीदारों ने समझाया–अव्वल तो आप ही अपनी टश्श दिखाना वाजिब नहीं। दोयम पट्टियों को देख-देख तेरे हासद पैदा हो जाएँगे।”

“बात तो, चौधरी जी, दो-टूक हुई। आप जानो डौले-छाती तो दूसरे ग़ब्बरोटों के पास भी हुए न! छाती पैंतीस-छत्तीस, क़द छ:-पौने छ:। बाक़ी फेफड़े-पुर्जे ठीक हों तो जट्ट-जवाटरे हल-पंजाली छोड़ छावनियों के दाइए छूने क्यों न उठ जाएँगे! फिर जिवियों पर काम कौन करेगा!”

फ़तेहअलीजी बोले–“बादशाहो, टाँडे के तो घर-घर में फ़ौजी कन्धा। एक-दूजे से कौन कम! जहाँदादजी, आपकी पल्टन में होंगे टाँडे के लबाणे!”

“जी, बराबर! टाँडा, फालियाँ खारियाँ, शाहपुर, गुजरात–अपना इलाक़ा तो भरा हुआ है न पलटनों में।

“फालियाँवाले मानसिंह का दौहित्र सुजानसिंह और नौशहरवाले इमदाद अली का भतीज़ा फ़रियाद अली रसूलपुर लंडीकोतल पहुँचे हुए हैं।”

“जहादाँदजी, रब्ब आपका भला करे, फ़रजन्द अपने मियाँदादा और बख़्शश किस पलटन-रसाले में हैं?”

“शाह साहिब, मियाँदाद 26 पंजाब और बख़्शश ख़ाँ पंजाबी मुसलमान।”

गंडासिंह बड़े खुश हुए–“33 पंजाब में ही होगा न!”

“इसके साथ चार-छ: पलटनें लगी हुई हैं–चार कम्पनियाँ तो हैं पंजाबी मुसलमान, दो पठान, और दो लबाणा।”

गंडासिंह पहले ख़ुश हुए, फिर किसी सोच में पड़ गए–“वह जवान मौसम अब

कहाँ फ़ौज के!"

"यारा जहाँदाद, यह नहीं हो सकता कि मौसम बहार फिर बदल जाए! आपाँ लम्बी छुट्टी के बाद फिर अपनी ड्यूटी रिपोट करें!"

जहाँदीद जी बड़ा मुख़्तसर-सा हँसे–"बादशाहो, मुझसे क्या पूछते हो! मुझे तो हुक़्म करो!"

"ओ 40 पंजाबा, अगर यह बन्दे के अपने हाथ में होता तो फ़ौजें-पलटनें दुश्मनों को छोड़कर समय को क़ैद न कर लेतीं!"

फ़तेहअलीजी ने खँखारकर कहा–"गंडासिंह, अपना ध्यान पलटा ले। इन बातों में कुछ नहीं रखा। अपनी जिवियों की तरफ़ देखा कर।"

जहाँदादजी ने बात का पुराना तार पकड़ लिया–"शाहजी, जिस साल मियाँदाद की भरती हुई है, उसकी पलटन का पचास सालाना जश्न मनाया गया था। हुआ यह कि उसी साल दो सूबेदार मेजरों की पेंशन हुई। एक थे सूबेदार मेजर मगरसिंह बहादुर और दूसरे सूबेदार मेजर मख़दूद। जनरैल बहादुर आदम ने ख़ुश होकर हुक़्म दिया कि दोनों अफ़सरान की तस्वीरें बनवा-जुड़वाकर तोहफ़े के तौर पर उन्हें दी जाएँ। सिर्फ़ इतना ही नहीं, जाती बार दोनों को सलामी भी दी गई।"

"वाह! इज़्ज़त हुई न!"

"अपने काका बख़्शश ख़ाँ को पट्टी तो मिल चुकी है न!"

"जी हाँ!"

दीन मुहम्मदजी ने सराहना की–"फ़ौजियों का टब्बर है। बाप-दादे बन्दूक सजाते आए।"

कक्कूख़ाँ बोले–"क़वायद तो नहीं, पर मेहनत तो जिवियों पर भी होती है न! असल तो वरदी है जो बन्दे को सवाया कर देती है।"

"जट्ट को पहन पचर पोशाकें क्या कहें! आख्यान है न–चिट्टा कपड़ा और कुक्कड़ खाना, उस जट्ट का नहीं ठिकाना।"

मौलादाद जी बोले–"अपनी-अपनी कार और अपने-अपने साज-सिंगार! फ़सलों की रंगत-रूप हत्थ की मेहनत से, अल्लाह तआला की बरक़त से! यह तो ठीक है, महीन कप्पड़ और मुर्ग़-पुलाव से खेती की वाही-गाही नहीं होती।"

शाहजी ने बात उठा ली–"मौलादाद जी, बड़ी सयानफ़ की बात की है आपने। मनुक्ख बच्चा बनकर धरती का ओढ़न न पकड़े तो धरती माँ क्यों दूध पिलाने लगी! अपने वेद-शास्त्र भी यही कहते हैं कि धरती माँ को आदर-प्यार से सींचा-सराहा न जाए तो माँ के थनों की तरह धरती के सुम्ब भी पूरी तरह नहीं ख़ुलते। जो सुम्ब न ख़ुलें तो दूध की धाराएँ तो आप ही रुक गईं!"

कृपाराम ने सिर हिलाया–"अपने शास्त्रों की भी क्या तुलना! ऐसे-ऐसे मोती-माणक भरे पड़े हैं..."

"कत्हा क़लाम माफ़ कृपाराम, बेशक पोथियाँ-किताबें बयान करती रहें, पर ख़ूबी तो ख़ैरों से धरती की ही हुई न!"

"आओ मुहम्मदीन, सुना था, सवारियाँ जलालपुर पहुँची हुई थीं।"

मुहम्मदीन पाँव के भार ज़मीन पर ही बैठ गए–"ज़रा तिल्लर बीज की ओकड़

बन आई थी। नमाज़ वेला निकला घर से और पेशी वेला पिंड वापस!"

"मुहम्मदीन, तिल्लर बीज की अपने पिंड में कौन कमी थी! कौन से मानी-दो मानी चाहिए थे। एक एकड़ के खेत में दस-पन्द्रह सेर ही तो! अल्लाहरक्ख से ले ली होती!"

"शाहजी, अल्लाहरक्खे ने नरमा कपाह बोई है। पिछली फ़सल अपनी चंगी न हुई थी। डोडा डट्ट के खिला ही नहीं।"

"मल्लड़ की कमी रह गई होगी। नहीं तो वजह कोई नहीं कि नरमे का डोडा न खिले।"

"नजीबया, इस बार पोना लगाया है न! जलन्धरी कि सहारनपुरी?"

"जलन्धरी। पिछली फ़सल चंगी हो गई थी।"

मुहम्मदीन ने कश लेकर हुक्का परे कर दिया। फिर खाँसते-खाँसते कहा–"अपनी पिछली फ़सल तो लेन-देन में ही औन-पौन हो गई। इस बार नरमा छोड़ तिल्लर पर दिल बनाया है। देखो!"

शाहजी ने जैसे रम्ज़ समझ ली हो–मुहम्मदीन, रुपए पर चार आने चंगा कि एक बीघा पर एक पंड दानों की?"

"आप बताओ, क्या कहूँ! शाह साहिब, न काँटोंवाली बाड़ चंगी और न बाड़वाले काँटे। जट्ट किसानों की तो दोनों तरफ़ फाई!"

गुरुदित्तसिंह ने टोका–"पैंडा मार के थक तो गया है मुहम्मदीन, पर यह क्या वितन्डी हुज्जतें ले बैठा!"

काशीशाह ने हल्का कर दिया–"जी में घुब्ब-घुब्बात हो तो निकल जाने में कोई हर्ज़ नहीं।"

मुहम्मदीन फिर शुरू हो गए–"बादशाहो, रुपए पर चार आनेवाली दस्ती का तो यह हाल कि सूद आज सोया, कल ब्याहा और परसों सू गया। पैसा सूद रुपए पर अपने को यूँ नहीं सरता कि गहने-गट्टे की पोटली तो ख़्वाब ही हुआ!"

कर्मइलाही, नजीबा, कक्कूख़ाँ–सब शाह साहिब की बहियों से बँधे थे। मुहम्मदीन की बात सुन कोई चिलम को फूँकें मारने लगे, कोई दबादब कश खींचने लगे।

काशीशाह ने भाई के माथे पर तेवर उभरते देखा तो कहा–"भ्राजी, कभी सरकार भी छूट दे देती है मामले की। आज हो जाए मुहम्मदीन का काम तो कोई हर्ज़ नहीं।"

शाहजी ने भाई की ओर देखा, फिर आसामियों पर निगाह डाली और चौधरी फ़तेहदीन से कहा–"आप गवाह हैं चौधरीजी! यह सूफ़ी भाई मेरा हिसाब-किताब कुतरता ही रहता है। 'ना' करूँ तो मैं हल्का, 'हाँ' करूँ तो हिसाब हल्का।"

"शाहजी, यह फुद्दी-योहन सूअर की नस्लवाला कर्ज़ा चींटी चला से हाथी बनता जाता है। बन्दा इसकी सूँड पकड़े, पूँछ पकड़े, क्या करे!"

मौलादादजी ने हाथ से रोका–"मुहम्मदीन, सहजे से। जट्टी बोल-चाल यूँ ही मोटी, उसे और ही ख़ुरदरी न कर दे! शाहजी, ख़याल न करना!"

शाहजी छोटा सा हँस दिए–"मौलादादजी, भरम न करो। यहाँ बैठे सब जने इसी अक्खड़ बोली की औलादें हैं। एक-दूसरे को खूब समझ-समझा लेते हैं।"

नजीबा बोल पड़ा–"आप्पाँ पिंड के चंगे। शहरियों की इत्र-फुलेली बातें किस काम की! न पता लगे हाँ करते हैं, न पता लगे न!"

गुरुदित्तसिंह बोले–"लाहौरियों का क़िस्सा सुना हुआ है न शाहजी! पिंड का एक

बन्दा परोहना बन के लाहौरियों के घर जा ठहरा। रात को सोया। तड़के उठकर सैर-सपाटे जाने लगा तो भोलेभाव पूछ लिया–'रोटी तैयार हो तो खा जाऊँ!'

"अन्दर से आवाज़ आई–'रोटी भी तैयार है, गड्डी भी तैयार है। जो चाहो करो। गड्डी पकड़ लो या रोटी खा लो।'

"बन्दा बोला–'अभी तो हूँ मैं दो-चार दिन!'

"हमारी तरफ़ से ख़ैर सदके, पर यह न हो, आपके बच्चे उदास हो जाएँ!"

लाहौरियों-शहरियों के खच्चरपन पर सब हँसे। पूछो–यह क्या विंग-डिंग है! क्या एक ही बात काफ़ी नहीं–या जाओ या न जाओ?

हवेली में लगे ताज़ी चरी और पट्ठों के ढेर की हरियाती ख़ुशबू देर तक मंजियों और नाकों पर लहराती रही।

छोटे शाह बोले–"मुहम्मदीन दोस्तदारी निभाने गए थे जलालपुर। बीजों का तो बहाना ही था। अश्क़ मुहम्मद अब राजी है न!"

"बेहतर हैं शाहजी! खून में नुक्स हो गया था। पच्छ लगवाए और ठीक हो गए।"

"इस बीमारी का अकसीर इलाज ही यह है। जोंकें गन्दा खून पी डालती हैं।"

"और कुछ नई-ताज़ी सुनी हो अड्डे पर!"

"कहते हैं, सरकार हुक़्म निकाल रही है कि खेत में खड़े रुक्म-वृक्ख बिना सरकारी इजाज़त किसान न काटे!"

"ज़्यादती है यह सरकार की। अपने खेत में खड़े हों तो ज़रूरत-मजबूरी से ही काटेगा न बन्दा! सरकार के आगे हाथ फैलाएँ! वह भड़वी कौन!"

"बादशाहो, नहरोंवाले नौदौलतियों ने अन्त मचाई है। ज़मीनों में बँगले डाल दिए! मार सोने के कंठे छाप छल्ले पहन-पहन घूमें। देखके सरकार ने मामला बढ़ा दिया। जो जट्ट पहनने लगे सोने के कंठे तो समझो, ख़ुशहाली ही ख़ुशहाली!"

मुंशी इल्मदीन की बन आई। बड़ी देर से चुप बैठे थे–"पीछे ज़मींदारी लीग ने लाहौर में बड़ा जल्सा बुलाया था। मियाँ शहाबुद्दीन, मियाँ मुहम्मद शफ़ी और सरदार अजीतसिंह ने ज़ोर-शोर से तक़रीरें कीं।"

"काशीशाह, आपका अख़बार क्या कहता है?"

"दंगे-फ़िसाद और खींचातानियाँ बढ़ रही हैं। 'पगड़ी सँभाल ओ जट्टा' की मुमानियत स्यालकोट छावनी तक भी आन पहुँची है।"

फ़तेहअलीजी ने हुक्के की नड़ी मुँह से निकाल ली–"सरकार की यह बात मन को रुची नहीं। फ़क़त एक मोटे जट्टी गाने से हकूमत का तख़्ता पलटता हो तो अगर सारा मुल्क लगे यह गाने, तो क्या सरकार फिरंगी ताज-तख़्त छोड़ जाएगी हिन्दोस्तान का?"

"दरअसल सरकार हब्बलवतनी के गाने पसन्द नहीं करती।"

"नहरी क़ानून बारे जल्सा हुआ तो झंग सयाल परचे के मालिक बाँकेदयाल ने कहीं यह नज़म सुना डाली:

पगड़ी सँभाल ओ जट्टा
सीने पे खावे तीर
राँझा तू देश है हीर
सँभल के चल तू वीर!

"सरकार पीछे पड़ गई। दंगे-फ़सादों से तो पहले ही परेशान। समझा होगा, ग़दर का नारा है!"

गुरुदित्तसिंह ने माड़ा-सा पग्गड़ हिला दिया–"इशारा तो यही था न कि खेतीहरो, अपनी पगड़ी-पत्त सँभाल के!"

कक्कूख़ाँ बोले–"पूछो, सिर की पगड़ी और हल-पंजाली छोड़ के जट्ट किसान के पास और ज़्यादा रखा ही क्या है! नहरियों की बात छोड़ दो।"

काशीशाह बोले–"असल घुंडी तो बंगाल के दो टुकड़े होने में है।"

मौलादादजी को बड़ी सूझी–"शाह साहिब, बात बंगाले की तो ऐसी हुई न जी कि अगर किसी शरीक़ के पढ़ाए-लिखाए दो पुत्तर लड़ने-भिड़ने लगें तो आख़ीर को कुनबा विलग-वक्ख होकर ही रहेगा।"

मुंशीजी ने सिर हिला ताईद की–"बँटवारे-अल्हदगियाँ तो घर-घर। मुल्की जोड़-बन्द की भी कई मिसालें हैं। दिल्ली अपने पंजाब के साथ मिली हुई है। ख़ानदेश में कई बार ऊपर-हेठ हुआ। सूबा आसाम के टुकड़े इधर-उधर हुए!"

"जो कुछ भी कहो, असल रफ्फड़ नहरिए नौदौलतियों ने ही डाला!"

"बात यह है, चनाब कलोनी में तो ज़्यादातर हैं ही फ़ौजी जट्ट। अड़ गए।"

कर्मइलाहीजी ने बड़ी सयानफ़ से सिर हिलाया–"वह तो ठीक है, पर लोगों के हाथ क्या लगा! लाजपतराय और अजीतसिंह को जलावतन कर दिया सरकार ने! शाह साहिब, पीछे रह गई ख़लकत, सरकार की मुर्दाबादियाँ बुलाने को!"

फ़तेहअलीजी भी गरमा गए–"रावलपिंडी दंगे हुए। लाहौर हो गए। सरकार पकड़-पकड़ हत्थकड़ियाँ लगाती रही।"

"सज्जनो, किसी तरह अमन-चैन तो सरकार ने लाना ही है न!"

काशीशाह बोले–"सरकार की नीति-मंशा बहुत अच्छे नहीं। अख़बार पंजाबी ने बेग़ारीवाली ख़बर छाप दी और सरकार ने उठ के हफ़्तावारी अख़बार के एडीटर को क़ैद कर लिया।"

गुरुदित्तसिंह पूछ बैठे–"मैंने कहा, यह बेग़ारीवाला क्या टंटा?"

"बात ऐसे हुई कि अंग्रेज़ अफ़सर एक दौरे पर गया। आप घोड़े पर और बन्दे सामान-असबाब लेकर पैदल। दस-पन्द्रह कोह पैंडा चले होंगे तो ढोइयों ने साहब को कहा–'जरा साँस लेलें। पानी पी-पा आगे चलेंगे।'

"साहब का हुक्म हो गया–'नहीं! रुकेगा नहीं! चलो!'

"बन्दे घोड़े के साथ-साथ दौड़ते रहे और चिट्टी चमड़ीवाला अपनी बददिमाग़ी और मग़रूरी में अपनी नाक की सीध बेतहाशा घोड़ा दौड़ाता रहा।

"अँधेरा पड़े गोरा बहादुर नहरी बँगले पर पहुँचा तो देखा, बन्दे ग़ायब।

"अगले दिन उसी रास्ते से लौटा तो दोनों राह में मरे पड़े थे।"

"शाहजी, यह तो परले दर्ज़े की बेग़ैरती-बेदिरेगी हुई!"

"जुल्म जी, जुल्म!"

"और सुनो, दोनों बन्दों के घरवालों को सरकार ने पचास-पचास रुपए देकर मुँह बन्द कर ख़लासी मुकाई!"

"एक तो हादसा यह और दूसरी ख़बर एक शिकारी बारे। दो शिकारी गए शिकार को। एक अंग्रेज़ और एक देसी। हाकेवाले भी साथ। उन्होंने आकर ख़बर यह दी कि अंग्रेज़ शिकारी ने मचान पर जाने से पहले ही देसी शिकारी का शिकार कर दिया।"

गुरुदित्तसिंह बोले–"बादशाहो, गोरों के सिर हकूमत का ग़लबा चढ़ गया है।"

शाहजी ने अपनी जोड़ दी–"लाहौर में 'हिन्द' अखबार के पिंडीदास और

'पंजाबी' के अथावले को जब पुलिस ने हथकड़ी डाली तो भीड़ मच गई। यह हंगामी हालात अपने मुल्क के लिए अच्छे तो नहीं न!"

नजीबा फ़कीरे के पास ढुककर कुछ खुसर-पुसर करने लगा तो दीन मुहम्मदजी ने टोका–"क्यों नजीबया, क्या गोशा है?"

"न जी, गोशा क्या होना था! फ़कीरे से कह रहा था कि देखो, खोज-ख़बर तो शाहों के पास। सलाह-मशविरा सो भी इनके पास। जिवियों के हिसाब-किताब, धन-दौलत जो भी बन्दे को चाहिए, वह इनके पास! साहिबे-नसीब हुए न!"

फ़तेहअलीजी ने हुक्का छोड़ फ़रमाया–"बरख़ुरदार, यह सब चंगी अक़्लबुद्ध और तालीम की बरक़तें हैं। जट्ट हो या शाह, तालीम ही फ़ैज़याब करती है।"

गोमानकर्मी की सौतन भोली खा-पी सुर्ख़रू हुई। दूधारने में थापी लगा दूध की कड़ाही रख दी और गोद में पच्छी रख सेंवइयाँ बट्टने लगी।

शुक्र है रब्बजी, मुझे सुख का साँस तो आया। सौकन मेरी न्यारी रहे, न्यारा खाए-पीए। जब देखो, साईं से खीझा-खाझी। चटाक-पटाक। रात चोखी कुट्ट पड़ी वैरन को।

मेरे मना, तू ही बता, इसमें मेरा क्या दोख! कटोरा-भर दूध का उसकी मंजी की ओर बढ़ी ही थी कि पीछे से झुझका मार भड़वी ने मेरी चुटिया खींच ली। बकारा करने लगी–'अरी कुत्तिए, कभी मेरी ओर भी देखने दिया कर इसे! हाय रे जुल्मिया, तू विरला ही नहीं जन्मा दो ज़नानियोंवाला। दीनिए चार-चार रखते हैं। नए-पुराने मनुक्ख की क़द्र करते हैं। आज इसके पास, कल उसके! हैं री कंजरिए, दस साल से यह मेरा मर्द! तू कल परणाई और उस पर पूरा क़ब्ज़ा कर लिया। हाय-हाय री, सड़े तेरी सेज!'

साईं ने उठकर मारना ही था न! चल चंगा, कुछ दिन को तो ठंडी रहेगी!

भोली ने मटककर ऊपर देखा और गोमा को सुनाने के लिए हेक निकाली और हौले-हौले गाने लगी:

"वाह वाह री वाह वाह
कि पुल्ल अजवायन का
कि वाह री वाह वाह
कि नखरा नायन का।"

आवाज़ सुन गोमा ने कोठे पर से नीचे झाँका–"दूर फिट्टे मुँह! चली है ख़सम के लिए सेंवइयाँ बनाने। अरी, मैदे में चुटकी-भर मौहरा डाल ले, मौहरा!"

भोली ने मटककर ऊपर देखा–"कहे तो तेरे पूर में डाल दूँ! ख़लासी हो! सुख का साँस तो आए।"

"हाँ री, हाँ, बेटी-बेच दलालों की धिया! तेरी ख़लासी न हुई अब तक मेरे हाथों। सब्र कर, वह दिन भी दूर नहीं!"

भोली बिफरी–"लोक-जहान सुन ले मेरी वैरिन की बात! कभी सुना है कि सौतन साड़े से इतना सताए! अरी मेरा मायका बेटी-बेच है तो तेरा तो माना-परवाना शाह-शाहूकारेवाला है। बेग़ैरतों ने बाँझ-बंजर धी डोले चढ़ा दी!"

पड़ौसन वीराँवाली से न सुना गया–"मुँह पर लगाम दे री भोलिए! वह पहले जली हुई है तेरे हाथों। समय ने उसे कम नहीं सताया। बहन मेरी, कोख-कुच्छड़ की बात तो मनुक्ख के हाथ नहीं। वह दाते का प्रशाद है।"

भोली ने जल-बलकर चूल्हे में से धुआँखी लकड़ी उठा ली–"अरी सौतने, आज तू मेरे हाथों नहीं बचती। तेरे झाटे में आग लगा के रहूँगी। काले पानी पहुँच गई तो भी सुख। इस कल-कलह से तो छुटकारा पा जाऊँगी।"

गोमा ने बनेरे से नीचे झाँका और हाथ फैला बोली–"कमज़ाते, डर के! ऊपरवाले से डर के!"

भोली ऊँची-ऊँची डुसकियाँ भरने लगी–"हाय रे रब्बा, तूने मेरी तक़दीर को ऐसी खूँटी गाड़ दी कि उठते-बैठते मेरी आँखों के आगे सौतन लटकी रहे। हाय ओ..."

"चुप री मकरो, गोमा बिचारी पर तू सौत बनकर आई, ऊपर से यह खेखन! अरी, ज़नानी के लिए यह त्रास है, त्रास!"

भोली की छाती में भब्बड़ मच गए–"अरी फलानियो-ढिमकानियो, मेरी सौतन की तरफ़दारनो, मैं अपना डोला आप ही उठाकर नहीं लाई! पूछो इस थोथरी ठाँठी से, एक कतूरा ही जन डालती! मुझे भी कोई दूजा ठिया मिल जाता!"

गोमा के नैन-प्राण सुलगने लगे। झट कपड़ा खींच मुँह पर पल्ला डाल दिया और वैण करने लगी–"अरी ओ सुरगों में बैठी मेरी अम्बड़ी, निज देती तू जन्म इस अभागिन को! दिया ही था तो इस खल्लाट भड़वे से मेरा संजोग क्यों जोड़ा! हाय री मेरी अम्बड़ी, तू मुझे अपने पास बुला ले, न हो तो मेरी सौतन को ही मसानों में सुला दे!"

गोमा छाती पीटने लगी:

'हाय हाय सौतन हाय हाय
तेरा आगा पीछा हाय हाय
तेरे प्यो भरा हाय हाय
तेरे चाचे ताये हाय हाय!"

सुनकर भोली ने दोहत्थड़ मार लिया–"सुनो ओ लोको, अपने कानों से सुन लो! अरे, जीते-जी सयापा मेरे बीर-बाबुल का! अरी, गल-गल गिरेगी तेरी यह जीभड़ी!"

"कोढ़ पड़े तुझे। मैंने किसी का घर नहीं उजाड़ा!"

भोली ढीली पड़ी–"हाथ पीले किए माँ-प्यो ने! मेरा क्या दोख! हे जानी जान, मुझे उठा ले! अरे लोको, मैं डूब मरूँगी चनाब के पानियों में!"

गोमा ने दंदियाँ झका दीं–"अरी चनाँ के पानी में डूबती हैं सोहणियाँ। बोथड़ा तो देख अपना!"

"तेरे से चंगा न होता मेरा बोथड़ा तो ख़सम तेरे जीते-जी घोड़ी सजा मुझे लेने न आ ढुकता!"

गोमा ने पल्ला उठा आँखों से भोली के मुँह पर दे थूका–"जा री छाजड़ कन्नो, तू भी जापा पाएगी तो गबरू का नाम लेकर सती हो जाऊँगी। तेरे चूल्हे की आग लगा लूँगी बालों में।"

भोली ने गाँव-का-गाँव सिर पर उठा लिया–"ब्याहनेवाले ब्याह के लाए और मैं अभागिन पल-पल छित्तर खाऊँ। तेरे रहते इस घर का अन्न-पानी खाऊँ तो अपना थूका उठाऊँ।"

हाकम को हट्टी पर ख़बर मिली कि फिर घर में जंग छिड़ा है तो हाथ से तकड़ी फैंक घर उठ धाया।

"हरामज़ादी, उल्लू की पट्ठियों ने इस अकेली ज़िन्द पर ऐसा पूछड़-तंग कसा है कि दिन-रात का अजाब हो गया!"

गोमा ने ख़सम को अन्दर घुसते देखा तो बनेरे-तले सिर छिपा लिया।

मंजी पर औंधी पड़ी भोली को दबादब हाकम के हाथों मुक्कियाँ पड़ते देख गोमा के दिल-जिगर में ऐसी ठंड पड़ी कि हँसते-हँसते पड़ौसियों का बनेरा फाँद शाहों के घर जा पहुँची।

चाची महरी ने देखा तो झिड़ककर कहा–"क्यों री लटबौरने, होश में तो है न! देख री, गले के बीड़े खुले पड़े हैं। बन्द कर!"

"आप खोले हैं मैंने। हवा लगने दे, मेरे कालजे ठंड पड़ने दे!"

चाची महरी ने धमकाया–"मुड़ री, शौदाई तो नहीं हो गई!"

गोमा खिड़-खिड़ हँस दी–"चाची, मैं आज ऐसी प्रसन्न हूँ चित्त में, ऐसी ख़ुश हूँ, रहे नाम रब्ब का!"

"गोमा, डींगन-डोले छोड़। मतलब की कह!"

"तो सुन ले चाची, आज मेरी सौतन को ऐसे घुसुन्न पड़े, ऐसी चंड-चपेड़ें कि मेरी छाती हल्की-फुल्ल हो गई है।"

"मुँह पर फन्द रख री! ज़्यादा बक-बक करेगी तो तू भी हाड़ तुड़वाएगी हाकम से!"

गोमा चाव-चाव दहलीज़ में बैठ गई–"हाड टूटें मेरी वैरन के! कालजा फुके भोली सड़ौली का! मेरा तो आज रोम-रोम ठंडा!"

गोमा बायाँ हाथ कमर पर रख दाएँ हाथ से मुट्ठा बना नचौनियों की तरह कमर मटकाने लगी:

"वाह वाह री वाह वाह
कि फुल्ल गुलाब का!
वाह वाह री वाह वाह
कि पानी चनाब का!
वाह वाह री वाह वाह
हुक्म चला साहब का!"

शाहों के घर कड़ाह चढ़े तो हलवा-पूरी की सुगन्ध सारे पिंड में फैल गई। दिन-भर वहँगियों पर रखी पराँतें भरती रहीं और बँटती रहीं। उत्तरी वंड, थल्ली वंड, चूहड़ों की ठट्टी, साँसियों की गोठ, कोई भूले-चूके न रह जाए।

पूरियों से भर वहँगी उठा झींवर गंगू गए और लम्बू चलने लगे तो शाह बोले–"देखना गंगू चाचा, कोई घर-आँगन छूटने न पाए। यह मिल-वर्त्तन की भाजी नहीं। यह तो यज्ञ का प्रशाद है। जितने मुँह लगे, उतना ही पुण्य!"

ऊपर लालीशाह को झोली में डाले शाहनी कभी बच्चड़े का सिर सहलाती, कभी गोद पर धुस्सा फैला लाड़ले को दूध पिलाती।

मुँह से थन निकाल आँचरू से बच्चे का मुँह पोंछा तो गाय-सी दुधारू आत्मा तृप्त हो-हो गई। वाह गुरु, सब आपकी बरक़तें। देह-प्राणवाली जिस काया ने हाथों अपना लाल नहीं झुलाया, अपना दूध नहीं पिलाया, वह जिन्द-जहानवाली महतारी तो न हुई!

मिठाई-वनगियों की कड़ाहियाँ गर्मागर्म सोंधी-मीठी मुश्कें फैलाती रहें। शरीक़े-भाईचारे के लिए लड्डू-मट्ठे और गन्दौड़े। साथ गोल मिठाई।

चसकौरे चाखे पले-पले आ बूँदी की तवियाँ झाँकें।

"मूलेशाह, बेसन ज़रा सख़्त है। ज़ायके में वह पहला रस्म नहीं आया!"

मूला हलवाई चाखों के इस रंग-ढंग से वाक़िफ़–"बादशाहो, मेरी समझ में तो ठीक है, पर चाहो तो और चखकर देख लो!"

छोटे लड्डू के बराबर हथेली पर बूँदी रखकर चाखे की नियति भाँप ली–"कृपाराम जी, ज़रा ध्यान से देख डालो। शक्कर-खंड कम-ज़्यादा तो नहीं?"

कृपाराम न समझे। बड़े दबदबे से कहा–"मूलेशा, पंचों ने जब यह काम हमारे ज़िम्मे छोड़ा है तो वनगी को उन्नीस-इक्कीस कैसे रहने दें!"

मूला दिल-ही-दिल हँसा। बेसन के लूफ्फे जितना लड्डू बनाकर आगे किया–"देखो, बेसन ने चाशनी पकड़ ली है कि नहीं! ज़रा ध्यान से चख-छककर कोई दर्जा दे डालो! यह न हो, चखने-चखने में ही तवी ख़ैरों से आधी रह जाए।"

कृपाराम ने मूठ-भर बूँदी खाई तो ज़ी ख़ुश हो गया–वाह-वाह मूलेया! हाथ क्या है, विधि-माता की मूठ है! न कम, न ज़्यादा! बस, बराबर की!"

"दो लड्डुओं की बूँदी थी। अब भी चुगलाया मुँह स्वाद न पकड़ सके तो मूला गया काम से, और बादशाहो, आप गए चाखे नाम से!"

कृपाराम ने जरा सा सिर हिलाया और घी निकालने के बहाने इधर-उधर हो गए। कपड़े-लीड़ों की दो गाँठें छोटे शाह ने बाग्गे के हाथ ऊपर भिजवाईं तो ज़नानियाँ मंगल करने लगीं।

चाची ने बाग्गे के हाथ पर टका रखा–"जीता रह, बड़ी-बड़ी उम्र हो! ख़ैर सदके सगुणों के जोड़े लाया है!"

"छोटे शाह ने कहलवाया है, कपड़े-जोड़े लगे-लगाए हैं। एक में घरवालों के और दूसरी में शरीक़ेदारी के। एक पोटली में किनारी बाँकड़ी के तूश हैं।"

गुजराँवाले से ख़रीदी कपड़ों की गठरियाँ ख़ुलीं तो रंग-बिरंगे सुच्चे कपड़े देख-देख ज़नानियों के अरमान हरे हो गए।

चाची महरी ने मखमली जोड़े पर हाथ फेरा–"मल्ला, मेरे काशीराम के अनोखे ही काम! भतीजे की जम्मनी पर ऐसे भारी जोड़े बनवाकर लाया है ज्यों वरी-दहेज के हों!"

बाबो मिरासन ने पास झुक लाली की बलैयाँ ले लीं–"अरी शाहनियो-खत्राणियो, हर सयाले एक पुत्तर जम्म डाला करो। रब्ब किए फिर ढेरों कप्पड़ और सेरों सोना। आख्यान करते हैं न, हिन्दू शाह ने हिन्दुआनी क्या ब्याही, घर में हथनी बाँध ली। सगुण-कुड़माई से लेकर पुत्र-पौत्रों तक गहना-गट्टा और कप्पड़!"

किसी सयानी ने घुड़क दिया–"चुप री बाबो! ढंग-पज्ज की ख़ुशियाँ सबकी बराबर। तू यह क्या तुलना ले बैठी!"

पीढ़ी पर बैठी शाहनी ने सहज स्वभाव मोड़ा–"बाबो, घोड़ी गाने की जगह तू सगुणों की बरक़तें गिनने लगी। अरी, यह नहीं कोई अक़्ल की बात!"

बाबो शरमिन्दी होकर बोली–"उजबक मूढ़, मेरी बात चित्त-चेत्ते न धरना।"

बाबो तालियाँ बजा-बजा नाचने लगी। ऐसे घुम्मन घेर डाले कि घर की लड़कियाँ-सयानियाँ सब नाचने लगीं।

नीचे से हलवाई ने हाँक मारी–"धियो-धियानियो, मिठाई पर मिट्टी पड़ेगी।"

जुट्ट कपड़ों पर आ ढुका:

“बिन्द्रादइए, गिन तो सही कितने जोड़े हैं मखमल के?”

“छ: हैं चाची! पाँच तो हुए ख़ैरों से पाँच फूफियों के, और एक लड़के की माँ का!”

“मुझसे पूछ तो यह छठा जड़ा है लाली की चाची का!”

“मान ली यह बात, पर फिर जिठानी का कौन सा हुआ?”

चाची भी सोच में पड़ गई–“काशीराम ने कुछ तो सोचा होता। जहाँ छ:, वहाँ सगुणों के सात!”

छोटी शाहनी नखरे से बोली–“उलाहना क्या दूँ, पर सारी किड़सकारी-कंजूसी मुझ पर ही होती है!”

“मैंने कहा सुखी-सांदी, गुरुदास केशोलाल के जन्मने पर तुम्हें भी सुच्चे जोड़े मिले थे!”

“बराबर मिले थे चाची, पर वह चाव-मल्हार तो मेरे जेठ राजे का था न!”

नन्दकौराँ ननद ने ठिठोली की–“छोटी भरजाई, नाँवे की गुत्थी दोनों भाइयों की एक। बाक़ी तेरे पसन्द के कपड़े पर हाथ तो काशी ने ही रखा होगा!”

“लो और सुनो, तुम्हारे सूफ़ी भाई को इन बातों की क्या शनाख़्त!”

चाची ने माँबीबी को हाँक दी–“जा माँबीबी, नीचे से पूछ के तो आ! पूछना, सातवाँ जोड़ा कहीं बाजाजी की दुकान पर ही भूल तो नहीं आया!”

माँबीबी परती तो छोटी शाहनी को छेड़कर कहा–“छोटे शाह तुमसे नहीं हारते। छठा जोड़ा तो है तुम्हारा और बड़ी शाहनी का है प्याज़ी। दूसरी गठरी खोल के देखो। उसमें होगा!”

मखमल का प्याज़ी जोड़ा निकला तो देखनेवालियों की आँखें चौंधियाँ गईं। रुपहले-सुनहले सलमे में सुच्चे मोतियों की टाँक!

चाची ने जोड़ा उठा चूमा और शाहनी की झोली में डालकर कहा–“लो, देखो बच्ची, अपने देवर की साध! क्या उम्दा रंग है! हाँ री, क्यों न हो! जोड़ा तो बनवाना था भरजाई का और भतीजे की माँ का! बड़ी भरजाई, जान ले तेरी सवाई शोभा की है तेरे देवर ने!”

छोटी शाहनी मचल गई–“मल्ला कुछ भी कहो, रंग मुझे भी प्याज़ी ही पसन्द है। मेरे ब्याह का उनाबी मखमली तो पहले ही मेरे पास है।”

चन्दकौराँ ने तरक़ीब लड़ाई–“छोटी भरजाई, दोनों एक-से चंगे। गुरुदास केशोलाल की बहूटियों को ढो देना वरी में!”

“न, झूठी बात! मेरे मन में बस गया है प्याज़ी रंग! कुछ भी कहो, इस मौक़े पर मन की न करूँगी तो और क्या बूढ़े वेले करूँगी?”

बड़ी सयानियाँ छोटी शाहनी पर खीजने लगीं–“बिन्द्रादइए, राह की बात कर री! बड़ी सहक के बाद तेरी जिठानी को यह घड़ी आई है!”

“बहना, मैं उससे दुगनी ख़ुश! पर यह बात तो हुई न रंग-पसन्द की!”

शाहनी ने अपनी ख़ुशी में देवरानी का मान रख लिया–“तेरी साध-पसन्द हमारे माथे! ख़ैरों से लाली की चाची हो! जो मन आए सो उठा!”

बिन्द्रादई ख़ुश हो गई। हँसकर कहा, “जिठानी, मेरी तो दस घी में, पर अगर तुम्हारे देवर ने कुछ ऊँच-नीच की तो...”

“छोड़ री! मैं देती हूँ इच्छा-ख़ुशी से! कुछ कहेगा मेरा देवर तो सँभाल लूँगी!”

चाची ने अपने लिए दरियाई का जोड़ा देखा तो आँखें भर आईं–“तेरे साईं पर

बलिहारी बिन्द्रादइए, पर तू ही बता, मैं कब पहनूँगी इसे! या मैंने किसी की वरी में ढोना है!"

"यह भला क्या चाची? ला री राबयाँ, लाली को इधर ला!"

शाहनी ने लाली को चाची की झोली में डाल दिया–"चाची, तुम्हें सौंह है मेरी! यह पुत्र मेरा नहीं, तुम्हारा है।"

शाहनी ने माँबीवी का जोड़ा उठाया–"ले माँबीबी, अपना तहमद-कुर्त्ता! दुपट्टे पर गुल टाँक लेना!"

"केसरी झग्गा-सूथन और गाढ़ी गुलाबी ओढ़नी! देख री राबयाँ, अपने कपड़े! पहनोगी तो फब-फब उड़ोगी!"

चाची लाड़ से लड़की की ओर देखती रही–"धिए, ओढ़नी में बन्द टाँक के रख ले!"

"जाओ कुड़ियो, नूरी-मित्री-चन्नी को बुला लाओ। चुन्नियों को बाँकड़ी किनारी लगाएँ आके!"

पिटारियों में तूश बाँकड़ी और घुटनों पर सूहे गुलाबी दुपट्टे। उनाबी रंग पर पीली किनारी ऐसी फब्बन उभारे कि सोहणे मिट्ठे दिहाड़ों पर सगुणों की कोर झिलमिलाती हो!

लाली की फूफियाँ, चाचियाँ-ताइयाँ पिंड की रल-मिल घोड़ियाँ गाने लगीं:

निक्की निक्की बूँदें
निक्केया मींह वे वरे
वे निक्केया माँ वे सुहागन
तेरे सगुण करे।

धूमें मच गईं।

शाहों ने मुजरा-तमाशा बुलाया है।

"जी, सुनते हैं, लखनवालवाली बुद्धाँ और हुस्ना को इकोतर सौ की पेशगी भेजी गई है।"

लोग बुला-बुला पूछें शाहों के काम्मी-गुमाशतों को–"क्यों जी, काशीशाह के पुत्तरों के बेले तो छोटे शाह ने मुंडी हिला दी थी–'नहीं'! इस बार बात बनी तो कैसे बनी?"

"बादशाहो, जातक लालीशाह बड़ा महँगा मिला है। उसकी आमद पर लोगों के दिल-अँखियाँ क्यों न परचें!"

"हाँ जी, यारों के दीदार से दिल ग़रम और आँखें ठंडी!"

"मान गए आपकी सूक्खम अक़्ल को!"

"मुहम्मदीना, सुनते हैं, उम्दा कंजरी पीरोशाहियों के घर मुबारकें देने गई है। तभी बुद्धाँ और हुस्ना की बन आई है।"

"नवाब उस्ताद, मुजरे-तमाशे के लिए कोई नया जोड़ा बनवा लिया है न! यार, इस जोड़े में तो देखतीं नहीं परियाँ तुम्हारी ओर!"

"बादशाहो, यह बताओ कि नचौनियों का पेशकारा शिरींहवाले खू पर उतरेगा कि दारे के पक्के चबूतरे पर!"

गाँव के गब्बरोट हीर गा-गा दिलों की इन्तजारों को छोटा करने लगे। कोकले ने सुर उठाए:

इक मिट्ठड़ी जोड़ी इशक़ दी
चनाँ दे कंडे खेल गई
एक डाडी बाज़ी इशक़ दी।
दो सुच्चे फुल्ल गुलाब के
लोकी मुड़-मुड़ देन मुबारक़ाँ
अरे सदके ऐस चनाब के
जित्थे हीर ने प्रीताँ लाइयाँ
उस यारी दियाँ घोल घुमाइयाँ
जिन्हा इश्क़ी बाज़ियाँ लाइयाँ।
जान वार के दिलबर आशिक़ाँ तो
जिन्हाँ रब्बी मजलिसाँ लाइयाँ।

दोस्तो-यारो, दिलों में अपनी-अपनी प्रीतें-मुहब्बतें धारकर माई हीर को सलाम करो। हीर और राँझा दोनों हमारी इस मजलिस में शामिल हैं। लोक आख्यान डालते हैं कि जितनी बार इस अलबेले जोड़े के प्रीति-प्यार दुनिया में गाए जाएँगे, उतनी बार हुस्न के महताब चमकेंगे आशिक़ों के दिलो में। माशूकों की आँखों में! जितनी बार हीर के दरदीले सुर हवा में लहराएँगे उतनी बार हीर सयालों की, राँझा तख़्त हज़ारे का, अपनी रूहों से इन मजलिसों में शामिल होंगे।

वह देखो–ब्याह का रत्तड़ा लाल जोड़ा पहन, सयालों की हीर कुड़ी इस मजलिस में शामिल है।

उधर देखो–जोगी दरवेश बना राँझा साईं तख्त हज़ारे का। कंढे खड़ा है दरिया के। हीर के सालू से बँधी उसकी रूह। उसका कलबूत। यारो, सलाम करो इस महबूब जोड़ी को!

"सलाम क़बूल हो माई हीर!" लड़के उठ-उठ सलाम करने लगे।

कोकला उठ खड़ा हुआ और बाँहें फैलाकर कहा:

आशिक़ों के राह रोशन
उनके अन्दर सूरज
उनके बाहर सूरज
उनकी रूह रोशन।

कोहनी टेक रेत में लेटा बख़्तावर उठ बैठा–"झंगसयालाँ में माई हीर का मजार है। हमने यही मन्नत माँग ली। एक-न-एक दिन पहुँचना ज़रूर है वहाँ।"

घोलू ने छेड़ा–"यार बख़्तावर, नूरी को भी साथ ले जाना। ख़ैर सदके, तुम्हारी ग़ैर-हाज़री में उसने भी तुमसे निभाई है।"

लद्दा पास आ बैठा–"चारा काट ढेर लगा आया हूँ। रब्ब जाने नाच-मुजरे में फ़ुरसत मिले न मिले। बाबे की आदत तो पता है न! उत्सव में बैठे-बैठे ही टोका-टाकी करता फिरे!"

चौदहवीं का चाँद। दरिया किनारे तामीलवालियों के लिए तम्बू-छौलदारियाँ लगने-

सजने लगे। जा-बज़ा फ़र्श, पानदान, इत्रदान, पीकदान, चंगेरें, शमादान और घड़ौंचियों पर घड़े-गागरें।

आसपास के गाँवों के गबरू जवाटरे इकट्ठे हो-हो दरिया में तारियाँ मारने लगे।

कोई शाहों के घर से ख़बर लाया–"यारो, लखनवालवालियाँ कल तड़के पहुँचेंगी बेड़ी से।"

"लो जी, अब गुज़री रात यहीं दरिया किनारे!"

"इधर अपने सुबह की टिक्की निकली, उधर पूरब से दो चाँद चढ़ आएँगे।"

कोच्छड़ो के बोद्दे ने जलालू की पीठ पर धप्पा मारा–"अभी सारंगियाँ-तबले दूर हैं। ओए, तेरा दिमाग़ फिर गया न! दिन-चढ़े सूरज निकलता है कि चाँद?"

"दुनिया भड़वी कुछ भी कहती रहे, हम तो अपनी हुस्ना-बुद्धाँ को चाँद कहकर ही बुलाएँगे।"

"यही सही, पर अभी सुबह-सवेर के चाँदों का क़िस्सा दुनिया में जुड़ा नहीं!"

कोकला हँसने लगा–"बादशाहो, वह भी कोई मुश्किल नहीं। क़िस्सा सुना दो मेरे चाचे को। बाँध देगा बन्दिश में।"

बूटे ने सिर की जूड़ी को बल दिया–"मेरा भाइया मेरी बेबे को बता रहा था कि कुंजाहवाली गौहरजान ताली क्या बजाती है कि टल्लियाँ खड़कने लगती हैं!"

"छोड़ यार, तालियाँ बजाने को मिरासी-नक़्क़ाल क्या कम! हथेलियाँ फैलाईं-खड़काईं और बेल-बधाइयाँ माँग लीं। पर जी, नाचने-गानेवालियाँ तो अपनी तालीम का खाती हैं।"

"ओ रहने दो! बोल उठाए, छन-छन घुँघरू खनकाए और मरदों के दिल तड़पाए। और काहे की कार-कमाई है!"

मदद अली की आँखें फैल गईं। ओठों पर ज़बान फेरकर कहा–"कहते हैं, चुम्मा-चाटी से बन्दे को तबाह कर देती हैं कंजरियाँ!"

बूटासिंह अकड़ गया–"ज़रूरी नहीं कि कंजरियाँ सभी को अंग लगाने दें। पहन-पोशाक इनकी आला और रूप सवाया!"

जलालू ने टोका–"ओए कलन्दरो, सुनी-सुनाई पर शट्टल्लियाँ? बता तो सही बूटेया, तू पैदा कब हुआ? कब लाहौर गया और कब देख ली कंजरी?"

"सौंह रब्ब की, आँखों देखी बात है! अपने छोटे मामे के ब्याह में सोद्दरे गया था। उन्होंने कुंजाहवाली मुमताज़ बुलाई हुई थी।"

"ख़बीसा, पहले तूने कभी ज़िक्र नहीं किया! आँखें एक बार कंजरी देख लें, उसका जगमग-जगमग वेश देख लें तो दिन-रात शौदाई बन टप्पे न गाता फिरे!"

"न मान! तस्वीर कंजरी की ऐसी मीठी मोहनी कि बन्दा सलाम करते हाथों को देखता जाए। क़ुर्बान हो जाए।"

"बता दे बूटेया, कुंजाहवाली ने पहना हुआ क्या था?"

बूटा आसमानी चढ़ गया। माथा फैलाकर कहा–"बनाव-सिंगार पूरा। चम-चम पेशवाज़ मोतियों का दुर संजाफ़ से टँका हुआ। ऊपर किनारी के माच्छवाला दुपट्टा। माथे पर टीका। हाथ में रतन-चौंक आरसी। कानों में सुच्चे खंबों के कुंडल!"

मौलू को यक़ीन हो गया–हो-न हो, बूटे ने देखी ज़रूर है मुजरेवाली!

पास होकर कहा–"कुछ याद है क्या गाया था कुंजाहवाली ने?"

गौहर शनास ने टोका–"होगा कोई काफ़ी-टप्पा आशिक़-माशूक का!"

बूटासिंह ने लम्बा हौका भरा। अपनी पन्दरह बरसी प्यास से आसमान पर चाँद निहारने लगा और आह भरकर कहा–"एक ही बन्द याद है–कहे तो सुना दूँ?"

"यारा, जल्दी सुना। सुना भी दे!"

"न उस बेवफ़ा में वफ़ा
न उस बेहया में हया।"

गौहर और जलालू ने गलबाँही दे बूटे को भींच लिया–"ओए बूटासिंह, तू तो पहुँचा हुआ मरद है। यारों से इतनी देर छिपाए रखा!"

रेत पर बैठी टोलियाँ पूरे चाँद पर क़ुर्बान हो-हो गईं।

कहीं टप्पे, कहीं पूर्ण भगत, कहीं सस्सी-पुन्नू। कहीं मिर्ज़ा-साहिबाँ की तान!

शरीफ़ू दरिया में डुबकी लगाकर आया तो गीला तहबन्द उघाड़ गींडे पर दे मारा–"ओए, मुझे अपने से नहीं, तुमसे शरम आ रही है।"

गौहर हँस दिया–"ओए, शरम काहे की! क्या तेरे पास कोई अजूबा है? सारी दुनिया ही इससे बनती-चलती है।"

गुलज़ारी ने सिर हिलाया–"इसका गुमान ठीक नहीं। बड़ों का कहना है कि हर वक़्त इसके लीला-खेल सोचने से बन्दा ख़स्सी हो जाता है।"

अपने-अपने तम्बों से आँख चुरा चौकड़ी सिर ख़ुजाने लगी।

पीरू...ऊ...पीरू...ऊ...चन्न की चान्ननी में उड़ती पाखियों की डारें उड़-उड़ दरिया पर जा फैलीं।

पीरू...ऊ...

लड़कों के कान चौकन्ने हुए–"ये फुल्ल सूँघनी हैं।"

"न, शर्त लगा लो, हैं तो यह बबूनी हैं।"

"यह बबूनी भी नहीं। यह हैं सिन्ध बुलबुली।"

"मान ले मेरी, ये हैं धौला धारणी। इन्हीं दिनों पब्बी छोड़ त्रिचाल चमन की ओर उड़ती हैं।"

कोकले का छोटा भाई डोडा मिरासी आन पहुँचा। बैठते ही काफ़ी छू ली:

मनसा करत सुख चरण तिहारे
मेरी मुरादें परसऊ प्यारे
जो सुख आवे सो फल पावे
ग़ौस नबी को लागे प्यारे!
मनसा करत सुख चरण तिहारे!

ऊँची खनकती आवाज़ डोडे की दरिया की मौजों पर नाचने लगी। ठंडी हवाएँ चनाब की, लड़कों की ताज़ी अँखियों को झुलाने-डुलाने लगीं।

अल-सुबह लद्धे की आँख ख़ुली तो शाहों के कम्मी-कारिन्दे छौलदारियों में माल-रसद पहुँचा रहे थे।

साथ पड़े गौहर और मदद अली को झकझोरा–"उठ जाओ। ओ, उठ जाओ! तम्बुओं में रौनक़ें लग रही हैं। जल्दी-जल्दी खेत-झाड़े हो आएँ। यह न हो कि हम हत्थ-पानी पर हों और उधर से मट्टकनियाँ आ पहुँचें।"

उत्तरादी दिशाओं पहाड़ों के पीछे से शफ़क़ की गुलाबी ओढ़नी दरिया और आसमान पर

एक संग लहराने-झिलमिलाने लगी।

पानी पर उजियारा लिशकारा मारने लगा। वह देखो बेड़ियाँ तिरती आती हैं इधर और उधर जवान गबरुओं की आँखें ओढ़नियों में अटक-अटक जाती हैं। छातियाँ धड़कनें लगती हैं।

एकाएक शोर मच गया–"किसी ने देखा भी हुआ है पहले कि नहीं?"

"शाहों के यहाँ से कोई भी नहीं आया! पहचानेगा कौन? मुहांदरों का हमें क्या पता–बुद्धाँ कौन है, हुस्ना कौन है?"

काशीशाह बुद्धाँ और हुस्ना की अगवानी के लिए घोड़े से उतरे। इधर-उधर नज़र मारी। दरिया कंढे आसपास के पिंडों के गबरू-गब्बरोटों को देख सुथरी आवाज़ में कहा–"बरख़ुरदारो, कहने को यह नाच-मुजरा है, पर असल में यह बड़ी गूढ़ी तालीम है। याद रहे, गाने-नाचनेवाले लोग बड़ी ऊँची तालीम के मालिक होते हैं। इसलिए उनकी इज़्ज़त बराबर होनी चाहिए।"

लड़कों को सुनने का ताब कहाँ!

"करेंगे जी, बराबर इज़्ज़त करेंगे। पर पता तो लगे–कौन बुद्धाँ है, कौन हुस्ना?"

छोटे शाह ने सब शक-शुबह दूर कर दिए–"गुलाबी दुपट्टेवाली हुस्ना और काशनीवाली बुद्धाँ।"

किश्तियाँ किनारे की ओर बढ़ती आईं।

बूटे ने आँख पर हाथ की ओट कर पानी में छलकता सूरज का लिशकारा बचाया और ऊँची आवाज में कहा–"बुद्धाँ कंजरी तो जी मुहांदरे में मेरी बेबे लगती है।"

डोडे ने समझाया–"बूटेशाह, सिक्खोंवाली बातें! ओ सिंहा, बुद्धाँ तालीम में रावलपिंडी तक कोई सानी नहीं रखती। इस जैसा ठुमरी-टप्पा गानेवाला अभी कोई पैदा नहीं हुआ।"

जलालू ने उचककर देखा–"छोड़ ओए ख़ुंडी छुरी को! देख हुस्ना को जो प्रतक्ख हीर है झंग सयाला की। हाय ओ रब्बा। क्या सूरत, क्या रूप-जवानी!"

मल्लाहों ने ज्यों ही बेड़ियाँ किनारे लगाईं, छन...छन...बाँहों के छनकार और पाँवों की झाँझरें बजने लगीं!

हुस्ना की नाक का मोती ऐसे चमका, ज्यों किसी लक्खरानी की सुच्ची प्रीत हो!

जलालू ने छाती पर हाथ रख टेक लगा दी–"मैं तो गया यारो! रब्या मेरया, यह झाल नहीं झेली जाती मुझसे!"

कहते-कहते गंधम की रंगतवाला जलालू रेती पर चित लेट गया।

ठोड़ी पर हरा तन्दोला और उजले दाँतों की लड़ियोंवाली बुद्धाँ हँसने लगी–"सदके तेरी सजरी जवानी पर चन्ना! यह झाल इन कपड़ों-लीड़ों और गहने-गट्टे की नहीं, यह रौशनाई तेरे ताज़े-रत्तड़े खून की। माँ के शाहज़ादड़े, उठ खड़ा हो जा और सलाम कर हुस्ना परी को!"

फिर बूटे की ओर खरी चितवन से देखा–"भोले बादशाह, अभी बच्चे हो। दुनिया-जहान में ढूँढ़ने चढ़ धाओ तो भी कोई मुजरन नचौनी किसी की बेबे न लगे! फिर मैं तो ठहरी बुद्धाँ कंजरी! चल रे सिंहा, मुझे बेबे बुला ही लिया है तो एक बार पैरीपौना तो कर दे। मुझे भी तुम्हें बरख़ुरदार कहने का चाव हो आया है!"

बूटे ने न किसी दोस्त-यार की ओर ताका, न कुछ सोचा-साचा।

आगे बढ़ पैरीपौना बुलाया। बुद्धाँ के पाँव छुए और हाथ सिर को लगा उठ खड़ा हुआ।

"जीता रहो! बड़ी-बड़ी उम्रें! जवानियाँ मान ओ सिंहा! मैं सदके, मैं बलिहारी शाहों के ग्राँ पर, जिसने बिन माँगे मुझे पुत्र दे दिया!"

बुद्धाँ छोटे शाह की ओर मुड़ी–"बहुँ मोल-दात इस झोली। शाह साहिब, कभी सुना था, कंजरी को भी किसी ने भोले भाव से ही बेबे कहकर पुकारा हो? ज़ाहिरा पीर लखनदाते सखी सरवर की सिफ़तें, बरक़तें!"

"शाह साहिब, बड़ी-बड़ी मुबारकें हों लालीशाह की!"

"ख़ैर मुबारकें।"

बुद्धाँ और हुस्ना अपनी रंग-रंगीली चाल में छौलदारियों की ओर बढ़ीं तो नौजवान अश-अश कर उठे!

बख़्तावर ने आवाज़ कस दी–"रब्बा, पता तो लगे, इनके पाँव की जुत्तियाँ किस्मतवालियाँ पोठोहारी हैं या सलीमशाही?"

काशीशाह ने पीछे मुड़कर देखा और पाक़-साफ़ आवाज़ में कहा–"बरख़ुरदार, यह पोठोहारी नहीं, सलीमशाही हैं।"

फिर ऐसे क़दम उठाए ज्यों पिंड में मुजरा नहीं, 'सुरुद-समाँ' जमनेवाला हो!

धूप निकलते ही चूहड़ों की ठट्टी में मैले-कुचैले बच्चों की टोलियाँ बाहर निकल आईं:

दामन बीबी फ़ातिमा का
छत्तर तान दिल्ली का
हुकम मान क़ाबे का
ताबा तान मक्के का।

मैली-कुचैली सुथनियों में ढकी-लुकी लड़कियाँ खेनू खेलने लगीं:

बालाशाह नूरी किसके बेटे	अमीरशाह नूरी के बेटे
अमीरशाह नूरी किसके बेटे	हैदरशाह नूरी के बेटे
हैदरशाह नूरी किसके बेटे	हब्बत ताला नूरी के बेटे
हब्बत ताला नूरी किसके बेटे	मौला मुश्किल कुशा

दौड़ो, अरी ओ दौड़ो! पीरों का बकरा...पीरों का बकरा...

सुनते ही लड़कियाँ उठ धाईं।

"सींगों पर उठा लेगा, सींगों पर!"

कुच्छड़ों में छोटे बहन-भाइयों को उठाए न्यानियाँ वह जा और वह जा!

रहमे मुसल्ली के जुड़वाँ बेटे कहीं से बदहवासी में दौड़ते आए–"ढट्ठे चुड़ैल खू से चिट्टे बालोंवाला लड़का निकला और अरुढ़ियों पर ग़ायब हो गया। हमने अपनी आँखों देखा है। दौड़ो लोगो, दौड़ो!"

बच्चे दौड़-दौड़ दादियों-फूफियों से जा लगे।

"क्यों रे क्यों, क्या क़यामत आ गई जो दौड़ते-भजते नज़र आते हो?"

"बेबे री, बत्रे कन्ने ने कुएँ में से आता जातक देखा चिट्टे बालोंवाला।"

“हाय ओ रब्बा!” बेबे शरबती ने झट सिर पर कपड़ा डाल सीस झुकाया:

“तेरे आगे अपनी फ़रियाद
तेरी फ़रियाद धुर दरगाह!

दूर बलाँईं। बाबा बालाशाह, रहम करना!”

बत्रे कन्ने की माँ ने गला फाड़ ख़बरदार किया–“अरे बच्चड़ो, अरुढ़ियों की ओर न जाना! दिन-दहाड़े जिन्न ख़्वास नज़र आया है। रब्ब ख़ैर करे!”

पंघड़े पर सोए सुक्खनी के पुत्तर ने खाँस-खाँसकर दूध फेंक दिया। हाथ का बरतन परे रख जातक को गोद में उठा लिया और पीठ मल-मलकर कहा–“ख़ुरे खाँसी, ख़ुरे, हट-हट...”

दादी दौनी हाथ पर टुक्कड़ रखे मुँह चुगलाती थी। आवाज़ दी–“क्यों री कुचज्जीए, क्यों रुला रही है लड़के को? लड़के को अरा-परचा, मुँह में मम्मा दे!”

दौनी ने दूसरा कौर मुँह में डाला ही था कि सुक्खो ने चीख़ मार दी–“हाय री बेबे, कर ले जो करना है! लाल तो गया मेरा!”

दौनी उठ धाई–बहूटी की गोद में लड़के को देखा कि आँखें फिर गई हैं।

छाती पीट ली–“ओ रब्बा मेरे, बक़्श दे! बक़्श दे! मेरी पोह की बोआई है।”

सुक्खनी ने छाती पर हाथ धर साँस देखा और धाड़ मार दी–“अरी बरन सासड़ी, मेरा लाल तो कोई न!”

साथवाले कोठे से बूढ़ी वडेरी ज़मालो उठ धाई और दहलीज के बाहर खड़ी हो गरजी:

“काली चरी, चार चरी
काट-काट देही को खाए
पानी बहाए समुद्र का भूत
चुड़ैल भस्म हो जाए।
काली चरी चार चरी काट-काट...

“हट-हट, दुरे-दुरे...”

लड़के ने आँखें खोल दीं तो माँ और दादी दोनों भर-भर आँसू बहाने लगीं। बेबे जमालो ने लड़के के सिर पर हाथ फेरा:

लाल घोड़ा
लाल जोड़ा
लाल कलगी
लाल निशान।

बच्चा माँ का दूध चुँघने लगा तो दादी दौनी ने बलैया ले ली–“साँईं ख़ैर सदके! रब्बा, तूने वापस कर दिया!”

जमीला ने दमड़ी ले दौनी से पल्ले बाँध ली और ढाढ़स दिया–“बक़्शवा दिया री, बक़्शवा दिया अपने लाड़ले को। इसकी खेसी के नीचे निम्बू धरेक के पत्ते और लोहा रख डालना।”

“हला बेबे!” दौना जमीला के पास ढुकी–“किसकी रूह-परछाईं थी बेबे?”

जमीला ने मन ही मन पीर-मुरशदों को याद कर हौले से कहा–“वही री, चिट्टे बालोंवाला अवानों का जातकड़ा! मामू मुसल्ली ने धोखे से क़त्ल कर दिया था। हैं री, उसकी रूह मुड़-मुड़ इस पिंड में भटकती है। हर बरस कूएँ से निकल अरुढ़ियों में ग़ायब

हो जाता है। पार के साल हुसैना के पसार में जा लुका। मैंने बहुतेरा डराया-धमकाया, न मुड़ा। हारकर टिब्बीवाले मलवाने ने आ सुलतान से अलग किया। चढ़ बैठा था उस पर।

"टिब्बीवाले ने मिरचों की धूनी जला धमकाया–'तू मिट्टी हो चुका। तू पूरा हो चुका खिलंदड़े! इधर का ख़याल छोड़ दे। मुँह मोड़ ले। बोल, क्या कहना है तुझे? किससे कहना है!

"भूत बोला–'नीच मुसल्ली ने वार किया–मेरी छाती पर नहीं, पीठ पर, बदला लूँगा?'

"टिब्बीवाला मलवाना कड़ककर बोला–'पीठ को छाती बना दूँगा। हट परे–परे हट–हट-हट!'

"डरकर भूत वह जा और वह जा!"

बाबे ने गिनकर दुअन्नी धरवा ली।

जमालो बेबे जाते-जाते दौनी को कह गई–"मैंने कहा, बाबा लाल के नाम का चूरमा करवा दे! सातों ख़ैरें पीर पैग़म्बरों की! चवन्नी-अठन्नी की किड़स-कंजूसी न करना!"

गुजरात कचहरी से ख़बर चली कि ज़िला लाट इलाक़े का दौरा करेंगे।

पटवारी और लम्बड़दार ने पीली पड़ी पगड़ियाँ लद्दे धोबे के आगे डाल दीं–"ले भई लद्देया, कुछ रंग-रंगत निकाल अपनी पगड़ियों का। सुनते हैं, मैली पगड़ियों से नया साहिब बड़ा ज़िच्च होता है। कुछ ऐसा करतब कर कि अपनी पेशी सही-सलामत निकल जाए।"

"ज़रूर बादशाहो, ज़िला लाट भी क्या याद करेंगे किसी पिंड से सलामें मिली थीं।"

लद्दे ने हाथ में पगड़ियाँ उठा ऐसे वज़न किया ज्यों एक साथ लम्बड़दार-पटवारी के हकूमती सिर हाथ में आ गए हों!

पगड़ियाँ खोल आँखों के आगे लहराईं। देख-दाखकर कहा–"बादशाहो, घिसी-घिसाई मलमलें हैं। चलो, कुछ न कुछ दक्ख बना देंगे।"

लद्दे ने गुच्छा-मुच्छाकर पगड़ियाँ दोनों मिट्टी के कूँड में फैंक दीं।

मौलू मिरासी पास खड़ा दाने चबा रहा था। देखते ही हाथ ऊपर किया–"ओए लद्धया, यह क्या! कानूनी दफ़ा के अन्दर आ जाएगा। एक साथ दो सरकारी सिरों की पागें कूँड़े में फैंक दीं! बादशाहो, काम तो नालायक़ ने ऐसा किया है कि सीधे हवालात मिले।"

लम्बड़दार-पटवारी दोनों बड़े कच्चे पड़ गए।

लद्धे ने झट बात सँभाली–"बादशाहो, जिस हाक़म के सामने चिट्टी पगड़ियोंवाले सिर झुक-झुक पड़ें, उसकी हकूमत तो आप सवाई हो गई न!"

मौलू ने आगे बढ़ लद्धे की दाढ़ी हाथ लगा दिया–"कमाल किया है लद्देशाह, ऐसी बोली-ठोलियाँ तुम्हारे मुँह से निकलने लगीं तो हम मिरासियों की तो मिरास गई!"

लम्बड़दार-पटवारी के पाँव उठाते ही मिरासी की ज़बान ख़ुरचन उतारने लगी–"कोई हमसे पूछे तो सफ़ाई-धुलाई की भी क्या ज़रूरत! ख़ैरों से अहल्कार सरकार

के तो सरकारी साँडों की तरह दूर से ही नज़र आते हैं।"

मौलू ने ढोंकलमल पटवारी को आवाज़ दी–"पटवार साहिब, सुनने में आया है कि ज़िला लाट बड़ा पाटेख़ाँ है। चलो, अपने को क्या लेना! हिसाब तो पूछे जाएँगे आप अहलकारों से। बाक़ी रियाया के हिस्से में तो साहब बहादुर के दीदार ही!"

लद्धे ने बीच में टोक दिया–"मौलूया, तुमने कौन सी हाकम के हाथों जिवियों की मालकी लिखवानी है!"

"न जी। तौबा करो! रब्ब रसूल ने तो पहले ही मिरासियों को खुश-रहनी जागीर बख़्शी हुई है। पटवारीजी, हुक़्म हो तो साहिब के सामने कुछ शंसा-कवित्त हो जाए!"

लम्बड़दार ने पटवारी का इशारा समझ घूर दिया–"ख़बरदार मौलूया, मौक़ा से ज़रा दूर ही रहना। यह हाकम बड़ा कडुवा है।"

"हद कर दी मोतियोंवालो! अपनी हथेलियों पर न हाकम की मिठास उगनी है, न कुड़ित्तन! मिरासी का फ़न जिसे न भाए वह भडुवा हो। अपने तो भागवान जजमान राजी रहें। इन बन्दरमुँहों से क्या अपनी रोटियाँ जुड़ती हैं! भूँडों की तरह आए और भू-भू करके चले गए।"

लद्दे को पुराना क़िस्सा याद आ गया–"ओ मौलूया, लायलपुरवाले होदी काने का क़िस्सा तो सुना हुआ है न! नहरोंवाला यंग साहिब विलायत जाने लगा तो इलाक़े में बड़ा जलसा हुआ। खलक़त ने जी भरकर साहिब की महिमा गाई। होदीख़ाँ काने ने भी तुक्कड़ जोड़ा हुआ था:

सलामत रहे अंग्रेज का राज
कोहेनूरवाला शहंशाही ताज
नहरों से किया पंजाब आबाद
यंग साहिब बहादुर ज़िन्दाबाद
कयामत तक बना रहे
सलामत रहे अंग्रेज़ का राज।

"बस जी, जलसे में होदी काने को बड़ी वाहवाही मिली। गोरे साहिब बहुतेरे थे माजूद जलसे में। सुनकर ऐसे कुप्पा हुए कि सरकार से होदी काने को खिल्लत दिलाने की सिफ़ारिश कर दी।"

"बादशाहो, काना होदी बड़ा तेज़! झुक-झुक सलामें बजाईं और बोला–'सरकार आला जो भी दे सिर-आँखों पर। अर्ज़ सिर्फ़ इतनी है जनाब कि एक आँखवाले काने को खिताब देकर सरकार की शान न बढ़ेगी। ख़ाँ साहबी मिल भी गई तो भी लोग बुलाएँगे तो होदी काना ही। साहिब, ज़मीन दे डालो तो सरकार का क़ौल भी रह जाएगा और मेरा दिल भी परच जाएगा।'"

ऊपर से तो हँसते रहे लम्बड़दार और पटवारी, पर मन-ही-मन बड़ा पछोत्तावा लगा।

"तक़दीरें अपनी-अपनी! उम्रें गँवा दीं सरकार का हुंकारा भरते, पर इनामी मौक़ा हाथ न आया।"

मौलू को ऐसा उबाल आया कि होदी ख़ाँ को कोसने लगा–"ओए कानेया कंजरा, इलाक़े की मिरास मर-खप्प गई थी या मुँह-सिर लपेट कोठों पर पड़ी थी कि तू अपनी मुसलमानी दिखाने यंग साहिब के आगे जा खड़ा हुआ। भडुवा खच्चर!"

ढोंकलमल और लम्बड़दार ने मिरासी को मच्छरते देखा तो क़दम उठा

लिए–"त्रिकालाँ तक पगड़ियाँ कर रखना!"

"बराबर बादशाहो, हकूमती पागों में कैसी देर! लाट बहादुर के ऐलान-फ़रमान खैरों से इन्हीं साफ़ों से चलते हैं।"

दुपहरीं ज़िला लाट की इन्तज़ार में इकट्ठा हो गया। मैले-अधमैले पग्गड़ खेसों पर सजे रौब-दाबवाले मुहांदरे मंजियों पर जम गए। कुछ पाँव के भार बैठ अपनी हुक्कियों में सझे रहे। कुछ खड़े-खड़े साहब की राह देखने लगे।

शाहजी ने मजलिस पर नजर मारी। पिंड का मुँह-माथा देख सिर हिलाया और पटवारी की ताज़ी पग्ग देख आवाज़ दी–"ढोकलमलजी, इस साफ़े में जँच रहे हैं आप!"

मुहम्मदीनजी हँसने लगे–"ख़ैर सदके, अबरक़वाली पग्ग और कलफ़ी क़ुल्ला। शाह साहिब, नौशा लग रहे हैं पटवारी अपने!"

गंडासिंह छिड़ गए–"ढोंकलमलजी, फुल्ल-फैलाव आपका चंगा है। इसी बहाने एक-दो बीवियाँ और कर छोड़ो। कोई ज़रूरतमन्द बिचारियाँ खा-पहन जाएँगी आपके राज में। दौलत-माया की तो कोई कमी ही न हुई। खाते जाओगे दिन-रात तो भी नख़ुट्टे।"

कर्मइलाहीजी फ़तेह अलीजी को देख-देख खच्चरी हँसी हँसते रहे। कहा–"मैंने कहा फ़तेह अलीजी, इस मामले में अपने मुसलमान बन्दे चंगे। हाथ सुखल्ला सौक्खा हुआ तो एक और निक़ाह कर डाला। आख़ीर को जहाँ इतने वहाँ एक जान और सही।"

मौलादादजी कुछ सोच में थे। बड़ी संज़ीदगी से सिर हिलाया–"बात तो ठीक आपकी! सवानी खाएगी तो काम भी तो करेगी!"

मैयासिंह चमक पड़े–"मोलादाद, है कोई नई भरजाई नज़र में? मुझे बचौलिया बना लेना!"

बड़ी देर हास्सा पड़ा रहा। शाहजी ने पूछा–"ढोंकलमलजी, अपने काग़द-पत्तर सही कर लो। मियाँ लोग करेंगे नालिशें साहब के आगे और तुम्हारी गर्दन नाखून ख़ुबेगा!"

"शाहजी, अपने जामिन तो हुए पिंडों के चौधरहट्टे। बाक़ी अंग्रेज़ी क़ानून की लिखतें पड़ी हुई हैं। हम तो सिर्फ़ लीकें मारनेवाले हुए!"

मौलादादजी हँसने लगे–"ढोंकलमलजी, पटवार की सयानफ़ों को कौन गिनाए! पर यह तो बताओ बादशाहो, अब तक तो गागरें भर गई होंगी मोहरों से!"

"खानदानी पटवार और माया के अम्बार!"

शाहजी ने धार-मारू मशकरी की–"जहाँदादजी, ढोंकलमलजी पर ज़्यादती हो रही है। सरकारी अहलकार कहीं माँगने नहीं जाते लोगों से। लोग बद्दो-बद्दी उनकी झोलियाँ भरते हैं!"

गुरुदित्तसिंह को अपनी ताज़ी बीसी याद थी–"पटवार-लम्बड़दारियाँ नसीबों से। कर्मों के खेल! कोई मेहनत कर दाने चुने, कोई मोतियों की चीन पर जा बैठे!"

नजीबा पैरों के भार बैठा था, उठकर खड़ा हो गया–"बादशाहो, लहरें-बहरें और दौलत की बरक़तें ज़्यादा करके तो हिन्दुआनी चोले की ही मालकी समझो।"

चौधरी फ़तेहअली ने एक छोटी सी मकर-भरी निगाह शाहजी तक दौड़ाई और हुक्के-खाँसी की मिली-जुली आवाज़ में बात का रुख फेर दिया–"शाहजी, सरकार अंग्रेज़ी

घोड़े पर काग़ज़ी बुत्त भी बिठा दे तो क़ानून के ज़ोर-जबर से उसमें रूह बोलने लगेगी!"

"आफ़रीं-आफ़रीं!" शाहजी ने दाद दी–"आपने तो तत्त निकालकर रख दिया चौधरीजी!"

छोटे शाह ने गुरुदित्तसिंह की सराहना की–"बात तो आपकी भी खरी थी, पर ढोंकलमलजी दूसरों पर ढेले क्यों फेंकने!"

जहाँदादजी ने सिर हिलाया–"बात तो ठीक है। जो मिल जाए अहलकारी तो रब्ब का बन्दा क्यों काम करने लगा!"

"खालसा राज में भी बड़ी माया-दौलत खट्टी कमाई गई। दिवान सावनमल मुलतानवाले के पास सत्तर-अस्सी लाख! गुप्त की तो बात छोड़ दो! बेहिसाब सोना, मोती, जगह, ज़मीन! लहनासिंह मजीठिया करोड़ों का मालिक! सुननेवाली बात है, तीर्थयात्रा पर लहनासिंह निकला तो पच्चीस सौ के लश्कर पर एक करोड़ ख़र्चा आया! मेरठवाला जमादार ख़ुशहालसिंह बनारस पहुँचा और उठा के छः लाख दान-दक्षिणा कर दी!"

ज़मीन पर उकड़ूँ बैठे नजीबे की हाथ की तलियों में सड़कन होने लगी–"शाह साहिब, यह कितनी पुरानी बात होगी?"

"यही फिरंगी के आने से पहले की!"

नजीबा खलबली में उठ खड़ा हुआ–"यह तो सरासर बेइन्साफ़ी है। मेहनत करनेवालों को रब्ब थोड़े से छींटे दे तक़दीरों के और गोशेवाले दरबारियों, अमीर-उमरा को ख़ुले दरिया लगा दिए! अल्लाह ताला को यह क्या सूझी!"

मौलादादजी ने हाथ से इशारा किया–"बैठ जा, बैठ जा नजीबिए, सब्र रख! पुराने समय की बाते हैं। फिर ये घुंडियाँ अमीरी-ग़रीबी की हमारे तुम्हारे हाथ में नहीं!"

कृपाराम ने सारी सयानफ़ गले में भर ली–"यह गल्ल-बात ख़ाली बन्दे के हाथ में नहीं नजीबया, तक़दीर भी कोई चीज़ है! अपने-अपने भाग्य अनुसार किसी को चुटकी-भर, किसी को लप्प-भर और किसी को मिल गए ढेरों-ढेर!"

नजीबे का चौड़ी फाँक का-सा मुहान्दरा लम्बोतरा हो गया–"कमाल है न बादशाहो! क़ुदरत की बात करते हो तो आप जानो क़ुदरत तो सबको बराबर हिस्सा बाँटती है!"

फ़तेह अलीजी ने टोका–"सुन, ओ सुन!"

"क्या सुनूँ! मींह बरसे तो सब पर बराबर! धूप निकले तो सब पर एक-सी! चन्न-तारे चमकें तो उनकी रोशनाई एक-सी! सूरज सब पर! बन्दे के रिज़क पर ही क़ुदरत ने उल्टी लकड़ी क्यों फेर दी!"

हाजीजी तेवर चढ़ा, अनपढ़ जाहिल की ओर घूरने लगे, फिर झिड़ककर कहा–"ओ जट्टा, क़ुदरत को रब्ब रसूल मानने लगा है! याद रख, सूरज रब्ब नहीं, वह डूब जाता है। चाँद रब्ब नहीं, वह डूब जाता है। अल्लाह के अलावा कोई इलाह नहीं! अल्लाह ही इन्सान को सलामती की राहें दिखाता है!"

सुनते ही मुंशी इल्मदीन का दिमाग़ रोशन हो गया–"याद रखो, ज़मीन अल्लाह की है! अल्लाह जिसे चाहता है उसे उसका वारिस बनाता है!"

नजीबा अड़ गया बैल की तरह। मुंशी का मुँह तोड़ने के लिए जवाब न सूझे। बिफर के कहा–"मुंशिया, अल्लाह बेली की जाने अल्लाह बेली। इस वक़्त तो ज़मीनों की सच्ची-झूठी मालकी शाहों के पास है। कोई बंधे, कोई रहन, कोई गहनें।"

कर्मइलाहीजी ने निकाल ऊँची आवाज़ गले से, धमका दिया–"बस ओए डंगरा! जो बात न करनी आए तो मुँह नहीं खोलते सभा में!"

शाहजी ने संज़ीदगी से सारा वार झेल लिया। समझाकर कहा–"भरम न कर नजीबे, बात तो बात से ही कटती है। हो गई। बाक़ी तुमसे एक बात पूछता हूँ–तुम्हें मिले जो तहसीलदारी या सरिश्तेदारी तो कर लोगे?"

नजीबा पाँव के भार बैठ ज़मीन पर लीकें खींचने लगा–"न शाहजी! अप्पन जट्ट बूट! क्यारे बना लिए, जिवियों को पानी लगा दिया। बो लिया, काट लिया। ढोर-डंगर देख लिए!"

शाहजी बड़े साहिबे-सलीक़ा बनकर बोले–"नजीबया, अब तेरी बात आप ही निबड़ गई। निचोड़ इसका यह कि जो दिमाग़ से काम करे, उसे बहुता और जो हाथ से मोटा काम करे, उसे थोड़ा! क्यों जहाँदादख़ाँ जी?"

"शाह साहिब, इसे कहते हैं सयानफ़। दूध का दूध और पानी का पानी!"

मुंशी इल्मदीन ज़रा उखड़ गए थे। अपना तुक्क तीर बनाकर छोड़ दिया–"ज़िला लाट का दौरा आज तक न हुआ इन पिंडों में! अब क्या ख़ास बात है?"

कक्कूख़ाँ बार-बार हुक्का छोड़ अरुढ़ियों की तरफ़ देखें और कभी हाथ से लड़ छू लें, कभी सिर की पगड़ी माथे से ऊपर कर लें, कभी ज़रा-सी नीची।

गंडासिंह का ध्यान पड़ गया–"ख़ैर मेहर है यारा! तुम्हारे मुहांदरे पर सजी हुई है पग्ग तुम्हारी। साहब ने यहाँ पहुँच कोई एक सूरत नहीं देखनी। उसके भाने सारे पिंड की एक ही पग्ग और एक ही मुँह-माथा!"

मौलादादजी ने टोका–"गंडासिंहा, वाक-बाणिंयाँ हमेशा सही नहीं बैठतीं। ख़ैर सल्लाह जितने मुँह उतने माथे और जितने माथे उतनी पाग्गें। एक पग्ग और एक मुहांदरा, यह कैसे हो सकता है ग्राँ का!"

मजलिस तमाशा देखने लगी। बारीक़बाज़ी में कौन पछाड़ा जाता है!

गंडासिंह मंजी से उठ खड़े हुए। दाढ़ी पर लाड़ से हाथ फेरा। बड़े दाना अन्दाज़ में खेस की बुक्कल मारी और फ़ौजी टंकार से कहा–"ठहरो, बताता हूँ। फ़ैसले के वक़्त हर चौधरट्टे पंचायत की पगड़ी एक होती है कि नहीं! मेरा मतलब वही..."

मौलादादजी ने हुक्के की नड़ी मुँह से निकाल परे कर दी। उठे और जाकर गंडासिंह को जफ्फ़ी मार बाजुओं में भर लिया–"ओ पुट्ठे बालोंवाले कंजरा सिक्खा, आख़िर को मेरी पीठ लगा के ही रहा! मेरे यारा, तेरे तुल कोई नहीं!"

मैयासिंह ने आवाज़ दे दी–"भज्ज के जाओ, ढोलिए को बुला लाओ! लग जाएँ रौनक़ें!"

"तायाजी, रौनक़ें बराबर लगेंगी, पर त्रिकालाँ के बाद। साहब का दौरा सही-सलामत भुगत जाने दो।"

बैठा-बैठी हो गई तो छोटे शाह ने अख़बारी ख़बर दी–"सरकार नहरी जमीन के मामले बढ़ा के रही।"

"बादशाहो, जिवियों के दाम चढ़ेंगे तो जिंसें भी ऊपर जाएँगी। खेतिहरों का फ़ायदा है इसमें।"

"जहाँदादजी, आजकल कनक सवा दो रुपए मन, चने एक रुपया बारह आने, ज्वार एक ग्यारह। बाजरा एक तेरह..."

"सोचनेवाली बात है, मामला-लगान ज़्यादा तो फ़सल की क़ीमत ज़्यादा।

तम्बाकू पर मामला सवाया है तो क़ीमत भी अल्लाह के फ़जल से गूढ़ी।"

"जी, कुछ पूछताछ करनी होगी साहब ने, नहीं तो उसने कौन सी ढाल-बाश या दोहाना-टिब्बी का फ़रक़ मालूम करने आना है!"

"बात यह है, लायलपुरियों ने बड़ा ग़दर मचाया हुआ है। क्या पता, इस इलाक़े में भी कोई ऊँची-नीची हो गई हो! पता तो नहीं अफ़सर-आला क्या पूछ ले!"

काशीशाह ने समझाया–"एक गुर याद रहे! बड़े अहलकार के सामने न हँसिए, न रोइए। बस, हैरान हो खड़े रहिए!"

सुनकर बैठक में हास्सा पड़ गया।

"बात तो जनाब सौ सैकड़ेवाली है। आनेवाला गिटपिट करता रहे और आप घुन्ने बनकर बिटबिट तकते रहें!"

शाहजी बोले–"इतना समझ लो कि अंग्रेज़ी हुक़्मरान अपनी सारी भाक्खा समझते हैं। लहंदी, उर्दू, पश्तो सीखने के लिए अफ़सरानों को तरक़्क़ियाँ मिलती हैं। औरतों और अपने साँसियों-कंजरों की जांगलू भाक्खा तक समझ जाते हैं।"

"शाहजी, क़ौम तो अंग्रेज़ की बड़ी चौकस!"

"इसी बलबूते पर हकूमत कर रही है। झूठ क्यों बोलें, सरकार का पीछा सुनता है, रियाया के साथ सलूक अच्छा है। क़ानून आला, चैन-अमन..."

काशीशाह ने रोका–"छापे में आया है कि सरकार मुल्क़ की बदअमनी से बड़ी फिक्रमन्द है। अपना 'पैसा अखबार' और लाहौरवाला 'वफ़ादार' बड़ी लम्बी-चौड़ी पेशीनगोई कर रहे हैं।"

नाई रमज़ान लाहौर जा काम्मियों की लीक पार कर चुका था। धड़ल्ले से कहा–"मुस्लिम लीग भी खड़ी हो गई!"

मौलादादजी और चौधरी फ़तेह अली लम्बी खाँसी के बाद रुके तो शाहजी की ओर सरसरी नज़र मारकर कहा–"हमको क्या फ़रक! हो गई तो चंगा, न हो तो वाह भला! यह तो समझो कि अपने-अपने खेत और अपना-अपना बन्ना।"

"रब्ब आपका भला करे, खेत को भी तो मुँडेरे की ज़रूरत पड़ती है। सही करने के लिए यह खेत मेरा है, यह तेरा है!"

शाहजी सुनकर बोढ़ के पुराने पेड़ की ओर तकते रहे, फिर सिर हिलाकर कहा–"अपने समझ से तो जो बुलबुली सरकार ने उड़ाई है, उसका ताना-फेरा निबड़नेवाला नहीं।"

काशीशाह ने बड़े भाई की बात उजागर की–"यह कुछ तरक़ीब और तरतीबवाला मामला जान पड़ता है। सरकार ने कांग्रेस को पहले आगे बढ़-बढ़ थापियाँ दीं, शाबाशियाँ दीं, उसके जल्से जमाए-सजाए, फिर मुसलमीन भाइयों को चोक दे दी कि मियाँ लोगो, तुम भी मैदान में आ लगो।"

"नहीं काशीराम, यह मेरी-तुम्हारी रंजिश का मसला नहीं। बड़े मसले न इस तरह पैदा होते हैं, न इस तरह हल किए जाते हैं। असल बात तो यह कि ये नामाक़ूल टंटे-फ़साद अपने सूबे के बाहर के हैं।"

कभी-कभार अख़बार जहाँदादजी भी पढ़ लेते थे–"देखो, इधर लाट कर्ज़न ने बंगाल के दो टुकड़े किए, उधर तन-तनाव बढ़ गया!"

"ओहो जी, सरकार ने ऐसा कर भी दिया तो क़यामत क्या आ गई! ये हदबन्दियाँ जमानों से होती आईं। खालसों ने क़ाबुल तक का इलाक़ा घेर डाला था पंजाब में!"

"दूर क्यों जाना कर्मइलाहीजी, अपने कोटला, ककराली, खारी, खरियाली पहले कश्मीर रियासत के भिम्बर तहसील में लगे हुए थे। बाद में सरकार अंग्रेज़ी ने अपनी तरफ़ खींच लिए। और लो शाह साहिब, पहले शाहपुर ज़िले के आठ पिंड अपने ज़िला गुजरात में लगे हुए थे। बजावत और तवी के इलाक़े को स्यालकोट में लगा दिया। सरकार जो चाहे करे। सरकार जो हुई!"

मैयासिंह मजमून से तंग आ गए थे। बड़े बड़प्पन से कहा–"आख़ीर को हकूमत! कुछ लग्ग-लपेटी तो हाकमों ने भी करनी हुई! कुछ कारस्तानियाँ-कारसाज़ियाँ करके दिखाएँ हाकम लोग, तभी उनकी गुड़-शक्कर बनती है!"

कृपाराम को कच्ची-पक्की झोंक आ गई थी। आवाज़ सुन झट आँखें खोल दीं–"बादशाहो, किसे चखा रहे हो गुड़-शक्कर! पटवारी ढोंकलमलजी, ज़िला लाट तो आपका कहीं राह में ही रह गया है। कहीं कबरों में न लेटा हो पी-पा के!"

"नहीं। ज़िला लाट जलालपुर टेलर डाकदर के साथ भत्ते वेला पूरी करके चलेगा!"

"जी, फिरंगियों का खाना-पीना बड़ा नाकस! जरा सी डब्बलरोटी और रत्तीक मक्खन, अंडे और चाय, कहवे की ठुठी! पर शाहजी, चेहरे बन्दरमुँहों के लाल सुर्ख़! निकाल-निकाल बादामरोग़न पीते होंगे!"

"न जी, बादामरोग़न नहीं, फिरंगी लाल रोग़न पीते हैं!"

काशीशाह बोले–"बात यह नहीं तायाजी, जहान में दो तरह की क़ौमें हैं। एक सुरख़रू यानी लाल-मुँही और दूसरी स्याहरूँ–काली-मुँही!"

"ओ जी, कोई चिट्टी चमड़ी और कोई काली!"

गुरुदित्तसिंह का टब्बर सारा गोरा-चिट्टा। कहा–"फिरंगी को तो छोड़ो, बाक़ी जो मुग़ल से गोरा, वह कोड़ा!"

मुंशी इल्मदीनजी को मौक़ा मिल गया–"अपने लोग तो ख़ैर गंधमी हुए। बीच-बीच में काले भी हैं, पर ज़्यादातर..."

शाहजी ने जाने क्या सोचा और क्या देखा, हमेशा की तरह अपनी सयानफ़ की मोहर लगा दी–"जिस तरह क़ौमें सुरख़रू और स्याहरू हैं, उस तरह दुनिया की ख़लकतें भी दो हिस्सों में बँटी हैं-अशराफ़ और अजलाफ़।"

साँवल खोजी का पुत्तर टोटो कहीं से दौड़-दौड़कर आया और पटवारी से कहा–"लाट ज़िला पीपलवाले खू के पास पहुँच गया है। आगे-आगे ठानेदार, पीछे उसकी चपड़ास!"

मौलादादजी ने हुक्का छोड़ दिया–"ख़ैर सल्लाह है पुत्तरजी, हुक़मरानों के साथ कई मीर-पीर और वज़ीर! जी सदके आएँ! शाह साहिब, ज़रा आगे बढ़कर कीकरोंवाले मोड़ पर मिल जाएँ साहिब बहादुर को!"

स्वाँग पर भीड़ इकट्ठी हो गई।

दुर्गा भवानी अंग संग हमारी मुश्किल आसान कर।

"हाँ, चल बोल जमूरेया, लक्खी साँसी और स्यालकोटिये जमाल चिड़ीमार में कोई फ़र्क़ नहीं?"

"क्यों नहीं जी!"

"सोच के बोल, जलालपुरनी बहाराँ और एक-एक मन के चूतड़ोंवाली डंगली ललाइन में कोई फ़र्क़ नहीं?"

"बराबर है जी!"

"चल, और बता जमूरेया, बीबी फूलाँ खत्राणी की बगीची और चूड़ों की ठप्परी में कोई फ़र्क़ नहीं?"

"बादशाहो, बिल्कुल है।"

"तो और बता, डिंगे के मुक़द्दम चौधरी वलीदादख़ाँ और मुल्ला कमाले में कोई फ़र्क़ नहीं?"

"क्यों नहीं जी! एक के सिर पर साफ़े का साज-सिंगार और दूजे के हाथ में बोकर बुहार।"

"बल्ले ओ बल्ले! सही हुआ जमूरेया कि कुछ अक़्ल-बुद्ध है तुम्हारी खोपड़ी में।...अब जो पूछता हूँ, उसे आँख से देख-परख के जवाब दे।"

"जो हुक़्म!"

"बोल, काम करवाने के लिए बन्दे को कैसी ज़नानी चाहिए?"

"ख़ुरासान की रहनेवली ख़ुरासानी।"

"वाह-वाह! अब बोल जमूरेया, बच्च-बलूँगड़ों को पालने-पोसने को कैसी ज़नानी?"

"रब्ब सबका भला करे। लालन-पालन को हिन्दुआनी।"

"अब ज़रा ज़ोर लगा के सोचना जमूरेया! मर्द के दिल-बहलाव के लिए?"

जमूरे ने छाती पर हाथ रखा–"यारो, दिल को तरसाने-बहलाने के लिए हूर ईरानी।"

"बहुत खूब! बहुत खूब! अब इतना बताया है तो एक और बात भी बता छोड़। इन तीनों के दिलों में ख़ौफ़ पैदा करने के लिए?"

जमूरे ने चददर फेंक दी। मुँह उघाड़कर तड़ातड़ गालों पर धप्पे मारने लगा। गले से लम्बी हिचकी ली और छाती पीट ली–"लोको, डराने-धमकाने को जल्लादनी-तुर्क़ानी।"

आसपास खड़े लड़कों ने जमूरे को गुदगुदाना शुरू किया–"उठ जा, ओ उठ जा डोडया। हूरें बिछी भलीं, तुम खड़े भले।"

डोडा झूठ-मूठ आँखें मलने लगा–"न जी न, मैं नहीं उठता। मैं अड़ गया हूँ। मुझे तो लेनी है दुलहन बुख़ारे की।"

एकाएक तमाशबीनों में हलचल हुई और खोजों के नादिर ने दो दिए झापड़ जमूरे की कनपटी पर–"ओए मिरासिया, यह कैसा स्वाँग है तेरा! बन्दा कितनी देर तुम्हारी बूथियाँ-बोथड़े तकता रहे! और अपनी हँसी ख़ैरों से छातियों में ही बंद रहे! उठ। उठ जा। झाड़ ले मिट्टी चूतड़ों से और छोड़ दे अखाड़ा!"

जने जवान हँसने लगे। निरी बेजान बोलियाँ। भड़ुवो, तुमसे ख़ुसरे अच्छे। मिरासी होकर ऐसा मिट्टी स्वाँग। जा-जा।

शुर्ली ने नादिर को समझाने की कोशिश की–"उस्ताद, झूठ क्यों बोलें! एक-एक मनवाली बुरी न थी।"

शरीफ़ू ने और लशाया–"क्या अच्छी थी! चूतड़ का नाम ले बन्दे को चूतड़ नज़र न आए तो थूक मिरासी की तालीम पर।"

नादिर ने झुझका मारा–"जट्ट बूट होंगे हम अपने घर। हमें ऐसे फूहड़ तमाशे के क़ाबिल समझा!"

बोद्दे ने टींडा दिया–"मार औरतों की क़िस्मे गिन डालीं! कोई पूछे, हमने ज़नानियों के अचार डालने हैं चूप्पेवाले! ख़ुरासानी, ईरानी, तुर्क़ानी, हिन्दुआनी। ओए मिरासिया, अपने को तो दूधिया बीज की हट्ट-कट्ट पंजाबन ही चंगी।"

गींडे ने पीछे से आकर बोद्दे को गलबाँही दे दी–"क्या बात की है धुस्सा-योहन! जो हाथ तले, वह अपनी!"

बोद्दे ने कसकर लगाया मुंडी पर–"पशुया, हाथ तले नहीं, छाती तले।"

गींडे ने उछल-उछल डड्डू की तरह शोर मचा दिया–"ओ देखो लोको, मेरे सिर का कमंडल फूट गया!"

बोद्दे ने चुमकारा–"आ जा पुत्तरा! फूट गया है तो कुम्हार से नया घड़वा देता हूँ। ओ फग्गू, ओए, एक मटका घड़ दे इसकी खोपड़ी के नाप का।"

डोडे को यकायक कुछ सूझ गया। तावली-तावली कोकले पर चादर तान दी और सिर पर लकड़ी घुमाई–"काली, दुर्गा, छिन्न मस्तका, सती अम्बिका, भवानी उमा पार्वती गौरा चमुंडा का नाम लेकर याद कर कोकले पुराने वक़्तो को, जब मुंडियों के ढेर लगा करते थे!"

"किस-किस के नाम गिनाऊँ! शाह सिकन्दर, शाह ग़ौरी, शाह ग़ज़नी, शाह बाबर, शाह नादिर, शाह अब्दाली–शेरों का शाह सिंह महाराजा रणजीतसिंह!"

चाचा गुरुदित्तसिंह के निक्के पुत्तर दीदारसिंह ने जयकारा बुला दिया–"जो बोले सो निहाल, सत-श्री अकाल!"

कोकले मिरासी ने लेटे-लेटे ही हुंकारा भरा–"ओए, कौन है? किसे खाज-ख़ुरक छिड़ गई शहर कोट जीतने की? ओए दीदारसिंहा, आराम कर। अब नहीं तुम्हें मिलती ज़फ़र-जंगी मुल्लान फ़तेह करने की और न मिलती नुसरत-नसीबी कश्मीर जीत लाने की। ओए ताज़ी दाढ़ीवालेया बरख़ुरदार, सिक्खा सरदारा, क़ानून लग गया अब फिरंगी का। मस्त होकर हल वाहो, जिवियाँ सजाओ। छाती-डौले हैं तो लश्करों में जाओ।"

बोधा, गींडा, शुरली और शरीफ़ू कोकले के पास आ ढुके–"ओ मिरासिया, तेरी भूखें जगें।"

कोकला छिड़ गया–"सज्जनो, शादी की भुक्ख, बैरी की घुप्प, जिंमीदार की चुप्प, माँ मत्रेयी की कुट्ट..."

डोडे ने टोका–"ओए, तू क्यों दाढ़ी में तिनका ढूँढ़ रहा है?"

"तुम्हें क्या! मैं शाह की कहूँ, सवार की कहूँ, चोर की कहूँ, साहूकार की कहूँ, बैरी की कहूँ या यार की–तुम्हें क्या!"

"ले, और सुन! चोर को चट्टी, कुत्ते को गत्ती, रनन को चक्की। अन्न की थग्गी ख़समों ने तोड़ी।"

"बस, यारा, बस! अब और कुछ न पूछना! मेरी बुद्ध ज़रा ज़्यादा ही लिशक गई है। चल, एक चुटकी-भर अमल दे दे। अब आप्पाँ सोएँ!"

डोडे ने हेक निकाली:

"अफ़ीम मत खा तू ज़ालिम,
हो जाएगा अफ़ीमी
तन सुकुड़-पुकुड़ जाएगा

ख़ुजाएगा, आवाज़ हो जाएगी धीमी
नाहक़ क्यों कुनकुना बनाता है
अपने को गुलज़ार यार सिम्मी।"

कोकले ने पलटकर जवाब दिया–"पीर-फ़कीरों के मुँह से सुना नहीं तूने:

चरस चिलम चोक्खा
न जीवन की आस,
न मरन का दोक्खा।"

फत्तू और सिकन्दर वड़ैच ने शोर मचा दिया–"ओए मिरासियो, क़ुर्बान की जानें अपनी मौत पर। कोई ताज़ी सोहली बात करो ज़िन्दगानी की। मरन के दोक्ख़े क्यों ले बैठे! मौत आएगी तो मर जाएँगे कि पहले ही धड़की लगा लें!"

कोकले ने झट सलाम किया–"माफ़ी शाहजादड़ो, माफ़ी! कान पकड़े! इन अहमक़ों ने देखा नहीं कि पिंड का सयाना पूर यहाँ हाज़िर ही नहीं।"

डोडे ने तमाशा बदल दिया–"ढूँढेशाह ढूँढेख़ाँ की औलादो, ढूँढेमल के बच्चड़ो, ज़रा पीछे-पीछे! और पीछे, और पीछे! रत्तीक और, थोड़ा-सा और पीछे हो जाओ!"

कोकले ने मुंडी उठा झुझका दिया–"क्या पीछे-पीछे, ओए डोडेया, मतलब क्या है तेरा? तू पीछे के ही पीछे पड़ गया! मेरी समझ में तू ज़रूर सूबा पंजाब को धिक-धिक कर हिन्दुस्तान पहुँचना चाहता है।"

"चल, चाहता हूँ! जो करना है, कर ले!"

"ओहो भ्रत्था, मैंने क्या करना है!"

"नहीं करना तो टोह-टाह के पहले अपनी गुत्थी देख ले। है एक दमड़ा, एक रीठा, एक गोंगलू, एक ठिप्पर, एक छित्तर–यह भी नहीं? चल, कोई नहीं! रब्ब भेज दे एक प्यारा मित्तर!"

"ओए भूतनी के, जियें-जागें मेरे जजमान चढ़ती कलाओंवाले। तू मेरा फ़िकर तो करना न! यहाँ खड़े सब साहबज़ादे, जट्टज़ादे, अखुंडज़ादे कुछ-न-कुछ देकर ही अपनी तौफ़ीकें बढ़ाएँगे।"

"बादशाहो, फैलाऊँ झोली, फिराऊँ थाली?"

"मुड़ ओए, बड़ा आया मिरासवाला! अपने चाबे-बाबे के साथ आया करो। तुम्हारा नहीं जमता स्वाँग!"

डोडे ने खींच कोकले की चद्दर, सिर पर साफ़ा बाँध दिया। उँगलियों से मूँछों को मरोर दिए। अकड़कर घोड़े की रासें खींचीं–"ख़बरदार, लग जाओ किनारे। खालसा फ़ौजें चलीं गज्ज-वज्ज के। दबड़...दबड़...

"आगे-आगे वड्डी सरकार। रणजीतसिंह महाराज। डेरे पंचनद अटकों पार। गज़नी, क़ाबुल और कन्धार। तगड़ी मूँछोंवाले महाबली सरदार। झंडे फिर गए अटकों पार।"

कोकले ने आवाज़ दी–"ओए डोडेया, चुप क्यों हो गया?"

"बात यह है कोकले कि माला टुट्ट गई। मनके बिखर गए।"

"डोडया, यह क्या बोल दिया!"

"कोकले, चलियाँवाला, क़त्लगढ़ का नाम सुना है क्या?"

"सुना है।"

"फिर क्या कोकले?"

"उसी मनहूस मैदान में पंजाब की कोहेनूरी कलगी खो गई।"

"हाय ओ, जा लगी गोरों के हत्थ। चढ़ गया हीरा मलका के मत्थ। सारे हिन्दोस्तान पर पड़ गई अंग्रेज़ राज की छत।"

"ख़बरदार! होशियार!

"पलटनें-लश्कर मुड़ते हैं जनरैली सड़क पर!

"कलकत्ता से दिल्ली!"

कोकला उठ के खड़ा हो गया–"डोडया, यह न होने दे। चिट्ठियाँ कर दे जंगी लाट को!"

"क्या लिखूँ रुक्के में?"

"लिख दे–हाकमा, जो जाएगा दिल्ली तो पछोत्ताएगा। सरकारें पहुँचीं दिल्ली और रास्ता काट गई बिल्ली। जो थम गया दिल्ली सो नेस्तनाबूद।

"न, दिल्ली है दारुलखिलाफ़ा। जो डट्ट गया, उसकी इज़्ज़त में इज़ाफ़ा।"

"भोलया, अब दिल्ली में न तख़्ते-ताऊस! न कोहेनूर। न शाह-बादशाह। न लकझक बेग़में। न शाहज़ादे, न शाहज़ादियाँ। न हीरे-मोती। न उठती हुई जवानियाँ।"

"सुनो लोको, ये सारी जिंसें चुरा-चुराकर फिरंगी अपने मुल्क में डाल आया।"

"डोडया, अब क्या हालत है दिल्ली की?"

"सुन। अब वहाँ बिकता है हरा धनिया। चिट्टा ज़ीरा। काली कलौंजी। हरी इमली। पीली हल्दी और टाटरी खट्टी-टीट।"

"ओए, अंग्रेज़ बड़े लुटेरे। मुल्क़ अपने का सारा साह-सत्त खींच ले गए। डोडया, एक बात तो बता! इनकी सनकुक्कड़ी मेमों के क्या रास-रंग?"

"उनका नाम न ले। ख़समपिट्टियों को शरम-हया नहीं। अलफ नंगी टाँगें। न सूथन, न सलवार। माड़ी-सी छाती ढकी हुई और दो उँगल का जाँघिया। मलकड़ी उतर जाए।"

"बादशाहो, अब आगे कुछ न पूछना। मर जाऊँगा जजमानो, मैं ढह जाऊँगा। हाय ओ रब्ब!"

झोटे गब्बरुओं ने शोर मचा दिया–"ओए माँ के यारा, सभा के सिंगारा, सच करके दिखाया है! बल्ले-बल्ले, क्या महताबी छोड़ी है! क्या तस्वीर दिखाई है गोरी मेमों की!"

"शाहज़ादड़ो, गोरी मेमों की आसें न लगाओ। न दिल अपने प्लीत करो। किसी लुकमान हक़ीम ने अनुपान तो नहीं बताया कि फिरंगी मेमों को गोद भरो।"

"जजमानो, जो जाओगे इस खेल के रास्ते तो हिस्से तुम्हारे पड़ेंगे–बेभरे घुट्ट, ठानेदार की कुट्ट, शर्मिन्दगी की चुप्प, सक्खनी बुक्क!"

"छोटी सी अर्ज़ है बादशाहो! आज आपके ख़ादिम शीरेवाली मीठी घुँघनियाँ खाने की लगन में बैठे हैं!"

"जागो रे जागो लोको, मेरे पुत्र पर टोका चल गया। हार रे, मेरा लाड़ला गर्दन से गया। अरे, कोई क़ातिल को पकड़ो...शरीक़ों ने वैर कमा लिया..."

पिंड अभी सोया ही था कि सुनारों के यहाँ से अँधेरे में लपलपाती आवाज़ सुन झटापट उठ बैठा।

चाची महरी ने शाहनी को हाथ से झँझोड़ा–"बच्ची, किसी ने धाड़ मारी है। ज़रूर

कोई जाता रहा।"

दिवान सुनारे की घरवाली ने दोहत्थड़ मार छाती पीट ली–"जिस कंजर की औलाद ने यह वैर कमाया, उसके नैन-प्राण टूट-टूट पड़े। उसके क़ातिल पुत्र को फाँसी के तख़्ते तक न पहुँचाऊँ तो इस अभागी माँ का नाम भी वीराँवाली नहीं। हाय ओ मेरे लाड़ले पुत्रा, तू कैसे पड़ गया इन वैरियों के हाथ!"

वीराँवाली की चीख़ों ने पिंड इकट्ठा कर लिया।

थर-थर काँपता दिवान सुनारा हाथ में गुल पकड़े करतारे की कोठरी की ओर बढ़ा तो उसने दहलीज़ पर खड़े ठंडी आवाज़ में धमका दिया–"खबरदार, किसी ने मेरी कोठरी में क़दम रखा तो!"

दिवान सुनारे की घिग्गी बँध गई–"अरे जुल्मियो, वह मेरे जिगर का टुकड़ा है। देखने तो दो ज़िन्दा कि..."

वीराँवाली ने अँधेरे को फाड़ फिर चीख़ मारी–"अरे पिंड के बड़े इंसाफ़ियो, पगड़ियाँ उतार सोए पड़े हो! अरे, कोई तो आगे आओ हमारी इमदाद पर!"

शाहों की हवेली की तरफ़ बाँहें फैला दी–"हम जिनकी छाँह में, उन शाहों के यहाँ से पखेरू नहीं फड़कता।"

नई बैठक में सोए तारेशाह की बाँहें और मूँछें फड़कने लगीं। तहमद कस नीचे उतरा और ज़बर क़दम उठाकर सुनारों के यहाँ जा पहुँचा।

गुल की रोशनी में गुलज़ारी की माँ वीराँवाली आग्नेयी बन तड़पती थी–"अरे, मैं नहीं जीती अब। हाय ओ रब्बा मेरेया, मेरे पुत्र की यह क्या ललाट-रेखा खींच डाली थी।"

थड़े पर खड़ी वीराँवाली को हाथ से घेर तारेशाह ने ढाढस दिया और हाथ से इशारा किया–ख़ामोश!

फ़कीरे के हाथ से गुल ले करतारे की कोठरी की ओर बढ़ा।

भीड़ में हर साँस को कान लग गए।

करतारे ने कपाट पर हाथ दिए-दिए ही ठंडी आवाज़ में कहा–"मेरी कोठरी की ओर मुँह न करना।"

तारेशाह की आवाज़ कड़की–"ओए, भज्ज के जाओ, मेरी बैठक से दारू ले आओ।"

तारेशाह ने क़दम उठाया कोठरी की ओर–एक-दो-तीन...और बाजू बढ़ा एक ही झपट में करतारे की मुंडी पकड़ दीवार से दे मारी।

"ओए चमारा, किसकी शह पर यह खेल खिलाया है?"

तारेशाह कोठरी में दाख़िल हुआ। गुल नीचे की–भुंजे पड़ा गुलज़ारी खून में लथपथ।

तारेशाह ने छाती पर हाथ रखा और गर्दन पर दारू उँडेला। तड़प-तड़प गुलज़ारी की आँखें थिर हो गईं। साँस चलती जान मंजी के लिए आवाज़ दी।

कोठरी को सूँघा। कोने में पड़ी एक जुल्ली। एक दोत्तही। पास ही खून से रँगी कोई पोथी। उठा के देखा–क़िस्सा जुलेखा।

गुलज़ारी को मंजी पर डाला तो किसी ने आगे बढ़ दूध के दो घूँट ओठों को लगाए।

दूध ओठों से निकल खून में रलते-मिलते देख दिवान सुनारा मत्था ज़मीन पर पटकने लगा–"मेरे मालिका, उठा ले मुझे!"

चाचा कर्मदीन का कोठा पिछवाड़े राधू सुनार की खुरलीवाली दीवार से मिलता था। हादसे को समझ-बूझ दाँत-दर्द के बहाने मंजी से उठ खड़ा हुआ और भीड़ को सुनाकर कहा–"मैंने कहा, तूम्बा दे मुझे घी-हल्दी का। टीसें ऐसी उठती हैं कि दाढ़-तले कोई बवा उठ आई हो।"

नीचे खड़े वज़ीरे ने तल्ख़ी से कहा–"चाचा, तूम्बे का ज़िक्र ही काफी नहीं। नीचे उतर आओ। टोका चल गया है।"

राधू सुनार ने चाचा कर्मदीन को बीच में ही रोक लिया।

दोनों बाहर आए तो चाचा कर्मदीन ने झूठी फिक्की टंकार से कहा–"तारेशाह, वक़्त न गँवाओ। मंजी उठवाओ और लड़के को दवा-दारू तक पहुँचाने की करो।"

तारेशाह ने उड़ती-उड़ती नज़र चाचा कर्मदीन और राधू सुनार पर डाली और पास खड़े नजीबे को आवाज़ दी–"नजीबया, चल मेरे साथ।"

तारेशाह ने गली के पिछवाड़े कर्मदीन की ख़ुली ड्योढ़ी में जाकर आवाज़ दी–"कौलाँ भरजाई, भूसेवाली कोठरी से सुनारों का चिराग़ निकाल बाहर कर दे, नहीं तो तेरा घर फुँक जाएगा।"

भूसे के ढेर में छिपा बाली थरथर काँपने लगा। आव देखा न ताव और कोठरी से निकल पौड़ियों पर पाँव रख लिया।

तारेशाह ने पलक झपकते-खूँख़्वारी से लड़के को बाँह से दबोच लिया।

बाली सहम से ऊँचा-ऊँचा रोने लगा।

तारेशाह ने दो-चार हत्थ मार लड़के का मुँह घुमा दिया–"जल्दी से फूट दे, टोहका कहाँ छिपाया है!"

कौलाँ हाथ में चिराग़ ले भूसे के ढेर की ओर बढ़ी और पुचकारकर कहा–"ढूँढ ले पुत्तर, दे दे। पकड़ा दे तारेशाह को।"

एक हाथ के शिकंजे में बाली, दूसरे में टोहका–तारेशाह ने गली में आकर सबकी ऐसी-तैसी कर दी–"अपने-अपने नाम, वल्दियत, ज़ात और साक़न याद कर डालो। यहाँ माजूद लोगों में से कोई भी गवाही देने को मुनकर हुआ तो समझो गया! कानून के मुताबिक़ वह क़त्ल में मददगार समझा जाएगा।"

राधू सुनार ने आवाज़ की भभकी पहचानी और आगे बढ़ हाथ जोड़ दिए–"इस घड़ी तुम शाहवली हो। दो ख़ानदानों को ग़र्क होने से बचा लो।"

तारेशाह ने क़दम आगे बढ़ा लिया–"जहाँ खूनी और खून एक साथ माजूद हों, वहाँ न दोस्तदारी न रिश्तेदारी!"

काशीशाह ने पहुँचते ही गुलज़ारी की नब्ज़ देखी। छाती पर हाथ रखा। फिर छोटी सी डिबिया निकाल चुटकी भरी और हाथ से गुलज़ारी के मुँह में रख फूँक मार दी।

महासिंह के टब्बर ने आ वीराँवाली और दिवान को हाथ दे ढाढस दिया–"ऊपरवाले से भिक्खया माँगो। काशीशाह ने शेर का कलेजा मुँह में फूँका है। सच्चे पातशाह, जातक की रक्खया कर।"

गली का झब्बा कुत्ता मंजी के आसपास घूम-घूम पले-पले राधू के टब्बर पर झपटे-भौंके।

काशीशाह ने वीराँवाली को दिलासा दिया–"भरजाई, रब्ब के घर में कोई कमी नहीं। जाप करती चल। काके की बड़ी हुई है, नहीं तो झब्बू इस घड़ी करलाता होता!"

वीराँवाली छाती पीटने लगी–"अरे, मेरा दूध मारकर रत्त बहाया। पहाड़ोंवाली

देवी खूनी को न छोड़ेगी। कट-कट गिरेंगे अंग उसके।"

"बस, भरजाई, लड़के का भला चाहती है तो जप्प कर। आठ कोस पैंडा है। जाप का एक मणका न छोड़ना। जप्प में बड़ी सत्या।"

राधू सुनार थर-थर काँपने लगा। सहन न कर सका तो दीवार से ढाह दे मारी–"हाय ओ लोको, मुझे आज की रात मसानों में सुला आओ। आँखों से कल का सवेरा न देखूँ। साँइया, औलाद ने ख़ानदान पर खून की बज्ज लगा दी।"

घोड़े पर सवार शाहजी आए तो तारेशाह को कान में कुछ कह, आगे बढ़ गए।

इधर गुलज़ारी की मंजी उठी, उधर तारेशाह ने बाली को साथ ले हवेली की ओर पीठ कर ली। मुड़कर करतारे को आवाज़ दी–"कोठरी में पाँव न रखना।"

छतों-बनेरों से झाँकती ज़नानियाँ हाथ मल-मल कहें–"अन्धेर साँई का! मल्ला सुनार-पुत्र को यह क्या सूझी! न जिर्विं-फसलों का झगड़ा, न घर-कोठे फ़साद! उठा के टोका चला दिया भाई की गर्दन पर!"

दोनों भाई करतारे लुंडे की कोठरी में क़िस्सा गाने बैठे थे। गुलज़ारी ने वर्का थुला कि बाली ने उठा टोहका गर्दन पर वार कर दिया!

शाहनी ने माउंटीवाले बनेरे से चौह की ओर तक्क मारी–"मल्ला ये झींवर रुक क्यों गए कंढे पर!"

चाची को कुछ न दीखे। गूढ़ी अँधेरी रात अमावस की। ऊपर आसमान पर तारे, नीचे अन्धेर घुप्प घेर।

"बच्ची, अँधेरे में कहाँ नज़र आता है।"

छोटी शाहनी ने त्रिकाल सन्ध्या की सीध देखा। अँधेरे में रोशनी टिमटिमाती थी।

"इस चाल से चले तो कब पहुँचेंगे! लड़का ख़बरे आख़ीरी स्वास गिन रहा है।"

चोह का रेता पार कर झींवरों ने क़दम धीमे कर लिए।

बीच-बीच में कुछ हँफे, फिर मंजी कन्धों से उतार ली।

दिवान सुनारे से न रहा गया–"स्वासों में अटकी पड़ी है मेरे बच्चड़े की जान। इस बुरी घड़ी ऐसा वैर न कमाओ। ज़रा त्रिखा पाँव उठाओ।"

गूंग झींवर ने काशीशाह को आवाज़ दी–"शाह साहिब, जातक के मुँह में ज़रा दूध-घी डालो। गरमाहट रहेगी।"

दूध ओठों के बाहर ही ढुलक गया तो राधू सुनार का कलेजा मुँह को आ गया। दिवान का हाथ पकड़ रो-रोकर कहा–"जिस पीर-फ़कीर की मेहर से बच्चड़ा तेरी झोली पड़ा था, उसी के आगे झोली फैला मेरे भ्रत्था।

दिवान ने कुछ कहना चाहा पर गला रुँधया गया। काँपते हाथ लालटेन को थिर किया और फफक-फफककर रो लिया।

शाहजी का घोड़ा साथ आ मिला। घोड़े से उतरे। दोत्तही पट्टू में हाथ डाल गुलज़ारी का पिंडा देखा। गर्म।

"पाँवों में पंख लगा लो जनयो! जान बचा लो लड़के की।"

काशीशाह ने मुँह में अर्क डाला तो लड़का कराह उठा। पागल की तरह दिवान ने काशीशाह के पैर पकड़ लिए–"छोटे शाह, कुछ करो कि रास्ता कट जाए!"

"उस सच्चे पातशाह की मरजी के बिना पत्ता नहीं हिलता। उस दाते से माँगो,

रहम करेगा। बस, पाठ करते रहो।"

बड़े शाह ने दिवान और राधू को कन्धों से छूकर कहा–"थाना-कोतवाली बाद में। पहले सलामतगढ़वाले जर्राह ख़लीफ़ा तक पहुँचने की करो।"

फिर आवाज़ हौली कर दोनों शरीकों के आगे अपना फ़ैसला रख दिया–"दो जिन्दगानियाँ जाएँगी और दोनों टब्बर उजड़ जाएँगे। दोनों घरों में एक-एक पुत्र।"

शाहजी ने राधू को हाथ से सैनत की तो राधू ने पगड़ी उतार भाई के पाँव में रख दी–"मेरी गवाह है साच्चे दरबारवाली। जो भतीजे गुलज़ारी को कुछ हो गया तो अपने हाथों पुत्र को दरिया में बहा आऊँगा।"

शाहजी ने दिवान को हाथ दे अपने पीछे घोड़े पर बिठा लिया। झींवरों को दम्म-दिलासा दिया–"हवा बनकर चल निकलो। गंगू चाचा, अपने पैरों का सदका, इसे मौत से तुम्हीं बक़्शवा सकते हो।"

झींवर घोड़े की रफ्तार दौड़ने लगे:

राम रहीम
हैय्यी शाबाश
रहीम क़रीम
हैय्यी शाबाश
ज़ल्दी-जल्दी
हैय्यी शा...

सर सिलसिलाए अहले जुनूँ भूए मुहम्मद
महराबे इबादत ख़म आब्रूए मुहम्मद।

यादे-इलाही में मिरासियों के कोठे से ज्यों ही डोडे और कोकले के मिले-जुले सुर उठे, गाँववालों ने जान लिया कि ख़ैरों से क़दमों के मेले की तैयारी है।

छोटे शाह माथा टेक कुटिया से लौटे ही थे। सीढ़ियों पर क़दम रखते ही आवाज़ कानों में पड़ी तो रोमांच हो आया।

काशीशाह चारपाई पर बैठे और ध्यान में आँखें मूँद लीं–"सुल्तानुल सुल्तान, तेरी मेहर-क़रम से यह भिनक कानों में!"

डोडे की ताज़ी थर्राती आवाज़ ने काशीशाह के रूह तक को नहला दिया। बोल उनके कलेजे में जा ख़ुबे। आँखों से पानी ढुरकने लगा।

बैठक की ओर जाते शाहजी ने देखा तो भाई के कन्धे पर हाथ रख चेताया–"आज यह सही हो गया कि डोडा और कोकला अच्छी तालीम की राह पर हैं। मौलू का इरादा इस बार इन्हें क़दमों के मेले में पेश करने का है। इन्हें दूध लगा दो। बादाम-मिश्री कुछ फाँक लेंगे तो गला हरा रहेगा। ख़ैरों से आज से रियाज़ शुरू कर रहे हैं।"

शाहजी ने नवाब को आवाज़ दी–"नवाब बादशाह, भंडार से टोपा-भर बादाम ले लड़कों को दे आओ और एक बेला दूध का गड़वा इन्हें पहुँच जाए तो मेले तक गला खुल जाएगा।"

"जी शाह साहिब!"

नवाब ने चोर नज़रों से चरख़ा कातती चाची की ओर देखा और नीचे उतर गया। डोडा, कोकला दूने चाव से गाने में मस्त हो गए:

मेरा पेशवा अल्लाह बक़्श पेशवा
महबूबे-ख़ुदा मामून अल्लाह बक़्श पेशवा

मेरे साहिबे-औलिया अल्लाह बक़्श पेशवा
मेरे पेशवा...

सुन-सुन तन-मन भीज गए। लाली को ले खटोले पर बैठी राबयाँ संग-संग गुनगुनाती रही।

शाहनी ने देखा तो कहा–"क्यों री, दोनों भाइयों ने कैसे मीठे सुर निकाले हैं! नए ही बोल जापते हैं। बाबे बुल्लेशाह की काफ़ी तो नहीं?"

"जी शाहनी! यह काफ़ी बुल्लेशाह की नहीं, गंगोईशाह की है!"

छोटे शाह सुनकर बड़े ख़ुश हुए–"राबयाँ बेटी, तुमने यह कैसे जाना?"

चाची ने बड़ाई की–"पुत्तरजी, राबयाँ ख़ैरों से मसीती बैठी थी। ख़ैर सदके, क़ुरान शरीफ़ के सपारे याद हैं इसे! बता शाहजी को!"

छोटे शाह को लड़की के लिए बड़ा लाड़ उमड़ा–"बल्ली, यह नहीं बताया कि तुम्हें गंगोईशाह की शनाख़्त कैसे हुई!"

"जी, पार से पारसाल चाचा के साथ धौकल गई थी ज़ियारत में। वहीं सुनी थी यह काफ़ी!"

बड़े शाह अपलक राबयाँ को देखते रहे।

मोटा गाढ़ा कप्पड़, ऊपर झलक सुच्चे पट्ट की! वाह क़ुदरते!

शाहजी कुछ कहने को हुए कि अपने ही कान में जैसे दिल ने हौले से कहा–'हीर किस देखी!'

चाची बोली–"बड़ी बड़भागन है री तू! लखनदाता के दरबार भी हो आई! बच्ची, लाली के मुंडन कर पहले तो सीस नवाएँ बाबा फ़रीद के दरबार, फिर चलें सखी सरवर के हजूर!"

शाहजी बोले–"राबीं, जो मन हो तो कुछ सुना!"

शाहजी भाई के साथ मंजी पर बैठ गए तो शाहनी लड़की के पीछे पड़ गई–"राबयाँ बल्ली, शाह मदार की काफ़ी सुना भाइयों को! कल रात गा रही थी न!"

"जी शाहनी!

जिन्दा शाह मदार
अल्लाह किस औंदा देखया
मदार री मदार
नीले घोड़ेवाला
सब्ज दुशालेवाला
बाँकियाँ फ़ौजाँवाला
किस औंदा देखया
नीले घोड़ेवाला!"

घनीली-रसीली आवाज़ राबयाँ की दिल-मन से उठ गले में घुल गई। समय-थान भूल गए।

दोनों भाई उठे तो बारी-बारी राबयाँ के सिर पर हाथ रखे–"जीती रहो! जीती रहो!"

शाहजी ने जैसे दरिया-पार से हाथ लौटाया हो। कुछ कहने को हुए कि लड़की की नज़र में तिरती एक किश्ती झिलमिला गई।

सिर हिलाया–नहीं। और चुपचाप अपनी बैठक की ओर मुड़ गए।

शाहनी दो-चित्ती-सी देखती रही, फिर एकाएक भासा जैसे दरियाओं ने रुख बदले हों और किनारों पर ढह लग गई हो।

राबयाँ ने लाली को पंघूड़े से उठा शाहनी की गोद में लिटा दिया और आप खड़ी-खड़ी खेसियाँ-दोत्तहियाँ तह कर पच्छी में डालने लगी।

लाली का घुँघराला छनकना छनकाते शाहनी ने अचानक राबयाँ की ओर ताका।

हैं री, देख तो लड़की को। क्या ठहराव मदमाता और पनीली-भरीली अँखियाँ!

पूछा–"क्यों री कुड़, कितने दिनों में नहाती हो?"

राबयाँ हँसी–"नित नहाती हूँ शाहनी जी!"

शाहनी छन-भर को रुकी, फिर कहा–"क्यों री, ज़िन्दगानी से होने लगी न!"

राबयाँ कुछ न बोली। जैसे समझी न हो।

"पूछती हूँ, रुत से होने लगी न!"

"जी शाहनी!"

शाहनी ने लड़की को नई चितवन से देखा, फिर कहा–"दिनवार शरीर में मांदगी हो तो भले नागा कर लिया कर।"

सामने से बिन्द्रादई चली आई। राबयाँ को घूरकर बोली–"ख़ुम्बी बनी चटकती रहती है! मैंने कहा जिठानी, शक़्ल-सूरत से लगती है यह अराइयों की धी! अरी सिरमुन्नियाँ, मरदों के सामने ढंग से उठा-बैठा कर!"

राबयाँ खड़ी-खड़ी मुस्कुराती रही।

"ले री, तेरी साथनें आ पहुँची हैं। बाहर-अन्दर जाना हो तो आओ।"

रेशमा-चन्नी के साथ राबयाँ नीचे उतर गई तो बिन्द्रादई बोली–"लो देखो लड़कियों को, कमादों की तरह झट क़द निकाल लेती हैं। दोनों बहनें फ़तेह और राबयाँ क्या ऊँची निकली हैं! राबयाँ तो हमें चंगी, पर री मरगई हुस्ना सोहणी भी तो जी भर कर! मुखड़ा देख ज़नानी की आँख नहीं झपकती, मरदों की कौन कहे! अलिया धियों की शादी-ब्याह कर सुरख़रू हो तो भला!"

"सुनते हैं, करज़ाई होकर बैठा है!"

"बन्दा तुम-सा भी सीधा न हो जिठानी! अलिया अकेला करज़ाई है क्या! अपने शाहों की लिखत में घरों-के-घर बँधे पड़े हैं। शाहूकारा ठहरा! दादे ने लिया तो पौत्र और पड़पौत्र तक चलती रहती है देनदारी।"

"अरी, यह सूद की पंड बड़ी डाढी जट्ट किसानों पर!"

"जिठानिए, जो तंगी-तुर्शी में पैसे-धेले से मदद करे, वह सूद-ब्याज़ का हक़दार तो हो ही गया न!"

"हो भले, पर री, ऐसा भी क्या कि तीन पीढ़ियाँ इनकी लपेटनियों में लिपटी रहें!"

बिन्द्रादई के मुँह से शाहों के बाबे-दादे बोलने लगे–"भोली बातें न कर बहना! खत्रेटे शाह दबदबा न रखें तो ये जट्ट मुसले दमड़ी न लौटाएँ। जिठानी, इनमें हिन्दुआनी सब्र नहीं कि कुछ खाएँ, कुछ बचाएँ। इनकी तो बस आई चलाई। इनकी मत्त-बुद्ध ही ऐसी। ईद पर तम्बा न हुआ तो नंगा।"

चाची महरी को अनोखाँ बीबी याद आ गई–"बच्ची, अनोखाँ का पुत्तर क़ाबुल पहुँच सुच्ची दरियाईवालों के पास जा लगा। रुपयों की मूठ मिलने लगी। यहाँ अनोखाँ का वही पीहन, वही चक्की। मैं एक दिन कह बैठी–'हैं री अनोखाँ बीबी, पुत्र को एक रुक्का

भेज। चंगा खट्ट कमा रहा है दिसावर में। कुछ घर के लिए भी बचा ले।' "'माहिया, पुत्र मेरा अपनी तासीर तबअ के वश। जब तक पैसा आएगा, दीन-मुहम्मदी रज्ज के खाएगा। मौज करेगा। न होगा तो रब्ब का नाम ले सब्र कर लेगा।'

"मैंने घुड़की दी–'अनोखाँ, छोड़ ये बातें। छोटा-मोटा छाप-छल्ला घड़वा ले। किसी वक़्त काम आएगा।'

"अनोखी हँसने लगी–'जट्ट पुत्तर पैसों को भी दाने समझता है। कोई पराच्छा-अरोड़ा तो नहीं चाची!'"

शाहनी बोली–"अनोखाँ ने खरी कही। इनके पराच्छे और अपने अरोड़ों में कोई लम्बा-चौड़ा फ़र्क नहीं। दोनों सुई के नक्के पर चलते हैं। न ख़र्चना, न खाना। बस जोड़ना।"

"हैं री, जोड़ के किस हँडाया! जो खा-बरत जाओ, सो ही अपना! आँखें मीटे पीछे किस देखा!"

"धियो, जो कोई कहे धर्म का चोला बदलने से मनुक्ख की तासीर बदल जाती है सो झूठ। खोजे-पराच्छे दीन क़बूल करने से पहले अरोड़े-कराड़ ही थे न!"

"बराबर थे। गक्खड़ों ने भी दीन क़बूल कर लिया, पर ब्याह-शादी में वही हमारेवाले लावाँ-फेरे और ख़ारा-बिठाई। और सुन, इनके ढंग-कारजों मे काज़ी-ब्राम्हण दोनों मौजूद रहते हैं। सुन्नत मुसलमानी को छोड़कर वही झंड-मुंडन, तम्बोल-माइयाँ, वही वटना न्योंदरा, वही जंज, वही सेहरे सरबाले।"

"पर री, यह अल्ल मुसलमान क्यों हुई! क्यों घुटने टेके! हक़ीक़त बच्चड़ा भी तो मरा न अपने धर्म की ख़ातिर! आज तक दिलों में पुजता है!"

"सुनने में आता है, स्यालकोटिए पुरियों का पुत्र था। मदरसे में मौलवी से कुछ कहा-सुनी हो गई। काज़ियों ने क़ैद करवा लाहौर में मुक़दमा चलवा दिया। इनको जुल्म कौन सिवाये! बच्चड़े के पीछे पड़ गए। मौत की सज़ा सुना दी।"

"मल्ला जीते-जी धर्म भ्रष्ट कौन करना चाहता है! पर यह तो, री, अपनी धरती पंचनद की। पुण्य और पुज्ज दोनों एक साथ। लहरें-बहरें देख अपनी जिवियों और दरियाओं की नित नए गाज़ी और नित नए लश्कर। कोई आगे बढ़-बढ़ लड़े, खेत हो गए। मरने से थिड़के तो घुटने टेक दिए। दीन क़बूल कर लिया। पिंडों-के-पिंड, टप्पों-के-टप्पों ने क़लमे पढ़ डाले। बस निखड़ गए अपने वंश-क़बीलों से!"

"चाची, सच पूछो तो अंग्रेज़ के राज की सौ बरक़तें। लोकों को सुख का साँस तो आया। ग़र्कजाने आए-दिन के हो-हल्ले और ख़ून-ख़राबे तो ख़त्म हुए!"

"बहनू, वह मोटे मुँहवाली मलका, देखती तो हो न रुपयों पर ठप्पा। वही थी अंग्रेज़ों की वड्डी-वड्डेरी। उसी के टब्बर का राजपाट है।"

"सुनते हैं, भाँवे मलका थी मुल्क़ की, पर गबरू उसके हुक़्म के हेठ था। यह मुच्छड़ शाह उसी का अंश है।"

"हो मलका महारानी! बहन मेरी, मर्द का साया तो उसके लिए भी लाज़िम।"

चाची ने कोई आवाज़ सुनी हो जैसे–"बिन्द्रादइए, गुरुदास रोया है। क्या सबब! मीठा ढोढा तो नहीं माँग रहा!"

"न, कान की पीड़ से रो-रो जाता है।"

चाची ने झिड़का–"मूरखे, रुलाने से ठीक हो जाएगा क्या! तेल में लहसुन जलाकर डाल। चैन पड़ेगा। न फ़रक पड़ा तो लड़कीवाली सजरी माँ के थन से दूध की

धार मरवा ला। उच्ची वंडवाली आराकशों की प्यारी कल ही चालीसवाँ नहाई है।"

जट्टों राज नाहीं
मुट्ठों काज नाहीं
घोड़े बिन साज नाहीं
डाची बिन कार नाहीं।

नमाज़ वेला खट्टेवाले खू की गाद्दी पर बैठे हाजीशाह ने आवाज़ पास आती जान आँखों पर से खेस हटाया।

कौन हैं जो सुर मिलाए इधर चले आ रहे हैं?

हूँ! अपना सिकन्दरा और गुलाम नबी। पूछो अहमक़ों से सवेरे-सवेरे हमें क्या बताने चले कि जट्टों से राज नहीं! यह कोई भेदवाली बात है! अपना तो राज ही जिवियाँ खेत! ओ किसी ने यहाँ से छलाँग मारी तो पुलिस-फौज़ में पग्ग पेटी!

ख़ुले गले हाँक मारी–"क्यों सिकन्दरे-आज़म, आज सुबह-सवेरे कैसे! यह कोई दंडी-संन्यासी का थान नहीं, जहाँ शाह सिकन्दर आके खड़ा हो ही जाए!"

दोनों लड़के हँसने लगे। सिकन्दर ने दलाँग भरी और नज़दीक होकर कहा–"सलाम करता हूँ जी! खेत से निकले तो मन में आया, चलो हैदरशाह को ही मिलते जाएँ। ख़ैरों से अभी कुछ दिन तो रहेंगे न!"

"यार तुम्हारा कल ही तैयार है जाने को! काम-धन्धा छोड़कर आया है।"

हाजीशाह ने छोटे भाई को आवाज़ दी–"हैदरशाह, ज़रा खू की ओर आना। तेरे लँगोटिए खड़े हैं।"

चारख़ाने तहबन्द पर पिंड़ियोंवाला खेस! हैदरशाह ने बाहर आते ही सिकन्दरे को बाँहों में भर ऊपर उठा लिया।

"ओए रानीख़ाँ के, तुझे रात-भर नींद नहीं आई?"

"न यारा, नींद कैसे आनी थी! दिल तो लगा हुआ था न तेरी यारनी में!"

फिर हाजीशाह को सुनाने के लिए कहा–"ओए पिंड दादनख़ाँ के दरोग़ेया, सुनते हैं, तुझे डंगरों की जागीर मिल गई है! कुछ फ़ैज-फ़ायदा हमें भी करवा छोड़!"

हैदरशाह खू से दूर ज़रा मुँडेर से नीचे उतर गया। आवाज़ हौली कर पूछा–"ओ बाशे, क्या नियतें हैं!"

"अपनी समझ में तो एक ही बात आई है कि डाची बिन कार नहीं! यारा, एक रात को मिल जाए साँडनी तो काम निबटा घरों को परतनेवाले बनें।"

"अपना हिस्सा?"

"चौथाई–न कम, न ज़्यादा! है मंज़ूर?"

"शर्त एक है!"

"यारा, वह भी साफ़ कर ले!"

"मुँह अँधेरे मोमदीपुरवाली मसीत के पीछे पहुँच जाए मेरी डाची।"

"हो गया क़रार।"

"बाक़ी हिस्सा माल?"

"बराबर चार!"

हैदर ने पीठ मोड़ी और गाद्दी पर बैठे अपने भाई को सुनाकर कहा–"सिकन्दरे,

अगर किल्ले से डाची खोली तो वापस किल्ले बाँध जाना!"

"हला!"

दोनों मन्सूबिए खेत से लौटते लटबौरियाँ करने लगे।

शिरींहवाले खू पर मुटियारों की किलकारियाँ-नटखनियाँ सुन पड़ती थीं।

दोनों के तन-बदनों को धूप लग गई।

ऊपरी वंड की नई ब्याहेली हबीबो बिन कप्पड़ औलू में बैठी मुँह पर छींटे मारती थी।

रेशमा ने दुपट्टी से छाती ढपी थी।

"हट री हबीबो, ज़रा आगे को हो!"

हबीबो शरारत से छींटे मारने लगी तो प्यारी ने पीछे से गुत्तड़ी खींच ली–"अरी, बड़ी ख़ुमानी बनी फिरती है! क्या राँझड़े ने लगा दिया किनारे!"

"फिटे मुँह री, कुछ शर्म कर।"

"सच-सच कह रही, कान का लोलक कहाँ गिरा आई!"

"हाय री, मैं मर गई!" हबीबो औलू से ठीकरियाँ निकाल-निकाल देखे–"ख़ाला न छोड़ेगी!"

शीरीं ठीकरी से एड़ियाँ रगड़ती थी। हँसकर कहा–"अरी, तेरे हुल्ले हुल्लेरे! भूसेवाली कोठरी में तो नहीं गिरा दिया।"

रेशमा प्यारी हँस-हँस दोहरी हुई–"हाय री, कख़ न जाए तेरा! सारा घर-कोठा छोड़कर कुल्लेलें तबेले में!"

हबीबा ने बाँह बढ़ा काँटों की बाढ़ से झग्गा उठाया तो रेशमा को पानी से ऊपर का पिंडा दिख गया–"सहेलिए, ये पींगे प्यार की! निशानियाँ!"

हबीबा ने झग्गा डाला। औलू से बाहर हो सूथन डाली। गीले बालों को माथे से समेट सिर पर दुपट्टी ओढ़ ली–"तुम्हें भी देर नहीं। आप ही पता पा जाओगी। जिस दिन ढग्गा..."

"दफ़ा हो री! प्यार-मुहब्बत न हुए कि ज़मीन की गाही-वाही हो गई!" हबीबा खिल-खिल हँसने लगी–"वत्तर लगा। हल चला। ज़मीन वाही गई। पट्ट फिरा। पोली ज़मीन बीज पड़ा..."

नूरी ने हबीबा का लटकता-ठुमकता परांदा घुमा दिया–"क्यों री, पड़ गया तेरी क्यारी में!"

सुनकर ग़ुलाम नबी और सिकन्दरे का मुँह-दिल शीरे से भर गया।

सिकन्दरे ने झुझका मार ग़ुलाम से कहा–"यारा, कल लपेटम-समेटम न करनी होती हो इन बकरियों को..."

"जट्टोंवाली बात! यह पली-पलाई गऊओं की वग्ग तुम्हें बकरियों की नज़र आती है! आँखें खोल के देख ख़लीफ़ा–बकरियाँ नहीं, जट्टियाँ हैं जट्टियाँ!"

"हला! बुज़ुर्ग कह गए हैं न–जट्टियाँ ज्यों भैंसों की कट्टियाँ!"

सिकन्दरे ने ऊँची आवाज हीर के सुर उठा लिए तो भोर की ताज़ी हवाओं में रौनक़ें लहराने लगीं:

तेरा हुस्न गुलज़ार बहार बनया
अज हार शृंगार सब भाँवदा री
अज ध्यान तेरा आसमान ऊपर

तुझे आदमी नज़र न आँवदा री।

हँसती-हँसाती, एक-दूसरे पर छींटे मारती लड़कियाँ खूह से उठ धाईं।

“हैं री, सिकन्दरा, ग़र्कजाना, सुबह-सुबह मस्तानड़ियों में। लुच्च ने हीर भी उठाई तो यहाँ से!”

फिर शीरो को गल-बाँही दे कहा–“बरख़ुरदार से हारा है। आवाज़ सुन इसकी! तड़प! तेरे लिए है री शीरीं! तू घर बसा बैठी!”

बलोच से ली हुई खरी हींग के तड़के तांबियों में गर्म हो-हो मुश्कें छोड़ ही रहे थे कि पिंड में अनहोनी उड़ गई।

अराइयों की फ़तेह घर नहीं पहुँची।

“हाय रे, कफ़न पड़े ऐसी जवानी पर! सरगी बेला की घर से गई-गई लड़की अभी तक नहीं लौटी!”

“मल्ला किसी ने वैर तो नहीं कमाया। मार-काट मुटियार को खेत में डाल दिया हो!”

“छोड़ री, पूरे जोबन पर लड़की। सारा जहान वजूद में समा जाए! उसे काचू दिखाने से पहले कोई ज़ुल्मी मौज-मज़ा क्यों न कर लेगा!”

गोमा ने सुना तो नाम लेने की पहल कर ली–“मेरे जाने मुगली घुट्टी बेचता वह बलोच ग़र्कजाना भगा ले गया लड़की को। हाय री, सुरमेवाली उसकी अँखियाँ फणयारे मारती थीं फणयारे! कुर्ती मखमली छाती पर ऐसी सजी-बनी कि कच्ची कवारियाँ फ़िदा हो-हो जाएँ।”

लुहारों की हुसैना बोली–“रात को बलोच दारे में सोया था। नमाज़ बेला ऊँट और ऊँट का मालिक़ दोनों ग़ायब! कहने में आता है बलोचों की लातें लोहे की! इस घड़ी यहाँ तो दूजी घड़ी वहाँ।”

“रब्बा की रब्ब जाने। किसी ने आँखों से तो देखा नहीं जाते।”

‘अन्धेर साँईं का। खबरे किसका परछावाँ पड़ा अपने गाँव पर कि जवान-जहान मुटियार माँ-बाप के मुँह कालिख पोतने लगीं!”

मोहरे की बेबे बुड़बुड़ाने लगी–“मत्त मारी गई। और क्या, बुद्ध उल्टी होते क्या देर लगती है! ग़लती अलिये की। थम्म जितनी लड़की–उसका लड़ बाँध किसी से। भरी-भराई चाटियाँ डुल-डुल न पड़ेंगी? मुँह क्यों न मार जाएगा कोई!”

शाहनी ने तन्दूर पर से छोटी सी आवाज़ दी–“बुरा हुआ बेबे, बहुत बुरा हुआ। पर जैसे लाज-इज़्ज़त-पत्त अपनी, वैसी अलिये की!”

“सौंह गुरुओं की, धिए, मैं भी अलिये के लिए ही झुरती हूँ। पिछली उम्रे बन्दा इन धक्कों को सहार सकता है! घरवाली पहले ही मर-खप गई थी। इन लूठी लड़कियों के मारे बाप ने घर न बसाया।”

“बेबे, बुरी घड़ी का क्या पता! कब सिर पर आ पड़े!”

त्रिकालाँ कचहरी से लौट शाहजी ने सुना तो अलिये को बुला भेजा।

अलिये ने हवेली की दहलीज़ लाँघी तो उसका ऊँचा क़द हाथ-भर छोटा हो गया।

सिर की पगड़ी निरी बेजान।

भर्राई आवाज़ में कहा–"इस बाप का तो जीते-जी मरण हो गया!"

"बैठो। हौसला रखो। ऐसी घड़ी हिम्मत हारने से कुछ नहीं बनना। हाँ, खोलकर कहो, तुम्हें किस पर शक़ है?"

"शाहजी, सबसे हँस-खेलकर बोलती है! किसका नाम लूँ। छोटी राबयाँ इससे बिलकुल उल्ट।"

छोटे शाह भी आ शामिल हुए।

"काशीराम, नासमझ अगर दरिया पार करके गए हैं तो या अम्बड़याल या सम्बड़याल। जो गुजरात पहुँच सके हैं तो रेलगड्डी से लालामूसा!"

"लगता नहीं। दिन-दहाड़े सौ देखने-पहचाननेवाले। रहा बलोच का तो इतनी बेख़ौफ़ी से ग़ैर इलाक़े में लड़की अगवाह कर ले–नामुमकिन। मेरा कहना यह है कि ढिंढोरा पीटने से पहले अपना घर-दर क्यों न देख लें!"

सुनकर अलिये का दिल धड़कने लगा।

छोटे शाह ने बड़े भाई की ओर देखा और सुथरी आवाज़ में सब शक़-शुबह साफ कर दिए–"एक दिन त्रिकालाँ पड़े फ़तेह को दरिया किनारे धाड़ीवालियों के शेरे के साथ देखा था। दोनों दरिया से नहाकर निकले थे।"

अलिये ने साँस रोक पूछा–"संगो-संग थे क्या?"

काशीशाह ने सिर हिलाया–"फ़तेह खेत से निकली और दौड़ दरिया में जा डुबकी लगाई। फिर देखता क्या हूँ–शेरा नहाकर निकला और गले से सुहावने सुर उठा लिए! लड़के का गला बहुत मीठा। मैं खड़ा-खड़ा सुनता रहा।"

उस शाम छोटे शाह भागोवाल से लौटे थे। सूरज आसमानी नीलाहटों में सरकता-सरकता धरती की पगडंडियों पर आ ढुका था।

दरिया किनारे से घोड़ा ग्राँ की तरफ़ मोड़ा ही था कि एकाएक चरी के खेत में से खिलखिलाहट सुन ठिठक गए। दूर से देखा–अलिये की बड़ी धी कीकरों के झुंड में से निकली और हिरनी की तरह रेती की ओर भाग चली। कुरता-ओढ़नी उतार रेत पर फेंके और तारियाँ मारती धार के बीच चली गई।

'आगे न जाओ, भँवर पड़ता है'–काशीशाह आवाज़ देना चाहते थे कि दूसरी परछाईं देख चौकन्ने हो गए।

दरिया से निकल शेरा रेती पर आ खड़ा हुआ। तहमद कस अँगड़ाई ली। फिर बाँहें फैला जैसे दरिया को पुकारा हो। फिर पाक़-साफ़ आवाज़ में सुर उठा लिए:

चढ़िये डोली प्रेम की दिल धड़के मेरा
हाजी मक्के हज्ज करन मैं मुख देखूँ तेरा।

घोड़े पर बैठे-बैठे ही छोटे शाह यादे-इलाही में खो गए। ऐसा ध्यान लगा कि आँखों के आगे गुरुपीर आ खड़े हुए!

होश-सुरत लौटे तो आसमान पर तारे झिलमिलाते थे और कोर पर चाँद का आधा टुकड़ा नज़ारा बन के सजा था। सामने रब्बी बक़्शश-सा बहता दरिया किनारों से जुड़ा ज़िन्दगी की लीक-सा लगता था।

उस एक पल में काशीशाह ने वहाँ खड़े-खड़े ही उस अगली दरगाह का दर देख

लिया जहाँ हर दर्दवाले को अपने महबूबे-ख़ुदा से मिल जाना है।

शाहजी उठ खड़े हुए।

"अलिये, रब्ब तव्वक़ली फ़तेह वहीं मिल जाती है तो धाड़ीवालियों के फ़रजन्द से साक-सम्बन्ध बन जाता है न!"

"बनता क्यों नहीं शाह साहिब! धी के नसीब चंगे हों तो!"

शाहजी छोटे भाई की ओर मुड़े–"मसीत से मौलवी को साथ ले चलें। और मौलादादजी या फ़तेहअली जी को भी।"

अलिये का दिल रह-रह घिरने लगा–परवरदिग़ार, इस गरीब को यह घड़ी देखनी बदी थी!

मौलवीजी साथ चले तो दिल-ही-दिल शाहों की इस तरकीब पर मुस्कुराते रहे। भगानेवाला जट्ट हो या बलोच, धी अलिये की रावी-पार।

घोड़े गाँव से निकल दरिया किनारे उतरे। टालियों की गोट्ठ से शाहजी ने बेले की ओर नज़र दौड़ाई तो पिल्छ के बूटों में आग की ललाई नज़र आई!

ख़ुले आसमान तले या कंजर भेड़कुट्ट या नए-नवेले आशिक़।

शाहजी का अनुमान ठीक निकला।

पिल्छों के झुरमुट में दोनों को एक-दूसरे से लिपटे, नींद में बेख़बर देखा तो बुज़र्गवार इन्तज़ार करने लगे और आपस में आँख चुराए रहे।

शेरे ने जैसे नींद में ही कोई आहट सुनी। आँखें खोल इधर-उधर देखा, फिर फ़तेह को किनख़ाबी नींद से जगाया–"ऐ री, फ़तेह, सुन। देख ऊपर आसमान पर कुतुब तारे के पास एक तरेर। मैंने कहा, पैग़म्बर साहिब जब ख़ुदा से मुलाक़ात करने गए तो दौड़ते-भागते गाज़ी के पैरों से धूल उड़ने लगी। यही है वह दूधिया धार।"

कसमसाकर फ़तेह ने बाँहें फैलाईं और शेरे के बाजू पर नाखून भर दिया–"हट परे, सोने दे।"

शेरे ने अपनी ओर खींच लिया।

फिर वही भारों पर पड़ने लगी।

सयानों ने अपनी इज़्ज़त-पत्त रखने को आवाज़ दे डाली–"उठ खड़ी हो जाओ। उठो धिये फ़तह, इतनी नासमझी, इतनी बेग़ैरती..."

"हाय, मैं मर गई! हाय अल्लाह!"

दोनों हड़बड़ा के उठ बैठे।

फ़तेह ने शेरे का हाथ पकड़ लिया–"तुम्हें सौंह है अल्लाह पाक़ की जो तू कौल से मुड़ा। तुम्हें मार डालूँगी और आप दरिया में डूब मरूँगी!"

शाहजी ने साफ़ सख़्त आवाज़ में कहा–"धी होकर घर की आबरू का ध्यान न किया। इस क़सूर की सज़ा बड़ी डाढी। पर टाबरो, तक़दीर तुम्हें इनाम देने को है। शेरे, कल तुम दोनों का निक़ाह पढ़ा दिया जाए–है मंजूर?"

शेरे ने सिर झुकाया–"जी शाह साहिब!"

"मौलवीजी, शेरे के साथ जाइए और इसके घर-टब्बर को समझा दीजिए कि नौशा के लिए ऐसा फ़रमान क्यों निकला!"

फिर शेरे की ओर मुड़कर कहा–"इस कोजी कुरूप बेअक़्ली की पीठ ही पीठ है।

पर बरखुरदारो, तुम्हें मुँह-माथा रखने की रियायत मिल रही है। अपने भाग सराहो!”

अलिये का गला भर आया। शेरे के कन्धे पर हाथ रखकर कहा–“करार से न हटना पुत्तरजी! इस मुँह से क्या लानत-मलामत करूँ! बेटी का बाप हूँ...”

शेरे ने हाथ उठा अलिये को सलाम किया तो फ़तेह कुड़ी ओढ़नी में मुँह छिपा रोने लगी।

अलिये ने झिड़का–“धिए, अब क्या रोना! पोटली जहान पर खुल गई! रब्ब से माँग जो शाहजी ने बनत बनाई है, वह सज-फल जाए। नहीं तो धिए, काम तो ऐसा कि टोटे कर दोनों के दरिया में डाल देते!”

अगली शाम अलिये की बड़ी धी फ़तेह की जंज आ ढुकी।

ज़नानियों ने हेक निकाली:

तेरी फूफी का है घर
रे निशंक वेहड़े वड़
तुझे किसी का नहीं डर
आ ढुक रे!

बेबे करमो ने सिठनी उठा ली:

चाचा न पढ़या तेरा दादा न पढ़या
पुत्तर हराम का मसीती न चढ़ाया
यह बात बनती नहीं!

“बेबे, इसके चाचे-दादे को क्या, इसके बाप को सिठनी-गाली दे! क्या बसमा लगा के जवानी दिखाने आया है! पुत्तर अपने का भाई बनके जंजे चढ़ा है!”

“बब्ब अपने ही चंगे रे
शेर अली लाल चीरा
जो चढ़ते हैं जंजे रे
शेर अली लाल चीरा।”

निकाह पढ़ा गया तो सहेलियों-साथनों को ठेल फ़तेह कुड़ी को देखने पिंड टूट पड़ा।

लड़का ख़ैरों से हुस्न चिराग़। लड़की मरजानी पर रूप सवाया।

रसूली ने पास जा चुटकी ली–“क्यों री फ़तेह, रब्ब को हाज़िर-नाज़िर जानकर कह, क्या सचमुच में आज ही दुलहनियाँ बनी है?”

सुनकर शेर अली का गंधमी चेहरा सुर्ख हो गया।

फ़तेह ने हँस-हँस गूढ़ी रची मेहँदीवाले हाथों में मुँह छिपा लिया।

“अरी, छोड़ना न इस ढग्गे को। क़ाबू करके रखना, नहीं तो पले-पले दरिया में तारियाँ मारेगा!”

शेर अली मियाँ गबरू बना कुड़ियों-सहेलियों से छेड़छाड़ करने लगा!

कुड़ियाँ ऊँचा-ऊँचा गाने लगीं:

आर बेला पार बेला
विच्च बाबुल घेरया
झल्लारे देती जंज आई

सँभल बाबुल मेरया।
आशिक़ों के कौल पक्के
क़ाज़ी पल्लू फेरया!

पास खड़ी राबयाँ कभी साध सद्दरों से टुक बहन को देखे, कभी लाड़े शेर अली को।

रेशमा ने पास आ गलबाँही दी और गाल पर टनोका लगाया–"क्यों री गुलबदनो, ज़रा अपनी ओर भी देख! फ़तेह ने तो लगा ली तारी बेले में। देखें, तू लोचन बीबी कहाँ डुबकी मारती है!"

नूरी ने ओढ़नी खींची–"अपनी आँखों में देख–एक नहीं, दो-दो चनाब तेरी अँखियों में लिशकारे मारते हैं!"

"हट, छोड़ मुझे!"

नूरी न मुड़ी। सबको सुनाकर कहा–"अरी बता भी दे। तेरी बेड़ी किन पत्तनों पर उतरेगी!"

अल्लाह के फ़ज़ल से खेतों में हल चले, सुहागे फिरे और नई फ़सल के बीज बो दिए गए।

पिंड के जट्ट-जट्टाटर फ़ारिग हो मजलिस में आ जुटे।

इधर दिल-मन सुरख़रू, उधर गंधारी तम्बाकू के सरूरी सूटे।

रब्ब रसूल की रहमतें।

"कर्मइलाहीजी, ख़ैरों से बड़े बेफिक्र नज़र आते हो!"

"दीन मुहम्मद, रब्ब की मेहर से खेत सज-बन गए हों तो बन्दा ज़रा सुरखरू हो मौज-मज़ा कर लेता है!"

"बराबर बादशाहो, जट्ट किसान के लिए तो यह बादशाही वक़्त हुआ।"

मौलादादजी ने ख़ुलासा किया–"क्यों नहीं, अल्लाह ताला ने इन्सान को मेहनत-मजूरी लगाई तो इसीलिए न कि बरस-छमाही बन्दा मिठ-लूणे हलकोरे ले सके।"

मुंशी इल्मदीनजी को बेमाँगी मिल गई–"पुराने ज़माने में भी बादशाहों का यही दस्तूर रहा। आठ महीने मुल्की और माली कारोबार के वास्ते बाहर जाते और चार महीने मौसम के क़िला-ए-मुबारक़ में आराम फ़रमाते।"

नजीबे को हँसी आ गई–"मुंशीजी, कहाँ जट्ट किसान और कहाँ बादशाह-शहंशाह! पूछे कोई आपसे कि आपने इन दोनों की जोटा-जोड़ी मिलाई तो कैसी मिलाई!"

शाहजी बोले–"धन-दौलत बुरे नहीं! न बुरी इनकी वाजिब रोशनाइयाँ। पैसा-माया तो दुनिया की ताकत हुए। क्यों जहाँदादख़ाँ जी!"

"बिलकुल बादशाहो!"

शाहजी नजीबे की ओर मुड़े–"बात सिर्फ़ इतनी ही नहीं! रब्ब ने हर इन्सान को छोटी-मोटी बादशाहत तो लगा ही रखी है! मनुक्ख साबुत-सालम रहे; हाथ-पाँव चलते रहें, छोटे-बड़े काम सरते रहें, वह बादशाह का बादशाह!"

कक्कूख़ाँ को सूझ गई। हँसकर कहा–"शाहजी, मालूम होता है, रब्ब रसूल ने जट्ट किसान की मदद के लिए ही शाह-शाहूकार भी बना छोड़े! ज़रूरत पड़े तो सौ-हज़ार लेकर बन्दा काम चला ले!"

हुक्के गुड़गुड़ाते रहे तो काशीशाह बोले–"ऊपरवाले की निगाह में कोई दुजैगी फ़र्क नहीं। राजा-रंक दोनों के दो हाथ, दो पाँव। एक मुँह-माथा, एक धड़!"

जहाँदादजी ने बड़ी सयानफ़ से बात बढ़ाई–"रब्ब आपका भला करे, पातशाह बाबर से लेकर शाह अब्दाली तक वही सबके दो हाथ, दो पैर।"

"बादशाहो, सवाई चीज़ तो दिल की बहादुरी और शमशीर ही हुई न!"

"वाह नजीबेया, डाढी अक़्ल की बात की है! कोई जिन्न-भूत तो तुम्हें यह पट्टियाँ नहीं पढ़ा रहा।"

अनपढ़ नजीबे की तारीफ़ इल्मदीनजी को रास न आई! एक और छलाँग मार ली–"पैग़म्बर साहिब ने फ़रमाया है कि जन्नत की कुंजी शमशीर है, शमशीर!"

ताया मैयासिंह हँसने लगे–"पुत्तर मुंशिया, तेरा भी जवाब नहीं। शमशीर का कम्म शमशीर ने और हल-फाले का कम्म हल-फाले ने करना।"

गंडासिंह बीच में आ कूदे–"मुल्क़ जीतने हों तो शमशीरें, पर अन्न-दाने उगाने को तो हाथ की मेहनत ही काम आएगी!"

चौधरी फ़तेहअलीजी जहाँदादजी की ओर देखने लगे–"बादशाहो, शमशीर का खड़का-धड़का और कामयाबियाँ तो जगत-सिद्ध, पर हौसला पहले और हथियार पीछे!"

शाहजी ने सूत्र पकड़ लिया–"अगर ऐसा न होता तो चौदह बरस की उम्र में बाबर हिन्दुस्तान पर चढ़ाई करने के ख़्वाब देखता! अकबर ने तेरह साल की उम्र में हीमू बक्काल को मौत के घाट उतार दिया।"

"शाहजी, अपने रणजीतसिंह महाराज कौन से कम थे!"

मुंशी इल्मदीनजी ने झट घेरा डाल लिया–"हीमू रिवाड़ी का बक्काल था। अपनी अक़्ल और दानिशमन्दी से बड़ा ऊपर पहुँचा, बड़े-बड़े उपद्रवियों को दबाया-हराया। आख़िर दिल में आ गई कि हिन्दुस्तान का सम्राट-बादशाह मैं भी बन सकता हूँ! बस जी, ऐलान कर दिया और नाम अपने के साथ बिक्रमाजीती लगा ली और अपने नाम के सिक्के घड़वा दिए! उधर बहरामख़ाँ अकबर का सलाहकार। बस, टक्कर करवा दी ऐसी कि बिक्रमाजीत और बिक्रमाजीती दोनों अकबरी तलवार के हेठ चित-चुप्प!"

जहाँदादजी बोले–"बादशाहो, लड़ाई का खेल तो ऐसा कि जो पहल कर ले, वही बाज़ी जीत ले!"

गुरुदित्तसिंह बोले–"महाराजा रणजीतसिंह की घुड़चढ़ी बारह साल की उमर में मैदाने-जंग में हो गई। जैसे बाबर-अकबर, वैसे रणजीतसिंह!"

शाहजी हँसने लगे–"बात वाजिब भी हो तो बन्दा पहले तोले। ज़नानियोंवाली तू-तू, मैं-मैं तो न हो जाए कि बहना बाबर मेरा, बिक्रमाजीत तेरा! या तुर्क़ तेरा और मुग़ल मेरा।"

"वाह शाह साहिब, कमाल आपकी अक़्लों के असल में अरबी-फ़ारसी पढ़ जाए बन्दा तो सयानफ़ पर तो धार चढ़ जाती है न!"

फ़तेहअलीजी बोले–"मौलादाद कहते तो ठीक हैं। मदरसा स्यालकोट का मामूली नहीं! सुनने में आता है बड़े डंके इस मदरसे के!"

"चौधरीजी, मदरसा यह जहाँगीर के वक़्तों से मशहूर है। इसे चलानेवाले उस्ताद मियाँ अहमद और मियाँ सादिक बड़े आलम-फाज़िल हो गुज़रे हैं! नाम उनका फ़ारस-यूनान तक पहुँचा हुआ था। सबब समझो कि हम दोनों भाइयों ने वहीं तख्ती लिखनी

शुरू की और वहीं इमला पक्की की!"

शाहजी मदरसे जा पहुँचे–"फ़तेहअलीजी, मार तो हम नालायक़ों को कई बार पड़ी, पर एक बार तो हाथों पर लासें पड़ गईं। हुआ यह कि उस्तादजी ने हुक़्म दिया–पढ़ो पंडनामा बेमानी। हमने शुरू कर दिया बामानी! भुलेखा समझो या लापरवाही, बैंतों हाथ पर छम्ब उभर आए।"

"लो जी, खुशी मुहम्मदजी आन पहुँचे हैं। ख़ैरों से शहर से लौटे हैं!"

सबको साहब-सलामत बुलाकर ख़ुशी मुहम्मद रौब-दाब से मंजी पर बैठे, तो देखनेवाले समझ गए कि मियाँ साहिब की गुत्थी में कोई नई-ताज़ी ज़रूर है!

फ़कीरे को सब्र कहाँ–"क्या गल्ल-बात है चाचा! लगता है, पल्ले आपके कोई सवाई-ड्योढ़ी ज़रूर है!"

"उच्चर डालो ख़ुशी मुहम्मद जी! बेसब्री में तो इन्तजार भी नहीं होता!"

ख़ुशी मुहम्मद के चेहरे पर एक साथ सोच और रुआब उतर आया–"क्या बताएँ, बात कुछ चंगी नहीं। वही अपने थूथा पिंडवाले नवाज़ख़ान–रक़ाबों में पैर फँस गए और जान से गए। घोड़ा नया था, ले दौड़ा!"

शाहजी परेशान हुए–"पिछले हफ़्ते कचहरी में टाकरा हुआ। तारीख़ लगी हुई थी उनकी!"

"मौत आ गई समझो। चूकनावाली के अल्लाह रक्खा ख़ान से घोड़ा ख़रीदा था! रक़ाबों में पैर फँसे रह गए और घोड़े के साथ-साथ टिब्बों पर लटकते-पटकते रहे। लहू-लोहान!"

"इत्तफ़ाक, नहीं तो नवाज़ख़ाँ चंगे सवारों में से थे!"

"बादशाहो, लोहार के सूबेदार मीर मन्नू का ख़ात्मा भी इसी तरह हुआ।"

"ग़ालिबन इसी हादसे के बाद मुग़लानी ने सूबा लाहौर की बागडोर सँभाली! मुग़लमानी बेग़म शाह दुर्रानी के मुँह लगी हुई थी! छनाला कभी अफ़गानों को नचाए-रिझाए, कभी मुग़लों को गले लगाए।"

जहाँदादजी को जाने क्या याद आ गया। बड़ी देर हँसते रहे। फिर हुक्के का कश लेकर कहा–"शाह साहिब, घाटेवाली बात तो असल में यह हुई कि ज़नानी को ख़ुदा की तरफ़ से कस्तूरी लगी हुई है। बन्दा आगे बढ़-बढ़ आप उसके पास ढुकता है।"

शाहजी के साथ-साथ सारी मजलिस दिल खोल के हँसी–"थी न कुछ वजह कि शाह दुर्रानी ने ख़ुश होकर बेग़म को सुल्तान मिर्ज़ा का ख़िताब दे डाला था।"

मुंशी इल्मदीद छिड़ गए–"कुछ भी कहें, शाह दुर्रानी बड़ा ज़बरजंग शहंशाह हो गुजरा है। बादशाहो, एक बार अब्दाली शाह हिन्दोस्तान को डरा-धमका कन्धार को लौटने लगा तो दरिया चनाब में कांगें आ गईं। हज़ाराँ घोड़े-सिपाही बीच धार के बह गए!"

गुरुदित्तसिंह के साफ़े पर कोई ख़ुमार चढ़ गया–"हिसाब-किताब तो मुंशीजी, एक दिन पूरा होना ही था। दुर्रानी शाह ने खालसों का बीज नष्ट करने की क़सम खाई थी, पर लौटती बेला अफ़ग़ान-पठान यहीं काम आ गए। आख़िर को दरिया पीर ख़्वाज़ा-ख़िज़र ने भी तो सुननी थी अपने मुरीदों की!"

कई माथों पर तेवर यूँ उभरे ज्यों किसी ने पानी फाड़ दिया हो!

मुंशीजी उबल पड़े–"अव्वल तो दुर्रानी शाह बड़ा ज़हीन था, दोयम सिक्खों को उसने सिर्फ़ डाकाज़नी के लिए ललकारा था।"

गुरुदित्तसिंह का माथा भखने लगा–"तुम्हारा इल्म कच्चा है। आख़िर तो जिन्होंने हरमन्दिर साहिब की बेअदबी करने की हिमाक़त की, उनकी गर्दनों के ढेर भी क़ाबुल-कन्धार तक लग गए न! अब्दाली के ख़ज़ाने ने सिक्ख मुंडी का दाम लगाया था एक पांजा, वही खालसा सरकार ने सगुणों के पाँच रुपए लगा दिए ब्लोच पठान की गर्दन पर। ख़ैरों से फिर बावटा लहराया शेरे-पंजाब का अटकों पार!

सवा लाख की एक गिनाऊँ
चिड़ियाँ कोलों बाज मरवाऊँ
तभी गोबिन्दसिहं नाम धरवाऊँ।"

"बस ओए बस, तुम दोनों कमले तो नहीं हो गए। शुक्र-शुक्र सुख का साँस आया, तुम पुरानी मार-काटें दोहराने लगे!"

शाहजी ने बात का मुँह-माथा सही किया–"महाराजा रणजीतसिंह के वज़ीरों के नाम तो सुने होंगे। ख़लीफ़ा नूरुलुद्दीन, फ़कीर अजीजुद्दीन और ऐसे ही बेहिसाब अमीर-उमरा और सरदार-जागीरदार।

"सज़ा, जुर्म, जुल्म, मारकाट, क़त्लेआम–ये तो हुए न खेल हमलावरों के। बाक़ी शाह-बादशाहों के साथ गुणग्राहकी भी लगी ही हुई है।"

काशीशाह बोले–"दुर्रानी शाह बटालेवाले शायर 'वाक़िफ़' को क़ाबुल ले गया था।"

गंडासिंह उचाट हो गए थे–"ओ ले गया होगा अपनी वाहवाही के लिए। शायर, मुसाहिब और सलामिए तो हुए न दरबारों के हीरे-मोती!"

"जो भी समझ लो। बाक़ी दुर्रानी शाह ने कई हिन्दू वकील रखे हुए थे।"

मौलादादजी ख़ुश हुए–"सच पूछो शाहजी, तो हिन्दुओं का काम ही हुआ अक्लों से बातों को खोदना-खरोचना! हकूमतें-वज़ारतें इन्हीं तरकीबों से चलती हैं!"

मैयासिंह सोते-सोते जाग पड़े–"मैंने कहा, काम की बात है, ज़रा सुनो ध्यान से। लाले वड्डे के पुत्तर चन्नमल्ल की जंज हाफिज़ाबाद ढुकी थी। वहाँ की मिरास ने बड़ा सोहना स्वाँग किया। काशीराम, एक बन्दा तगड़ा खूबसूरत, चंगे क़द-बुत्तवाला आ खड़ा हुआ। सलवार। झग्गा। ऊपर पोसतीन। सिर पर कुलाह। सरपेच कमरबन्द पर पेशकब्ज। यह समझो कि सचमुच का शाह दुर्रानी बनाकर पेश कर दिया।

"आगे सुनो। शाह दुर्रानी तख़्त पर विराजमान और उसके आगे पेश है–प्राणचन्द पुरी!"

"तायाजी, गप्प-गप्पाड़े छोड़ो। बिचारे पुरियों को क्यों घसीटते हो शाह के आगे?"

मैयासिंह बौखला गए–"ओए, सुनो! सुनो, काम की बात है। प्राणचन्द पुरी रहनेवाला था घड़तल का। वरागी पुरुख। घूमते-घामते पंचनद जा पहुँचा। पंचनद के पास खेमे लगे थे शाह के! शाह का टकरा हो गया संन्यासी पुरी से। गंडासिंह, ओ गुरुदित्तसिंह, किधर है?...सुनो गुरुदित्तसिंह, शाह दुर्रानी के दस गुनाह, पर हिन्दोस्तान के साधु-सन्तों की उसके दिल में बड़ी ललक और इज़्ज़त।

"हुआ यह कि उन दिनों शाह के नाम पर कोई रग़त का उठान आया था। इशारा कर प्राण पुरी से पूछा–'महात्मा प्राण पुरी, यह उठान दिन-रात रिसता है। कोई दवा-दारू बताइए। हो कोई नुस्ख़ा आपके पास।'

"बादशाहो, पुरी बच्चे ने बड़ी अक़्ल लड़ाई पर कुछ न सूझा। उसे न हिक़मत का

पता, न वैद्यक का। सोचा, शाह को बताएँ तो बुरा और न बताएँ तो बुरा।

"आँखें बन्द कर ध्यान लगाया। लम्बा साँस लिया और आँखें खोलकर अर्ज़ की–'क़ाबुलशाह, ऊपर से ऐसा हुक्म आया है कि आपकी शहंशाही और आपजी के नाक में कोई रब्बी मेल है। इसलिए किसी एक को दूसरे से जुदा करना मुनासिब न होगा।'

"जवाब सुन शाह अब्दाली महात्मा प्राण पुरी से बड़ा ख़ुश! बस निहाल हो गया!"

"वाह-वाह तायाजी, आपने चंगी सुनाई और प्राण पुरी ने चंगी कही। जवाब देने में जो थिड़क जाता घड़तल का पुरी तो साध खत्रेटा या किसी ख़ुड्जे जा लगता या गर्दन से जाता!"

"नहीं कर्मइलाहीजी, प्राण पुरी इतनी आसानी से न हार मानता। कुछ-न-कुछ तरक़ीब लड़ा ही लेता!"

"कहते तो ठीक हैं शाह साहिब, अपने लोकों की अक़ल माड़ी नहीं!"

काशीशाह ने नई बात उठा ली–"अकबर बादशाह के दरबार के हँसोड़ का नाम तो सुना हुआ है न आपने! बीरबल राजा। बीरबल जो बात करे, अक़्ल की पुड़िया में हास्सा पेश कर दे। अकबर बादशाह बड़ा राजी था बीरबल पर।

"अपने दरबारियों को कहे–'बीरबल एक तो मिजाज़ से ख़ुला-ख़ुलासा, दूसरे समझ चंगी, तीसरे कुछ भी कह सकने का हौंसला!'

"एक बार दरबार में पहुँच गया तो जी भर के नाम कमाया। और जी भर के ही इनाम पाया। अकबर बादशाह जान के कोई छेड़-छाड़ कर दे और बीरबल सोच-साच के जवाब तराशे और बादशाह सलामत के आगे पेश कर दे!"

जहाँदादजी बोले–"बड़ी क़ाबिले-तारीफ़ बात है कि मनुक्ख जब बोले, सुननेवाले बेहिसाब-बेख़ौफ़ हँसें। शाहजी, अपनी फ़ौज के अफसर भी जवानों-रैंकों की चंगी गुफ़्तगू की बड़ी तारीफ़ करते हैं। बाकायदा उनकी सराहना करते हैं। यह गुण तो बन्दे में क़ाबिले-तारीफ़ हुआ!"

शाहजी ने छोटे भाई को याद दिलाया–"राजा बीरबल का दूसरा जोड़ीदार राजा टोडरमल था। यह भी चूनियाँ का टंडन खत्री। पहले टोडरमल शेरशाह के दरबार में था। अकबर के दरबार में वकील बन गया। काम में बड़ा तेज़तर्रार और हुशियार। पहले मिला ख़िताब राजा का, फिर मिल गई चार हज़ारी मनसबदारी। असल बात यह कि टोडरमल बड़ा दूर-अन्देश। परख बड़ी आला। मुग़ल वक्तों में टोडरमल ने जिवियों के मामलों और टकसाल में कई फेर-बदल किए और किसानों के फ़ायदे के लिए कई तरक़ीबें बनाईं-उठाईं। लो सुनो, अकबर के दरबार में पहुँचकर हिन्दुओं को सलाह क्या दी कि चाहते हो ख़ुशहाल होना तो फ़ारसी पढ़ो! वैसे टोडरमल बड़ा पूजा-पाठिया मशहूर था।"

मौलादादजी बोले–"बादशाहो, दरबारों में चमकने-उभरने के लिए सितारा और क़ाबलियत दोनों ही लाज़िम हैं।'

शाहजी ने एक और पौड़ी चढ़ी–"शाहजहाँ समयों में एक और शख़्स अपना बड़ा ऊपर पहुँचा था! वज़ीर सादुल्लाख़ान। दरोग़ा गुसलख़ाना से शुरू करके शाहजहाँ बादशाह की वज़ीरी हासिल की! वज़ीर सादुल्लाख़ान अपने सैयदवाल का ही रहनेवाला था।"

"वाह, यह तो अपने इलाक़े की कुछ बात हुई न!"

जहाँदादजी ने बड़े रौबदाब से सिर हिलाया–"अपना हमवतनी ही हुआ न जी!"

"जी, लिखत कहती है कि सादुल्ला वज़ीर के उसूल बड़े पाक़-साफ़। न बादशाह की दिलजोइयाँ करनी और न ग़रीबों पर जुल्म-अत्याचार। बड़ी शोहरत पाई सादुल्ला वज़ीर ने।"

ताया मैयासिंह कुछ और ही सही कर रहे थे–"मैंने कहा सैयदवाल तो दो-तीन हैं। यह पीपल बोढ़ोंवाला तो नहीं!"

"वही जी वही। राम-लच्छन का चौंतरा कहलाता है!"

दस लाख जान बख़्शी
दस लाख सूबा बख़्शी
दस लाख हिन्दोस्तान न जाने की
कौल बख़्शी।

"बिक गया जी, बिक गया, लाहौर सूबा बिक गया।"

कर्मइलाहीजी ने आवाज़ मारी–"कौन है? ओए, कौन है यह कौल बख़्शीवाला मस्तानड़ा?"

फज्जू ने अन्दर आ सलाम किया और कहा–"दादा साहिब, थल्ली वंडवाला वज़ीरा है।"

"हूँ, तो बरखुरदार यह बता रहे हैं कि ख़ैरों से तीन जमातें टाप ली हैं।"

"मालूम होता है, मौलवीजी ने आज छुट्टी कर दी है बलूँगड़ों की।"

फ़कीरा नजीबे की ओर देखकर हँसा–"मौलवीजी ने कोई पग्ग-साफ़ा धोना-धुलाना होगा। होता ही है न, किसी को दीदार देना, किसी से लेना।"

"छोड़ दे न फ़कीरेया! मौलवीजी के लिए मूँछ-दाढ़ी ताज़ी करने की घड़ी आन ही पहुँची है तो ख़ैर सदके उन्हें भी दिल ख़ुश कर लेने दे यार!"

कर्मइलाही और चौधरी फ़तेहअलीजी ने दिल-ही-दिल मौलवीजी का आनन्द लिया। ऊपर से रौब भी बनाए रहे।

"शाह साहिब, अब तो ख़ैरों से बात एक सोचनेवाली यह भी हो गई न कि लालीशाह किस मदरसे-मक़तब में बैठेंगे।"

ज़िक्र से शाहजी ख़ुश हुए–"चौधरीजी, बन्दे का वश चले तो बन्दा औलाद को अपने मदरसे में, अपने उस्ताद के पास ही पेश करे। पर समय ने तो नहीं रुकना। वक्त दिन-दिन नया और उसके साथ ही उस्ताद भी नए।"

जहाँदादख़ाँ बोले–"अब तो मिशन मदरसे चंगे ख़ुल गए हैं। लालीशाह अपने वहीं जाएँ। अपनी फ़ौज-पलटन में उनकी बड़ी पूछ। थोड़ी-बहुत अंग्रेज़ी आ जाए तो चल निकलता है।"

शाहजी रस लेने लगे। हँसकर बोले–"सच पूछो तो फ़ारसी पढ़कर ही बन्दा बन्दा बनता है।"

गंडासिंह ने मंजी से उचककर करारी आवाज़ दी–"मुंशी इल्मदीन कहाँ छिपे हुए हैं! बन्दे होने की ऊँची गद्दी मिलने लगी तो आप नज़रों से ओझल।"

मौलादादजी की चिलम ज़रा ठंडे पर थी। नवाब को आवाज़ दी और बोले–"शाहजी, आपने यह सुथरी छाँट कर दी है। हम जैसे हमातड़-साथ तो बन्दा

बिरादरी के बाहर ही हुए न!"

काशीशाह ने अख़बारी बात कर दी–"यह रवैया तो अपनी हकूमत का है। जो आप सरकार के साथ हैं, उसके ख़ादिम हैं तो वाह भला, नहीं तो देसी रियाय जाहिल तो है ही!"

शाहजी ने ज़रा सी देर को आँख बन्द की और कुछ याद करके ले आए–"चौधरी जी, आख्यान बड़ा पुराना है। सुनो।

"दक्खन का एक मशहूर ज्योतिषी वराहमिहिर घूमता-घुमाता स्यालकोट आ पहुँचा। उन दिनों शहर स्यालकोट का नाम स्वातिनगरी होता था। गुजरात अपने का नाम ऊदीनगरी था।

"वराहमिहिर बड़ा घुमक्कड़। कश्मीर, हज़ारा, मुल्तान सब पैरों से घेर-घार आया था। घूमते-घुमाते वह एक गुज्जर ग्राँ में पहुँचा। लोगों को पता लगा, राहगीर मुसाफ़िर ज्योतिषी-नजूमी है। लोग आ ढुके हाथ की रेखाएँ पढ़वाने-दिखाने।

"जो आए, प्रश्न पूछे। वराहमिहिर ज्योतिषी पंडित बड़ा पहुँचा हुआ। हस्त-रेखा और ललाट देख दूसरे का आगा-पीछा सही बता दे। लोग बड़े मुश्ताक़।

"अर्ज़ की–'महाराज, रात होने को आई। आज आप इसी पिंड में पड़ाव करें। हमारे हाथों कुछ आपकी सेवा का भी संजोग हो।'

"वराहमिहिर बोले–'आज ग्रहों का योग ऐसा है कि मैं अगर अपने घर-परिवार में होता तो मेरी पत्नी को एक बड़ा विद्वान पुत्र कोख में पड़ता। समय-स्थान के अन्तर ने यह घड़ी इस गाँव में नियत कर दी।

"रात खू पर पड़ी झुग्गी में ज्योतिषीजी की मंजी बिछ गई। दूध पिला लोग प्रणाम कर बिदा हुए।

"आँख मुँदी ही थी कि झुग्गी के बाहर किसी ज़नानी की आवाज़ सुन पड़ी–'महाराज, ज़रा कृपा कर मेरी बात सुनो।'

"'कौन? अन्दर आ जाओ माते...'

"हाथ में दीपक लिए माई अन्दर आई। सीस नवाया और बोली–'महाराज, आपके कहे अनुसार आपके नच्छत्रों में आज पुत्रदान का योग है। मेरे पुत्र की भार्या से मेल कर लो महाराज! अपना कुल तर जाएगा।'

"वराहमिहिर ने उँगलियों पर कुछ हिसाब-किताब लगाया और उठ खड़े हुए–'चलो माते, तुम्हारी आज्ञा शिरोधार्य है।'

"गुज्जरी की बहू की मनोकामना पूरी हुई।

"वराहमिहिर मुँह-अँधेरे स्नान-ध्यान कर आगे बढ़ गए।

"वक़्त पर गुज्जरी को पोत्रा हुआ। लड़का श्याम-वर्ण पर बड़ा तेज़, बारीक़ अक़्ल। बड़ा हुआ। उस पर माँ की बड़ी ममता। अपने खेतों की गाही-वाही में लग गया।

"बरसों बाद एक दिन आन पहुँचे वराहमिहिर उसी गाँव। लड़के को पहचान लिया। कहा–'पुत्र, तुम्हें अपने साथ ले चलने को आया हूँ। तुम्हें अपनी विद्या सिखानी है। त्रिस्थली दिखानी है। अपने गुरुपीठ की परदच्छिना-वन्दना करवानी है। अविलम्ब चलो पुत्र, मेरे पास समय अधिक नहीं।'

"'मैं माँ को छोड़कर नहीं जा सकता महाराज! मेरा यही घर-द्वार है। यहीं जिवियाँ-खेतियाँ हैं। यहीं पूजने जोग माँ है।'

"'पुत्र, विधि का विधान मैं जानता हूँ। पिता की आज्ञा तुम्हें माननी होगी।'

"माँ अन्दर-बाहर जाती आँखों से भर-भर नीर बहाए। न किसी को कुछ बताए, न सुनाए।

"लड़का बहुतेरा झुँझलाया पर वराहमिहिर न माने। ले चले लड़के को अपने साथ।

"ग्राँ से बाहर निकले ही थे कि वराहमिहिर पकी कनकों के खेत पर रुक गए।

"एक साथ गेहूँ और जौ के सिट्टे इकट्ठे देखकर लड़के से पूछा–'ये दो बीज एक ही खेत में क्यों बोए गए?'

"'महाराज, गेहूँ उनके जो इन खेतों के मालिक हैं और जौ उनके जो इन खेतियों के वाहक हैं।'

"वराहमिहिर अपनी शास्त्र-विद्या के दाम्भिक। सिर हिलाया–'शास्त्र-मर्यादा के अनुसार खड़ी फ़सलों पर अधिकार उन्हीं का जिनके पास भूमि का स्वामित्व।'

"लड़का चुपचाप कुछ सोचता रहा, फिर पिता को साष्टांग प्रणाम किया और अपने ग्राँ की ओर मुँह कर कहा–'आप विद्वान हैं। अगर खड़ी फ़सलों पर धरती के मालिकों का ही अधिकार है तो मेरी जगह भी अपनी धरती पर। अपनी माँ के पास। आप दोनों के मामले में माँ ही धरती है। मेरे लिए वही थिर है।'"

"वाह-वाह, गुज्जर बच्चे की अक़्ल देखो–विद्वान ब्राह्मण को लाजवाब कर दिया।"

शाहजी ने चौधरीजी को हँसकर देखा और कहा–"बादशाहो, बन्दा बिरादरीवाली बात साफ़ हो गई न अब! असल बात यह कि माँ की तरह जिवियाँ भी मनुक्ख के लिए विद्या-जानकारी की गुत्थलियाँ हैं। ज़िन्दगी-जीवन का कौन सा तत्त है जो किसान वाहक न निकाल सके!"

नवाब ने दिया वसीक लौ ज़रा ऊँची की, कि शाहजी की नज़र ताया तुफ़ैलसिंह के पुत्तर नसीबसिंह पर जा पड़ी।

ड्योढ़ी से अन्दर आ सबको पैरीपौना बुलाया तो दीन मुहम्मदजी बोले–"पुत्तरजी, आपके तो दीदार ही दुर्लभ। शाहजी, काका अपना बड़ा सौदागर बन के रहेगा। हट्टी के आगे कल लद्दी-फद्दी डाची देखी थी। ख़ैरों से माल आया होगा!"

"क्या माल और क्या डाची! चाचाजी, हम तो लुट-पुट गए।"

सब चौकन्ने हुए–"क्यों बरखुरदार, ख़ैरियत तो है?"

नसीबसिंह ने साफे के नीचे से रुक्का निकाल शाहजी की ओर बढ़ा दिया–"शाहजी, बुरी हुई है बाबे के साथ। माल-मत्ता सब बंगाले में लुट-पुट गया है।"

शाहजी ने दीवटा पास किया और सबको सुनाकर रुक्का पढ़ने लगे:

कलकत्ता

तारीख़ छब्बीस माह चैत्र

चिट्ठी मिले बरखुरदार नसीबसिंह को उसके बाबे तैफ़ुलसिंह की। पुत्र प्यारे नसीबसिंह बाबा आपका वाहगुरु की कृपा से ख़ैरियत से है। आपाँ पटना साहिब से पहुँचे कलकत्ता नौरात्रों में। रब्ब की मेहर से हाट-व्यापार चंगा रहा। खट्टी कमाई भी वाह-वाह हुई। पर पुत्तरजी, शहर कलकत्ता में ग़दर मच गया है। हिन्दू-मुसलमान में रंजिश यहाँ तक बढ़ी है कि एक फ़िरका हाकमों के हाथों माल-मत्ता खाए, दूसरा लाठियों-गोलियों की बौछारें। माल स्वदेशी की गल्ल-बात तो अंग्रेज़ को छेड़ने का बहाना है। असल ख़रुद की जड़ तो बंगाले का बँटवारा है। बंगालियों को इसकी डाढ़ी पीड़ है। हक़ूमत भी चोखा जुल्म ढा रही है। गोरखा फ़ौज ने भी कम ख़ौफ नहीं कमाया। पिंड में सबको मालूम हो

कि अपने डेरे में कोई जान नहीं बची। सब छोटे-बड़े गोलियों से भून दिए गए। वाहगुरु की मेहर में संक्रान्त के दिन बाबे के हजूर में माथा टेकने चला गया था। सो बचाव हो गया। पुत्रजी, उसकी महिमा अपरम्पार है। हाथ राखे जन अपने को। धर्मसाला जाकर अरदासा ज़रूर करवा देना। बलवाइयों ने अपना माला-मत्ता-बजाजी सब फूँक डाले। नसीबसिंह, मन को न लगाना। इस हल्ले में से जान बच गई, लाखों कमाए। हाँ, यहाँ बंगाली बाबू बड़ा मचा हुआ है।

पुत्तरजी, सरकार के ख़िलाफ़ वहाँ भी कोई ऊँच-नीच हो जाए तो बजाजी उठाकर नौशहरेवाले क़ादिर पराच्छे के यहाँ डाल आना। आजकल सरकार अंग्रेज़ी मुसलमीनों की हिमायत पर है।

वाहगुरु की कृपा से सुख सांद रही तो बैसाखी पर पिंड पहुँच जाऊँगा। पिंड के सब छोटे-बड़ों को मेरा सत-श्री अकाल बुलाना। बेबे को कहना, मुसीबत टल गई, सो फ़िकर न करे।

पुत्तर नसीबसिंहा, अपनी भूरी गाय के लिए एक बड़ी सोहणी खड़केदार टल्ली खरीदी है। हठीली भूरी चलेगी तो पिंड सुनेगा। सुनकर तेरा जी बड़ा राज़ी होगा। मजलिस को बताना, ग़दर नादिरग़र्दी से डरकर कलकत्ते का बड़ा हाक़म इस्तीफा दे गया है!

आपका बाबा
तुफ़ैलसिंह

चिट्ठी का मज़मून सुन सब सकते में आ गए।

शाहजी काग़द हाथ में पकड़े-पकड़े सोचते रहे, फिर साफ़े को छूकर कहा–"इस हिसाब से कामोकी मंडी से उड़ी लाल गश्ती चिट्ठीवाली अफवाह ग़लत नहीं लगती।"

नसीबसिंह सहम गया–"शाहजी, बंगाले की तरह जेकर अपने पंजाब के भी दो टुकड़े हो गए तो माहत्तड़-साथों का क्या होगा!"

मौलादादजी ने सहारा दिया–"नसीबसिंहा, कलकत्ते की हवाएँ कलकत्ते ही रहें तो चंगा। अपने यहाँ काहे का डर! असल बात यह है कि सारे फ़साद शहरियों के खोप्पड़ में पैदा होते हैं।"

कर्मइलाहीजी ने भी हाँ-में-हाँ मिलाई–"सच पूछो तो शहरियों का न धर्म-ईमान, न इंसाफ़ी-पंचपरमेश्वर और न इमदाद सुननेवाला चौधरहट्टा।"

"हाँ, जी, ख़ारबाज़ी में आकर जो सरपंच बन जाए खरपंच तो बताओ, झगड़ा-फ़साद कैसे मुके! कौन मुकाए!"

शाहजी ने समझाने की कोशिश की–"चौधरीजी, यह मसला छोटे-मोटे लड़ाई-झगड़े से बहुत बड़ा है।"

"काशीराम, आप कुछ पढ़ते-पढ़ाते रहते हो। लाहौरवाला अख़बार क्या कहता है इस बारे!"

गंडासिंह बिना जवाब सुने ही मच गए–"जो गल्ल-बात अख़बारों तक पहुँच गई, समझो, पेशेवर ज़नानियों की तरह बेपर्दा हो गई।"

गुरुदित्तसिंह ऊँघने लगे थे, चौंककर उठ बैठे–"शाहजी, जो हीरा मंडीवालियों की बन आए तो आप ही बताओ, टब्बरों की माँओं-बहनों को कौन पूछेगा!"

बेवक़्त और बेअर्थ! कृपाराम बड़ा खीजे–"धन्य हो, धन्य हो खालसाजी! बात हो रही थी बंगाले की और आपकी आँखों के आगे चमकार-छनकार हो रहे हैं हुस्न-बाज़ारों

के! नींद्रे में ऐसे ठौंके सबके लगें। बिना पेशगी नाच-मुजरा!"

गंडासिंह अनसुनी कर आगे बढ़ गए–"अख़बार यह कहती है, अख़बार वह कहती है! ओए, सरकार से भी बड़ी हो गईं ये बक्क-बक्कोनियाँ कुत्तेखानियाँ अख़बारें! हकूमत के सिर चढ़ बैठा स्याही-चूस छापाख़ाना।"

"नहीं बादशाहो, यह हकूमत-सरकार की अपनी करनियाँ हैं। कभी हिन्दुओं को भड़काए, कभी मुसलमीनों को लशाए, कभी सिक्खों को। ईसाई बिचारे तो किस गिनती!"

"ईसाई अपने तो जी चढ़ती कलाओं में। अंग्रेज़ियाँ पढ़न, गिटपिट-गिटपिट करन। अपने गुजरातवाले दीदारसिंह की पूरी शाख मसीही बन गई है! माना-परवाना टब्बर है!"

"ख़ैर सल्लाह, गिरजा बिरादरी में रले-मिले हैं तो हमारी तरफ़ से फलें-फूलें। इन्हें सरकार से फ़ायदा ही फ़ायदा है।"

नजीबा भुंजे बैठा हुआ था–"चूहड़ों की ठट्ठीवाला फत्तू मुसल्ली जलालपुर जा के मसीही बन आया है। सरकार नए मसीहियों को तो दब्ब के फ़ायदा पहुँचाएगी।"

शाहजी ने पगड़ीवाला सिर हिलाया–"इधर दीदारसिंह खालसा बिरादरी से अलग हुए, उधर डॉक्टर यंगसन को क़ैसरे-हिन्द तमग़ा मिल गया।"

गंडासिंह ने मुहाड़ा न मोड़ा–"यह तो हो गई न बात, पर छापेख़ाने और अख़बारों का क्या करोगे!"

शाहजी बड़ी लूणी हँसी हँसे:

"बादशाहो, बिल्ली सिंह पढ़ाया
बिल्ली को खाने आया।

"मतलब यह कि पढ़-पढ़ अंग्रेज़ियाँ रियाया हिन्दोस्तान की अब हाक़मों से लड़ेगी! जहाँदादजी, अब न काम आएगी उर्दू-फ़ारसी और न मुल्तानी-लहंदी।"

नजीबे का ध्यान शाहजी की बहियों पर था–"शाह साहिब, लुंडों का क्या होगा? आपका हिसाब-क़िताब उन्हीं में चलेगा कि वह भी बदल जाएगा?"

अँधेरे पक्ख घुप्प अँधेरे में दो-दो के जोटे पड़ गए।

पहला पहर गूढ़ा होते ही सिकन्दरा पीरोंवाले खूह की गद्दी से उठ खड़ा हुआ। दोत्तही से मुँह-सिर लपेटा और रूढ़ियों के पीछे से होता हुआ ख़ुल्लरों की गली में जा घुसा।

भौंकते कुत्तों को रोटी डाल चुप करवा लिया और केहरसिंह की ख़ुली कोठरी से फलाँग तबेले की छत्त पर जा पहुँचा। इधर-उधर सूँघा और पौड़ियाँ उतर हवेली के पिछवाड़े।

गाय-भैंसें और जविंदे शाह और लोड़िंदे शाह की घोड़ियाँ। और आगे काथासिंह का मुश्की घोड़ा।

परवरदिगार, यह क्या टंटा-फ़साद उठ खड़ा हुआ! टाँडेवाला लबाणा क़ाथासिंह तो मारवान बन्दूकी है। अगर लबाणा ऊपर पौड़ता है तो गई रात मलामत में।

पट्ठों और चरी के ऊँचे ढेर के पीछे मुस्तफ़ा सर्दखानेवाली दिवार के साथ जा लगा। अँधेरे में ही दिवार पर हाथ फेरा और उभरे हुए खड़ेप को गिट्टी से हौले-हौले

चाक करने लगा।

दिवार ख़ुरचती चली।

मुस्तफ़ा के कान खड़े हुए–फस्स...फस्स...नौबतिया कि गाय-भैंस तबेले में फोस लगा रही हैं।

गर्दन पर भरपूर हाथ पड़ा–"कौन?"

मुस्तफ़ा फुसफुसाया–"काथासिंह का घोड़ा बँधा है तबेले में!"

नौबतिये ने चमककर अपने को थिर किया और सैनत से बताया–"माउंटी पर रस्सा पड़ चुका। चूकने से फ़ायदा!"

उँगली से ऊपर इशारा किया–"छोड़ दे ऊपरवाले पर!"

मुस्तफ़ा ने हाथ डाल सूराग सही किया और बदन सिकोड़कर अन्दर जा घुसा।

बाहर कन्ध के साथ लगे नौबतिये ने कानों के चार टुकड़े किए। आधा केसरसिंह काम्मे की कोठड़ी की ओर, आधा तबेले के दरवाज़े पर, आधा मुस्तफ़े की घुसर-पुसर पर, आधा तत्ता साँसी की ओर।

पिछले पक्ख रंडियावी की कमाई से तत्ता सासी दब्ब दबावड़े में। साथ थे ताजा और ख़ुशिया। दोनों फुरतिए। तबेले की पौड़ियों तले छिपे हुए।

मुस्तफ़ा ने सन्नी से लकड़ी की पेटी खोल ली। नीचे हाथ डाला और गहने-गट्टे की बुचकियाँ निकाल तहबन्द में खोंस लीं।

फिर खेसों के बड़े ढेर को सरकाया और मारतोड़ से अडोल कुड़ा खींच लिया। ढक्कन उठा टटोला ही था कि अशरफ़ियोंवाली पोटली हाथ आ लगी।

चौकन्ने हो अपने पैरों की आहट सुनी, फिर नौबतिये को पोटली दी कि ऊपर छत पर किसी के दौड़ने का शोर पड़ गया।

"ओए मार गए, ओ ले गए, हाय-हाय मेरी चूड़ियाँ..."

हवेली तबेले की पौड़ियाँ बजने लगीं।

मुस्तफ़ा और नौबतिया पट्ठे के ढेर से लगे-लगे सदर दरवाज़े तक आ पहुँचे और शोर-शराबे में कुंडी खोल गली में कूद गए!

दौड़ते-दौड़ते आवाज़ मारी–"ओ पकड़ो लोको, पकड़ो–शाहों के घर चोर पड़ गए!"

ऊपर ख़ुल्लरों की धी पसार में दीवटे की लौ बच्चे को गोद में डाले दूध चुँघाती थी कि भड़भड़ा पट्ट ख़ुला और ताजा और ख़ुशिया मुँह-सिर लपेटे ऐसे घुसे ज्यों भूत प्रकटे हों।

डर के मारे ख़ुल्लरों की धी तोती की न चीख़ निकली, न आवाज़! बस घिग्गी बँध गई।

ख़ुशिए ने सोने के चूड़े में डाँग घुसेड़ ऐसे घुमाई कि तोती पीड़ से करला पड़ी–"हाय ओ!"

ताजे ने झपट दुपट्टा खींचा और मुँह में ठूँस दिया और झटके से फड़फड़ा बच्चा रो दिया।

साथ की मंजी पर सोई तोती की माँ उठ बैठी–"क्यों री, काहे रुला रही है काके को...?"

तोती ने हिचकी भरी–"डाकू, माँ, डाकू..."

दोनों झपटकर माउंटी की ओर भागे कि रस्से पर हाथ पड़ते-पड़ते रह गया!

ख़ुल्लरों के घर रात-भर को रुका पाहुना काथासिंह माउंटी की छत पर हाज़त को बैठा ही था कि नीचे शोर पड़ गया।

धड़धड़ाते ताजा और मुस्तफ़ा रस्से पर हाथ डालने को ही थे कि काथासिंह ने बैठे-बैठे दो हाथों से गर्दनें दबोच लीं। मुंडियों को एक-दूसरे से बजाया–"ओए, कौन हो?"

ताजे ने बदन को लचकाया-हिलाया पर काथासिंह की गिरफ़्त न ढीली पड़ी।

"ओए, कुत्तओ-खस्सियो, डाका डालने चले थे कि हगने-मूतने!"

लोड़िदे शाह के ऊपर आते ही दोनों लौंठों की धुनाई होने लगी तो आँखों से तारे टूट-टूट गिरने लगे।

"हाय ओ रब्बा...हाय ओ...हाय-हाय..."

काथासिंह ने रस्सी खींच बनेरे से दोनों का शिकंजा कस दिया और माउंटी को सीढ़ियों से नीचे धकेल दिया।

बैठक में पहुँच अपनी बन्दूक उठाई और सामने कर कहा–"नाम बोल दो यारों के, नहीं तो तुम नहीं..."

ख़ुशिए के मुँह से खून निकलने लगा था–"एक घूँट पानी...जो पूछो बताता हूँ।"

काथासिंह ने दोनों के मुँह गीले करवाए और मंजी पर बैठकर लाड़ से कहा–"क्यों ओए, रात के पहले पहर चमकनेवाले तारों के तो नाम याद होंगे! नाम और पते दोनों..."

दोनों साथ-साथ जैसे कोई भूली इबारत याद करने लगे:

"सिकन्दर वल्द जहाँगीरा।

नौबतिया वल्द..."

काथासिंह ने बीच में ही टोक दिया–"ओए ढग्गो, वल्दियत छोड़ दो। खाली नाम ही हो जाएँ।"

"जी, तत्ता साँसी साँराकीवाला और...और...जी मुस्तफ़ा।"

"बस! आए हाथ मेरा! बाप से चेहमागोइयाँ कर रहे हो कि काथासिंह लबाणा से जवाब-सवाल! ऐसे कंडे लगाऊँगा कि क़ब्र और रूह एक हो जाएँ। आई समझ में?"

खुशिए ने जुबान से ओठ तर किए–"माफ़ी बादशाहो, एक और भी शख़्स है–इस तबेले का राक्खा केहरसिंह।"

ताजे को कम्मनी छिड़ गई। केहरसिंह धाकड़ हमें न छोड़ेगा।

रिसते अंग-अंग और जोड़ों में पीड़ें जाग पड़ीं।

"माफ़ी, सरदारजी, माफ़ी! माल-मत्ता आपका कहीं नहीं जाता। डाची अभी गुजरात की राह में होगी।"

काथासिंह इस मासूमियत पर हँसने लगा–"जविंदेशाह, देख लिए हैं न, ये जग्गा डाकू बनने चले थे। ओए कंजरो, डाके और डंगर-चोरी में फर्क है।"

सरदार काथासिंह ने मंजी पर पसर सिर तले अपना धुस्सा खींच लिया और लोढ़िंदेशाह से कहा–"रास्ते में जा पकड़ो। मोमदीपुर मसीत के पीछे होंगे। क्यों ओ खोते के पुत्तरो, वहीं मिलना था न तोफ़कियों ने?"

दोनों ने उकड़ूँ बैठ कान पकड़ लिए–"सोलह आने ठीक बादशाहो..."

काथासिंह ने इस बार आँखें लड़कों पर थिर कर दीं–"याद तो करो उल्लुओ, इस फ़ोकटिया बारात में डाची-घोड़ी किसकी आई थी!"

"पिंडदादन खाँ वाले हैदरशाह की।"

"जविंदेशाह, न हड्डी, न हड्ड। इन्हें दूध-दारू पिला छोड़ो। थाने में काम आएँगे।"

फिर खाँसकर थूक का बड़ा सा थोब्बा दोनों के सामने दे मारा–"खस्सियो, तुम्हारे ऊपर कोई ढंग की वज़नदार गाली भी नहीं सजती। मूत्र तुम्हारा निकल-निकल पड़ता है, आँखें तुम्हारी रो रही हैं। तम्बे ऊपर खोंसकर चल पड़े डाका डालने। ओए पोतड़ो, पाँव में हो फिरकियाँ, कानों में लगे हों खड़क, आँखों में गुल, दिमाग़ में हो फ़ौलाद और छाती पर पहाड़ डटा हुआ हो तो डाले जाते हैं डाके। यह तो पजामियों में मूतना हो गया!"

इधर मुस्तफ़ा और नौबतिया ने घोड़ी किल्ले बाँधी, खलत्ते उतार टँगने पर टाँगे कि गाँव-भर में खलबली मच गई।

"यह क्या लोको, डाका पड़ा धुर आलमगढ़ और पुलिस हमारे दारे।"

आलमगढ़िए ख़ुल्लरों की हिनहिनाती घोड़ियाँ और खाए-पिए पुलसियों की काठियाँ ऐसे टंकारों से गाँव में उतरीं कि उत्तरी वंड और थल्ली वंड दोनों गुंजारने लगीं।

"हाय-हाय री, अन्धेर साँई का! आज शमलेवालों का कैसा जमघट्ट!"

"रब्ब भली करे–शिरींहवाले मुस्तफ़े के नाम की भिनक पड़ी है कान में..."

हुसैना को फ़कीरे ने घुड़क दिया–"मुँह पर लगाम दो। जब तक थाना न डुबकी मार ले, किसी का नाम न लो।"

"हुसैना, फ़कीरा सच कहता है। रब्ब जाने किसका तो दुम्बा और किसकी ज़हमत!"

बनेरे से झाँक चाची महरी ने आवाज़ दी–"हैं री, पिंड में यह शोर कैसा!"

"चाची, सुनते हैं, आलमगढ़िए ख़ुल्लरों के यहाँ डाका पड़ा है।"

"पुलिस खोजी यहाँ क्यों पहुँच पड़े? खबरे किसने वैर कमाया है!"

शाहनी का ध्यान पीहर को भटका–"मैंने कहा चाची, ख़ुल्लरों के यहाँ से ज़रूर कोई आया होगा। झटपट कड़ाही चढ़ा के पूड़े उतार डालूँ।"

"उतार भले मेरी बच्ची, पर उन्होंने कौन सा मुँह जूठा करना है! उलटे धियों-धियानियों के सगुण-शास्त्र करके जाएँगे। ख़ैरों से एक तुम, एक रागियों की बहुटी और री, एक मुसल्लियों की करमो। दे-दिला जाएँगे सो भी चंगा। उनके पिंड की धिएँ बसती-रसती रहें। आलमगढ़िए शाह बड़ी चढ़तलों में।"

छोटी शाहनी आ मिली–"आज दोनों भाई कचहरी हैं। खरमस्त पुलसियों को कौन सँभालेगा! बहना, किसी को भेज पीहरवालों के खाने-पीने का तो पुछवा। लाले वड्डे के घर से थाली जा सकती हैं। मुँह तो जूठा करेंगे ही न!"

चाची बुड़बुड़ाने लगी–"राख पड़े ऐसी औलाद के सिर। जब तक अँधेर पक्ख चोरी-डाका न डाल लें, तब तक टुक्कड़ हज़म न हो।"

"नालायकी और क्या! अक़्ल-बुद्ध चंगी हो तो पुलिस-फौज़ में न भरती हो जाएँ।"

माँबीबी ने चाची के कान में कहा–"मुस्तफ़े से बड़ा शौकत पहले ही क़त्ल के मुकद्दमे में अन्दर है। माँ नसीबनी करेगी क्या!"

"करना क्या है! जेलियों की मुट्ठियाँ भरेगी और पुत्रों से मुलाक़ातें करेगी। उसने कौन सा सदर कचहरी चढ़ जाना है।"

नवाब सिर पर से मंदासा लपेटते-लपेटते तबेले से निकला और ऊपर जनानियों की ओर देखकर कहा–"लो जी, अपने बरख़ुरदार मुस्तफ़ा ने भी बिस्मिल्लाह कर डाली! पुलिस का डेरा पड़ा है। देखें, किस-किसकी गठरियाँ-पोटलियाँ ख़ुलती हैं।"

इधर गाँव के बच्चे, बड़े-बूढ़े, चौधरी-पंच और उधर सिपाही थानेदार। मजमा पूरा ज्यों दरबार लगा हो।

जाने-पहचाने सलामत अली के तबादले पर आया महबूब अली अपनी तोतई नाक से सारे गाँव को सूँघ-सूँघकर ठानेदारी के गहरे पेटे में पचा गया।

मंजी पर बैठे-बैठे दो-एक बार बैंत खड़काया और फिर नौजवान टोली को ऐसे धौंकने लगा ज्यों जने जवान न हों, भेड़-बकरे हों!

सिपाहीजी ने बैंत खड़काया और मजमे में सीधे-सादे बन्ते से पूछ लिया–"भला खजूरें कितनी तरह की?"

"जी-जी..."

"ओए, बोल दे, बता दे किस्में खजूरों की।"

"लूना पिंड, वनकी पिंड, शंगिस्ती और चीख़ो पिंड।"

"तो आज खिलाई जाए बदमाशों को पिंड खजूर चीख़ो..."

मदरसेवाले लड़के हँसने लगे–"यह थाना है कि मदरसा!"

सिपाहीजी की बन आई–"अभी बताते हैं।"

मुस्तफ़ा के ख़ालाज़ाद भाई उसमान लंगे को आवाज़ पड़ गई–"ओए मुँह-ख़ुरे, ज़रा चल के तो बता, कब से लंगेप्पा हुआ तेरी लातों में। डाके की रात क्या तू भी कुत्तों को रोटी डाल रहा था?"

उसमान ने डर-डर क़दम उठाया और पास आ थानेदार को सलाम बजाया, फिर कि जवाब में बूथी पीछे जा लगी।

किसी सयाने ने थानेदार को शाबाशी देने के अन्दाज़ में कहा–"इस बिचारे की लंगड़ टपोसियाँ तो पैदाइशी ही समझो। साहबजी, इसे ख़ातिर ख़िदमत पर लगा छोड़िए। और कुछ नहीं तो दौड़-दौड़कर बैंत ही पकड़ाता रहेगा।"

गुरुदित्तसिंह ने सुनकर सिर हिलाया–"सदके दानिशमन्दी के। जितनी देर में उसमान लंगा बैंत उठाएगा, मार खानेवाले को भी ज़रा साँस आएगा।"

ठानेदार की चिरायती आँखें गुरुदित्तसिंह की ओर घूमीं तो गुरुदित्तसिंह पगड़ी में हाथ डाल सिर के बाल खुजाने लगे।

सिपाही हुक्मा और ख़ुदाबख़्श चमूनों को लेकर आन पहुँचे।

थानेदार कड़के–"जोड़ीदार तुम्हारे हिरासत में हैं, अब तत्ते साँसी का खप्पा और भर डालो।"

मुस्तफ़ा ने नौबतिए से बिना नज़र मिलाए थानेदार की ओर देखा और पटाक से फूट दिया–"साँसी ने टिल्ले की ओर मुँह किया था।"

थानेदार ने मंजी पर बैठे-बैठे लात पर लात चढ़ा ली–"सुन रहा हूँ, बकते जाओ।"

"गहना-गट्टा मोतीरामियों के पास, बाक़ी माल-मत्ता इस्लामगढ़ के टिब्बे।"

गाँव के छोटे-बड़े सयाने थू-थू करने लगे।

अरे इस जिगरे पर डाका-चोरी! लक्ख लानत लूंबड़ों पर!

बरख़ुरदार छाती पर हाथ बाँधे खड़ा रहा और खच्चरा बन बेमलूमा-सा मुस्कुराता रहा।

ठानेदारजी ने घूरकर देखा तो जीभ मचल गई।

आवाज़ देकर कहा–"ओए, ज़रा सब्र तो करना था! आप ही बन गया वादा माफ़ गवाह! इससे अच्छी तो अरोड़ो-कराड़ों के साथ फेरी लगाई होती रूमाल-तले-कंघी की। बहादुर पेशे तुम्हारे बस के नहीं।"

ठानेदार ने कंजी आँखों से ऐसे देखा ज्यों जवान जट्ट न हो, चिलगोज़ा हो!

सिपाही ने पास होकर कहा–"हज़ूर, ख़ानदानी नम्बरी है। बेपरवाही से ही झटक दो।"

ठानेदार ने अपनी नज़र की लाज रखी–"बद के तुख़्म, थाने पहुँच जाना हाज़री के लिए।"

बरख़ुरदार ख़ाँ को मन की मुराद मिली। बहादुराना शौक़ीनी से हँसकर कहा–"ठानेदारजी, हुक्म सिर मत्थे, पर शहादतों का काम आप्पाँ नहीं करते। अपनी ही चंगी-मन्दी की पैरवी पर हाज़र होते हैं। वैसे कहो तो जरूर पहुँचेंगे बड़े साँई के थान।"

ठानेदार ने ओठ मरोड़कर दिल-ही-दिल कोई ख़तरनाक फ़ैसला किया और जविंदेशाह के आगे निक्की-सी पोटली रख दी–"छोटे-मोटे छाप-छल्ले पर नज़र मार लो। इनके तम्बों से निकला है। बाक़ी पक्की शनाख़्त तो थाने में होगी ही।"

त्रिकाल बेला शाहों के घर दीये जले ही थे कि नीचे तारेशाह का घोड़ा आ खड़ा हुआ।

घोड़े की टाप और तारेशाह के गले की टंकार सुन नवाब ड्योढ़ी पर उठ धाया।

"ख़ुश आमदीद तारेशाह!"

आगे बढ़ गाज़ी के माथे पर हाथ फेरा–"सुलेमान, शाह साहिब को कहाँ से चक्कर लगवाके लाया है!"

तारेशाह ने घुड़का–"ओए कंजरा, तुम्हें फ़ारसी का चस्का कब से लगा?"

"तारेशाह, आप्पाँ तो ठहरे ढोर-डंगर के ख़लीफ़ा। हमें फ़ारसी-अरबी से क्या लेना!"

"रब्ब आपका भला करे शाह साहब, लालीशाह की जम्मनी पर नाच-मुजरेवाली आई थीं न! सारे पिंड को सिखा गईं–ख़ुश आमदीद। जो जना जवान महफ़िल में पहुँचे, नचौनियाँ हँस-हँस सलाम करें–ख़ुश आमदीद!"

तारेशाह एक हाथ अपने पेट पर रखे हुए, दूसरे से लगाम थामे हुए।

"खच्चरा, जान-बूझकर जट्टोवाली यमलियाँ मार रहा है न! तूने देखा नहीं, मेरे साथ कोई और भी है।"

"जी, अँधेरे में कुछ माड़ा-सा झौला तो पड़ा था।"

"ध्यान से सुन नवाब, मेरे पास वक़्त नहीं। मेरी नई संजोगन बरकती है। इसे शाहनी के पास पहुँचाने आया हूँ। उतार ले नीचे।"

नवाब ने लुकी-ढकी चादरू ताने ज़नानी का कच्चा कोमल हाथ पकड़ घोड़े से नीचे उतारा तो सिर से पाँव तक फुरफुरी दौड़ गई।

चादर के नीचे कोई बच्चा कसमसाकर रूँ...रूँ...करने लगा।

"बल्ले-बल्ले, शाह साहिब, यह क्या रंग-तमाशे हैं!"

"यारा, आज अपने तमाशों का रंग लाल है। अँतड़ियाँ मेरी बाहर निकली हुई हैं। कसकर कपड़ा बाँधा हुआ है। तेरी भरजाई को यहाँ पहुँचाना ज़रूरी था।"

"रब्ब ख़ैर करे तारेशाह, क्या इसकी कसर रह गई थी!"

"बरकती, ऊपर जा, शाहनी के पाँव छू आशीष लेने की करना। नवाबया, शाहनी से कहना, चक-मन्हासाँ के तेलियों की धी है। पिछले सयाले बेवा हो गई थी। अपना टाकरा हो गया। हाँ, जो नाक-मुँह चढ़ाएँ तो कहना, लसूड़ेवाले कोठे पर ठौर कर दें इसका। आप पका-खा लेगी।"

तारेशाह ने घोड़े का मुँह घुमा लिया–"नवाबशाह, मेरी ग़ैरहाज़री में तुम इसके भाई हो। नजर रखना। किसी ने हुज़्ज़त की तो बता देना, शाह आके फेंट देगा।"

नवाब ने हुंकारा भरा–"जी।"

अर्ज़ की–"कुछ दूध-दारू पी जाओ शाह साहिब! दोनों भाई भी आते ही होंगे।"

तारेशाह ने चलते-चलते मानो ग़ैर-हाज़िर भाइयों को ही घुड़की दे दी–"मेरे बाप ने फ़ारगती दी थी–पर दादे की ज़िमीं-ज़मीन पर बराबर हक़ रखता हूँ। कह रखना, जायदाद का जहाँगीरी काग़द तारेशाह के क़ब्जे में है।"

"शाहजी, जख़्म तो दारू से धुला-पुँछवा लो।"

"ओ मूर्खा, तेरी अकल वड़ेंवे खाने तो नहीं गई! ज़ख्मी पेट अपना थाने ही जाकर खुलेगा। और वहीं तेलियों का जुर्म दरज होगा। बहन को टुक्कर न खिला सके तो उसकी प्रीतों पर धावा बोल दिया।"

तारेशाह ने लगाम खींची और हवेली की ओर पीठ कर ली।

नवाब ने बाँह बढ़ा बरकती से बच्ची ले गोद में उठा ली। सयाने गले से कहा–"भरजाई, यह ऊपरवाली छलाँग टपोसी तो तुम्हें ही मारनी पड़ेगी। मेरी लम्बड़दारी तो इतनी ही कि जो तारेशाह कह गए हैं, मैं वह दोहरा दूँ।"

बरकती रोने लगी।

"सहारा रख भरजाई! मामले में कोई अड़क-गुंजल है भी, तो इस घड़ी उसका खुलासा करने की ज़रूरत नहीं।"

बरकती ने आँखें पोंछीं, नाक छिनका और मुँह पर घुँघटा खींच अँधेरे में नवाब के पीछे-पीछे सीढ़ियाँ चढ़ने लगी।

नवाब ने हौले से पूछा–"लाँवा-फेरे तो करवा लिए थे न!"

बरकती ने सिर हिला जवाब दिया–"कहाँ!"

नवाब ने थड़े पर पहुँच आवाज़ दी–"शाहनी, दरिया पार से तुम्हारे पराहुने आए हैं।"

हाथ में दिवटा लिए शाहनी चौके से बाहर निकल आई–"कौन? नवाब, किसका नाम लिया?"

"तारेशाह के घर से हैं।"

बरकती ने घूँघट के साथ आगे बढ़ पैरीपौना किया।

"ठंडी रहो! साँई जीवे! अरी, मैंने पहचाना नहीं!"

चाची महरी पास आ खड़ी हुई–"किसकी नाम लेती हो धिए, कौन है?"

नवाब ने दोहरा दिया–"चाची, अपने तारेशाह की घरवाली।"

"कुछ होश कर रे! न मँगनी, न कुड़माई और बहूटी बिनब्याही ही चली आईं! अरे, बिन साक्-अंग-जंज-घोड़े के ही परणा लाया! मल्ला हमें न भरमा।"

बरकती रो-रो चाची के पाँव पड़ गई–"झूठ बोल के ज़िन्दा कहाँ रहूँगी! शाह से लग गई और घर से पाँव निकाल लिया। तड़के मुँह-अँधेरे कमादों में छिपी शाह की राह ताकती थी कि शाह के घोड़े की टाप सुन बाहर निकली। इधर मैं निकली, उधर वैरी मेरे भाइयों ने शाह के पेट में लौह-पंजा घुसेड़ दिया। शाह घोड़ा दौड़ाते आया और मुझे बाँह से खींच घोड़े पर बिठा लिया।"

"सतनाम, सतनाम!" शाहनी का त्राह निकल गया। चाची ने साँस रोके पूछा–"फिर री, फिर क्या हुआ? बोल धिए, बोल! ख़ैरों से लड़का हमारा तो सही-सलामत है न?"

बरकती रो-रो हिचकियाँ लेने लगी–"शाह की आँतड़ियाँ बाहर निकल आईं। रुकने की घड़ी न थी। पंघाली पहुँच शाह ने ज़ख़्म पर दारू डाला, कपड़ा कसा और घोड़ा दौड़ाते यहाँ आन पहुँचे!"

चाची नवाब पर बोलने लगी–"कमलेया, थल्ले से आवाज़ दी होती। लड़के को दूध-घी तो पिला देते!"

"कहा था, पूछो भरजाई से, पर नहीं माने।"

"बहुतेरे तरले मिन्नतें कीं। मेरे लिए इतना पैंडा न मारो शाहजी, पर न माने। बोले–तेरे भाई मचे हुए हैं, उनके हाथ पहुँच गई तो जिन्दा न छोड़ेंगे। मुझे यहाँ उतार शाह अब थाने गए हैं।"

चाची महरी ने पास झुक बरकती को नई नज़र से देखा, फिर गोद के बच्चे का मुहांदरा सही किया–"झूठ न बोलना बल्ली, यह तारेशाह का टाबर नहीं। बता तो सही, इसका दात्ता पिदर कहाँ?"

बरकती आँखों में ताज़ा पानी भर लाई–"वह गया बैकुंठों। पार के साल कस्स चढ़ी और आँखें मीट लीं।"

नवाब ने टोका–"चाची, सुबह से भूखी-प्यासी हैं माँ-बेटियाँ। कुछ रोटी-टुक्कर आगे रखो!"

आवाज़ सुन छोटी शाहनी बाहर निकल आई–"कौन है चाची?"

शाहनी ने देवरानी के कन्धे पर हाथ रखा और धीरे से कहा–"तारेशाह की लग्गो।"

"तर गईं किस्मतें। भला यह यहाँ कैसे!"

"देवरानी, तारेशाह को ज़ख़्मी कर छोड़ा है इसके भाइयों ने। इसे यहाँ उतार थाने गया है।"

"बुरा हुआ जिठानी, मामला थाने-कचहरी चढ़ेगा। मर्द आज घर नहीं। कहीं यह न हो कि अपनी ही थूथ-फज़ीहत हो जाए। क्यों री सुभान कौरे, तुझे कहीं और ठौर नहीं था?"

बरकती ऊँची-ऊँची सिसकारियाँ भरने लगी।

"क्या कहूँ, सिर पर बुरी घड़ी आन पहुँची। मत्त मारी गई मेरी भी।"

छोटी शाहनी ने घुड़का–"मल्ला बहुत खड़का-धड़का न कर। आज ही पिंड इकट्ठा कर लेगी। लोक जहान पर नशर तो होनी है। आज सहारा कर ले। मर्द अपने घर नहीं।"

नवाब ने इशारा किया–"पानी का कटोरा तो दो, ज़रा चित्त ठिकाने आए।"

छोटी शाहनी ने कटोरा आगे कर गागर नीचे झुकाई तो झट मन में ख़ुटक

गई–"मैंने कहा, क्या नाम बताया भाई-ब्रादरों का? सुनूँ तो!"

"बड़े का नाम दित्ता। विचकारवाले का लाड़ा और छोटे का कुक्का।"

बिन्द्रादई के तेवर चढ़ गए–"आगे बोल री, तेरे बब्ब का नाम क्या?"

"महीपत।"

शाहनी ढीली पड़ गई और पानी-भरा काँसी का कटोरा हाथ में पकड़ा दिया।

शाहनी ने चाटी में से मीठी वानगी निकाल जातकड़ी को पकड़ाई–"खा, ले खा, मैं सदके गई। सुबह से भूखी है।"

"भरजाई, मुन्नी का नाम तो बता!"

"रसीली।"

"आ रसीली–आ मेरे पास आ।"

बरकती के आगे थाली आई तो छम्म-छम्म रोने लगी–"कल त्रिकालाँ इस घड़ी अच्छी-भली बैठी रोटियाँ उतारती थी। इधर मेरी मत्त मारी गई, उधर माँ-जाए भाइयों ने वैर कमाया। खबरे शाह किन हालों में!"

चाची बोली–"नवाब पुत्तर, तारेशाह अपना थाने तक तो पहुँच जाएगा! कैसा था उस वक़्त!"

"फ़िकर न करो, शाह अपना धाकड़ बन्दा है। बरकती भरजाई, बुरा न मानना, तेरे भाई नहीं बचते इस मारवान खत्रेटे के हाथों।"

शाहनी बोली–"अरी देवर तो मेरा ही है, पर री, करतब तारेशाह के बुरे। मार-घात, जुर्म-मुक़द्दमे, थाना-कचहरी। पहले किसी की धी-बहन भगाए, जिन शरीक़भाइयों से मुँह-मुलाहजा न हो, उनसे बिना पूछे ज़नानी उनके घर छोड़ जाए! बता, अगला साक़-सम्बन्धी क्या करे!"

चाची ने सबको दिलासा दिया–"चल रात की रात, कल आप लड़के आके देख लेंगे। इन मामलों में अपनी पैगम्बरी क्या!"

छोटी शाहनी बोली–"कहते हैं न, लुच्चे सबसे उच्चे। मेरे जाने भड़वे पर छाया हुआ है यौवन-मद! उतरेगा, अभी कर ले बदफ़ैलियाँ...।"

कोच्छड़ों की कम्मो बिम्बों के चूँड़ों में जुओं ने डेरे डाल दिए तो माँ वज़ीरो ने पहले तो मारे कसे हत्थ दो-दो धप्पे लड़कियों के सिर, फिर उनकी गुतड़ियाँ खींच मींडियाँ खोल दीं।

कूँडी में जूँ बूटी और धरेक के पत्ते पीसकर सिरों में लेप कर दिया और पीठ पर थपकी दे कहा–"जाओ ख़समाखानियो, जाकर धूप में बैठो। सिर सूख जाए तो शाहनी के कोठे जाकर नाइन को दिखा आना। सुनो री, अब खेलीं कभी तोतड़ी के साथ तो टाँगें तोड़ डालूँगी। उसके सिर जुओं और लीखों के अम्बार हैं। माँ मुकाली देखती नहीं कि लड़की के झाटे में फ़ौजें रेंग रही हैं।"

पक्की धूपें सिरों पर आ फैलीं तो न्यानियाँ-सयानियाँ सिर खोल कोठे पर आ जमीं।

उमराँ नायन ने आते ही कम्मो, बिम्बो और तोती को अलग कर दिया–"जुओं की पिटारियो, ज़रा हट के बैठो। जाओ, दूसरे कोठे पर जा बैठो। मैं वहीं आ जाऊँगी। अरी साथ-साथ ढुकी रहीं तो सारे गाँव के सिर सुलगने लगेंगे।"

उमराँ ने पहले छोटी शाहनी के सिर घी रचाया। चाची महरी के धवल धौलों में कंघा फेर कसकर चोटी बाँध दी। फिर शाहनी पीढ़ी पर आ बैठी।

ख़ुले बालों की क़तार देखकर कहा–"कुड़ियो-चिड़ियो, आज क्या सूझी! सबने एक संग बाल खोल लिए।"

"मेरे नसीबों को शाहनी। दिहाड़ी पुग जाएगी नख पीटते।"

उमराँ ने शाहनी का परांदा खोला और घी गर्म कर लाने को आवाज़ दी।

बरकती घी की कटोरी ले आई तो मुड़-मुड़ लड़कियाँ उसको ताकने लगीं।

चिड़ों की पाशो से न रहा गया। कह ही दिया–"कहाँ तारेशाह खजूर के तने-सा ज़बर और कहाँ भरजाई बरकती गुलबाशी की बेल-सी नाजुक। मैंने कहा भरजाई, बिना पत्रे कैसे मिलाए ये मेल-संजोग!"

चाची ने फटकार दिया–"चुप री! छोटा मुँह बड़ी बात!"

पाशो न मुड़ी–"झिड़क ले चाची, पर दुनिया तो बातें करती हैं। किस-किसका मुँह पकड़ोगी!"

शाहनी ने हाथ से चाची को इशारा किया–"मल्ली दुनिया क्या कहती है, मैं भी तो सुनूँ!"

"यही कि बरकती भरजाई के न फेरे हुए, न ब्याही-परणायी।"

बरकती ने पहले शाहनी की ओर देखा, फिर हँस-हँस बोली–"कोटली के ठाकुरद्वारे पांदेजी ने वेद-मन्त्र पढ़वा मेरी ओढ़नी का लड़ तुम्हारे वीर के दुपट्टे से बाँध दिया। अब बता बहना, तुम्हें और क्या चाहिए।"

मोहरे की बेबे मीन-मेख निकालने लगी–"बलिहारी जाऊँ बधूटिए, यह तो कह पंडित-पांदे ने ब्याह कैसे पढ़ाया! मन्त्र-श्लोक भी उच्चारे कि नहीं? इससे तो आनन्द कारज करवा आती। तेरी गोद में तो पहले ही एक काकी..."

बरकती के गोरे नखरीले मुखड़े पर बड़ी मिट्ठी हँसी फैल गई–"बेबे, अपने पहाड़ पर तो दूजी तरह से परणाया जाता है। कहो तो बता दूँ?"

शाहनी ने आँख से सैनत की–"न री!"

लड़की-बालड़ियाँ ज़िद करने लगीं–"बता दे भरजाई बरकती, बता दे!"

बरकती हाव-भाव से सचमुच ही तारेशाह की दुलहन बन गई। मुखड़ा साधकर पंडित पांदे की तरह दोहराया:

"अस्स कन्या तुस्स गोत्र
तुस्स कन्या अस्स गोत्र।"

बोल की लय बड़ी भायी लड़कियों को। इकट्ठी मिलकर बोलने लगीं:

"अस्स कन्या तुस्स गोत्र
तुस्स कन्या अस्स गोत्र।"

मोहरे की बेबे फ़ीकी पड़ गई–"क्यों धिए, एक ही मन्त्र में सातों फेरे हो गए!"

"न बेबेजी, हर बार नया! दूजी बार पांदा बोला:

अस्स कवार तुस्स लाढ़ा
तुस्स कवार अस्स लाढ़ा।"

सुननेवालियाँ हँस-हँस दोहरी हुईं।

बरकती नई ब्याही केसरो का सिर खोल उसके पीछे जा बैठी।

"उमराँ बीबी, अपने पहाड़ में चूँडा कैसे गूँथा जाता है, बताती हूँ तुम्हें।

"लाढ़ीजी, हिलना मत!"

शाहनी तारेशाह की इस चहकती बुलबुल को देख बड़ी ख़ुश हुई–"लाख कहो तेलन-तम्बोलन है, पर री, हाव-भाव में निरी रस की गगरी। क्या ताल से बातें करती है! क्यों न भाती तुर्शी तारेशाह को!"

बरकती अपने छोटे-छोटे सुघड़ हाथों से केसरो की वर्त्तनी गूँथने लगी।

केसरो ने टोका–"भरजाई री, पहले माथे की अगली मींडियाँ तो गूँथ!"

"तनिक सहारा कर लाड़ी, जुल्फ़ें और कुंडल ऐसे बनाऊँगी कि गबरू देख इन्हें शरमाए!"

उमराँ छिपी नज़र केसरो के सिर पर 'किड़ा' बनता देखती रही।

वर्त्तिनी का पीठदार जाल पड़ा देखा तो बरकती से खार खा बैठी। ठुनककर कहा–"जम्मूवालिए, चूँडा ख़ैरों से मींडयों का! भले दरिया पार, पोठोहार या संदल बार को। जेकर चाहो सिर पर चिड़ियाँ-तोते बिठाने तो बीदाना लगा बाल ऐसे सजें कि पूरे पक्ख मर्द की आँख वहीं टिकी रहे।"

बरकती को अपने तारेशाह की मौज-बहारें याद आ गईं तो मीठी महीन आवाज़ में गुनगुनाने लगी:

कुन बैइठी सिर खोलिके
कुन बैइठी पीठ मोड़िके।
गौराँ बैइठी केश खोलिके
शिवजी बैइठे मुख मोड़िके।
गौराँ माथे बिन्दुली चमके
शिवजी माथे चन्न सोहवे।
कुन बैइठी पीठ मोड़िके...

बरकती के गले के रसभीने बोल सुन ज़नानियाँ भक्ति-भाव में डूब गईं।

चाची बोली–"कैसा सोहणा प्रसंग है गौरा-पार्बती का। इधर गौरा देवी बाल खोल बैठी, उधर शिवजी आन विराजे।"

"अवतारी महिमा! सुख रहे चाची तो एक बार देवी के साच्चे दरबार माथा टेकने ज़रूर पहुँचेंगे।"

"बच्ची, पहाड़ोंवाली देंवी से माँग–तेरी इच्छा पूरी हो।"

लड़कियाँ भरजाई बरकती के पीछे पड़ गईं–"एक और गीत छू ले भरजाई। डाडे मीठे सुर तेरे पहाड़ के!"

चाची का अपना मन कर आया–"सुना री सुना, तारेशाह की सुराहिए!"

बरकती की अँखियों में अपने पिंड के पठार खिंच गए और कालजे में तारेशाह की मौजवारी बाँहें। सुरों में चश्मा छलछलाने लगा:

मियाँ मजनुआँ ओ
चिट्टे तेरे दन्द दिक्खी हस्सियाँ ओ
मियाँ मजनुआँ ओ, गुज्झे तेरे नैन
दिक्खी डुल्लियाँ ओ
मियाँ मजनुआँ ओ, कल्मी तेरे छत्ते
दिक्खी भुल्लियाँ ओ
मियाँ मजनुआँ ओ

रोन्दयाँ करलान्दयाँ
कंगनाँ घड़ानियाँ
मिल जाओ ओ
टिक्के बिन्दी दोस्ता
टिक्के बिन्दी महरमा
टिक्के बिन्दी वैरिया
टिक्के बिन्दी लाँइता
मेरे बालुये!

गाते-गाते बरकती की आँखों में झड़ी लग गई।

केसरो के बाल गूँथ उठकर पसार की ओट हो गई।

शाहनी बोली–"चाची, वधूटी सच्ची है बिचारी। जिस दिन से यहाँ छोड़कर गया है–न खोज-ख़बर, न रुक्का-पत्री। अपना घर-द्वार छोड़ के आई है!"

आजवायन, सौंफ और पुदीने के अर्क़ निकालने को शाहों के घर सब हाथ रुझ गए। छाजों में डाल कोई सौंफ छाँटे, कोई आजवायन और कोई पुदीने के पत्ते तोड़-तोड़ रखती जाए।

नीचे तह्दरों से तांबिये-बल्टोइयाँ निकाल धो-माँज साफ़ किए तो शाहनी पास आ खड़ी हुई। अरख-परखकर बर्त्तन-भाँडे देखे, फिर गागर से पानी ले अपने हाथ से नितारने लगी। पास खड़ी मिट्ठी से कहा–"जा बल्ली, धनदई को बुला ला। बड़ी कमाल है इस काम में। आकर नाल लगा देगी।"

लखमी बाम्हणी पास आ खड़ी हुई और कमर पर हाथ रखकर कहा–"शाहनी, भला यह कौन मुश्किल काम! मैं कर देती हूँ। पार के साल पंजसेरी आजवायन का सत्त निकाला था मैंने।"

"लक्खमिये, दोनों एक-दूजे का हाथ बँटाओगी तो काम जल्दी निबड़ जाएगा। जा री निक्किये, मनोहर के कोठे से नीचे उतर जाना।"

लखमी से न रहा गया। छाज फटकारती रेशमा को सुनाकर कहा–"यह तो वही बात हुई, घी सँवारे सालन और बड़ी बहू का नाम। मैंने कहा शाहनी, धनदई को क्या अनोखे लाल लगे हुए हैं!"

चाची पास बैठी चंगेर में पुदीने की डंडियाँ चुन रही थी। सिर उठाकर लखमी को घूरा और झिड़ककर कहा–"अरी, नथ का नगीना अपने-आप ही बोलता है। मल्ला धनदई बड़ी सुचज्जी। उससे तेरी क्या ख़ारबाज़ी।"

लखमी पाँव के भार पास आ बैठी–"चाची, इतना कह दूँ, ऐसे कामों में संझाली चंगी नहीं। वस्त का तत्त ही बिखर-निखड़ जाता है।"

चाची ने घूरकर देखा–हैं री, बात तो तूने चंगी की है। आख़िर को जातकड़ी तू बाह्मणों की। पर धिए, बत्तीस सुलक्खना वह जो अपनी अक़्ल करे। तैंतीस सुलक्खना वह जो दूसरों से पूछ करे।"

लखमी खीज गई–"सत्त बचन चाची! अब न भूलूँगी! तुम लोगों के भाने तो धनदई ही सोलह कला सम्पूर्ण।"

मिट्ठी परत आई और शाहनी से कहा–'धनदई मौसी तो मुँह-सिर लपेटकर पड़ी

है। पिंडा तप रहा है। कहती है, कस्स चढ़ी है।"

शाहनी हँसने लगी–"हला री, सो भला! ले लखमी, तेरे मन की मुराद हुई!"

लखमी ने सिर की ओढ़नी उतार दिवार के साथ खड़ी चारपाई पर टूँग दी और बैठकर फरन-फरन छाज छटकने लगी–"शाहनी, इन कामों में क्या देर लगती है!"

माँबीबी ने छाज पकड़ लिया और लखमी से कहा–"चौके से तांबियाँ-बाटी उठा ला, यह तो मैं भी निबेड़ लूँगी।"

लखमी ने पीतल की बल्टोई ला गागर से पानी डाला और उसमें आजवायन, सौंफ डाल दी। फिर लोहे की नाल लगा तांबिये पर टिका दी।

शाहनी ने आसपास ढुकी कन्या-कवारों पर नज़र गारी–"अरी कोई कपड़ों से हो तो परे चली जाए। परछाँवा न दे अर्क़ को!"

एक-दूजे को धौल-धप्पे मारती शान्नो-चन्नी शरमा-इतराकर दूर हट गईं, तो शाहनी ने अनोखा हँसकर लाड़ से सिर हिलाया–"लो देखो, मरजानियाँ इतनी जल्दी सयानियाँ हो गईं।"

तांबिये के ढक्कन पर हाथ दिए लखमी को ख़बरे क्या सोच पड़ गई। दूर जातीं शान्नो-चन्नी को बिटर-बिटर तकती रही। आँखों से ओझल भी हो गईं, तब भी आँख न परताई।

शाहनी ने टोका–"क्यों री लखमी, किधर है ध्यान तेरा! ढक्कन पर हाथ रखे बैठी है। उठा ले, हाथ जल जाएगा।"

लखमी ने एक लम्बा स्वास भरा तो शाहनी चौंकी।

पास बैठ कन्धे पर हाथ रखा–"अभी तो चाव-चाव बैठी थी। अब क्या दिल में विक्खोभन उठ आया! अरी, अर्क़ दवा-दारू है। इसे निकालने में जी तेरा तपता खपता रहा तो किसी के तन-पेट न लगेगी इसकी बूँद!"

लखमी शाहनी से आँख चुराए रही।

शाहनी से हाथ का संकेत पा लड़कियाँ-काम्मियाँ इधर-उधर हो गईं तो पूछा, "किसी बात का फ़िक्र करती है क्या! आई कभी रुक्का-पत्री तेरे सासरे से!"

लखमी की छाती धौंकनी-सी चलने लगी। दुपट्टा नीचे कर सिर हिलाया–"न!"

शाहनी ने तीखी नज़र से देखा–"तन तो ठीक है री तेरा! चेहरा पहले से उतरा लगता है।"

लखमी ने नाल तले चूल्हे की लकड़ियाँ हिलाईं-डुलाईं, फिर फूँक मारकर भर्राए कंठ कहा–"शाहनी, क्या कहूँ! मैं अभागिन तो जीते-जी मर गई!"

शाहनी लम्बे छन तक लखमी की छाती तले आँखें गड़ाए रही। फिर ठंडी-कोरी आवाज़ में फुसफुसाई–"क्यों री...!"

लखमी ने सिर हिला हामी भरी तो अँखियाँ चू पड़ीं।

"हाय री! मैं मर जाऊँ लक्खमिये, साईं तेरा सुरगों में। यह पसर-कँटाली क्यों फैलने दी!"

लखमी लकड़ियों को लगा-बुझा धुएँ में ही फूँकें मारती रही और रोती रही।

चाची महरी ने थड़े पर से आवाज़ दी–"तन्दूर तप गया बच्ची, आकर रोटियाँ लगा ले।"

शाहनी ने पेड़े धड़ परात भर ली और शताबी-शताबी रोटियाँ उतार घी रचाने लगी। श्रीराम...श्री...राम! कलजुग वरत गया। विधवा बाह्मणी और री, ये लच्छन-कर्म!

नीचे हवेली के दरवाज़े से कोई रौला सुन पड़ा। बनेरे से झाँककर देखा–नवाब किसी जने से पूछा-ताछ करता था।

"छोड़ो, छोड़ो मुझे! ऊपर जाने दो! मेरी उम्दा ऊपर है।"

"नवाब चन्ना! कौन है? किसकी आवाज़ है? कहीं माँबीबी का घरवाला इलाहिया तो नहीं?"

"वही शाहनी, वही आन प्रकटा है। दिमाग चल निकला है शौदाई का।"

शाहनी ने तावली-तावली उठकर माँबीबी को आवाज़ दी–"अरी आना ज़रा! हाथ का काम छोड़ आ!"

सिर पर काली दोहर डाले माँबीबी भागती आई–"मुझे हाँक दी शाहनी! क्या काम आ पड़ा मेरे ज़िम्मे!"

"चौकस हो माँबीबी! ख़ैरों से नीचे इलाहिया आया है।"

"हाय अल्लाह!" माँबीबी ने हाथों की तलियाँ मल-मल कहा–"शाहनी, क्या करूँ! बताओ, क्या करूँगी!"

"हौंसला कर री! तुम्हें कौन कूचाबन्दी करनी है। बरसों बाद तेरे मियाँ ने इधर मुँह किया। जी सदके। जा री, ज़रा लटें सँभाल अपनी।"

चाची अर्क़ की निगरानी में बैठी थी।

नवाब को ऊपर देखा तो पूछा–"कौन है मल्ला, कौन आया है? किसकी आवाज़ थी?"

"चाची, मुबारक़ें! ख़ैरों से जवाँई भाई आया है!"

"कौन रे! इलाहिया! मैं वारी! आओ पुत्तरजी, आओ बैठो। अरी, कोई मंजी बिछाओ!"

इलाहिया ख़ाली-ख़ाली अँखियों बिटर-बिटर तकता रहा।

चाची पास आ खड़ी हुई–"राजी हो न!"

माँबीबी सामने हुई तो इलाहिये की आँख में कोई पहचान न उभरी।

चाची ने लस्सी का कटोरा आगे किया–"माँ रज्ज गई। पुत्तरजी, पियो!"

इलाहिये ने लस्सी का कटोरा गटककर नीचे रख दिया और पूछा–"मेरी उम्दा कहाँ है?"

चाची ने लाड़ बरसाया–"लो जी, यह रही माँबीबी! तुम्हारी अमानत!"

"न...न...यह नहीं, वह। मुझे मेरी उम्दा बेग़म चाहिए। मिलने दो न मुझे उम्दा से!"

चाची ने शाहनी को सैनत मारी–"माँबीबी को निकाल दे कोई चमकी का जोड़ा-दुपट्टा। पहन के उम्दा छन्नकन्नी बन जाएगी। हाँ, पुत्तर इलाहिया, बड़ी देरों से लौटे! वहाँ किस काम पर लगे हुए थे पुत्तरजी?"

नवाब हँसने लगा–"अल्लाह बेली इससे क्या पूछना! अपने इश्क़ के महक़मे में नौकर हुए पड़े हैं। चाची, होश-हवास नहीं है। ख़बरे पिंड की ओर कैसे मुँह कर लिया!"

चाची ने हाथ से नवाब को रोका–"मुड़ रे, बात पूछने दे। पुत्तर, यह तो बताओ, उम्दा बेगम कौन?"

इलाहिए ने मुंडी हिला दी–"बेग़म एक, नवाब अनेक। नित-नित नई लहरें। मौज बहारें।"

चाची ने राबयाँ को आवाज़ दी–"बल्ली, मुँह मीठा करवा बहनोई का। घड़े में से

गुड़ निकाल ला। मैं इसकी घरवाली को तो देखूँ।"

चाची के संग-संग माँबीबी अन्दर से निकली तो पहचानी न जाए। चमचम चमकी के जोड़े पर बन्दोवाला गुलाबी दुपट्टा। रूप-जवानी खिल-खिल पड़ी।

चाची ने हाथ से आगे किया–"मैंने कहा जवातरे, यह उम्दा से कम तन्नाज़ नहीं। तोला दो भारी ही होगी। जा पुत्तर, ले जा इसे घर। घर तो याद है कि नहीं?"

इलाहिया हँसने लगा–"जहाँ उम्दा वहीं घर।"

चाची माँबीबी के पास हुई–"ख़ैर मेहर है री माँबीबी! तबेलेवाली पौड़ियों से उतर चरखेवाले अँगना जा पहुँच। कोठा अन्दर लिपा हुआ है। झाबरी पानी की भेज देती हूँ। सेंवइयाँ राँध लेना। घी-बूरे के बर्त्तन राबयाँ रख आएगी।"

शाहनी बिलगकर माँबीबी को एक ओर ले गई–"मिएँ के साथ चटाक-पटाक न करना। बिचारा किसी टूने से बँधा है। सेवा करना, रब्ब भली करेगा।"

दोनों नीचे उतर गए तो चाची ने बेबे करभरी को बुला भेजा–"राबयाँ बल्ली, ज़रा साथ लेती आ बेबे को। आ के इलाहिये का टोना उतार देगी।"

माँबीबी-इलाहिया बेबे को नीचे उतरते दीखे थे। ऊपर आकर पानी की कनाली भरवाई और चाकू से पानी काट दिया:

ईची मीची कोको खाय
कंजरी भड़वी जहन्नुम जाय।
ईची मीची कोको खाय
कंजरी भड़वी जहन्नुम जाय।

बेरियोंवाले खू पर आन उतरा नट-कंजरों का डेरा।

गधों पर लदी खटोलियाँ, छाज, लुग्गड़, बाँस, रस्से और ढोल। आगे-आगे नट, पीछे-पीछे नटनियाँ।

बच्चड़ों को गोद में लगाए थन चुँघाती सरू के पेड़-जैसी लम्बी-पतली। घघरियाँ घुमाती पिंडलियाँ। लम्बे-काले झग्गे। पेट पर झूलती काली फ़िरोजी झालर। मींडियों-गुँथे सिरों पर ओढ़नी की भूँभलें। नाक में चौड़ा लौंगड़ा।

नट-कंजरों की काली लुनाई पर ढीले साफ़े।

"अरी ओ फुंबी-खुंबी, यहीं डेरा जमा लो। छाँह है छाँह!"

सयानी नटनी ने हाथ बढ़ा गधों पर से खटोली उतार दी–"ले डाल न्यानों को।" फिर बड़े-बूढ़े को आवाज़ दी–"आ ओ डोकरे उठल्लू। फैला दे लुग्गड़, तेरा कोड़मा बैठे।"

बूढ़े नट ने बाँसों की कैंची लगा ऊपर खेस का लुग्गड़ डाल दिया।

दोनों गधे सुरख़रू हो पहले ढीले पड़े, फिर पीठ हल्की हुई जान हिनकने लगे।

फुंबी ने पास जा दोनों को धप्पे दिए और अरुढ़ियों की ओर ठेल दिया।

बब्बर और गब्बर दोनों छाँह में पसर गए।

सयानी चौंसी को हाँक दी–"डोकरी, पिंड में से उपला लेती आ। चिलम धुखाएँ। ज़रा दम तो आए!"

डोकरी खीझ गई–"वाह ओ हरकतियो, बड़ा कल्ल सरीर ले के बैठा है। आप ही उठकर चिलम लगा ला!"

फुंबी गब्बर को देखकर तुनकी–"अरे, सब्र कर ले लँडोरे! मैं ही ला के देती हूँ। नट

को देख जट्ट गूजरियाँ इमरतियाँ बन जाती हैं। कहीं ऐलगैल में हो गया तो कटारी से कलेजा निकाड़ दूँगी।"

गब्बर पसरा-पसरा मसखरी करने लगा–"देखूँ इस दिलवैया को। बींध दूँगा तो गिनने लगेगी तारे।"

ख़ुंबी ने उठ बालक को बब्बर की छाती पर डाल दिया और लहँगड़ूँ से एक चक्करी मार बोली–"ले, ज़रा-सी देर खिला अपने दुंबे को। मैं गाँव में झोली फिरा के आई।"

थोड़ी-सी दूर गई तो बब्बर ने हाँक मारी–"अरी ओ, ख़ुमानी बन के न मटक। किसी भूखे की ख़ुद्दिया उठ गई तो डाल लेगा वहीं!"

"जा ए, एक ही लात से खँडेरू को खिला दूँगी। हाँ री जेठी, इस ग्राँ में नटकंजर की गोट्ठ तो न होगी!"

"न री, इसमें सिर्फ़ साँसी। होगी तो कालू साँसी की क़बीलदारी होगी। नर था वह, नर!"

डोकरे को खाँसी छिड़ गई। दम आया तो धमकाकर कहा–"बस री, उसकी महिमा गाती चली जाती है। वह था बटमार लुटेरा। तभी यह छाँह-ग्राँ याद आए तुम्हें।"

"तो और क्या डोकरे! क्या तेरा ही शहद पिंडा था जिस पर घिर-घिर आती थीं माखियाँ!"

डोकरे को लग गई–"जा री, ज़्यादा न मच। खींच दूँगा ज़बान।"

"जा ओ जा, तेवर दिखा के तू न बन जाएगा बादशाह! हजार मकर-ढोंग कर, रहेगा तो कंजर का कंजर!"

डोकरे ने छोटी-सी डाँग उठा ली और हाथ से दिखाकर कहा–"मेरे हाथों खाएगी, तभी राह पर आएगी।"

डोकरी माथे पर हाथ मार-मार फिटकें भेजने लगी–"अरे, बहुत देखा तुमको! तेरी जवानी भी घनी देख ली! खाती हूँ बेर, चबाती हूँ दाने। बोल, तेरी ज़िल्लत काहे उठाऊँगी। खाती होती खीर-हलवा चाँदी की थाली में तो तेरा धौंसना सहती!"

"बकती है राँड! दो टीपरी आज, दो परसों। आज़ादी बघारने चली।"

"डोकरा बुढ़ा गया। अरे कंजर अपनी ज़ात के, तू औरों की तरह नींव खोद चार दिवारें उठा उन पर घर डाल लेता, तो क़ैद हो जाता बड़े आदमी की मल्क़ीयत-हैसियत में। सारी जिनगी बिता, थान-मसान पहुँचने लगा तो अपनी ज़ात को छोटा समझने लगा। दीदे फाड़ के देख ऊपरवाले को। उसने कोई घर बनाया? ख़ुले आसमान पर डटा पड़ा है।"

"अरी ठाड़ी रह। बढ़-बढ़ बोलेगी तो धरती लील लेगी।"

फुंबी-ख़ुंबी दोनों हँसने लगीं।

फुंबी ने हाथ मटकाए–"अरी, इन दोनों के बोथड़े न रुकेंगे, जब तक कान में ख़लीफ़ा ढोल न बजा देगा!"

"चुप री, हरी लहर पर इतराने लगी। अरी, सबकी सूखती है यह चोह।"

दोनों नटनियाँ जवान, खिड़-खिड़ हँसने लगीं। फिर छाँह में लेटे गब्बर-बब्बर को हाँक मारी–"अरे, घुग्गे बनकर चिलम ही फूँकते रहे तो बुढ़ा जाओगे और रुत निकल जाएगी।"

बब्बर ने छलाँग ख़ुंबी का झोंटा पकड़ लिया–"चल, जा पीने को पानी ला। नहीं तो झूमर नचवा दूँगा।"

ख़ुंबी ने झुझका दिया और छातियों से ऐंठ दिखा दी।

बब्बर हँस-हँस बकने लगा–"कमज़ात-कमचोर कंजरी, जवानी पर इतराती है क्या!"

ख़ुंबी अपनी काली सुरमेदानियों से घूरती रही और नि:शंक हो बोली–"अरे, बाप ने दिया स्वास और माँ ने दी यह काया। तू काहे ठठेरा बन गाली बकता है!"

"चल री, पिंड इकट्ठा हो रहा है करतब देखने को और नाक तेरे में लाड़ली नहीं फबती। उठ जल्दी।"

डोकरे ने आवाज़ दी–"रब्ब तरसी, जल्दी-जल्दी मंडे तो टीप ले। फिर सजेगा तमाशा।"

टोपा-भर आटा-दाल गुड़ शाहों के यहाँ से लाकर डोकरी मंडे उतारने लगी।

उधर लचक-मटक ख़ुंबी-फुंबी चमकी के रूमाल हिला-हिला जमावड़े को रिझाने लगीं।

ख़ुंबी ने भीड़ में खड़े बालक के सिर पर टनोका दिया–"जा रे, माँ से कुछ खाने को ले आ।"

गुल्लू ने मुंडी हिलाई–"बता तो सही, क्या लाऊँ?"

"लाड़ले, याद कर ले, तेरी माँ ने आज क्या सलूना चढ़ाया था!"

गुल्लू मच्छर गया–"नटनी, पाँच पकवान थे पाँच!"

"वाह रे, तू तो बड़े धनाढों का पौत्रा-दोहत्रा? अरे बता तो सही, पकवान क्या थे!"

गुल्लू के साथी कोई गुल्लू का झग्गा खींचे, कोई उसके कन्धे पर हाथ मारे, कोई बाँह पकड़े–"कुछ मत बोल। साथ ले जाएँगे कंजर।"

गुल्लू को जोश आ गया–"क्यों न बताऊँ! बताऊँगा। मेरे घर आज बना था आम का अचार। आम का छिलका। आम की गिटक। आम का मसाला। आम का चूपा।"

नटखट गुल्लू ने घूमकर फिरकी डाली और कुत्ते की तरह भौंक-भौंककर पूछने लगा–"लाऊँ चूप्पा, लाऊँ? लाऊँ चूप्पा, लाऊँ?"

फुंबी लड़के के पीछे-पीछे नठने लगी–"आ रे आ। नहीं तो डाल दूँगी चोरफन्दा। सुन, पाल-पोस भरतार बना लूँगी।"

फुंबी ने लड़के को खींच अपने साथ सटा लिया।

बलूँगड़े शोर करने लगे–"निकल आ गुल्लू, छूट आ! नहीं तो पकड़कर समरक़न्द-बुख़ारा ले जाएगी।"

फुंबी छेड़-छेड़ खिझाने लगी बालकों को–"क्यों न ले जाऊँगी इस कौल-डोडे को! करतब सिखाऊँगी। बाज़ीगर बनाऊँगी। तमाशे में सजाऊँगी। सुनो रे सुनो, अगली बार इस पिंड लौटेगा तो यह गबरू ठुमका डालेगा। घुमेर डालेगा।"

बड़े लड़के शोर करने लगे–"नट बनेगा इस घाघरेवाली का!"

एकाएक आगे बढ़ गुल्लू ने नटनी की चूनर खींच दी।

बच्चे हँस-हँस तालियाँ बजाने लगे और नटनी झूठ-मूठ का गुस्सा दिखाने लगी–"दुरमुख कहीं का! अरे मिठलूणे, बाँध लूँगी तुझे अपने चुटीले से!"

हौलू ने गुल्लू की मदद को कबड्डी के से दो-चार फुंकारे मारे और चकरी खाकर नटनी की पिंडली पर चूँडी काट ली।

नटनी बकारा करने लगी–"तेरा थोबड़ा लीप दूँगी। तेरा बोथड़ा पोत दूँगी। रोता-

रोता माँ के कुच्छड़े में जा बैठेगा।"

डोकरी भी हँसती अँखियों झूठ-मूठ बुड़बुड़ाने लगी–"अरी, चुप न करेगी! बब्बर गोल पिटारी सजाने को है।"

बब्बर ने गले में एक तख्ती लटका ली। पंचमुखी कौड़ी ली और पाँवों में सींग बाँध लिए।

गब्बर ने रस्सियाँ बाँटकर डंडों पर कस दीं।

बब्बर ने पाँव के सींगों को रस्सी की खूँट में फँसाया। दोनों पैरों का वज़न सही किया और पहला क़दम उठा लिया:

कसर रह गई
कसर रह गई।

"वाह-वाह-वाह!" किसी ने ख़ुश हो अपनी पाग उतार नट की ओर उछाल दी। किसी ने झग्गा उतार दिया। कोई दौड़-दौड़ घरों से दाने ले आया।

खूब लहराते लहँगे के घेर में फुंबी लहरका नाचने को आ खड़ी हुई।

लाल-काली चोली। नीली ओढ़नी।

बाँसों पर कसी रस्सियों पर चलती फुंबी एक ठुमका मारती हुई आगे को सरपट झुकती। फिर अपना दाहिना हाथ आगे को फैला बायाँ हाथ छाती के आगे मोड़कर दाहिनी बाँह की ओर ले जाती। फिर झुकी गर्दन फिराती और रस्सियों पर पाँव टेक आगे क़दम भर लेती।

"कुर्बान जाएँ! बलिहारी जाएँ!"

गब्बरोट एक-दूसरे को देख-देख हँसने लगे:

हाय मुरब्बो।
हाय आन्नदो।
हाय गुलकन्द।
परमानन्द।

पीछे से आ शौंके ने दित्ते को गलबाँही दी और हँस-हँस कहा–"चाशनी है। चाशनी है।"

नटनी ने आँखें मींचीं-खोलीं, फिर मींचीं, फिर हाथ का छाज बनाकर कहा–"खाएगा? दूँ?"

बड़े लड़के बाजू हिला-हिला पाँव से थिरकने लगे।

डोकरी ने धमका दिया–"अरे टब्बरो, यह बेसवा का नाच नहीं। नट-कंजरों का करतब-तमाशा है।"

"अरी गूँ-भुननी, हमें न बता। हमें न सिखा। हमें न पढ़ा।"

किसी ने हौलू के सिर पर धप्पा मारा–"अरे, दौड़ो-दौड़ो! नटनियाँ रूह कब्ज़ कर लेती हैं।"

तुर्की का हर सुल्तान ख़लीफ़ा और जी, ख़लीफ़ा वह जिसके हाथ में तलवार।

तारेशाह ने पहले तो चक मनहासाँ के तेलियों की बहन भगाई, फिर उन्हें क़त्ल की साज़िश में सज़ा ठुकवा दी।

मुक़द्दमे का फ़ैसला सुनाया गया तो शाहों की पगड़ियाँ हाथ-हाथ ऊँची हो गईं।

तारेशाह ने आज के दिन बड़ी बरखुरदारी निभाई। भरी कचहरी दोनों भाइयों को झुक पैरीपौना किया तो शाहों की आँखें गीली हो गईं। लाख मनमुटाव, लड़ाई-झगड़े हों, शरीक़ भाई तो एक-दूजे के बाजू-बाँहें हुए। शाहों को मुबारक़ें मिलने लगीं।

"शाहजी, आपने मुक़द्दमे के जोड़-बन्द पुख़्ता कर डालने में कोई कोर-कसर नहीं रखी।"

"सही है। नाँवेवाली गुत्थली बड़ी और सयानफ़-अक़ल और भी बड़ी। मुक़द्दमा तो हक़ में जाना ही था।"

"मुक़द्दमे शाही मामले भुने हुए दोनों से नहीं निबटते।"

"क्यों न हो बादशाहो, आख़ीर तो खून का रिश्ता है। साहिबसिंह के पुत्र-पौत्रों और चढ़तसिंह की अल-औलाद में क्या फ़र्क़! मुंड एक ही, शाखाएँ अलग-अलग।"

"फिर बादशाहो, शाहों का नामी-गरामी क़बीला और टाकरा करनेवाली बीच में तेली।"

बड़े शाह सुनते ही चौकस हो गए। काशीशाह को कोने में ले जाकर कहा–"काशीराम, सामने महीपत खड़ा है। अदालत-कचहरी के दस्तूर तो एक तरफ़। बाप का दिल है। फ़ैसला सुन डाँवाडोल हो रहा होगा। ऐसे सदमे की मार अच्छे-अच्छे तगड़े नहीं सहारते।"

काशीशाह का मन न माना–"ज़ख़्म पर नमक छिड़कनेवाली बात हुई। भ्राजी, आप चाहो तो दम्म-दिलासा दे आएँ। मैं ज़रा अहलमद मुंशी को भुगता लेता हूँ।"

शाहजी ने दूर से देखा। दुबला-पतला बरकती का बाप महीपत थका-हारा लोगों से आँखें चुराए, साफ़े के लड़ से आँखें पोंछता जाता था।

पास आ शाहजी ने हमदर्दी जताने को महीपत के कन्धे पर हाथ रखा तो महीपत तेली फफक-फफक रो पड़ा–"हाय ओ रब्बा, सदा ही धनाढों की चोट ग़रीबों पर। ऊपर से औलाद भड़वी ने बरबाद कर दिया। लड़की गई, साथ इज़्ज़त ले गई। घर की लाज बचाने को सामना किया पुत्रों ने तो उन्हें क़ैद हो गई। ग़रीब की बरबादी ही बरबादी।"

महीपत अजीब चोट-खाई बेबस आँखों से शाहजी की ओर देखने लगा। देखते-देखते आँखों में ख़ूँख़्वार दहशत उतर आई–"कहाँ शाहों का माना-परवाना मत्था, कहाँ ग़रीब तेलियों की धी।"

महीपत ने सिर का साफ़ा उतार हाथ में ले लिया–"इज़्ज़त-पग्ग दोनों चली गईं शाहजी! इस सताए हुए तेली की एक बात पल्ले बाँध लो। जो मेरी धी को मान-इज़्ज़त से शाहो ने घर में न बसाया तो इस बाप का स्राप इस ऊँचे क़बीले पर लग जाएगा शाहजी! इतना याद रखना।"

महीपत ने बेबसी में हाथ अपने कलेजे पर रखा और ज़हर की करूली फैंक दी–"हाय...हाय...हर श्वास के साथ मेरी हाय लगेगी शाहजी! गरीब की हाय बुरी।"

दोनों को साथ-साथ देख लोग पास आ जुटे।

शाहजी ने समझदारी दिखाई–"महीपत, जो अर्ज़ी-परचा होना था सो हो चुका। अब मेरी बात ध्यान से सुनो। तुम्हारी धी अब हमारी छाँह में। दूसरी बहू-बेटियों की तरह हमारे अंग-संग। तुम्हारे बरख़ुरदार पहल न करते तो यह फ़साना न बनता। अब हमारी हरचन्द कोशिश होगी कि रिश्ते के मुताबिक़ तुम्हारी मान-इज़्ज़त हो।"

गुरुदित्तसिंह पास आ ढुके–"क्यों नहीं, ख़ानदानी चंगिआइयाँ छिपी तो नहीं रहतीं। बात निकले मुँह से, वह भी वज़नदार!"

शंसा सुन शाहजी और नरम पड़े–"महीपत, आज से तुम हमारे सम्बन्धी हुए।"

महीपत की आँखों से सावन-भादों बरसने लगे–शाहजी के दोनों हाथ पकड़ रुँधे गले से कहा–"पहले तो बच्चड़ी ने बाप का मुँह काला किया, फिर तारेशाह ने हमें ही रगड़ दिया। शाहजी, घर उजड़ गया अपना।"

शाहजी ने दिलासा दिया–"हौंसला करो महीपत! कभी दरिया पार आना हो तो बेटी का घर-दर देखते जाना।"

कचहरी के लुंडों-मुश्टंडों के साथ आते तारेशाह ने महीपत को शाहजी के साथ खड़े देखा तो ज़हरीली हँसी फैला दी–"ख़ैरों से किससे बातें हो रही हैं!"

तारेशाह के कचहरी-यार ख़ुशिये ने मश्करी की:

नाम खीर ख्वाज पानी टिप्प नहीं
नाम बोढ़ शाह पत्तर इक्क नहीं
नाम नूर अली आँख इक्क नहीं
वाह वाह रजपूती नाम तेली महीपत्त का!

महीपत बेबसी गुस्से से काँपने लगा तो तारेशाह के गवाह शेरा और अता मुहम्मद हँस-हँसकर बोले–"बादशाहो, लगा दी न पीठ। अब इस मुबारक़ दिहाड़े जश्न-जल्सा हो जाए!"

तारेशाह यार-दोस्तों के साथ माच्छियों के तन्दूर की तरफ़ बढ़ गए तो शाह भाई ठहरी-परखरी चाल में कचहरी से निकले।

दित्ते जेहलमी की दुकान से बूँदी-बदाने की टोकरी बँधवाई और घोड़ों पर सवार हो गाँव की राह जा पड़े।

अड्डा पार कर काशीशाह बड़े भाई से बोले–"भ्राजी, कचहरियों की क़ानूनी और मुहर्रिरी झूठ-झुँखाड़ ही समझो। वादी कुछ कहे, गवाह कुछ। हादसा कुछ, बयान कुछ। जुर्म किसका और सज़ा किसको। पुख़्ता चीज़ तो एक ही अदालत में–अदालत और अदालत की कुर्सी।"

शाहजी ने तीखी नज़र भाई पर डाली–"काशीराम, इस बात पर मैं तुम्हारे साथ मुत्तफ़िक नहीं। अंग्रेज़ की कचहरी में इंसाफ़ होता है। वक़ील पढ़े-लिखे। क़ानून लिखत में दर्ज़। इंसाफ़ का घर है कचहरी-अदालत, लट्ठुम्मनों का डेरा नहीं कि जिसके जो मन में आया, बोल दिया या फ़ैसला दे दिया।"

"आपके कहे मुताबिक़ तो मुक़द्दमों की रुबकारी बिला रू-रियायत भुगत जाती है!"

"बिला-शक़ काशीराम! आज का फ़ैसला मद्देनज़र रखकर क्या कहा जा सकता है कि मुंसिफ़ जज ने फ़ैसला सही नहीं दिया?"

काशीराम हँस दिए–"इस फ़ैसले का सेहरा तो आपके तजुरबे, मुस्तैदी और तारेशाह की बिछाई हुई बिसाते-शतरंज को है। जो चश्मदीद गवाह हमारी तरफ से पेश हुए, उन्होंने मुक़द्दमे का मुँह-माथा ही बदल दिया।"

काशीशाह ने एक भरपूर नज़र बड़े भाई पर डाली–"रह-रह दिल में ख़याल उठता है ग़रीब महीपत की बेबसी और मुफ़लिसीं का। भाई हमारे ने उनकी इज़्ज़त पर हाथ डाला। बेटी भगाई। बेटों को सज़ा दिलवाई और आप सुवक़त फ़ारिग हो मुक़द्दमा जीत घरों को चल पड़े।"

"एक ज़रूरी बात भूल रहे हो काशीराम, किसी पर छुरे से क़ातिलाना वार

करना, किसी बेवा औरत को उसकी मरज़ी से फुसलाने से ज़्यादा बड़ा गुनाह है।"

काशीराम नरम हो बोले–"कानून की निगाह में ज़रूर यह बड़ा जुर्म है और बड़े जुर्म की सजा मुज़रिम को ज़रूर मिलनी चाहिए।"

शाहजी भाई की चुभन को समझे। चुपचाप कुछ सोचते रहे, फिर सरपंची मुद्रा में बोले–"देखा जाए तो तुम्हारा ऐसा सोचना भी ग़लत नहीं। जिस तरह आशिक़ को माशूक के वस्ल के सिवाय कोई दूसरा इलाज नहीं, उसी तरह कचहरी में भी कुफ्र-झूठ के बिना गुज़ारा नहीं। वहाँ तो खुले-मुँह दीदःबाज़ी की तरह दलीलबाज़ी शुरू हो जाती है और सच बिचारा किसी पर्दानशीन औरत की तरह परदे के पीछे से झाँकता रहता है।"

काशीशाह ने दाद दी–"वाह भ्राजी, जो मैं कहना चाहता था उसे टकसाली जामा पहनाकर आपने क्या असर पैदा किया!"

"छोटे भाई से तारीफ़ सुन शाहजी का मुखड़ा दमकने लगा। ढंग से मज़मून बदल दिया–"आज कचहरी में शमशेरसिंह का पुत्तर महताबसिंह कान में कह गया था कि तारेशाह गंगूवालवाले सरबदयाल को धमकी दे आया है कि आग लगा दूँगा पकी फ़सलों को।"

"कब तक चलेंगी यह बदियाँ और बद-बाज़ियाँ। कहते हैं न:

माले हराम बद
बराहे हराम रफ़्त!"

लखमी बाह्मनी सिल-बट्टे पर लहसुन-प्याज पीसते-पीसते गाने लगी:

मैं जाना वड्डु हंस है
ता मैं किया संग
जे जानू बघ्घ बप्पड़ा
मूल न भेंटूँ अंग।

सुनकर शाहनी के लूँ खड़े हो गए। आवाज़ में गूढ़ा दर्द। पास जा पीठ पर हाथ रखा–"हैं री निगोड़ी लक्खमिए, तेरे दिल से अभी तक न उतरे काले बादल!"

लखमी ने आँखें पोंछीं और घुटनों पर सिर डालकर कहा–"क्या करूँ शाहनी, टिब्बे से उतरी और खू में! इस अशोभे दिल पर अपना बस नहीं।"

"क्यों री, फिर मिली थी उससे?"

सिल-बट्टे पर हाथ फैला लखमी ने न 'हाँ' की न 'न' की। भर्राए गले कहा–"मैं तत्ती क्या करूँ शाहनी! सैयदज़ादड़ा जाने किस जादू के ज़ोर मुझ पर हक़ जमाए हुए है। बहुतेरा संजम रखा पर वह मेरे तन-मन से नहीं उतरता। उतरता ही नहीं।"

लखमी सिसकारियाँ भरने लगी तो शाहनी ने पास बैठे हौले से कहा–"हैं री बाम्हनिये, तू उस तक पहुँची तो कैसे पहुँची? धर्म के चोले का भी लिहाज़ हया न रखा!"

"कर्म इस अभागिन के शाहनी। पार के साल नौशहरे गई थी अपने नानके। बस, सैयदज़ादे ने ऐसी दीठ दी कि सीधे नैन-प्राणों में खुब गई।"

चाची के पाँवों की आहट पर शाहनी चौकस हो गई। ऊँचे गले से कहा–"मैंने कहा लखमी, तावली-तावली काम समेट और ज़रा तद्दरों में चल। भंडारे को धूप लगवानी है!"

चाची महरी ने पास आ एक तीखी नज़र लखमी पर डाली और झिड़ककर कहा–"सिर-सड़ी इसकी ग़ज़ल घोड़ी जारी ही रहती है। सब्र कर ले री! ज़रूरी नहीं, तेरे

क़िस्से-करतूतें दिन-रात लहकते ही रहें।"

लखमी ने धनिया-जीरा पीस सिल-बट्टा उठा दिया। पानी ले हाथ धोए, ओढ़नी के छोर से पोंछ और शाहनी से पूछा–"भरोखे-कपाट खोल दूँ न नीचे के!"

"हाँ री, चल मैं भी चलती हूँ।"

नीचे तद्दरों में गेहूँ-बाजरे की काची गंध ने लखमी के चित्त को ऐसा भरमाया-डुलाया कि भर-भर अँखियाँ रोने लगी।

शाहनी कुछ देर अजान बनी रही, फिर प्यार से कहा–"फिट्टे मुँह री, अभी तो कल तेरे सिर से बला टली है। हमारे ही सिर पर पाप। मल्ला इतना ऊपर-हेठ काहे को किया-करवाया। तू जा बैठती सैयदों के पिछवाड़े। जम्म लेती हराम का!"

लखमी गहरे पछोत्तावे से बोली–"लोक-लाज, दुनिया का डर-डरावा और क्या? रब्ब गवाह है शाहनी, उसने मुझ पर कोई ज़ोर-ज़बर नहीं किया। सच पूछो तो जना अपने वचन से नहीं डिगा। रो-रो उसे बताया तो बोला–'मेरा कौल रहा लक्खमिए, तू मान जा। अगली ड्योढ़ी से घर चढ़ाऊँगा।'"

"धिक्कार री, तू बाह्मनों की जायी डुली भी तो मलेच्छ पर। बड़ा उसे सैयदज़ादा बुलाने चली है। पहले साल जुलाहा, दूजे शेख़, पैसे चोखे आ गए तो सैयद। छोड़ दे री, दिल से निकाल बाहर कर उसका ख़याल। जात-धर्म से बाहर वह तेरा कुछ नहीं मल्ला।"

हाथ फैला लखमी ने बाजरे की बोरी ऐसे उठाई ज्यों सेरी-पंसेरी हो। दिवार के साथ टिका एकाएक शाहनी के पाँव पकड़ लिए–"क्या करूँ मैं अभागिन, क्या करूँ! जग के आगे मेरे दुखड़ों का मुँह-माथा कोई नहीं। क्योंकर कहूँ लोकजहान से, मैं उसके बिना नहीं जीती।"

"होश में आ। सौदाई हुई है क्या! अरी पल्ले बाँध ले, किसी भी बाह्मनी का साँई न कोई नमाज़ी सैयल हुआ, न होगा।"

लखमी बाल खींच-खींच अपने सिर पटकने लगी–"जानती हूँ। लाख समझाती हूँ पर दिल नहीं मानता। शाहनी, देह से वह ज़िन्द अलग हो गई–पाप चढ़ा सो विरथा और मैं तत्ती वहीं-की-वहीं। इस हल्ले से मैं नहीं बचती शाहनी! मैं मर जाऊँगी।"

"हाय-हाय, कलजुग वरत गया! विधर्मी के संग अंग भेंट तेरी मति भ्रष्ट हो गई। मल्ला, ज़रा सोच के देख, क्या उसके चौके में खाए-चुगलाएगी? अरी, तू जन्म की ब्राह्मणी, मलेच्छ को मुँह मारने दिया!"

लखमी का दुबला चेहरा दमकने-चमकने लगा। कुरते-तले छातियाँ थर्राने लगीं।

"खम्भा शाहनी! मेरे ज़ालिम नच्छत्र, और क्या! सैयदड़े की बात सोचते ही इस गिरंदी धरती पर काँगें घिर आती हैं। मर जाऊँगी, उसके बिना मैं मर जाऊँगी।"

"मुड़ री, ख़बरदार जो यह बात दोहराई! दिल से निकाल बाहर कर अधर्मी यवने को। निकाल फेंक उसकी यादें दिल से और गाड़ आ उसका पुतला कब्रों में।"

लखमी ने कानों पर हाथ रख लिया–"देवी-देवते मेरे गुनाहों को बक्शें। ऊपरवाले को हाज़िर-नाज़िर जान के कहती हूँ, वही मेरे तन-मन का साथी।"

शाहनी की आवाज़ एकाएक ठंडी हो गई–"अरी पवित्रो ब्राह्मणों की, तेरे सिर मौत खेल रही है। तू मर जाएगी। टोटे कर डालेंगे तेरे भाई-बिरादर। तू नहीं बचती..."

लखमी ने आँख न झपकी और खड़ी-खड़ी शाहनी को वहशत से घूरती रही। शाहनी ने पास आ कन्धों से झँझोड़ा–"कान खोल के सुन री, तू पेट से रह गई, चाची ने

तुमको हाथ दिया। बड़ी बेला के नामवाले तेरे बाबा भृगुनाथ के हित। अब धर्म का चोला उतार तू भट्टनी बन, शेख़नी बन या कंजरी। जुहार कर, सलाम कर, हमारी बला से!"

लखमी को घूरते देख शाहनी बाहर निकली और अडोल कुंडी चढ़ा दी।

उस रात लखमी शाहों के तद्दरों में गल्ले की बोरियों पर औंधी पड़ी रही और ऊपर शाहजी की बैठक में देर तक सलाह-सूत्र होते रहे।

आधी रात गए लखमी का वीर परसराम कोटली लोहाराँवाले जजमानों के यहाँ से लौटा तो शाहों का बन्दा सीधे हवेली बुला लाया। शाहनी हाथ मल-मल गई–"इस धर्म-पिट्टी ने अपना सत्त-संजम डिगा लिया। चाची, भाई नहीं छोड़ते इसे।"

"नसीब बुरे लड़की के और क्या! ये ज़िन्द काया की खलबलियाँ जब भी मचें, बुरी। सुना हुआ है न–लग्गियाँ-पच्छागच्छतियाँ मुड़-तुड़ कलेजे बींधें।"

"लख लानत इस लड़की पर। सैयदज़ादड़ा मर्द बच्चा है। यहाँ लग्ग गई, यहाँ। वहाँ लग्ग गई, वहाँ।"

"मल्ला यह अपने कुल की पहली छलकन नहीं। इसकी मौसी मातुलानी ग़र्क़जानी घर-गृहस्थी को पीठ दे गई थी। हैं री, घराने में भूख न पड़ जाए एक बार, ख़ुधा-ख़ुद्दियाँ पुश्त-दर-पुश्त नहीं बुझतीं। इस मंगलामुखी की प्यास तो दरिया में ही ठंडी होगी।"

चाची महरी गहरी सोचों में ख़बरे क्या-क्या सोचती रही। निक्की-सी झोंक के बाद आँख खोली तो बोली–"बच्ची, मनुक्ख सोचने पर आए तो नौशहरेवाले शेख़ कौन से बग़दादी सैयद हैं। अरी क़लमा पढ़े होंगे सौ-दो सौ साल! ब्राह्मण ही होंगे या मच्छीखाने या खीरखाने, जो भी समझ लो!"

शाहनी सुनकर भौंचक रह गई–"चाची, नींद्रे में तो नहीं बोल रही! एक बार जो भ्रष्ट हुआ सो धर्म गया। सौ-दो-सौ साल के बाद भी क्या सैयदों का प्रजापति गोत्र जुड़ा रहेगा उनके नाम से! अन्धेर पड़ गया। चाची, कुछ तो सोचो..."

"सोचूँ क्या मेरी बच्ची! सोच-सोच तो मत मारी गई इस बुड्ढी की। मैं ही पुड़िया ले आई थी न उस कुत्ती जमालो से कि बाह्मणी की लाज रह जाए। तू ही बता, पाप किसके सिर चढ़ा! मेरे ही न! दिल में बड़ा क्लेश पाती हूँ। हत्यारन तो मैं ही हुई। यह मरगई लहकाती जाए तिरखा-तृष्णा को और मैं तोहमत के लिए!"

"चाची, जो लखमी के भाग। जो हमें करना था, सो किया। अब मरदों तक बात पहुँच गई, जो ठीक समझेंगे करेंगे।"

मंजी पर लेटे-लेटे चाची ने बोल उठा लिए:

गए वक़्त ते उमर फिर नहीं मुड़दे
गए करम ते भाग न आँवदेने
गई लहर समुद्रों तीर छुटा
गए मौज मज़े न आँवदेने
गई गल्ल ज़बान थी नहीं मुड़दी
गए रूह कलबूत न आँवदेने।

"बेड़ा गर्क़ हांगकांग के जहाज़ों का, प्लेग के चूहे ले आए। हिन्दोस्तान। महामारी फैला

दी!"

"हांगकांगियों की क्या लानत-मलामत! भला चूहे क्यों डरने लगे सरकारी क़ानून से!"

"दुरुस्त बादशाहो! जानवरों पर अंग्रेज़ी क़ानून का क्या ज़ोर! चढ़ बैठे गल्लेवाले जहाज़ों पर।"

"जी, चूहों को कौन सी राहदारियाँ चाहिए थीं!"

"सुनने में आया है, इस बार पिछली प्लेगवाले हांगकांगी चूहे नहीं, इस बार मंचूरी चूहे हिन्दोस्तान भेजे गए हैं।"

"भोली बातें। मंचूरी चूहों ने कौन से कोह पहाड़ लाँघकर आना था।"

"महामारी तो यह तीन-चार बार पड़ चुकी है। टब्बरों-के टब्बर पुँड गए!"

फ़तेह अलीजी ने मुँह से नड़ी निकाल ली–"शुभ-शुभ बोलो। मुँह से न नाम लो इस खप्पड़-कफ़नवाली का। रिहायश से गल्ला-दाना दूर रहे, बाक़ी सब ख़ैर मेहरें हैं।"

"अदालतगढ़ से चली हुई है यह ख़बर कि शहरों-शहरी टीके शुरू हो रहे हैं। पहला हल्ला इसका बंबई में हुआ है।"

मौलादादजी बोले–"पिछली प्लेग में सरकार ने मलकवालवालों को लगाए टीके और जी, घंटे दो में सबका कूच हो गया।"

"डाकदर अपने बुला लेती है सरकार विलायत से। इनकी तरफ़ से कोई मरे, कोई जीए! ये गोरे अपने घोल बताशा पीएँ। देसी लागों को इन्सान नहीं समझते।"

"खालसा गुरुदित्तसिंह, आपकी हमेशा ही बरखिलाफ़ी बातें। पूछो, रब्बी मार पर सरकार का क्या दोष! अकाल-महामारी तो बन्दे के लिए नहीं न!"

"शाहजहाँ के वक़्त में मुल्क़ में डाढा अकाल पड़ा था। मनुक्ख ने मनुक्ख को खा डाला!"

गुरुदित्तसिंह अड़े रहे–"सुना है कहीं कि कोई अंग्रेज़ हाकिम भी मरा हो प्लेग से?"

हास्सा पड़ गया–"क्या पता हाकिमों के मसीहा मौला ने यही हुक़्म निकाला हो कि मरे तो बन्दा देसी ही मरे। कुछ न कुछ दाँव-पेच है ज़रूर इसमें भी! देखो न जी, अपने इन्क़लाबी काके सिरों पर बाँध के कफ़नी उठ खड़े हुए हैं। बादशाहो, अपने मुल्क का चोनमा सिट्टा है। उठती पौद है।"

कृपाराम दिल से अपनी सरकार के ख़ैरख़्वाह, बोले–"बादशाहो, कुछ भी कह लो, बग़ावत की मरहम-पट्टी तो कोई हक़ूमत नहीं करती। जो सिर उठाएगा, कुचला जाएगा।"

गंडासिंह को जोश आ गया–"अपने नहरियों ने सरकार हिला दी। कुछ सिर फट्टड़ हुए, कुछ खोप्पड़ फूटे, कुछ घर फुँके। टेशनों पर बम-पटाख़े भी चल गए, पर मालिएवाली सरकार की तूती तो रुक गई। वजह यह थी कि खेतोंवाले भी तैयार थे मरने-मारने को। बादशाहो, यह तो नहीं कि सिर भी न फूटे और बन्दा बढ़-बढ़ के फ़तेह-बरक़त भी चूम ले।"

शाहजी बोले–"यह तो हुआ न जी ख़ुला-ख़ुलासा खत्त-धर्म पर, थोड़ी-बहुत तिकड़म मुमकिन है तो वकीली ज़िरह में।

"मेरी बात पल्ले बाँध लो। जुल्म, जुल्मी और जुल्मत नेस्तनाबूद करने हों तो सिर तली पर रखकर ठिल जाओ।

"गुरु साहिब कहते हैं:

जो तुम्हें प्रेम करन का चाव
सिर धर तली गली मेरी आव।"

जहाँदादजी ने सिर हिलाया–"यह बात है कि नहरी इलाक़े में टब्बर के टब्बर फ़ौजियों के। जंगी लाट ने सलाह दी सरकार को कि नमकहलाल फ़ौजों को बागी और इन्क़लाबियों से न मिलने दो। अच्छा यही है कि इनकी बात मान लो!"

शाहजी ने हामी भरी–"बात एक और भी है कि जंगी लाट तो हुआ न असली लाट। सालिम सबूता। पुड़ से पुख्ता। बाक़ी सिवल लाट तो आधा लाट हुआ। इसीलिए उसे टुंडा लाट कहते हैं। हुकूमत का एक ही हाथ उसके पास और वह क़ानून का। बाक़ी फ़ौज की ताक़त तो जंगी लाट के ही पास हुई।"

"रब्ब आपका भला करे, यह मामला यारोनी पादशाहवाला ही है। यारोनी पादशाह मतलब अद्धा पादशाह।"

मुंशी इल्मदीन छिड़ गए–"फ़ौजी बिगड़ैल ख़ुदा-न-ख़्वास्ता मच जाएँ तो नतीजा अच्छा नहीं हो सकता।"

मैयासिंह ऊँचा-ऊँचा हँसने लगे–"फ़ौजियो, बुरा तो मानना मत। पहले फ़ौजी और ऊपर से जट्ट। पुट्ठियाँ तो आप हो गईं। सरकार ने सोचा होगा कि ज़ालिम उठ के खड़े हो गए तो गदर मचा देंगे।"

कर्मइलाहीजी ने हुक्के के साथ-साथ ख़ूब मज़ा खींचा इस बात का–"गंडासिंह, अंग्रेज़ की शनाख़्त-पहचान बुरी नहीं। समझ लिया कि क़ौम ख़ालसा की हुई ही मुंड से ग़दरी। बेइंसाफ़ी देखी और उठ गए! इन्हें लड़ना कौन सिखाए!"

गंडासिंह की ढीली पगड़ी को बैठे-बैठे कलफ़ लग गई–"प्यारयो, सरकारें अपनी मरज़ी से नहीं झुकतीं। लोक हो जाएँ तैयार तो या पलटे तख़्ता हकूमत का या हो इन्क़लाब।"

शाहजी ने ऐसी निगाह दी कि सुरंग में सुराख़ देख लिया हो। ख़बरदार कर कहा–"अपने पुत्र-पौत्रे तैनात हों लाम-लश्करों में तो चौकसी ही चंगी।"

दीन मुहम्मद ने झट डोर पकड़ ली–"शाह साहिब, अपने इन्क़लाबियों के क्या हाल-चाल! बड़े धूम-धड़क्के हैं इनके आजकल।"

छोटे शाह बोले–"जब ख़ुदीराम के साथी को पुलिस ने क़ाबू कर लिया, तो बड़े ज़ोर-जुल्म हुए उस पर, पर उस माई के लाल की एक ही चुप्प। अपने किसी साथी का नाम मुँह पर न लाया। तंग आकर पुलिस ने सिर काटकर बहादुर का कनस्तर में डाल दिया और कलकत्ता भेज दिया शनाख्त के लिए।"

"बल्ले-बल्ले ओ शेरा! वाह, मौत भी क्या सजी! सुच्ची पाक़ शहीदी हो गई के।"

कृपाराम को याद आ गया–"आपने इन्क़लाबी ढींगरे की भी ख़बर सुनाई थी अख़बार से।"

"पढ़ने गया विलायत और बच्चड़े ने जा मारा तमंचा कर्ज़न की छाती में और सरे-बाज़ार ऐलान किया कि मादरे वतन के लिए मरने में सवाब ही सवाब! चढ़ गया सूरमा फाँसी हँसते-हँसते।"

मीराँबक़्शजी परेशान–"लाट कर्ज़न तो माड़ा नहीं था, भला उसकी जान क्यों ली!"

"नाम से ग़लतफ़हमी होती है, पर मरनेवाला लाट कर्ज़न नहीं था। शरीक़े में कोई होगा दूर-पार का भाई-बन्द।"

"चलो जी, लाट बच गया। हिन्दोस्तान में खट्टी कमाई उसकी चंगी ही थी। उससे अदावत करने में क्या रखा था!"

गुरुदित्तसिंह बोले–"मीराँबक़्श, वैर-अदावतों में शक्कर-शीरनियाँ तो नहीं बाँटी जातीं। किसी को मार छोड़ा या किसी के हाथों मर गए। जो पहल कर ले सो वाह भला!"

शाहजी को कुछ याद आ गया और ज़बान में रंग चढ़ गया–"तवारीख़ भरी हुई है अदावत और सिखावट से। एक बार बीज फूट आए, फिर नहीं रुकते जंग-लड़ाइयाँ। इस अदावत के पीछे गक्खड़ों ने शहाबुद्दीन ग़ौरी की जान ले डाली।"

जहाँदाद जी गरमा गए–"शाहजी, हो जाए यह क़िस्सा। कहीं थोड़ा-बहुत सुना हुआ जरूर है, पर ठीक तरह याद नहीं।"

"ग़ौरी ने बढ़-चढ़कर हमले किए हिन्दोस्तान पर। जब क़दम रखे पंजाब में, पहले टाकरा हो गक्खड़ों से। गक्खड़ों के पास थी सारे पोठोहार की मालकी! पुज्ज के बहादुर क़ौम। उधर ग़ौरी लूट-खसोट और जुल्म का शहंशाह। दो ज़बरजंग गक्खड़ सिफ़रखान और नंगखान के दिमाग़ों पर अदावत की लहर चढ़ गई। फ़िदाईख़ाँ खोखर को साथ मिलाया और मता पका लिया। खोखर भी बड़े गर्म-गुर्रार।

"ग़ौरी लौट रहा था लाहोर से ग़ज़नी। धमियाक पर पड़ाव पड़ा। क़नातें लग गईं। खेमे रोशन हो गए। ग़ौरी चैन से आराम फ़रमाने लगे। उधर दुश्मन चौकस।

"मौक़ा पाकर हल्ला बोल दिया। पहले तो खेमों के बाहर पहरुओं को हलाक़ किया। फिर बारी आ गई शहंशाह की। वार किए ग़ौरी के बदन पर पूरे बाईस और पिंडा शहंशाह का छलनी कर छोड़ा।"

गंडासिंहजी ने सिर हिलाया–"चलो, हो गई शहंशाही ढेर!"

काशीशाह बोले–"हाँ जी, गक्खड़ बड़ी बहादुर क़ौम! जो हमलावर आए, उससे भिड़ जाएँ। कई जंग जीते और कई हारे। कई बार क़त्लेआम हुए। आख़ीर इन्हें दीन क़बूल करना ही पड़ा!"

मौलादादजी बोले–"गक्खड़ राजा होडी ने राजा रसालू की बेटी से शादी की थी।"

जहाँदादजी ने मन ही मन कुछ याद किया–"अजनालेवाले गक्खड़ चौधरी मरदान अली ख़ाँ और सुल्तान अली ख़ाँ के क़बीलों के गिनकर पचास लोग फ़ौज में हैं।"

फ़तेह अलीजी बोले–"हैयीशाबाश, उनके सजने की जगह ही वही हुई! बाक़ी जिवियोंवाले हैं। जेहलम सिकद्रयाल रोहतास में इनके टब्बर की बड़ी इज़्ज़त-आबरू।"

"अपने राजा महमूद ख़ान साहिब के टब्बर की भी चंगी मशहूरी है।"

शाहजी बड़े मिज़ाज से बोले–"बादशाहो, पिंडीवाले मुकर्रब ख़ान गक्खड़ को तो न भूल जाओ। गुजरात जेहलम की मालकी थी उसके पास। भंगियों की मिस्ल उठ पड़ी तो इसे छोड़कर जाना पड़ा।"

गंडासिंह ख़यालों-ही-ख़यालों में अपनी पल्टन में पहुँच गए थे। एकाएक याद आ गया–"जेहलम, रक्ख वेल के लाढ़ा साहिब के दो पुत्तर अरजू ख़ान और ममीरा ख़ान पंजाव घुड़चढ़ी में वरदी मेजर थे। इनके टब्बर में एक लड़के का नाम था रैजीमेंट बहादुर।"

कर्मइलाहीजी बड़े रौब में आए–"भला यह क्या नाम हुआ! झूठ क्यों कहें, सुनने में तो चंगा रौब-दाबवाला नाम जापता है।"

"रैजीमेंट बहादुर का मतलब पल्टन बहादुर। काशीराम, नाम कुछ सुना हुआ सा लगता है ममीरा ख़ान। वही तो नहीं जिन्हें अदालत आला की कुर्सी दी गई थी!"

फ़कीरे ने अपनी हाँक दी–"अपनी सम्बड़यालवाली ख़ाला का पुत्तर कालेपानियों से आया है। माँ गई थी मिलने! बताता है कि इन्क़लाबियों को वहाँ कोल्हू में जोत छोड़ते हैं।"

"यह डाडा जुल्म है। बहादुरी की हत्तक करनेवाली बात है न! ढग्गों की जगह बन्दे जोत दिए!"

"सरकार करती रहे बेरहमियाँ, सरगरमियाँ, इन्क़लाबियों की भी जारी हैं। दाव लग गया तो बन्दरों को छोड़ेंगे नहीं। पलट देंगे तख़्ता सरकार का।"

"हाँ जी, सिर पर कफ़नी बाँध ली काकों ने तो ख़ौफ़ क्या और भय क्या!"

"बड़े जिगरे और गुरदों के मालिक। ओ जी, दिल्ली के चाँदनी चौक में दिन-दहाड़े लाट साहिब के हौदे पर बम फेंक दिया। इरादा यही न कि या मर जाएँगे या मार डालेंगे।"

गुरुदित्तसिंह ने बड़े नख़रों से अपना दहला निकाल बाहर किया–"लो, और सुनो! हुआ यह कि कलकत्तिए हाकम का तबादला हो गया लाहोर। इन्क़लाबी लाहौरियों को भिनक पड़ गई। बस जी, साहब उधर लाहोर पहुँचा, इधर आनन-फानन गोरे की गुद्दी गुडुच्च!"

गंडासिंह ने नासें फुला लीं–"यह तो हक़ूमत और इन्क़लाबियों की मिल-वर्त्तन हुई न! एक ने सगुण किया, फाँसी चढ़ा दी। दूजे ने तम्बोल डाला, गोली दाग़ दी।"

मुंशी इल्मदीन बोले–"ख़बर बड़ी पक्की है कि जर्मन हमारे इन्क़लाबियों को क़ाबुल की राह पिस्तौलें भेज रहा है।"

चौधरी फ़तेह अलीजी बोले–"जर्मनशाह का सलूक अपने मुल्क़ के साथ चंगी दोस्तदारी का रहा है। चाचा बताया करते थे, जर्मनशाह ने पाईवाले अकाल में या मरकानवाले में अपने लोगों की पुज्ज के मदद की थी। एकमुश्त एक लाख सिक्का भेजा था हिन्दोस्तान को।"

"वाह, बात हुई न!"

मैयासिंह ठौंका लगाके उठ बैठे–"मेरे जाने लन्दनशाही के साथ इनकी कुछ रिश्तेदारी भी है। शरीक़ ही हुए न उनके! कोई धी-बहन ब्याही होगी। लेन-देन तो बनता है न!"

जहाँदाद ख़ाँ और गंडासिंह दोनों मिलकर दबा के हँसे–"जो जर्मन हथियार-अस्ला आएगा क़ाबुल के रास्ते तो पहुँच चुका हमें। बात यह है कि क़ाबुलवाले खुद हमारी फ़ौज़ों की पुरानी बन्दूकें लेना चाहते थे, पर सरकार न मानी। तब क़ाबुल-अमीर बड़ा झुंझल गया था। जंगी लाट ने नहीं मानना था, नहीं माना। फ़ौज में मशहूर है यह बात कि लाट का यह फ़ैसला था कि हिन्दोस्तानी फ़ौजों की पुरानी बन्दूकें चाहे समुद्र में डालनी पड़ें, पर हरगिज़-हरगिज़ अफ़ग़ानियों के हाथ में न देंगे।"

लाट की सराहना शुरू हो गई–"बात लाट की बड़ी सयानफ़वाली थी। बन्दूकें जातीं अफ़गानियों को और कबाइलियों की गोलियाँ चलतीं अपनी गारद और छावनियों पर! ब्लोच पठान के भाने तो मरना-मारना राह-रस्म हुई न!"

शाहजी बोले–"उस इलाक़े में क़ानून अंग्रेज़ी चलना ज़रा मुश्किल है। हुआ यह कि एक ब्लोच ने किसी बन्दे के साथ बीवी जा पकड़ी अपनी। बस, आनन-फानन दो क़त्ल

हो गए। जिरगे की माजूदगी में मामला पेश हुआ। अंग्रेज़ हाकम ने अपनी जानकारी और क़ानून मुताबिक तीन साल ठोक लिए। इधर हाकम ने फ़ैसला दिया, उधर हास्सा पड़ गया। अंग्रेज़ डिप्टी ने सोचा, कोई होगी मखौल की बात। चिट्ट-दाढ़ियों को बुलाकर पूछा–'माजरा क्या है?'

"उन्होंने समझाया–'साहिब, इस जुर्म पर तो दो या तीन दिन या जुरमाना रुपए पचास का। जनाब को यहाँ के क़ायदे-कानून धीरे-धीरे सब पता लग जाएँगे।'"

फ़कीरे ने पूछा–"शाह साहिब, ऐसी हालत में हाकिम की क्या रह आई होगी! कच्चा तो पड़ गया होगा।"

काशीशाह ने बात साफ़ कर दी–"उसने अपने से बड़े हाकम को मुरासला लिख भेजा होगा।"

कर्मइलाहीजी ने ठंडी होती चिलम फरोली–"यह ठीक है। अपनी लिखत में तो बड़ी माहिर हुई न यह क़ौम। छोटा अल बड़े को लिखे, बड़ा उससे बड़े को, अगला उससे भी बड़े को। शाह साहिब, एक बात बता छोड़ो। जंगी लाट तो हुआ ही न वड्डा लाट। पर लाट साहिब किसके आगे जवाबदेह है!"

"बात यूँ है चौधरीजी, कि लाट साहिब विलायत में बैठे सक्कत्र हिन्दोस्तान के आगे पेश हो जाता है। वह हाँ कर दे तो हाँ। वह न कर दे तो न!"

"और जी, अपनी जंगी लाट?"

"बादशाहो, जंगी लाट मुल्क़ की फ़ौजों का मालिक। मूँछों को माड़ा-सा ताव देने का इशारा भी कर डाले तो दुनिया खड्डे जा लगे।"

जहाँदादजी ने बड़ी सवाई तुरप ऐसे फेंकी ज्यों जंगी लाट उनके क़बीले का वड्डेरा हो–"सिवल लाट और जंगी लाट के दरमियान कुछ ख़ुड़बा-खड़बी हो गई। जंगी लाट ने ऐसा पैंतरा डाला कि कर्ज़न लाट कख़ों से हौला होकर इस्तीफ़ा दे गया। और लाट जंगी अभी भी सजा हुआ है अपनी फ़ौजों पर। बात हुई न!"

डाडी हुम्मस, पत्ता एक न हिले।

दारे के पुराने बोढ़ की छाँह में सारी मंजियाँ भर गईं।

एक जुम्मे का दिन, उस पर हुस्सड़। जो उठे, कम्म छोड़कर दारे जा बैठे।

मसीतवाली कुँई पर रौनक़ें लग गईं।

कोई लज्ज नीचे डाल डोल भरे और पिंडा गीला कर ले। कोई तम्बा-कुरता उतार पानी सिर पर उँडेले और अपने को ठंडक दे परत आए। गर्म हुक्कों की हक़ूमत आप ही ठंडी हो गई।

कौडेख़ाँ ने मेहँदी-लगे बालों पर हाथ फेरा और जातक को आवाज़ दी–"मिट्ठी कुँई से पानी की झझरी भर ला। माँ से गुड़ की डली ले ज़रा शर्बत घोल ला शताबी।"

"अभी लाया अब्बूजी!"

कौडेख़ाँ फ़तेह अलीजी की ओर मुड़े–"प्यास की हुड़क ही नहीं जाती। इस हड़ महीने तो अन्दर-बाहर भट्ठ तपते हैं भट्ठ। इतनी गरम, काँव की आँख निकलती है आँख।"

"हाँ, जी, हड़ ताय और सावन लाय। खुदावन्दा मींह बरसाय तो ज़रा चैन पड़े।"

अल्लाहरक्खा पाँव के भार बैठ बदन पर निकली मरोड़ियों को ख़ुजा रहे थे। फ़िक्र से कहा–"बादशाहो, पानी इतना ही बरसे कि ज्वार अपनी ठीक-ठाक रहे। पार के साल

इतना पड़ा कि खेत की भाक्खी लग गई थी।"

वजीरे को अपना फ़िक्र पड़ा–"चौधरीजी, अपनी फ़सल को भी सुंडी लग गई थी।"

"अल्लाह बेली की नज़र रहे सीधी, अपनी फ़रियाद तो उसी के आगे!"

कुँई से शेरा और बरखुरदार दोनों नहा के उतरे।

बरख़ुरदार के कानों में दुर और गले में कंठा।

शेरे का जिस्म कमाया हुआ और गले में काले डोरे से लटकता नामा। शेरे ने तम्बा दोहराकर कसा तो गब्बरोटे की जवानी खिल-खिल उठी।

चौधरी फ़तेह अलीजी की नज़र कई देर शेरे पर रुकी रही। कुछ भी कहो, इस धाड़ीवालियों ने हमारे पिंड की हँसली उतार ली। अलिये की धी फ़तेह किसी शाहज़ादी से कम तो नहीं। और छोटी धी राबयाँ तो लालामूसा है।

शेरे ने गीले पटे छितराए-बिखराए और छाँह में पड़े पत्थर पर जा बैठा और बुल्लेशाह छू लिया:

न मैं अरबी
न मैं लाहोरी
न मैं हिन्दी
शहर नगौरी
न मैं हिन्दू
तुर्क़ पिशौरी
न मैं रहँदा
विच्च नदौन
बुल्ला कीह जाने
मैं कौन!

कर्मइलाहीजी झूम उठे–"वाह ओ वाह बाबा बुल्लेशाह, तेरी वाह ही वाह! मोती पिरो डाले माला में वह भी सुच्चे। पुत्तर शेरेया, बड़ा सोहल गला पाया है। एक बार और उठा ले सुर। कान में अच्छी भिनक पड़े।"

फ़तेह अलीजी बाँह पर सिर टिकाए मंजी पर लेटे थे, उठ बैठे–"पुत्तरजी, गला-कंठ तो ऐसा कि ज्यों किसी ने चनाब पर सुर फैला दिए हों कि जाओ, लहरों पर तिरो-बहो। वाह ओ मौला, बरक़तें पंजाब को दरियाये-चनाब की और दूजे बाबा बुल्लेशाह की। बाबा वासिरशाह भी भला कहाँ कम! प्राण निकाल अपने रला-मिला दिए काफ़ियों में कि जाओ लोको, गाओ और अपनी रूहों को गुंजान रखो।"

सुनकर शेरा रौ में आ गया:

हिन्दु न नाहीं मुसलमान
बैठिए त्रिंजन तज अभिमान
सुन्नी न नाहीं हम शिया
सुलह कुल का मार्ग लिया
भुक्खे न नाहीं हम रज्जे
रोंदे न नाहीं हम हँसदे
उजड़े न नाहीं हम वस्सदे
पापी न नाहीं सुधर्मी

पाप पुण्य की राह न पकड़ी
बुल्लेशाह शाह हर चित्त लागे
हिन्दु तुर्क दोनों जन त्यागे।

"वाह...वाह...वाह...पुत्तरजी, जैसे बोल वैसा गला!" बड़े सयानों ने खूब दाद दी पर आँखें चुराए रहे।

मौला तेरे रंग। गुल्ली-डंडा खेलनेवाले बच्चड़े जवान हो दारे आन चढ़े। ख़ैर सदके चढ़ता पूर तैयार हो गया। वक़्त की दौड़ें।

मौलादादजी उठ खड़े हुए मंजी से। मुसल्ला बिछाया। वुजू कर सज़दा किया। नमाज़ पढ़ी और इत्मीनान से रकू किया।

दिवार से लगी खुरलियों से हटकर छोटे-बड़े बच्चे सौंची खेलने के अन्दाज़ में एक-दूसरे को ललकारने लगे:

कत्तक पाला जम्मया
मंघर हुआ जवान
पोह फ़ौजें चढ़ गईं
मारया हिन्दुस्तान।

किसी वड्डे ने आवाज़ दी–"ओ अहमको, पोह माह छोड़ के सावन बुलाओ।"

बच्चे शुरू हो गए:

औलिया मौलिया मेंह बरसा
अपनी कोठी दाने पा
चिड़ियों के मुँह पानी पा
औलिया मौलिया मेंह बरसा।

कहीं से साँवल खोजा का पुत्तर टोटो दौड़ा-दौड़ा आया। मैला-कुचैला झग्गा और नीचे नंगा।

शौंके ने छेड़ा–"ओए टोटया, तम्बी किधर है! बेबे से कह, कुछ डाला करे, नहीं तो चुहिया कुतर जाएगी तेरी मुसलमानी।"

टोटे ने हाथ रख छिपा ली और मौलादादजी से कहा–"चाचा साहिब, कंढे पार कीकर के हेठ एक बन्दा सोया पड़ा है। गले में उसके गठरियाँ-पोटलियाँ। सिर तले सन्दूकड़ा और मुँह साफ़े से ढका है। उसके कपड़ों में से हट्टियोंवाले ताया तुफ़ैलसिंह की गंध आती है।"

मुहम्मद अली और चौधरी फ़तेह अली बड़े ख़ुश हुए–"गजैबी गोले, तेरी ऐसी बारीक़ समझें। लगता है, साँवल खोजी के घर उसका बाबा कमेठा जम्म पड़ा है। उम्र ख़ैरों से जातक की सिर्फ़ पाँच बरस और आँख की तक्क देखो और मार देखो। पुत्तर टोटेया, आ इधर।"

मौलादादजी ने सिर पर प्यार का थापड़ा दिया–"अपना टोटा पुत्तर चिराग़ है, चिराग़। चल पुत्तर, देखें तुम्हारी खोज। शौंकिया, जा हट्टियों पर चाचा नसीबसिंह को कहना, झटापट गड़वे में लस्सी-शरबत ले के पहुँचे। ताया तुफ़ैलसिंह न भी हुए तो कोई और पानी से त्रिहाया होगा।"

नसीबसिंह को सन्देसा मिला तो लस्सी की मटकी-कटोरा ले उठ धाया। संग-संग पिंड के बच्चड़े तपती धरती पर ऐसे दौड़े कि पलक झपकते बाबे को जा घेरा।

शोर सुन ताया तुफ़ैलसिंह ने आँखों पर से साफा उठाया। आँखें खोलीं तो बलूँगड़ों

की भीड़ देखकर लाड़ से चुमकारा-धमकाया–"ओए खरूदियो, टैनयो, मैनयो, इस शिखर दुपहरी तुम्हें कैसे हवा पहुँच गई कि ताया साँस लेने को रुका पड़ा है!"

शौके ने आगे बढ़ सलाम किया–"तायाजी, खोजियों के टोटे ने आकर दारे में घुमा दी कि कीकर तले कोई बन्दा लेटा है। कपड़े-लत्ते से चाचा नसीबसिंह की भाइया लगता है।"

"बल्ले ओ बल्ले, वड्डे खोजिया! क्यों ने हो, साँवल खोजी का पुत्तर है। आँख ख़ानदानी।"

चौधरहट्टा आया जान ताया तुफ़ैलसिंह उठ खड़े हुए तो गले में पड़ी गठरी-पोटलियाँ भी साथ ही उठके खड़ी हो गईं।

कोई साहब-सलामत बुलाए, कोई पैरीपौना। कोई हाथ मिलाए।

मौलादादजी ने देर तक हाथ न छोड़ा–"बादशाहो, आपकी मंशा तो जग ज़ाहिर हो गई। अगवानी को आए तो पूरा पिंड ही आए। नहीं तो ताया साहिब त्रिकालाँ तक यहीं लेटे रहते।"

फ़तेह अलीजी आगे बढ़े–"क्यों खालसाजी, बंगाले का हाट-व्यापार सारा क्या आपके हाथों-ही-हाथों में था कि पिंड पहुँचना ही मुश्किल था!"

"तायाजी, माल-असबाब तो बड़ा इकट्ठा कर लाए हो। खट्टी कमाई चंगी हो गई लगती है।"

"शुक्र मना मुहम्मदीन, सबूता-सालम निकल आया हूँ इस हल्ले से!"

"क्यों जी, क्या बंगाले हिन्दोस्तान में सचमुच ग़दर मचा हुआ है?"

"बादशाहो, क्या बताऊँ! जितनी खलकतें राह में, उतना ही शोर-शराबा। हर टेशन पर गारद। सरकार बढ़-बढ़कर रियाया को अपनी फ़ौज-पुलिस की वरदियाँ दिखाए तो बन्दा आप ही समझ लेगा कि कोई ऊँच-नीच होनेवाली है।"

अगले दो दिन ताया तुफ़ैलसिंह कस्स बुख़ार में पड़े रहे। पिंडा तपे। बेबे देस्सन ने एतबारसिंह का नाम लिया तो तुफ़ैलसिंह ने हाथ से वर्ज दिया–"मैंने कहा अगली दरगाहे जाना होगा तो बन्दा गोली खाए या एतबारसिंह की या फ़ज़ल अहमद की। है न फ़ज़ल इन दिनों पिंड में।"

"न, धी-जवाँई के पास नहरों पर गया हुआ है!"

तुफ़ैलसिंह को कुछ याद आ गया कि हँसने लगे। हास्सा ही न रुके।

देस्सन ने त्योरियाँ चढ़ा लीं–"कुछ बताओगे भी कि हँसते ही जाओगे!"

"ले सुन:

फ़ज़ल अहमद की गोलियाँ
ज्यों लच्छमन के बाण
पहली गोली खाय के
निकल जाएँगे प्राण।

"सुखी सांदी नसीब के भाइया यह क्या याद किया! ताप चढ़ा है तो उतर जाएगा। मरजानी फजल अहमद की गोली पर ध्यान लगा लिया।"

"भोलिए, फ़ज़ल अहमद कौड़ी का हकीम न हो, पर मेरा वह लँगोटिया यार है। क्यों न याद करूँ उसे! तेरी सौंह, याद कर पुरानी यारियाँ रूह निथर जाती हैं!"

कलकत्ते की ख़बरें सुनने को लोगों की भूखें सूख गईं। रोज़ मलजिस लगे और रोज़ खालसा ग़ायब।

आख़िर हवेली से बुलावा आया–"खालसाजी, अपने भाव न बढ़ाओ। दरस दे जाओ। दवा की पुड़ियाँ काशीशाह तैयार रखेंगे।"

ताये ने दूध का कटोरा गटका और हवेली आ पहुँचे।

"शुक्र है, शुक्र है। लो जी, आन पहुँचे हैं सरदार कलकत्तसिंह। चंगे नखरे सीख के आए हो शहरियों से!"

मौलादादजी को जवानी की पिछली ड्योढ़ी में से कोई भूला-बिसरा बन्द याद हो आया:

एक यह दिल है सौ जान से शौदाई है
एक तुम हो कि न मिलने की क़सम खाई है।

तुफ़ैलसिंह ने मौलादादजी के घुटने पकड़ लिए–"बस कर, बस कर मेरे मुरीदा! मेरी बात का यक़ीन कर, बच के निकल आया अपने यारों-प्यारों की ख़ातिर, नहीं तो सौंह गुरुओं की, बंगाले में बुरा हाल था।"

"बैठो। सजो। क्या ख़बरें लाए हो हिन्दोस्तान से?"

चौकड़ी मारते ही मंजी पर, तुफ़ैलसिंह का मुहांदरा कलकत्ते के बड़े हाकिमवाला हो गया।

"लो सुनो बादशाहो, लाट नए ने नई साहा-चिट्ठी निकाल मारी है।"

उम्र के लिहाज़ से सिर्फ़ कर्मइलाहीजी तायाजी को डाँट-झिड़क सकते थे।

"तुफ़ैलसिंहा, अब छोड़ दे सिक्खोंवाली बातें। मैंने कहा लाट की धी-बहन ब्याहने जोग हो गई कि मुल्क़ का काम-काज छोड़ के पंडित-पांधो से लग्न निकलवाने को उठ दौड़ा है!"

ताया तुफ़ैलसिंह को बचपन में खेला गुल्ली-डंडा याद आ गया। जवाब में टुल्ला मार दिया–"फ़रमान बंगाले के बारे में ऐसा निकल चुका है ज्यों कोई महबूब से कहे कि दे बोसा और ले ठोसा।"

बैठक हस्स-हस्स दोहरी हुई।

गुरुदित्तसिंह झुँझलाकर बोले–"तायाजी, बताओ तो सही, लिया तो बोसा किसने लिया और दिया तो ठोसा किसने दिया!"

तुफ़ैलसिंह अपनी देसावरी अदा में आ गए। साफ़े को बड़े लाड़ से छूकर कहा–"बादशाहो, मैं तो बताऊँगा ही! आख़िर आँख से देखके आया हूँ, पर आप भी तो अपनी अक़्ल लड़ाओ।"

मुहम्मदीनजी ने नड़ी मुँह से निकाल ली–"चलो, लग गई पीठ हमारी। अब मतलब पर आने की करो।"

तुफ़ैलसिंह ने शाहजी की ओर देखा और बड़ी ख़ुफ़िया आवाज़ में कहा–"लाट नए ने बंगाले के मुसलमीनों को तुफ़क दिखा दी।"

मुंशी इल्मदीनजी मंजी पर ही उचक गए–"बुझारतें न बुझवाओ, खोलकर बात करो।"

"बात ऐसी है कि बंगाले की फटी धोती को दोबारा बख़िया मारने का हुक़्म हो चुका या हत्तलवस्सा होनेवाला होगा।"

"लाहोलविल्ला, यह क्या सूझी सरकार को! वहाँ के मुसलमीनों की रोटी-रोज़ी

न हिन्दुओं को पची, न हकूमत को।"

तायाजी बड़े ठस्से से बोले–"सयापा तो, बादशाहो, यही पड़ा न! बंगाले में तम्बेवाले ग़रीब और लांगड़वाले अमीर। छिड़ गई। एक बात मेरी याद रख लो, लड़ाई में जीतेगा तो धनाढ अमीर ही।"

कृपाराम ने कोसाकासी की–"नाइंसाफ़ी और नाइत्तफ़ाकी दोनों तरफ़। सरकार भी करे तो क्या करे!"

तुफ़ैलसिंह शाहजी की ओर देखने लगे–"वैसे देखो तो दिमाग़ बंगाली का बड़ा उत्तम। चौकस। दिमाग़ खोपड़ इतने तेज़ कि गोशों में ही सरकार हिला दें। इन्क़लाबी मिजाज़। बस, कसरवन्दी बात एक ही कि भद्रलोक वहाँ का मेहनती नहीं।"

"भद्रलोक क्या हुए?"

"वहाँ के हमातड़ साथी अपने को भद्रलोक कहते हैं। भद्रलोक मांस-मच्छी और ग़ाने-बजाने में लगा रहता है। कम्मचोर। बाक़ी नसवार की चुटकी और साथ लगी हुई है लोगों को।"

"बादशाहो, यह कोई नई बात नहीं। मांस-मच्छी या गाना-बजाना क्या अपने लोगों में नहीं? असल बात तो हड्डों से डट्ट के मेहनत लेने की है।"

"बराबर बादशाहो, मनुक्ख डट्ट के दिन दिहाड़ी कम्म न करे, मचल मार छोड़े तो शाह साहिब, यह मजलिस क्या ऐसी बेफ़िक्री से सज सकती है? मान लो बदोबदी एक बार सज भी जाए, हुक्के गर्म हों, तम्बाकू की मुश्कें-लपटें उठती रहें, पर जेकर खेत-जिवियों की गाही-वाही न की हुई हो बन्दे ने तो यहाँ आकर कौन विराजमान होगा!"

शाहजी बड़े ख़ुश हुए–"वाह-वाह मुहम्मदीन जी, बड़ी दानाँ बात की है आपने।"

मैयासिंह छिड़ गए–"मैंने कहा मुलतान के पटोली पटफेरों की सुनो! सारा दिन आँख की सीध पट्ट के धागे जोड़ें-बुनें, खड्डियाँ चलाएँ, मार गुलबदन दरियाई धूपछाँव बुन-बुन निकालते जाएँ। मज़ाल है काम छोड़कर मक्खी भी उड़ा लें! डट्ट के चंगा काम करना और कम-से-कम एक दफ़ा हफ़्ते में मुजरा ज़रूर देखना!"

फ़तेह अलीजी जोश में आ गए–"हैयी शाबाश ए! यह तो पीर मर्दोंवाला काम हुआ न! अंग्रेज़ साहबों की तरह हफ़्तावारी मौज-मज़े लगे हुए हों बंदे को।"

हाजीजी का ध्यान बंगाले पर ही टिका था–"आखिर बना तो क्या बना बंगाले का! कोई नया हुक्म निकाला है क्या सरकार ने?"

तुफ़ैलसिंह फुल्ल गए–"बादशाहो, कोई भरम-भुलावे की बात नहीं। परचों में आया था कि ढाकेवाले नवाब के खज़ाने पर–जो करज़न लाट ने रातोंरात भरवा दिए थे–हकूमत मय सूद-ब्याज के वापस लेगी।"

फ़कीरे और नजीबे दोनों के दिल बड़े ठंडे हुए। नजीबे से न रहा गया–"हो वही जो अल्लाह भावे! नवाबों का भी हाल हम माहत्तड़-साथों जैसा ही हुआ न! रुपया ले कर्ज़ तो सूद समेती गिनकर देना पड़े। अलबत्ता पग़ंबर साहिब ने सूद न लेने की क़सम मुसलमानों को तो खिला ही रखी है। जो भी कहो बादशाहो, यह लूतियाँ-बखेड़े करज़न लाट के ही लगाए हुए हैं। चंगी भली हकूमत चल रही थी। कभी यहाँ हुत्थल, कभी वहाँ। बीच में से निकला क्या!"

नजीबे ने बूथी उठाई ज्यों बड़ अक़्ल की बात करने लगा हो–"यह तो जी अपने ढग्गों को हाँकनेवाली बात हुई न! हत्थ में डंडा लेकर कभी इस वल्द की ढूई में घुसेड़ा, कभी उसकी।"

मुंशी इल्मदीन ने घुड़क दिया–"नजीबे, यमलियाँ छोड़। शाहजी, वैसे सोचो तो लाट करज़न बड़ा संजीदा आदमी था।"

जहाँदादजी बोले–"मुंशीजी, यह तो ग़लत नहीं कहते आप। लाट ने अफ़रीदियों के लिए सड़कें बना दीं। सुनने में आता था कि लाट का इरादा चीन-रूस तक की सड़क बनवाने का था।"

छोटे शाह बोले–"लाट पुलसियों की तनख़्वाहें तो बढ़ा ही गया।"

गुरुदित्तसिंह बोले–"लाले वड्डु के पुत्र के मुंडनों में लाले का जवाँई आया हुआ था। बताता था कि लाट करज़न बड़ा ऐयाश था।"

"बादशाहो, बात करने में लाले वड्डु के कौन तुल!"

कर्मइलाहीजी बोले–"लाले वड्डु की बैठकों की तो दरिया पार तक मशहूरी थी। लारेंस साहिब के ऐसे-ऐसे क़िस्से सुनाए–एक के बाद एक कि रात निकल जाए, पर बात न मुकने में आए! सुनाने का ढंग-तरीक़ा ऐसा ज्यों कोई ईरान-फ़ारस का हिकायत-गो हो!"

वज़ीरे का ध्यान लाट पर ही टिका था–"शाहजी, रमज़ान कहता था, लाहौरियों में मशहूर है–लाट पचीसी खेल बड़ा पसन्द करता था। ऐयाश भी पुज्ज के! दिल्ली दरबार के वक़्त उसने लालक़िले में नंगे नाच नचवा दिए। यह भी कि लाट की मेम हर रोज खरौड़ों की यख़नी पीती थी।"

मैयासिंह बोले–"यह कहना वाज़िब नहीं। इतने बड़े मुल्क़ की वज़ारत जिसके हाथ में और बन्दा थोड़ा-बहुत रंग-रस्स भी न करे। ऐसा बन्दा बहुत ही सादा सूफ़ी हो तो रियाया मुल्क़ के सरताज को ख़स्सी समझने लगती है।"

गुरुदित्तसिंह ने टींडा दिया–"फिर वैद्य-हकीम ढुकने लगते हैं ड्योढ़ियों पर!"

बैठक हास्सों से गूँजने लगी।

मुहम्मदीन ने छेड़छाड़ की–"शाहजी, ज़रा खरौड़ोंवाली बात भी साफ़ हो जाए।"

"मुझसे पूछो न! मैं बताता हूँ। लाटनी खरौड़ों की यख़नी पीती थी तो चंगा ही करती थी। आखिर को लाट की मेम। ज़नानी के लिए लाट ख़ाविन्द का ज़ोर-ज़बर सहारना कोई छोटी सी बात तो नहीं। साह-सत्त तो चाहिए न ज़नानी में!"

"ताया मैयासिंह, यह बात छोड़ो कि खरौड़ोंवाली गल्ल-बात कहाँ से चली!"

"सहजे से, बताता हूँ। वह है न मेरे हमजुल्फ़ साढू का भतीजा, पल्टन में ग्रन्थी लगा हुआ है। उसी ने बताया था।"

शाहजी मुस्कुराए–"बादशाहो, इस वक़्त तो तायाजी की ही मान लें। जेहलम जाना हुआ तो फ़ौज के ठेकेदार आदम जी पीर भाई बोहरे से पूछ लेंगे कि वह लाट-लाटनी के लिए कुक्कड़ भेजता था कि खरौड़।"

मुंशी इल्मदीन खीज गए–"छोड़ो जी, लाट करज़न कब का इस्तीफा दे गया। अब नए लाट की बात करो।"

नजीबा बोली–"मुंशीजी, यह तो क़ायदा हुआ दुनिया का–नए की वाहवाही और पुराने की बदखोई।"

मौलादाद जहाँदादजी से मज़मून पर बहुत-कुछ सुन चुके थे, सो कहा–"लाट बहादुर और जंगी लाट में ठन गई। जंगी लाट अपने देसी लोगों के हक़ में है। बेदरेगी नहीं करता। देसी कन्धों को कमांडरी दे दी है।"

शाहजी ने हुंकारा भरा–"सरकार ने अपनी पलटनों को चंगी मान-इज़्ज़त बक़्शी

है!"

गुरुदित्तसिंह ने नया ही पूर्णा डाल दिया–"लाट करज़न ने पंजाब में पैर पीछे डाला और मत्था टेकने दरबार साहिब पहले पहुँच गया!"

मुंशी इल्मदीन झट कूद पड़े–"भोली बातें! अमृतसर जाने में लाट का मक़सद कुछ और रहा होगा। जाकर देखना होगा कि हरमन्दिर साहिब में खालसों ने कहीं असला तो नहीं छिपा रखा।"

शाहजी हँसने लगे–"मुंशीजी, बात तो आपकी खरी है पर अब तोपों-तलवारों का समय कहाँ!"

छोटे शाह बोले–"भ्राजी, यह तो ठीक है पर मुल्क-भर में इन्क़लाबी मौसम तो छाया ही हुआ है। कहीं हत्थगोले बम, कहीं फाँसी, कहीं उमर क़ैद। वतन के लिए जान की बाजियाँ लगाई जा रही हैं। देखें, क्या हश्र होता है!"

गंडासिंह बोले–"तख़्ता पलटने की तैयारियाँ हैं। सरकार दबाने पर और लोक उठने पर। क्यों तायाजी, आप तो बंगाले के हाल देख ही आए हो।"

"बराबर। अब होनेवाला है और भी बड़ा झगड़ा-फ़िसाद। पूछो, कैसे? बंगाले में बैठा-बैठी हुई हक़ूमत की, इन्क़लाबी और लशेंगे। एक दफ़ा जो जलूसियों इन्क़लाबियों ने सरकार मना ली तो आगे के लिए रब्बत पक्की। अब आओ दूसरी ओर। मुसलमान भी क्यों न मचेंगे! आख़ीर को सूबा दे के वापस ले लेना कोई छोटी-सी चोट तो नहीं!"

खूनी आँधी के गुबार ऐसे ज़बर चढ़े कि देखते-देखते गाँव में तरथल्ली मच गई।

ऊँची लम्बी टालियाँ, बोढ़, तूत, पीपल, लसूढ़े ऐसे कड़-कड़ झूलने लगे ज्यों वृक्ष आसमानी झूले पर चढ़ बैठे हों।

माँओं-बहनों की हाँकें रह-रह कोठों-बनेरों से उठने लगीं–"अरे कख़ न जाए तुम्हारा टाब्बरो! परत आओ घरों को। सूखे भँवरों में फँस गए तो अन्धड़ दस कोह दूर जा फैंकेगा।"

"हाय-हाय रे, खूनी आँधी चढ़ी दिखती है।"

कुड़ियों को गालियाँ पड़ने लगीं–"अरी खसमाखानियो, घरों को लौटो। जल्दी दौड़ आओ, नहीं तो खेतों में पड़ी मिलोगी।"

नाइयों के यहाँ से आवाज़ पड़ी–"पुत्तर वज़ीरया-नज़ीरया, घरों को जाओ। हैं रे, न अन्दराला दिखे, न बहराला। लो नाम हज़रत सुलेमान का। वही इन आँधी-अन्धड़ों का राक्खा।"

"सुलेमान पादशाह, इस प्रलो को सँभाल!"

कच्च-पक्के कोठों के भित्ति-पट बजने-खड़कने लगे। बिन्द्रादइए और शाहनी मुँह-सिर लपेट नीचे ड्योढ़ी पहुँचीं और हवेली का साँकल बजा-बजा नवाब से पूछा–"नवाब चन्ना, ढोर-डंगर अपने-अपने खूँटों पर हैं न?"

"ख़ैरों से सब अपने ठौर-ठिकाने। कुंडी चढ़ा ऊपर चढ़ जाओ। माउंटी का पट्ट भिड़ाना न भूलना।"

शाहनी के पसार तक पहुँचते-न पहुँचते वा-वरोले के घू-घुम्मर बजने-गज्जने लगे।

चाची ने पानी के छींटे मार चूल्हे की आग बढ़ा दी। छोटी शाहनीं से कहा–"बिन्द्रादइए, जा बच्चों के पास। कुंडी चढ़ा माफ़रा दे लेना। हाँ, माँबीबी, राबयाँ

को साथ ले कुँईवाले पसार में जा बैठ। देखना, कोई ताकी न ख़ुली हो। ऐसे दिहाड़े घर में मर्द नहीं।"

शाहनी लाड़ले को झोली में डाले सिर पर हाथ फेरती और पले-पले दोहराती–"शाह सुलेमान, रक्खया करना! बच्ची, कहीं दोनों भाई राह में न फँसे हों!"

कुंडी चढ़ा दोनों मंजीर पर आ बैठीं। दीया उठा आले से नीचे रख लिया।

"चाची, काशीराम साथ हों तो दुविधा-चिन्ता नहीं।"

"बच्ची, देवर तुम्हारा तो स्यालकोटिए जोगी रम्माल की संगत में रह आया है। आँख से पहचान लेता है कि बरखा आएगी–आँधी-अन्धड़ या घनघोर घटा।"

"चाची, सुनने में आता है कि रथबाने जोगी पकी फ़सलों में तलवार टिका तूफ़ानों पर क़ाबू पा लेते हैं।"

आँधी के ज़ोर पसार की छोटी ताकी ख़ुल गई तो लपक चाची ने भित्तों को हाथ से रोक लिया। बाहर गूढ़ी लाल आँधी और संगो-संग क़हर और बिजली।

"चाची, पार के साल भी ऐसी ख़ूनी आँधी आई थी। सम्बड़यालवाले सैयदों की झोंटी उड़ गई थी।"

"सुनने में ज़रूर आता है बच्ची, पर कभी देखा नहीं कि भैंस-भैंसड़िया उड़ जाएँ!"

साँय...साँय...आँधी का ज़ोर, अन्धेर घुप्प घेर!

शाहनी रहरास का पाठ करने लगी। सुरों के मणके हिलते-डुलते पा लाड़ले ने नन्हीयारी अँखियाँ एकटक माँ के मुखड़े पर गड़ा दीं।

"बारी जाऊँ मैं, सदके जाऊँ। देख री बच्ची, वजूद तेरे पुत्र का इतना छोटा और आँखों में ऐसी लग्न।"

चाची ने लाली के सिर पर हाथ फेरा तो बच्चा हँस-हँस आँचल खींचने लगा।

"पिछले जुगों का कोई सन्त-महात्मा लगता है। तेरे कर्मों के पुण्य-प्रताप से तेरी कोख आ पड़ा।"

शाहनी ने सच्चे पातशाह के आगे सिर झुकाया और मीठे सुरों में बोल उठा लिए:

चाँदना चाँदन आँगनि प्रभु जीऊ
अन्तर चाँदना
आराधना आराधनु नीका हरिहरि
नाम आराधना
तियागना तियागना नीका काम
क्रोध लोभ तियागना
माँगना माँगना नीका हरि जस
गुरु ते माँगना।
जागना जागनुँ नीका हरि
कीरतन महि जागना।

सतनाम, सतनाम! चाची महरी ने हाथ जोड़ दिए।

कपाट की विरल से झाँका–गर्द-गुबार दक्खनादी दिशा को मुड़ गए थे। किवाड़ खोलते ही ऊँची-ऊँची आवाजें कानों से आन टकराईं–"अन्धेर साईं का लोको, माई किच्छी गुम हो गई। घर से कुटिया के लिए निकली थी।"

बेबे किच्छी के पुत्र-पोत्रे ढूँढने उठ धाए।

गुरुदित्तसिंह के शरीक़ महासिंह ने ऊँचे गले से कहा–"टब्बरो, बेबे को ढूँढ़ के

लाओ। नहीं तो सारे कबीले का मरण है मरण!"

"हाय-हाय रे, अरोड़ों की बेबे किच्छी अन्धड़ में गुम हो गई।"

"सूखे भँवरों में तो सौ हाथियों की ताक़त।"

"सुनते हैं, पूर्णसिंह की वधूटी सास के आगे बोली थी। बेबे उठकर कुटिया चल दी। अरी, पुत्रों के राज और माँ मोहताज!"

"न सहन हुआ। ग़म खा गई।"

लोग पहले पहर कच्ची-पक्की नींद से उठ बैठे।

"बेबे आ गई, बेबे आ गई..."

चारपाई पर डाले लड़के बेबे किच्छी को घर ले आए।

कोठे पर चढ़ महासिंह ने हुंकारा दिया–"मेहरें सच्चे पातशाह की–बेबे तीन कोस चरायों के कोठे जा गिरी थी। उसे लेकर आए हैं।"

बेबे किच्छी कुटियावाली राह पर त्रिखा-त्रिखा पाँव उठाती सूखे भँवर में फँस गई। अँखियों में धूल-घट्टा पड़ा तो आँखें मिच गईं। पैर उखड़े ऐसे ज्यों सुलेमान पीर की गज्ज ताक़त ने बेबे किच्छी को कनियारी पिंड के चरायों के तबेले में जा फ़ेंका।

आँधी-अन्धड़ उतरे पीछे चरायों का काम्मा तबेले की ओर बढ़ा कि ख़ुरलियों के पास सयानी बूढ़ी काया गुच्छम-गुच्छा पड़ी थी।

सुनकर चरायों को हाथ-पाँव पड़ गए। टोह-टाह देखा, न घाव, न खरोंच, सिर्फ़ मूर्च्छा। इधर टब्बर आ इकट्ठा हुआ, उधर पिंड में शोर पड़ गया।

चरायों की घरवाली सतवन्तो तत्ता-तत्ता घी ले आई और बेबे के हाथ-पाँव मलने लगी।

बेबे ने आँख खोली। इधर-उधर देखा और सूखा-सिकुड़ा हाथ ओठों पर रखा। कुछ कहने को हुई पर बोल न उभरे।

ओठ खोल इशारा किया–पानी। भीड़ में से किसी सयानी ने आवाज़ दी–"अरी, पानी न देना। तत्ता-तत्ता दूध ले आओ।"

दूध के कटोरे में डली-भर घी डाल सतवन्तो ने माई किच्छी के मुँह लगा दिया।

दूध निरा अमृत। घूँट अन्दर जाते ही बेबे का रत्त पल्लर आया। सिर हिला-हिला बोली–"पुत्रा, मेरे घर सन्देसा भेज दो। पुत्र मेरे मुझे आके ले जाएँगे।"

चरायों के द्वारे भीड़ें लग गईं। गाँव-का-गाँव आ ढुका।

"बड़ी वडेरी में किसी सुच्ची आत्मा का निवास है, नहीं तो यह पक्की दुबली काया और चार कोस अन्धड़ में उड़ जीती-जागती उठ बैठे! चलो री, हाथ जोड़ो, पैरीपौरी करो।"

बेबे किच्छी अपने आगे नमते सिर देखते आप ही संन्यासनी बन बैठी। हाथ उठा भीड़ को आशीर्वाद दिया–"बच्चड़ो, मनुक्ख की क्या हस्ती! कारन-करन वाहगुरु सच्चा पातशाह। जिसको राखे साँइया, मार सके न कोय! वाहगुरु अकाल पुरख, तू ही तू!"

ख़बर-सन्देसा मिलते ही बेबे किच्छी का टब्बर बेबे को लेने आ पहुँचा।

महासिंह शाहों के लाक्खे घोड़े पर। साथ पुत्तर और पुत्तरे। चरायों के घर रौनक़ें लग गईं। बारी-बारी लड़कों ने बेबे के पाँव छुए तो माई किच्छी पर मलका-महारानियोंवाला तेज-सरूप जाग उठा!

"पुत्रो, रब्ब की मेहरें..."

धौले केशोंवाले महासिंह ने आँखें पोंछ लीं–"बेबे, तुम्हें कुछ हो जाता तो टब्बर

तुम्हारा मुँह छिपाता फिरता।"

बेबे को हाथों में उठा महासिंह ने घोड़े पर बिठाया तो चरायों की सतवन्ती को भर-भर आसीसें मिलीं–"जीती रहो। साईं जीवे। धिया, तू ज़रूर किसी जन्म की मेरी वधूटी है, नहीं तो इस पिछली उमरे मैं तेरे हाथों की सेवा लेने आन पहुँचती! मल्ला कभी सुना था बन्दा आप आकर घर ढूँढ़ ले। महासिंह, आज से यह तेरी सबसे छोटी भरजाई हुई। घर में कोई ढंग-पज्ज हो, शादी-ब्याह हो, इसका सगुण-दस्तूर पक्का। भूलना न मेरी बात।"

"हुक़्म तुम्हारा सिर-माथे बेबे!"

छोटा-सा घूँघटा निकाले सतवन्तों की अँखियों से फुहार पड़ने लगी।

बेबे का घोड़ा क्या चला ज्यों आँखों के आगे कोई दरशनी झाँकी निकली हो!

वाहेगुरु, वाहेगुरु, बेबे तो साक्खयात राजामाता सरकार-सी फबती है! रब्बा, कुटुम्ब-क़बीला हो तो ऐसा!

ब्राह्मण अन्तिम श्राद्ध खा-पुजा चुके तो ज़नानियाँ पानी के कलश उठाए पितरों को बिदा करने चलीं। राह में पानी के छींटे तरौकती रहीं।

सतियोंवाले तालाब पर पहुँच हाथ जोड़े। सीस नवाया–"पितर देवो, अब बैकुंठों को प्रस्थान करो। अपने मुंड-परिवार से तृप्त हो स्वर्गलोक को पधारो। आपजी के थान-घर-परिवार इसी तरह अपनी जगह स्थित सलामत रहें।"

पितर बिदा हो गए।

घरों को लौट ज़नानियों ने घड़े भरे।

पीढ़ियाँ बिछा पूनियाँ छू लीं। तारें निकाल तकलों पर डालीं और सुखी सांदी घरों के सगुण-शास्त्र शुरू हो गए।

दुपहर होते-होते लड़कों की टोली ने शोर मचा दिया–"दयानन्दी आया चार वेद लाया।"

शाहनी बोली–"चाची, समाजी आर्या हर साल इस वक़्त आन पहुँचता है। श्राद्धों से पहले या बाद में ज़रूर इसकी फेरी लगती है। पर न कोई दान-दक्षिणा, न लेना-माँगना। बस मन्त्र बोल लिए। धर्म-वार्ता कर ली।"

"बच्ची, समाजिए के पैर और दिमाग़ बस यात्रा पर चढ़े रहते हैं। कहना यही कि हवन करो। सन्ध्या करो। वैदिक मन्त्र उच्चारो। व्रत-अनुष्ठान न करो। पितर न पुजाओ। सिरफिरा श्राद्धों के पीछे ही पड़ा रहता है। थाली लगाकर भेज छोड़। न हो पंडित-पांदा, अभयागत तो है न!"

बच्चों में से जाने किसने तुक जोड़ ली। दिन-भर बोलते फिरे:

इधर आला उधर आला
बीच आले में किल्ली
आर्य्य की माँ मरी
वैतरणी मंसी बिल्ली।

काशीशाह ने सुना तो बच्चों को नसीहत कर दी–"ये कुछ चंगे बोल नहीं। ख़बरदार किसी ने दोहराए तो!"

संझा वैदिक महाशय जंजघर के आँगन में जम गए। बच्चों को इकट्ठा कर जयकारा

बुलाया–"वैदिक धर्म की जय! ऋषि दयानन्द की जय! आर्य समाज की जय!"

बच्चों की टोली चौकड़ी मार पंगतों में जा बैठी। एक तरफ़ ज़नानियाँ, दूसरी तरफ़ जने।

आर्य प्रचारक ने पहले बच्चों को सम्बोधित किया:

"बच्चो, आज दिन-भर मैं आपके मुँह से ऐसे वचन सुनता रहा जो निश्चय ही कर्णकटु थे। अप्रिय थे और तर्कसंगत भी न थे। बालको, मेरी पूजनीया माता अभी जीवित हैं और सब काम प्रभुकृपा से अपने हाथ से करती हैं। बच्चो, कल सवेरे हम विधिवत् हवन-यज्ञ करेंगे। सब बच्चे खेत जा नहा-धो यहाँ आ जाएँ। माताओ-बहनो, इस बार मैं आपके बच्चों को गायत्री मन्त्र सिखाकर जाऊँगा।

"मेरे पीछे-पीछे बोलिए:

मातृदेवो भव
पितृदेवो भव
आचार्य देवो भव

"माताओ-बहनो, अर्थ पर ध्यान दो।

"एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य अर्थात् गुरु शिक्षा देनेवाले हों तभी मनुष्य ज्ञानवान होता है। आज प्रात: जब मैं इस सुहावने गाँव में पहुँचा तो यहाँ की देवियाँ पितरों को विदा करने जा रही थीं। मैं हर वर्ष इन दिनों यहाँ आता हूँ और हर वर्ष बताकर जाता हूँ कि पितरों के नाम पर श्राद्ध करना वैदिक धर्म के विरुद्ध है, क्योंकि यह केवल अन्धविश्वास है।

"जिन मृत प्रियजनों के शरीर अग्नि में भस्म हो पंचभूतों में विलीन हो चुके हैं वे जीमने के लिए आपके पास कैसे पहुँच सकते हैं! यह निरा पाखंड है। अन्धविश्वास है।

"प्यारे ग्रामवासियो, ज़रा सोचो, जो पुरखे-प्रियजन अपनी-अपनी जीवनयात्रा सम्पूर्ण कर इस जगत से अलग हो चुके हैं, वे आपका खीर-पूरी खाने कैसे चले आएँगे! मैं ज़ोर देकर बताना चाहता हूँ, कहना चाहता हूँ कि लालची-पाखंडी ब्राह्मणों ने अपने लोभ की खातिर ये सारे अनुष्ठान-व्रत और पूजाओं की पोपलीला बुन रखी है। हमारे देश में निकम्मे, आलसी, अकर्मण्य ब्राह्मण साधु और मठाधीशों ने केवल अपना स्वार्थ गाँठने के लिए सारे ढोंग और प्रपंच फैला रखे हैं।

"काशी के लाट भैरव की कथा सुनिए–काशी के ब्राह्मणों ने उड़ा दी कि काशी के लाट भैरव में बड़े-बड़े चमत्कारिक गुण हैं। सत्या है।

"औरंगज़ेब के समय की बात है। मुग़ल सेना लाट भैरव पर पहुँची तो कायर पुजारी-पंडित सब डर-डरकर भागे। मन्दिर पर जब गोलाबारी शुरू हुई तो संयोगवश धुएँ के ज़ोर लाट भैरव की छत पर लगे मक्खियों और भूँड़ों के छत्ते छिड़ गए!

"जब मुग़ल सेनाएँ अपने प्रहार-आक्रमण के बाद वापस लौट गईं तो पाखंडी अपनी गद्दियों पर लौट आए। भोले-भाले अन्धविश्वासी भक्तजनों को इकट्ठा कर भैरव की महिमा शुरू कर दी–'देखो-देखो, लाट भैरव की सत्या देखो। दैवी शक्ति देखो। भूँडों और भिड़ों के रूप में लाट भैरव ने मुग़ल सेना तक को भगा दिया!'

"ग्रामनिवासियो, यह पाषाण का चमत्कार नहीं था। इसमें लाट भैरव की भला क्या लीला थी! आप तो हर रोज़ अपने गाँव में भिंडों के छत्ते देखते होंगे।

"भाइयो, मैं ऋषि दयानन्द द्वारा चलाई आर्य समाज का एक तुच्छ-सा प्रचारक हूँ। देश-भर में घूमता रहता हूँ। मैंने पाखंडियों की धोखाधड़ी और पोलखाते बहुत देखे

हैं।

"रंग है कालियाकंत को, जिसने हुक्का दिलाया सन्त को।

"दक्षिण में एक कालियाकंत की मूर्ति है जो लगातार हुक्का पीया करती है! आपका यह आर्य-सेवक पहुँच गया वहाँ। ध्यान से देखा, हुक्का पीनेवाली मूर्ति का मुख पोला है। पोलखाता यह कि पीछे से छिद्र निकालकर उसमें हुक्के की नड़ी जोड़ दी गई है। पुजारीजी दीवार के पीछे हुक्का भरवाकर देवता के मुखवाली नली से जोड़ आप भक्ति-भाव से प्रतिमा के सामने बैठ जाएँ। पीछे से कोई हुक्का पीता रहे और धुआँ देवता के मुख से निकलता रहे। चढ़ावा चढ़ता रहे।"

कृपाराम सनातन धर्म में विश्वास रखनेवाले। उठकर खड़े हो गए और बोले–"महाशयजी, मन्दिर कहाँ, पुजारी कहाँ! इस खंडन-मंडन से हमें क्या लाभ!"

ज़नानियाँ हँसने लगीं।

"प्रिय भ्राता, जो मैं कह रहा हूँ, उसमें से गहरा सार निकलेगा। जो देवता दक्षिण के उस मन्दिर में पूजित है अगर वह देवता ही होता तो उसे क्या हुक्का पीने से अच्छा कोई दूसरा काम नहीं?"

ज़नानियाँ पहले हँसने लगीं, फिर गम्भीर हो सिर हिला-हिला सतनाम-सतनाम करने लगीं।

"देवियो, मुहम्मद ग़ज़नी जब सोमनाथ पर पहुँचा तो किस तरह मन्दिर के ढोंगियों का पर्दाफ़ाश हुआ, वह सुनाता हूँ।

"ख़बरा पहुँची कि ग़ज़नी अपार सेना के साथ सोमनाथ पर चढ़ाई करने आ रहा है। ध्यान से सुनिए, वहाँ के पोंगापन्थी पुजारी इस ख़बर को सुन लेने पर क्या करते हैं। पूजा-स्तुति-आरती में लग गए पंडित-पुजारी और इनके साथ आ मिले भक्तजन। सब मिलकर घंटे-घड़ियाल बजाएँ।

"वहाँ के राजाधिराज चिन्ता में थे। पुजारियों ने उनसे भी कह दिया कि हे राजन्, चिन्ता न करें। स्वयं भगवान सोमनाथ यवनों का नाश करेंगे।

"ग़ज़नी की सेनाओं ने घेरा डाल दिया तो पुजारी-पंडित-पांदे सब भागाभागी में।"

निक्की बेबे मुँह पर उँगली रखकर बोली–"अरी, आर्या यह क्यों नहीं कहता कि भाज्जड़ें पड़ गईं।"

"मन्दिर के पट्ट टूटे तो कुछ प्रजाजनों ने हाथ जोड़ ग़ज़नी के आगे प्रार्थना की–'आप तीन करोड़ मोहरें लेवें पर भगवान की प्रतिमा भंजन न करें।'

"मलेच्छ ग़ज़नी हँसा–'बुतपरस्त नहीं, हम बुतशिकन हैं।'

"मूर्तियाँ तोड़ दीं। वो अपार भंडार, हीरे-जवाहरात, माणिक-मोती के ढेर लग गए। मन्दिर का कलश गिरा तो जगतप्रसिद्ध मूर्ति चुम्बक मिकनातीस से अलग हो खंडित हो गई। चकनाचूर हो गई।

"श्रोताओ, अगर पूजा-स्तुति के बदले लोगों ने मिलकर शूरवीरों की सेना सजाई-बनाई होती तो ग़ज़नी का मुक़ाबला करने को कोई तो उठता! जो जाति-देश अपने शूरवीरों की क़द्र नहीं करता, वह धराशायी हो जाता है।

"भाइयो, एक हिन्दू जाति को पोंगापन्थियों ने हज़ारों-लाखों उपजातियों में बाँटकर उसकी शक्ति क्षीण कर दी है।

ज्यों केले के पात पात में पात

ज्यों कवियों की बात बात में बात
ज्यों गधे की लात लात में लात
त्यों हिन्दुओं की जात जात में जात।"

सभा हँस-हँस दोहरी हुई। बच्चे लम्बी हेक में मिल-मिलकर दोहराने लगे:

ज्यों केले के पात पात में पात।
ज्यों गधों की लात लात में लात।

"इनके वृत्तान्त क्या-क्या न सुनाऊँ आपको! सुनो:

कोई मच्छीखाने ब्राह्मण
कोई खीरखाने ब्राह्मण
कोई वेद पत्तर ब्राह्मण
कोई धन पोत्रे, कोई भोज-पोत्रे
कोई सिन्धू पोत्रे।"

कुन्दन चिड़े ने उठकर कहा–"आर्यजी, यह क्या ले बैठे! सुनानी है तो काम की सुनाओ, नहीं तो आपाँ चलें।"

"मैं आपको पाखंडियों की कारस्तानियाँ बताता हूँ। मन्त्र-उच्चारणे की वैदिक रीति को त्यागकर जजमानो को सुझाया–जाप करो माला के। पर अलग-अलग देवी-देवताओं की मूर्तियों की तरह अलग-अलग मालाएँ निश्चित कर दीं:

"शैव्य भद्राक्ष की माला फेरें
वैष्णव तुलसी माला फेरें या चन्दन माला फेरें।
शक्ति की पूजा करनेवाला नरद्रिश की माला फेरें।
साधारण हिन्दू कदम की माला फेरें।
धनाढ्य ब्राह्मण, खत्री और बनिया-बक्काल मुक्त-माला फेर सकता है।

"याद रहे, पंडित-ब्रह्मणों ने यह भी विधान कर दिया कि निर्धन जन कमल डोडे की माला फेरे।

"माताओ-बहनो, इन घड़ियाली पंडित-गुँसाइयों से सदा सावधान रहो।"

ज़नानियाँ बुड़बुड़ाने लगीं–"यह क्या री, ख़ाली बाम्हणों की बदखोइयाँ!"

महाशयजी ने झट विषय बदल दिया–"सुनो सज्जनो, किसी वैरागी पोपलीलावाले गुरु के दो चेले थे। वे प्रतिदिन गुरु के पैर दाबा करते थे। दोनों ने एक-एक पग की सेवा बाँट ली। एक दिन चेला बाज़ार-हाट को चला गया। दूसरा अपने सेव्य पग की सेवा कर रहा था कि गुरु ने करवट ली और उसके वाले पग पर गुरु का दूसरा पग आ गया।

"चेले ने आव देखा न ताव। उठा के डंडा पग पर दे मारा।

"गुरुजी चीखे–'अरे दुष्ट, तूने यह क्या किया!'

"चेला बोला–'मेरे सेव्य पग पर दूसरे का पग क्यों आ चढ़ा?'

"इतने में दूसरा चेला आन पहुँचा। अपने सेव्य पग की सेवा करने लगा तो देखा–पग सूजा पड़ा है। पूछा–'गुरुजी, यह मेरे सेव्य पग में क्या हुआ!' गुरु ने जब वृत्तान्त सुनाया तो दूसरा चेला भी चुपचाप उठा और डंडा उठा ज़ोर से गुरु के दूसरे पग का भुड़था बना दिया।

"आसपास कोलाहल मच गया। गुरुजी रोए-चिल्लाए। लोग जमा हो गए। पूछा–'क्या हुआ बाबा!'

“बाबा ने शिष्यों की हरक़तें बताईं तो एक बुद्धिमान बोला–‘अज्ञानियो, मूर्खो, तुम्हें यह तक नहीं पता कि दोनों लातें एक ही गुरु की हैं!’”

बड़ा हास्सा पड़ा।

आर्य-प्रचारक गम्भीर हो गए–“मौलवी ज़काउल्लाह ने आर्य की परिभाषा की है। उनके कहने के अनुसार आर्य के लफ्जी मायने हैं–मुअज्ज़ज़, मुमताज़ और बरगज़ीदा।”

“चलो री बहना, चलो। आर्य शुरू हुआ है तो बोलता ही जाएगा।”

“उठो, चलके चौके-चूल्हे लगें।”

“अरी, अँगियारी ठंडी हो गई, तो दूध के नीचे उपला कैसे लगाऊँगी!”

सभा तितर-बितर होते देख महाशयजी ने एक नया प्रसंग छू लिया–“एक बार ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेव ने अत्रि की पत्नी सती अनुसूइया से ज़बर्दस्ती की चेष्टा की। मुझे साफ़-साफ़ कहने की आवश्यकता नहीं। इतना समझ लो कि ताज़ीरात हिन्द की दफ़ा 497 में जिन-बिल-जब्र के मुताबिक इन तीनों देवताओं पर बाक़ायदा अदालत में मुक़द्दमा चलाया जा सकता है।”

“उठो री उठो, यह कोई चंगी बातें नहीं। किस देखे देवते और किस देखी ऋषि-वधूटी।”

भगवान पांदा बड़ा-सा पग्गड़ सिर पर उठाए आ खड़ा हुआ।

तमतमाते मुख इधर-उधर देखा, फिर शाहजी से कहा–“इस पापी समाजी के मुख से आप क्या सुन रहे हैं! देवताओं पर लांछन लगाना ही क्या आर्य धर्म है?”

शाहजी गम्भीर बने रहे। सिर हिलाकर कहा–“यहाँ लड़ाई-झगड़ा नहीं, खंडन-मंडन हो रहा है। सुनो भी और सुनाओ भी।”

भगवान पांदा बिफरने लगा–“इस समाजी का मुँह बन्द कर दीजिए। मेरे मियानी में भी दयानन्दियों ने शिवलिंग का अपमान किया था। ये आर्य-प्रचारक हिन्दुओं के लिए आस्तीन के साँप हैं।”

छोटे शाह ने बीच-बचाव किया–“महाशयजी, कुछ ज्ञान-ध्यान, मन्त्र-हवन की बात करिए। वाद-विवाद खंडन-मंडन छोड़ दें!”

आर्य ने भजन शुरू कर दिया:

“शरण प्रभु की आओ के यही समय है प्यारे
मकर फ़रेब और झूठ को त्यागो
सत्य में चित्त लगाओ रे
यही समय है प्यारे।
उदय हुआ ओउम नाम का भानू आके दरश दिखाओ रे
पान करो इस अमृत रस को उत्तम पदवी पाओ रे
यही समय है प्यारे।”

कृपाराम भुनभुनाते उठ खड़े हुए–“भजनीकजी, आपने क्या समझा, इस ग्राँ में सब अज्ञानी मूर्ख हैं?”

“माताओ, बहनो, भ्राताओं, आज इतना ही। कल आपको मैं वेदों की कथा सुनाऊँगा। मेरे साथ बोलिए:

बेहक़ीकत एक काग़ज बेहक़ीकत एक रंग
क्या है यह तस्वीर मुझमें चश्मे हैरत क्यों है दंग
देखती हैं क्यों ज़माने की निग़ाहों के फ़रेब

आ रहा है क्यों ख़यालाते-हक़ीकत में नशेब
बुत है तू एक दस्ते इन्साँ ने बनाया है तुझे
बुत-शिकन लोगों ने फिर क्यों सिर चढ़ाया है तुझे।
ख़ाके ग़ज़नी ही से उठते हैं फ़क़त महम्मूद क्या।
बुत-शिकन भारत में कोई भी नहीं माजूद क्या!
मैं बनूँगा बुत-शिकन पुरज़े उड़ा दूँगा तेरे।
मेरी ताक़त देखना टुकड़े उड़ा दूँगा तेरे।
तोड़े बुत अगियार के महमूद ने घर छोड़कर
और मैं छोड़ूँगा इन अपने बुतों को तोड़कर!

"शेष कल–बोल, स्वामी दयानन्द की जय! बोल, आर्य समाज की जय!"

बोद्दे ने बिना समझे-बूझे जोड़ा–"बोल, बुतशिकनी की जय!"

"वाह बालक, तू ऊँचा चढ़ेगा! तू आगे बढ़ेगा!"

बेटे के लिए आशीष वचन सुन बोद्दे की माँ बड़ी खुश हुई। पास जा आर्य के आगे हाथ जोड़ दिए–"महाराज, रूखा-सूखा जो भी है, आज का भोजन मेरे घर।"

पीछे से शानो की माँ ने आवाज़ दी–"मैंने कहा सुबह की कड़ाही और काले मोठ पड़े हुए हैं। लड़के के हत्थ मँगवा ले।"

भगवान पांदे का जी जल गया–"इस दयानन्दी को काले-काले भट्टे बैंगन खिलाओ, इसका कलेजा जल-फुँक जाए। इसे बवासीर फूटे..."

ज़नानियाँ हँसने लगीं–"पांदाजी, बिचारे भजनीक से इतनी खार! आपके दूध-खीर तो सात जन्मों तक पक्के। ब्राह्मण की जून इतनी जल्दी नहीं बदलती। श्राद्ध जीम-जीम अभी तो हज़्म भी कहाँ हुए होंगे! आर्या को भी कुछ खा लेने दो।"

शाहनी की भिंभरवाली मौसी से पुत्र मिट्ठचन्द और रूपचन्द अपनी बहनू शाहनी को मिलने आन पहुँचे तो भाइयों का रियासती बाना देख लोग अश-अश कर उठे।

जम्मू फ़ौज के बाँके ऐसे बन-ठन फबें मानों महलों के राजकुमार हों। रियासत की जागीरदारी टुकड़ी के लश-लश करते सवार घोड़ों पर से उतरे तो गाँव में धूमें मच गईं।

मुँह-माथा गोभी के फुल्ल-सा गुटा हुआ। सिर पर डोगरी पागें और बाँकी चालें। यूँ जापें ज्यों यूसुफ़ों की जोड़ी हो!

"मल्ला जी, शाहों के घर जम्मू फ़ौज उतरी है।"

"छोड़ री छोड़, यह तो मुल्क़ अंग्रेज का है। यहाँ देसी फ़ौज का क्या काम!"

"सुनते हैं, शाहनी के मौसेरे भाई हैं।"

बलैया ले-ले शाहनी ने चौके में थालियाँ परसीं तो ताक-झाँककर गाँव के बच्चों-बच्चियों ने अन्त मचा दी।

एक आए, झाँक जाए। दूजा आए, बिट-बिट तके। तीसरा हँसकर भित्त के पीछे हो जाए। छोटे भाई-बहनों को गोदियों में उठाए कुड़ियाँ एड़ियाँ चुक-चुक ताकें और चुन्नियाँ मुँह पर रख पले-पले शरमाएँ।

चाची महरी ने घुड़की दी–"जाओ री जाओ, त्रिकालाँ को कुटिया की तरफ़ गेड़ा-फेरा लगाएँगे तो इन्हें जम्म-जम्म देखना। तुम्हारे तो मामे लगे कुड़ियो!

चाची चौके में बैठ मिट्ठचन्द और रूपचन्द से ठट्ठा करने लगी–"पुत्रो, तुम्हारी

फबन देखकर लड़कियों का यह कौड़ीफेरा। तुम्हारे पहाड़ की लड़कियाँ तो हाथ लगे मैली हों, पर रे, कोई देस्सन मन भा जाए तो बहन के कान में कह देना!"

शाहनी ने तवे पर रोटी डाली, हँसते-हँसते भाइयों की ओर देखा। तस्वीर की तरह बैठे रहे। न कुछ कहा, न आँख ही झपकी।

रोटी पीछे खाँड-मलाई खा दोनों भाई हाथ धो बाहर आए। राबयाँ की गोद में लाली को देखा!

मिट्ठी-चन्नी-डोडो-कम्मो पास दुकी बैठी थीं।

मींडियों-गुँथे सिर पर मैली-कुचैली दुपट्टी में से चन्नी का सुडौल मुखड़ा! मिट्ठी की अँखियाँ ऐसी ज्यों किसी ने फाँकड़ियाँ सजा रखी हों!

लड़की मरजानी ने ऐसी दिठवन दी कि हुस्न-चिराग़ डोगरे फीके पड़ गए।

चन्नी ने मिट्ठी की बाँह पर चकोटी काटी और उसकी चूनर खींचकर कहा–"होश कर री! कहाँ देखे चली जाती है!"

लाली को सगुण दे दोनों भाई नीचे उतर गए तो भी मिट्ठी की अँखियाँ पैड़ियों पर ठिठकी रहीं।

कम्मो ने धप्पा मारा–"अरी मोरनी, पाँव देख, अपने पाँव!"

मिट्ठी सचमुच अपने पाँव देखने लगी तो माँबीबी पास आन खड़ी हुई–'क्यों री, तेरे पाँवों को क्या हुआ! क्या देखती है?"

"कुछ नहीं माँबीबी!"

"तो री, मुखड़े पर हैरानियाँ कैसी!"

शानो हँस-हँस दोहरी हुई–"माँबीबी, इसका तो हेटलो साँस हेटो और ऊपरो साँस ऊपर।"

"क्यों री, चित्त-मन तो ठिकाने है न!"

कम्मो ने आँखें मटकाईं:

रानी को राव प्यारा
कव्वी को काँव प्यारा।

माँबीबी ने झूठ-मूठ तेवर चढ़ा लिए–"कुछ राह कर री, यह क्या मशकरी-मज़ाक है! चन्द पब्बा बन के चहक रही हो!"

राबयाँ पहले चुप बनी रही, फिर आँखें उठा बोली–"नर डोगरों का जामाबाना देख मचल रही है।"

"क्यों री हंसारानी, तू कहाँ की आई सयानी! बेबो, तू भी इन्हीं की गोट्ठ की है।"

राबयाँ कुछ कहने जाती थी कि शाहनी की हाँक पड़ गई–"माँबीबी, दो सुथरी बिछाइयाँ निकाल दे बागे को। टँगने पर दो कोरे खेस पड़े हैं पिड़ियोंदार!"

चाची ख़ुश हो-हो गई–"मैंने कहा बच्ची, तेरे इन रियासती भाइयों के तुल कौन! मेरी मेहनत सफल हुई। मेरे पराहुनों का आना कब रोज़-रोज़।"

"चाची, वीर मेरे स्यालकोट उतरे थे किसी पड़ताली मामले में। मौसी ने कहा, लाली की बधाइयाँ ज़रूर दे के आना। चाची, ढंग-पज्ज पर ही मेल है न!"

"ख़ैर मेहर, समय-समय लाली बच्चड़े के सगुण-शास्त्र होते रहें।"

"तेरा मुँह मुबारक़ चाची! नौबत बाजे कर्मों से!"

चाची ने झट मीठे-मीठे सुरोंवाली घोड़ी छू ली:

भरनी आँ हीरे मोतियों दे थाल

देनी आ नाते काम्मियाँ दे लाग
लाड़े दे मन मिट्ठड़ी दा चाव
वे जीवें, अम्बड़ी न देखने दा चाव।

छोटे शाहनी चाची के साथ आ मिली:

जे तू चढ़या घोड़ी वे
तेरे संग भ्रावाँ जोड़ी वे।

"बधाइयाँ, बधाइयाँ जिठानी! अब मुँह मीठा करवा!"

शाहनी घोड़ियों के चाव में भीज-भीज गई–"सदके जाऊँ लाली की दादी पर, चाची पर! हैं री, तुमसे कौन सी शह अच्छी! लो, मुँह मीठा करो। लालीशाह के मामे लाए हैं।"

देवरानी ठट्ठा-मखौल करने लगी–"सोहणी पीड़ी पागें डोगरों की और नुगदी निरी सूखी मकई!"

शाहनी के तेवर चढ़ गए–"मुँह में तो डाल के देख पहले। निरा भुना हुआ खोया है।"

छोटी शाहनी मुँह में डाल हँस-हँस दोहरी हुई–"मेवे-बादामों के भंडार रियासत में और तुमने मेरे कहे को सच्च मान लिया! कभी मज़ाक भी समझा कर जिठानी!"

शाहनी झेंप गई–"हुआ री हुआ मिजाजो, बातों में कोई जीता है तेरे से आज तक!"

रात दीवटों की लौ हवेली में मजलिस सज गई।

कृपाराम ने चिलम भरवा हौला सा संकेत दिया पराहुनों को–"बादशाहो, छक्को। धुर क़ाबुल का तम्बाकू है।"

दोनों भाइयों ने बड़े सयानों का इज़्ज़त-मान रखा। हाथ जोड़ दिए–"खमा!"

मन-ही-मन शाहों ने बड़ा सराहा–'कपुत्र-सपुत्र कोसों से पहचाने जाते हैं। रस्म-रिवाज़ अपने देशी दरबारों के सोहणे सलीकेवाले हैं।'

मुहम्मदीन ने पहल कर ली बात छेड़ने की–"बादशाहो, अपने डोगरशाह जम्मू-कश्मीर के किन रंगों में?"

मिट्ठचन्द की पाग माशा-भर फड़की–"महाराज के सोहणे रंग और समर्थ ढंग!"

कर्मइलाहीजी ने सिर हिलाया–"देसी दरबार किन चढ़तलों में!"

रूपचन्द के मस्तक पर माड़ा-सा तेवर उभरा–"बहिश्त तुल दरबार के दर ऊँचे, रियाया के सिर झुके हुए!"

मीराँबक़्श को खाँसी छिड़ गई तो चौधरी फ़तेह अली हँसने लगे–"शाह साहिब, आपको तो पता है मीराँबक़्श के वड्डे-वड्डेरे खालसा भाज्जड़ों में कश्मीर से नीचे उतरे थे। दिल इसका वहीं लगा रहता है। इसे कौन समझाए कि दादे-परदादेवाली कुल्ली-झुग्गी कोई फ़तेह मीनार तो नहीं थी जो अब भी अखनूर में खड़ी होगी। अगर है भी कोई बचा-खुचा छत-छप्पर तो ख़बरे कितने सवार-घोड़े मुता गए होंगे।"

हँस-हँस मंजियाँ हिलने लगीं।

गुरुदित्तसिंह दाढ़ी खुजाने लगे। पगड़ी खोल लपेटी, फिर खोलकर लड़ टुंगा तो मौलादादजी ने टोका–"प्यारे खालसाजी, यह क्या टूना-टोटका है! पहले दाढ़ी हाथ

लगाया। फिर साफ़ा कसा। अब रणजीतसिंही तलवार निकालने की तैयारी तो नहीं!"

कृपाराम ने गर्माया–"बादशाहो, कृपाणें-तलवारें तो ख़ैरों से खालसाओं के पास! अलबत्ता तोपों के नाम लो तो कोई बात बने!"

शाहजी ने बारी हाथ में ले ली–"मशहूर तोप तो है ज़मज़मा। आख्यान है कि जिसकी ज़मज़मा उसका पंजाब।"

जहाँदाद जी ने सिर हिलाया–"बादशाहो, तोप क्या हुई, शहंशाही भभकी हो गई!"

मुंशी इल्मदीन शुरू हो गए–"ख़्वाजा सैयद के पास शाह अब्दाली की तोप दरिया चनाब में डूब गई थी। सरदार हरीसिंह भंगी ने तरक़ीब से निकलवा दी। बस जी, भंगियों की तोप के नाम से मशहूर हो गई!"

शाहजी ने अपने ख़जाने की चाबी घुमा दी–"तोपें हर लश्कर और हर फ़ौज के पास। मुग़ल बादशाहों ने ऐसे चुन-चुनकर नाम रखे कि छोटा-मोटा तो नाम सुनकर ही किनारे हो जाए।"

मौलादादजी को रस आने लगा–"दो-चार नाम हमें भी बता छोड़ो। मुग़लों के रुआब का हम भी मज़ा ले लें।"

"मुग़ल फुल्ल-फैलाव और रोब-दाब रखने में बड़े माहिर। तोपों के नाम ऐसे ज्यों शाही ख़ानदान के शाहज़ादे हों–शेरदहान, ग़ाज़ीख़्वान, गढ़भंजन, फ़तेह लश्कर!"

कर्मइलाहीजी को सुन-सुनकर सरूर चढ़ने लगा–"वाह-वाह! शाबाश भई शाबाश! बाबर के पोत्रो-पड़पोत्रो, तुमने भी क्या हक़ूमती अक़्लें पाईं। करनेवाले कर गए हक़ूमत हिन्दोस्तान पर!"

कृपाराम की नाक पर जैसे कोई मक्खी आन बैठी हो–"चौधरी साहिब, वक़्त की बात है। चढ़तलें थीं हक़ूमत की जब ख़ानदाने-मुग़लिया जवानी पर था! ढलती पर आया तो फिरंगी के आगे पटाख़े की तरह भू-भस्म हो गया!"

अपने-अपने खून के पसीने आते देख शाहजी ने बड़ी दानाई से बात बदल दी–"सुनने-पढ़ने में आता है कि बादशाह जहाँगीर कुछ नहीं तो आठ बार कश्मीर पहुँचा। और आख़ीरी श्वास भी उसने भिंभर में लिया।"

"शाह साहिब, उन दिनों दिल्ली से श्रीनगर पहुँचने में कितने दिन लगते होंगे?"

"अन्दाज़न दिल्ली से लाहोर महीना-डेढ़, एक और लगा लो लाहोर से श्रीनगर। रास्ता तो यही था न अपने गुजरात दौलतानगर हो के।"

छोटे शाह बोले–"भ्राजी, क़ाबुल से लाहोर घोड़ों पर दस-ग्यारह दिन और दिल्ली से लाहोर महीना-डेढ़ क्यों?"

कर्मइलाहीजी बोले–"लाले वड्डे ने बताया था कि जब वह कश्मीर गए थे तो ताँगे चलते थे गुजरात से श्रीनगर। यह समझ लो, पूरे पन्दरह दिन का सफ़र था। सिर्फ गुजरात से श्रीनगर पन्दरह दिन।"

नजीबा बोला, "तो बादशाहो, शहंशाह जहाँगीर पहुँचा कश्मीर आठ बार सिर्फ़ नज़ारे देखने कि कुछ लड़ाई-झगड़े की वजह थी?"

"कश्मीर की बाग़-बहारें और बहिश्ती नज़ारे। शाहज़ादे-शाहज़ादियाँ न पहुँचें कश्मीर की वादियों में तो और क्या हम जट्ट-बूट जाएँगे केसर-क्यारियाँ सूँघने!"

"जहाँगीर पहुँचा कश्मीर आठ बार और शाहजहाँ सिर्फ़ चार बार।"

मुंशी इल्मदीन बोले–"शाहजहाँ वक़्तों में ही भिंभरवाले राजे ने इस्लाम क़बूल

किया और शाहजहाँ ने उसे राजा-ए-दौलतमन्द का ख़िताब अता किया।"

शाहजी ने अपना दहला निकाल फेंका–"जहाँगीरी बख़्तों की बात है। राजपूत सरदार धर्मचन्द यूनानी हिक़मत में बड़ा माहिर। उसकी बड़ी शोहरत। जहाँगीर बादशाह बीमार हुआ तो उसको फ़रमान मिला दिल्ली पहुँचो। बीमारी-रोग बादशाह के कुछ ऐसे नाकस कि बड़े-बड़े वैद्य-हक़ीम रह गए। शर्त दरबार-दिल्ली ने यह रखी कि जो बादशाह सलामत को राजी कर देगा, निक़ाह में उसे शाहज़ादी मिल जाएगी।

"हुक़्म पा पहुँचे धर्मचन्द दिल्ली। रब्ब का भाना, ख़मीर-कुश्तों से बादशाह को ठीक कर दिया। फिर क्या था, शाहज़ादी ब्याहने को धर्मचन्द शादीख़ाँ बन गए।"

जहाँदादख़ाँ के फ़ौजी मिज़ाज को बड़ा रस आया। टोककर कहा–"पहले तो बादशाह-शहंशाह का हक़ीम ही मात नहीं। फिर ख़ैरों से वह जिसके सिर दामादी पग्ग बँध गई हो! क़्या कहने! शाही दरबार में रसूख वड्डा और अमलों में अमल शाहज़ादी का! बन्दा बहिश्ती बरक़तों का तो मालिक बन गया न!"

"जहाँदादजी, यहीं टंटा पड़ गया। दिल्ली जाकर राजपूत मियें का दिल न लगे। न पहाड़, न बर्फ़े, न ठंडी हवाएँ। अपने घर से ऐसे उदास हुए कि रातोंरात दिल्ली छोड़ वतनों को लौट आए। शाहज़ादी बड़ी नाराज़। शहंशाह को शिकायत की। उसने उठकर फ़ौजें भेज दीं। शादीख़ाँ बहादुरी से लड़ा, पर लड़ाई में मारा गया।"

रूपचन्द ने सिर हिलाया–"नौशहरा तहसील में शादीख़ाँ का थान बना हुआ है।"

गुरुदित्तसिंह बोले–'कहनेवाले कहते हैं कि डोगरे-चिब्ब एक ही मुँह की दो शाखाएँ हैं। एक अल धर्मचन्द की और दूसरी शादीख़ाँ की।"

मैयासिंह चौंककर उठे–"मैंने कहा एक और भी साक-सम्बन्ध हुआ था। राजौरी के राजा की धी औरंगजेब से ब्याही गई थी।"

शाहजी ने मिट्ठचन्द-रूपचन्द को बातचीत में शरीक़ होने के लिए कहा–"अपने मेहमानों से भला क्या भूला हुआ है! जम्मूराज के बाशिन्दें हुए! हाँ; जहाँदादजी, औरंगज़ेब कश्मीर पहुँचा सिर्फ़ एक बार। शाही लाम-लश्कर और साथ रोशनआरा बेग़म। शाही कारवाँ पीर पंजाल पार करने को हुआ कि ख़बरें कैसे हाथियों के झुंड़ में हड़बो-हड़बी मच गई। बेग़म का तो बचाव हो गया, पर कई हाथी ज़नाना सवारियों के साथ खड्ड में जा गिरे।"

गुरुदित्तसिंह खूब हँसे–"बुरा हुआ शाहजी! आप ही बताओ कि औरंगज़ेब दोबारा कश्मीर क्यों जाता! जनाना माल का नुक़सान कोई छोटी-सी बात तो नहीं!"

"ये तो हुईं न शाही अलामतें। लश्कर-फ़ौज़ क़दम न भर के दे जब तक गागरें भरी-भराई साथ न हों। फिट्टे मुँह!"

मैयासिंह ने थापड़ा दिया–"गंडासिंह, तेरा जवाब नहीं। तींवियों को गागरें बना छोड़ा। दम तो है तेरी बात में। गागरें ही हुईं न! हौली-हौली अपने ख़ाली होती जाती हैं!"

काशीशाह ने मज़मून बदल दिया–"सुनते हैं, गद्दी पर बहाल होने के बाद जम्मूशाह की अंग्रेज़ों से चंगी सुर हो गई है।"

हाजीजी ने बड़ी मोहतबिरी दिखाई–"सुलहनामे रास्ती के और बढ़े हुए हाथ दोस्ती के! एक की औकड़-ज़रूरत दूसरे का हुक़्म-हासल!"

रूपचन्द ने मुँह खोला–"रियाया न कर बैठी सुलहनामे अंग्रेज़ों से! सुलहनामे बराबरी के!"

मुंशी इल्मदीन न जर सके–"बुरा तो मानना न मेहमानो, दस-पन्दरह बरस तो जम्मू दरबार पलसेटे-पलटनियाँ मारता रहा। कहीं बूढ़े वेले जाकर करज़न लाट की इमदाद से गद्दीनशीनी हुई बूढ़े शेर की!"

दोनों भाई मिट्ठचन्द और रूपचन्द ऐसे उठ गए मंजियों से ज्यों छावनी में बिगुल बजा हो–"जयदेव! महाराजा का लूण खाकर उनकी शान के ख़िलाफ़ बात सुनना हमारे लिए अधर्म! भाइयाजी, हमें आज्ञा हो, ऊपर चलकर मौसी से बात करें।"

सुनते ही मंजियों पर मुंडियाँ ढीली पड़ गईं। कर्मइलाहीजी ने झटापट बात सँवार ली–"माफ़ी जागीरदारो, हत्थ-बँधी माफ़ी। शाहज़ादयो, हम तो आपका दिल लगाने को बैठे हैं। बादशाहो, दुनिया में कौन पैदा हुआ है जो कश्मीर शाह पर फ़ब्ती कस सके!"

मौलादादजी मदद पर हो गए–"सौंह अल्लाह पाक़ की, जिसकी पगड़ी पर ख़ुदा ने बहिश्त की कलग़ी लगा रखी हो, वह तो साक्खयात नरपति हुआ न! उसे किस लाट भड़वे की इमदाद की ज़रूरत है!"

शाहजी की आवा-जावी लगी रहती थी रियासत में।

"लाट करज़न जब जम्मू दरबार के तिलक पर गया तो उसने ख़ास ऐलान किया था कि सरकार अंग्रेज़ी की मंशा कश्मीर को दूसरे सूबों के साथ मिलाने की नहीं। मतलब मुद्दा यह था कि दोनों सरकारों के बीच रिश्ता बराबरी का है। फिर क्या था! मुख़ालफ़ीन चुप होकर बैठ गए।"

दीनमुहम्मद बोले–"बादशाहो, सलामी तो तोप की एक मान नहीं। जम्मू दरबार को तो ख़ैरों से इक्कीस तोपों की सलामी लगी हुई है।"

मिट्ठचन्द्र-रूपचन्द के माथे परखरे होते देख कक्कूख़ाँ बोले–"बादशाहो, रियासती लश्कर के क्या डेरे-डंके हैं!"

"कृपा जयदेव की! डोगरा फ़ौज अव्वल और आला। चौदह रसाले मुस्तैद क़ुशादा और जंगी फ़ौज के। एक टुकड़ी महाराज की सेवा में जागीरदारी। ये दोनों सेवक महाराजा की इसी टुकड़ी के सवार हैं।"

"बल्ले-बल्ले, बात हुई न ख़ानदानी राजे-महाराजाओंवाली!"

काशीशाह ने बात आगे बढ़ाने को पूछा–"रूपचन्द, इस टुकड़ी की ख़ासियत क्या है!"

"भाइयाजी, रियासत के ठिकानेदारों के पुत्र-पोत्रों की पल्टन कहलाती है यह! हर माना-परवाना कुनबा-क़बीला एक-न-एक फ़रजन्द ज़रूर भेजता है इस टुकड़ी में।"

हाजीजी का पोत्रा क़ुरबान अली हांगकांग पुलिस रसाले में भरती था। पूछा–"पुत्तरजी, ख़र्चे-भत्ते का क्या हिसाब-किताब है?"

रूपचन्द ने अहंकारी अदा दिखा दी–"घोड़ा अपना, पोशाक अपनी और सेवा-टहल अपने महाराज की!"

"यह तो दूसरी फ़ौजों से सवाई बात न हुई!"

जम्मूवालों को यह तन्न पसन्द न आई। सिर हिलाकर कहा–"इंगलिस्तान का शाही दरबार भी ख़ानदानी जागीरदारों के दस्ते तैनात करता है। जैसा चलन वहाँ, वैसा चलन यहाँ।"

जवाब से डेरा जट्ट के अक्खड़ों की पीठ लग गई, सो दबादब हुक्के गुड़गुड़ाने लगे।

"दूसरी रियासतों के तो हाल नर्म-ग़र्म ही बरख़ुरदारो! यह बताओ कि जम्मू-कश्मीर में रियाया की सुनवाई कैसी?"

"बराबर सुनवाई! ख़ुले दरबार कोई खड़ा हो के कह दे–'महाराज, अर्ज़ है!' तो सुनवाई पक्की।"

शाहजी हँसने लगे–"सुनवाई बेशक़ पक्की, पर 'नज़र' भेंट पहले। ग़लत तो नहीं है मिट्ठचन्द?"

मिट्ठचन्द बड़ी मोहक हँसी हँसा–"भाइयाजी, सोलह आने सच्च! महाराज से नज़र-भेंट नहीं छोड़ी जाती।"

रूपचन्द ने मन-ही-मन डेरा जट्ट पर चढ़ाई करने की ठान ली–"इनमें बड़े महाराज ने ले-ले नज़रें जम्मू में अनेकों मन्दिर-शिवालय बना डाले। बस, वृत्ति महाराज के चित्त में यही कि जम्मू को काशी-बनारस बना दें। संस्कृत पाठशालाएँ चला दें।"

मुंशीजी न पचा सके–"हाँ जी, मियें राजपूत जो न कर लें सो थोड़ा। शाहजी, वह अपना बारामूलेवाला ख़ानदार मुझे गुजरात सर्राफ़े मिल गया। शालों की गाँठें लेकर अमृतसर जा रहा था। बताने लगा कि कश्मीरी ब्राह्मण जो का जो करें, उन्हें राज की तरफ़ से पूरी छुट्टी। बाकी रियाया से सलूक हक़ूमत का मुसल्लियों से गया-बीता!"

चौधरी फ़तेह अलीजी ने बात वाजिब न समझी–"सहजे से। इल्मदीन, ख़बरे क्या बात है कि हुक्के की चिलम की तरह भखते ही रहते हो! असल बात तो यह कि रियासत देसी जो भी हो, अंग्रेज़ के राज के तुल नहीं। झूठ क्यों कहें, अंग्रेज़ के क़ानून में शेर-बकरी एक घाट पानी पीते हैं।"

मुंशीजी डटे रहे–"चौधरीजी, असल बात पर आने दो मुझे। कश्मीर शाह बुरा नहीं, वहाँ के पंडित पीरज़ादों ने अन्त मचा रखी है। वहाँ कोई एक मामलाकर है! औरंगज़ेब का तो जज़िया हुआ न मशहूर, वहाँ जर्रे-निक़ाह, जर्रे-चौपान, जर्रे-चोबफ़रोशी, जाफ़रानफरोशी, पश्मफ़रोशी, फम्बफ़रोशी..."

मुंशी इल्मदीन यकायक ऐसे भड़के कि मजलिस की लिहाज़दारी भूल ताबड़तोड़ बोलते चले–"और तो और, मुसलमीनों को हथियार रखने की इज़ाज़त नहीं।"

चौधरी फ़तेह अली और जहाँजादजी ने अपने-अपने हुक्के उठाए और उठ खड़े हुए–"चलें शाहजी, मुंशीजी ने आज ऐसी खट्टी डकार मारी है कि सिर को चढ़ गई है।"

शाहजी सिर हिला-हिला हँसे–"भरम न करो चौधरीजी! मुंशी जी, ये तो फेर तवारीख़ों के! जज़िये लगे, कर्मी लगी, पर रियाया हिन्दुस्तान की क्या अपने वतन छोड़कर कहीं और चली गई! रब्ब आपका भला करे, ख़ानदाने-मुगलिया में भी सभी तरह के शाह-बादशाह हो गुज़रे हैं। बाबर जैसा पुज्ज के बीबा, अकबर जैसा नेक-दिल और औरंगज़ेब जैसा संगदिल..."

सुनकर गंडासिंह रौ में आ गए–"मैंने कहा जहाँगीर की तो जद्दी पुश्त बदल गई! बाप ख़ैरों से अकबर जैसा सच्चा मुग़ल और माँ सुच्ची रजपूतनी। खून की तासीर तो बदलनी ही थी न, बदली! अब बताओ मुंशी इल्मदीनजी, है कुछ जवाब आपके पास?"

"लो बादशाहो, अपने पिंड के बरख़ुरदारों ने खोदा भी तो सीधा कोह सुलेमान ही खोद डाला। दुनिया पहुँची अवादान, अफ्रीका, कनाडा और ये नालायक़ जा पहुँचे हैं लाहौर टेशन! सारी वर्दियाँ छोड़ के पहनी तो वर्दी लाल पहनी!

शाहजी के माथे पर बल पड़ गए–"मुहम्मदीन, किसकी बात करते हो?"

"वही जी अपना मेहरअली और मल्लाहों का ख़ुशिया। दोनों नालायक़ों ने

मिलकर मता पकाया और दोनों जा पहुँचे हैं लाहोर। नाई रमज़ान ने चोराँवाली के दीने के हाथ रुक्का भिजवाया है कि दोनों सामान ढोने पर लगे हैं टेशन पर!"

फ़तेह अलीजी कई देर खाँसते रहे–"देखो, दोनों तगड़े जवान। घर-खेत ही छोड़ने थे तो फ़ौज की भरती बुरी थी! जाना ही था तो नालायक़ हांगकांग-शंघाई जाते। मार दुनिया अफ्रीका पहुँची है। अहमक़ों ने पैंतरा डाला तो वह भी लाहोर टेशन का। ओ कनाडे रेल पड़ रही थी–राहदारी ले के उधर ही मुँह कर लेते। चंगा कमाते-खाते!"

कृपाराम नालायक़ों की हरक़तें हँगालने लगे–"लाहोर किसी मार पर गए हैं। नाई रमज़ान इन्हें कहीं सब्ज़ बाग़ दिखा गया है। एक शाम खेत से मैं लौटा था तो खट्टेवाले खू पर खड़े तीनों बातें कर रहे थे। मैं उधर से लंघ पड़ा। नाई रमज़ान लड़कों को हँस-हँस बता क्या रहा था–गुल-गुलाब और केतकी-शराब! अब आप समझ लो कि मामला यह शुरू हुआ तो कहाँ से हुआ! फ़रमान अली, तुम्हारा लड़का है, आख़िर कुछ तो पता तुम्हें भी होगा ही।"

फ़रमान अली बड़ी सोच में–"शाहजी, मेरी तो अक़्ल-बुद्ध ठिकाने नहीं। दिल बड़ा उदास है। जिसका पुत्तर घोड़े की सवारी करने के क़ाबिल हो वह टेशन का टट्टू जा बने तो बाप का दिल हँसेगा तो नहीं। रोएगा ही न!"

नजीबे ने हमदर्दी जताई–"चाचा, सुनकर मेरा अपना दिल बड़ा खट्टा हुआ। मेहर अली का क्या चेहरा-मोहरा! तरह से पहन-पचर के निकले तो नवाबज़ादा लगे। देखो, लड़कों की मत ही मारी गई, नहीं तो यहाँ कमी क्या थी!"

जहाँदादजी बोले–"एक बार सोच भी लिया जाए कि जवान-जहान लड़के हैं, पिंड से बाहर निकलना चाहते हैं। यह तो कोई नुक्सवाली बात नहीं। बाक़ी बात बुरी तो सामान ढोने की है।"

कर्मइलाहीजी ने सिर हिलाया–"रेलगाड़ियों ने भी तो अन्त मचा दी। उठे बन्दे किसी-न-किसी तरह टेशन तक पहुँच गए। जा बैठे डिब्बे में।"

"चौधरीजी, भाड़ा तो भरना पड़ता है ना सफ़र करने का! मेरी आँखों-देखी नहीं पर सुनने में है कि रमज़ान लड़कों को भनकड़-नावाँ दिखा-गिना गया है।"

"बादशाहो, रेलों के जाल बिछा गए अंग्रेज़ ने। जितनी गाड़ियाँ उतने टेशन, जितने टेशन उतना आदम उतरेगा। चढ़ेगा। साथ पंड-पोटली भी लाएगा।"

फ़रमान के साथ अल्लाह रक्खा भी आन बैठा था। कहा–"टेशन गुजरात का मेरा भी देखा हुआ है। एक बात समझ नहीं आई कि मुसाफ़िर आप उतरें गड्डी से और भार-असबाब कोई दूसरा उठाए। अपने पिंडों के लोक उतरें, कोई गंड-पोटली हो तो सिर पर रखी और बाहर निकल आए। शहरियों की दूसरी ही चालें। ढोइयों ने सामान ढोया हुआ है सिर पर और शहरिए खच्चर खाली हाथ पीछे-पीछे चले आते हैं ज्यों दिवाला निकला हुआ हो!"

कर्मइलाहीजी बोले–"फ़रमान अली, लड़का तुम्हारा शुरू से ही तेज़-तल्ख़ है। दिमाग़ में कुछ कणी तो है न उसके। हर फ़सल पर यही कि करेंगे खेती तो मालकी पर! फ़रमान अली ने बाँधकर रखा हुआ था। मौक़ा लगते ही निकल पड़ा।"

"शाह साहिब, पुत्तर तो मेरा है पर मुझे किसी और का लगता है। या मैं इसका बाप नहीं या यह मेरा पुत्तर नहीं।"

"सहजे फ़रमान अली, उसका लाहोर जाना कोई इतनी दोखवाली बात नहीं। वह पुत्तर क्या जो बाप से आगे न निकल जाए!"

"शाह साहिब, अब क्या बताऊँ आपको! उसकी तरफ़ से मैं माफ़ी माँग लूँगा। लड़के के दिमाग़ में बस हुज्जत फ़ितूर बैठ गया है कि कर्ज़े में पड़ी जिवियों की मालकी हमारी है। लाख समझाता हूँ–पुत्तर, हम शाहों के देनदार हैं। उसकी एक ही रट्ट कि खानी है तो मैंने पूरी तऊन ही खानी है, नहीं तो मैं भूखा ही चंगा!"

मौलादाद कुछ सोचते रहे। बोले–"शाह साहिब, ऐसे जातक को पाँच-दस जमातें टपवा देते तो चंगा था। अक़्ल-बुद्ध में तेज़ है।"

"बराबर चौधरीजी, बताता हूँ, बात क्या हुई है। बैठा-बैठा हवेली की ओर देख एक दिन कहने लगा–अब्बू, घर ऊँचा पक्का हो, तबेले में माल-डंगर हों और खूँटें पर एक घोड़ा हो, जिवियाँ अपनी हों, फिर और क्या चाहिए बन्दे को!

"मैं इस बिगड़ैल बरज़ोरी से बड़ा त्रबका। मैंने हवाई घोड़े की लगाम खींच दी–पुत्रा, तू चाहता है तो जुड़ क्यों न जाएगा! पर चन्ना, समय तो लगेगा न! मैं नहीं देखूँगा, मेरे पुत्र-पौत्रे देखेंगे। मेहरअली, अल्लाह बेली ने नज़ारा यह तेरे लिए जोड़ भी दिया पुत्रजी, तो फिर तुम्हें गुलडोडी भी चाहिए होगी! वह आ गई तो फिर गुल-फुल्ल! बनते-बनते नवाब मेहरअली भी हो गया तू तो फिर एक रियासत चाहिए होगी। पुत्तरा, अरमानों की हदें नहीं। आज यह, कल वह, बन्दे का सब्र ख़त्म हो जाता है।

"शाहजी, लड़के पर जिन्न सवार हो गया। बिफर के पड़ा–'बँधे पड़ी जिवियाँ तुम ही वाहो-गाहो। फ़सल कटे तो ढेरियाँ लगाओ-बनाओ। आज पीछे मैंने न यह काम करना, न इस उधार के खोबे से लँघना है!'

"बहुतेरा समझाया कि बरख़ुरदार, तेरी यह तिलमिलाहट-तल्ख़ी मेरी समझ में नहीं आई। आख़ीर को शाहों से रुपया हमी ने माँगा-उठाया। उनकी तरफ़ से कोई बदसलूक़ी नहीं! पुत्तरजी, हम गए माँगने और उन्होंने हमारी मदद को दिया। बस, इतना ही न!

"शाहजी, इसके बाद तो लड़का हदबद-हदबद करता ही गया। माँ ने भी समझाया कि मेहरा, सब्र से खा-हँडा। ऊँची अक्कड़ें-यक्कड़ें मार के जट्ट न नवाब बने, न शाह!"

काशीशाह ने छिपी-दबी नज़र बड़े भाई पर डाली। माथे का तेवर हौले-हौले गहराता रहा।

जहाँदादजी ने पूछा–"इस हिसाब से तो तुमसे पूछकर ही गया है न!"

"यही समझ लो। रात-भर भुनभुनाता रहा।"

फ़रमान अली भुंजे बैठे-बैठे शाहजी की मंजी के पास आ ढुका और कहा–"शाहजी, पुत्र जो कहता है वह मुझे ग़लत ही ग़लत लगता है। पर एक बात कहता हूँ कि जवान लड़का है। जवानी की बात तो मच्छरी घोड़ी जैसी हुई कि पहुँचना है तो मैंने कोह-क़ाफ़ ही पहुँचना है, नहीं तो मैं खाई में जा गिरूँगी। नालायक़ ने बाप की ज़िद से लाल वरदी पहन ली।"

मुंशी इल्मदीन को जाने क्या सूझा, चमककर कहा–"असल कुढ़न तो लड़के के दिमाग़ में यही कि ज़मीन की मालकी हाथ में नहीं! बाबे-दादे ने कर्ज़ उठाया तो उसका क्या कसूर! इन्हीं तहक़ीकों से लड़-झगड़कर गया है!"

फ़तेह अलीजी ने हाथ से इशारा किया–"चला ही गया है तो ख़ैर सदके देखने दो लाहोर के भी मौसम-बहारें।"

"मुझसे पूछे कोई तो इन दोनों जोड़ीदारों को बीबी अनारकली खींच के ले गई है।

चक्कर सारा रमज़ान का चलाया हुआ है। बयान करता रहा वहाँ की हसरतें-बरक़तें। बन्दा हो प्यासा-तिरहाया तो आप दौड़-दौड़ जाता है पानी के पास। ये तो गबरू जवान ठहरे। पीने को दरिया भी कम!"

मौलादादजी बड़ी लिहाज़दारी से शाहजी से नज़र चुराए रहे।

शाहजी ने नजीबे और कक्कूख़ाँ से पूछा–"कूएँ की क्या रंग-बहारें हैं। माल-टिंडें अच्छे डलवाए हैं न!"

"जी। शाहजी, डिब्ब की माल डाली है। टिंडें अपने फत्ते ने दे दीं। चंगी पकी हुई हैं।"

नजीबे ने शाहजी की शुक्रगुज़ारी करनी चाही–"एक बात कहता हूँ शाहजी, कि कूओं को भूल-भाल नहरें ही सरकार के ख़याल पड़ गईं। अपने रहट खू क्या बुरे! अल्लाह के फ़ज़ल से एक खू से कई एकड़ ज़मीन सिंच जाती है। मार सौ-सैकड़े खू वीरान कर सरकार ने नहरें बिछा दीं। बैठे-बिठाए बखेड़े डाल दिए न!"

"बखेड़ा क्यों, करामात कहो! ऐसा कमाल तो आदम के हाथों आज तक न हुआ। मार बरानी बरेती ज़मीन में सब्ज़े उगा दिए।"

"लो जी, खड़के से तो अपने ढोंकलमल्ल लगते हैं। जूती यह उन्हीं की है। आओ पटवारीजी, आओ। पटवारीजी, नहरों की वजह से अपने दरियाओं की बड़ी महिमा-मशहूरी।"

"सही है जी। अपने चनाब की नहरों ने मिश्र के दरियाये-नील को पछाड़ दिया है। ख़ाली चनाब की नहरें ही कुल तीन लाख एकड़ ज़मीन की सिंचाई करने के क़ाबिल हैं।"

"हैयी शाबाश ऐ! पानी ही पानी! बरक़तें हो गईं न!"

मैयासिंह सजग हो उठे–"बरकतें ये तो ख़ुदाई हुईं। लगा छोड़ी रब्ब ने सूबा पंजाब को। दरिया न बहते होते इस धरती पर तो सरकार फिरंगी क्या रेती से पानी खींच सकती थी?"

शाहजी बोले–"इससे जुड़ा एक और राज़ है। सरकार अंग्रेज़ी ने जब नहरें निकालने की ठानी तो अर्ज़ी-परचे पर चनाब और जेहलम की ठन गई। दोनों का मुक़ाबला हो गया।

"चनाब अपना बड़ा रौबीला दरिया मगर माहिरीन ने कहा–दरिया के पेंदे में मज़बूती नहीं। उधर जेहलम भी भारा-गौहरा ज़ोरावर, पर आख़िर को फ़ैसला चनाब के हक़ में ही हुआ!"

कर्मइलाहीजी ने ख़ुशनुमाई की–"हक़ूमत की सिफ़्तें तो कम नहीं। दरिया चनाब पर आठ मील लम्बा पुल बना के रख दिया।"

दीन मुहम्मद बोले–"नहरें तो सरकार ने इसलिए दीं न कि जट्ट किसान के हालात बेहतर हों। नहीं तो बड़े-बड़े दरिया-पुल हक़ूमत ने सिर पर उठाकर लन्दन तो ले नहीं जाने!"

शाहजी ने कुछ गहरी डुबकी मारी–"इसकी एक वजह और भी थी कि सरकार काश्तकारों को शाहों के चंगुल से बचाना चाहती है। ज़मीनों की मालकीवाला क़ानून इसी की पेशबन्दी थी।"

जट्ट आसामियों के दिलों में ख़ुसपुसी होने लगी पर शाहों का मुँह-मुलाहज़ा रखने को मौलादादजी बोले–"शाहजी, यह तो चंगा है, सरकार ने अपने सूबे के लिए नहरों के पानी मोड़-जोड़ दिए, पर यह कोई अंग्रेज़ की अनोखी प्राप्त नहीं। पहली

हक़ूमतें भी कूएँ-नहरें ख़ुदवाती रहीं।"

काशीशाह ने कहा–"शाहजहाँ के वक़्तों में अली मरदान ने कई नहरें निकलवाईं-बनवाईं।"

"अली मरदान बड़ा क़ाबिल आदमी हो गुज़रा है। विलायती पढ़ाइयों के पहले की बात है जब उसने बरसाती पानी को दिल्लीवाली नहर में जमा कर दिया था। और तो और, लाहौर के शालामार बाग़ को सींचने के लिए उसने रावी से नहर निकाल दी थी!"

शाहजी ने तार पकड़ा–"हाजीवाह नहर ले लो। दिवान सावनमल के कारदार ग़ुलाम मुस्तफ़ा ख़ाँ ने बनवाई थी अपनी जिवियों की सिंचाई के लिए! दूसरे भी पानी लगा लिया करते थे।

"ग़ुलाम मुस्तफ़ा के फौत होने के बाद नहर सरकार ने सँभाल ली। टब्बर पीछे पड़ गया। उठाके सारे लड़कों ने सरकार पर मुक़द्दमा दायर कर दिया। कई साल झगड़ा चला। आला अदालत लन्दन में जा पहुँचा। कुछ साल हो गए हैं, ख़बर निकली थी कि ग़ुलाम मुस्तफ़ा के टब्बर ने मुक़द्दमा जीत लिया है।"

फ़तेहअलीजी चिमटी से चिलम फरोंलते रहे, फिर कश खींचकर कहा–"कुछ भी कहो, इंसाफ़ सरकार का बुरा नहीं!"

गुरुदित्तसिंह अपनी रौ में शुरू हो गए–"लाहोर के शालामार बाग़ को महाराजा रणजीतसिंह ने शाला बाग़ का नाम दे दिया। फ़रमाया-शालामार क्यों? सीधा-सादा शाला बाग़ क्यों नहीं? और सुनो, महाराजा के हुक़्म मुताबिक़ हँसली नहर को अमृतसर तक खींचा गया। वजह यह कि हरमन्दिर साहिब का सरोवर बारहों महीनों भरा रहे।"

मीराँबक़्श का ध्यान गंडासिंह की ओर मुड़ा–"क्या बात है खालसाजी, आज चुप्प-चुप्प नज़र आते हैं!"

"सुन रहा हूँ, सुन रहा हूँ। अपनी बादशाहों की सज-धज के लिए बादशाहों को भी कई कुछ ऊपर-हेठ करना पड़ता है! किसी ने मकबरे बनवा दिए, किसी ने दरवाज़े बुलन्द, किसी ने क़िले उठवा दिए, किसी ने महल सरोवर–हक़ूमतों का यह कर्म कारज तो चलता रहता है न!"

ढोंकलमलजी ने सिर हिलाया–"यह तो हुई न हक़ूमती चमक-दमक, बाक़ी जट्ट किसान को बीज-पानी की सहूलियत न हो तो बताओ, कौन खेती करेगा और कौन मामले भरेगा!"

कर्मइलाहीजी बड़े ख़ुश हुए–"बात तो खरी है। सच पूछो पटवारीजी, तो हक़ूमत के साज-बाज और ताज सभी कुछ सही-सलामत जट्ट किसान की काश्तकारी से।"

गंडासिंह बोल उठे–"मैंने कहा ज़रा थोड़ा-सा राह-रास्ता फ़ौजों को भी दे डालो। मान लिया जाए कि काश्तकार सरकार के हाथ हैं तो मुँह-माथा सरकार का फ़ौजें।"

जहाँदादजी बहुत ख़ुश हुए–"फ़ौज-पलटन हक़ूमत के रौबदाब और खेती-काश्त मुल्क़ की खाद-ख़ुराक! पड़ला दोनों का भारी है।"

मौलादादजी ने ग़ौर कर नई बात निकाल ली–"ढोंकलमलजी, सरकार ने इतनी नहरें निकालीं, दरियाओं पर बाँध बाँधे, पर अपनी जहाज़रानी का काम क्यों ढिल्ला कर दिया! सरकारी बेड़ा माल-असबाब ढोता रहता था!"

"बराबर बादशाहो! सरकारी बेड़ा लाहोर से सामान लादकर कराँची पहुँचाने का लेता था एक रुपया मन। और मुल्तान से कराँची आठ आने मन। लाहोर से कराँची पहुँचने के लगते थे पूरे 35 दिन। और तो और, माल पेशावर से कराँची भी उतरता था।

अटक से छोटी बेड़ियों में मख़द, कालाबाग़ और कालाबाग़ से सक्खर। सक्खर से सामान फिर चढ़े सरकार बेड़ियों में। वहाँ से कोटरी, फिर कोटरी से रेल में कराँची।"

छोटे शाह बोले–"लाला वड्डे बताया करते हैं कि उन दिनों माल-असबाब की राहदारी मिठन-कोट बना करती थी। और जहाज़रानी की मशहूर पाँच किश्तियाँ थीं– जेहलम, चनाब, नेपियर, रावी और व्यास।

"रावी बेड़ी ख़ास पंजाब लाट के इस्तेमाल के लिए रखी गई थी। पहली बार रावी चला है मख़द से सक्खर और फिर वापस सक्खर से मख़द पूरे 58 दिनों में।"

"दो महीने ही हुए न!" फ़कीरे ने पूछा–"शाहजी, बेड़ियाँ तो जेहलम की भी बड़ी मशहूर हैं।"

"सही है। अबू अली बू अली ने बेशुमार बेड़ियाँ बना डालीं। बड़ा नाम कमाया है।"

अल्लाहरक्खा पूछ बैठा–"जेहलमी बेड़ी की क़ीमत कितनी पड़ जाती होगी?"

"यही कोई पाँच-छः सौ।"

"एक बेड़ी कितना भार-बोझ उठा लेती है?"

"चार-पाँच सौ मन! अपने दरिया में जो पड़ती हैं बेड़ियाँ, वे ज़रा छोटी हैं। माड़ी खोखरियाँ कुल्लूवाल, भक्खरायली, सोदरा, खानके, सादुल्लापुर, क़ादिराबाद आती-जाती रहती हैं। किराया भी बड़ा वाज़िब है जी! बंदे बच्चे का तीन पाई, काठीवाला घोड़ा एक आना तीन पाई, गाय-भैंस छः-छः पाई और भेड़-बकरी तीन-तीन पाई। यह तो हुई न बेड़ी की बहार, चढ़े और पार। जाना हो स्यालकोट या जम्मू, पार उतरो और थोड़ा पैंडा-पैदल मार लिया और दिन ढलते अपने पहुँचते बनो। जाए मनुक्ख रेल से तो आज का चला-चला कल से पहले न पहुँचे!"

शाहजी ने छोटे भाई से कहा–"काशीराम, एक और बेड़ी बनवा डालो जेहलम से। लगी रहेगी कंडे। वेले-कुवेले काम आएगी। क्यों जहाँदादजी?"

"शाहजी, नेक इरादा है। बारात-जंज की अगवानी के लिए ज़रा दक्ख-दिखावा तो हो न अपने पिंड का भी!"

कृपाराम बड़े शोर-शराबे से हँसे–"मैंने कहा हवा में बन्दूक़ दाग़ने को गंडासिंह और जहाँदादख़ाँ अपने हुए ही माजूद! फिर कमी किस बात की!"

"चलो, यह भी देख लेंगे! लाले वड्डे की निक्की पोतरी का ब्याह सुदनेवाला है। देखते हैं, क्या रंग लगाते हो उसके ब्याह में!"

मैयासिंह शुरू हुए–"लाले वड्डे से सुनी-सुनाई सुनाऊँगा।

"जेहलम बेड़े का कमांडर था पैक साहिब। गोरा-चिट्टा और मुँह और मूँछें सुनहरी। एक जट्ट ख़लासी भरती हुआ बेड़े पर। इत्तफ़ाक ऐसा हुआ कि कप्तान जब सामने आए, ख़लासी खड़ा-खड़ा तकता रहे। न हाथ हिलाए, न बन्दगी, न सलाम।

"साहब कुछ दिन तो देखता रहा। एक दिन पूछ ही लिया–'क्या बात है, तुम्हें सलाम करने की आदत नहीं।'

"जट्ट अपनी ज़ात का फट्ट। बोला–'साहबा, यह क़सूर आपकी मूँछों का है। निक्की-निक्की बेमालूमी, न रौबदार, न दक्ख मरदाना। बुरा न मानना साहब, आपकी मूँछें ऐसी हैं कि किसी ने छल्लियों से निकाल बुढ़िया का झाटा लगा लिया है।'

"पैक साहिब बड़ा हँसा।

"जट्ट ख़लासी और चढ़ गया! 'साहबजी, जेकर हों मूँछें काली तो हाथ अपने-

आप उठता है सलाम को–जो हों खिचड़ी तो सिर रत्ती-भर झुक जाता है। पर इस बुढ़िया के झाटे का कोई क्या करे! मूँछें ही मुँह की बच्चा लगने लगती हैं!'"

बड़ा हास्सा पड़ा!

"ताया मैयासिंह के पास एक-न-एक बात गुत्थली में छिपी रहती ही है।!"

शाहजी ने फ़रमान अली और अल्लाहरक्खे को उठते देखा तो पूछा–"पिछले हिसाब पर लकीर फिर जाए तो मेहरअली सँभाल लेगा न जिवियाँ अपनी?"

फ़रमान को कुछ न समझ में आया।

"फ़रमान अली, लड़के को लाहोर से वापस बुला लो। जिवियों की मालकी ही चाहता है न, तो यही सही! वह अड़ के बैठा है अपनी ज़िद पर तो इस बार उसकी मान लेते हैं!"

मौलादाद और फ़तेह अलीजी बड़े ख़ुश हुए–"वाह-वाह, रब्ब सलामत रखे आपको शाहजी! क्या फ़ैसला दिया है!"

फ़रमान अली का मुँह न ख़ुला। हाथ उठा शाहजी को सलाम किया, गीली आँखों से दोनों शाहों की ओर देखा और हवेली से क़दम उठा लिया।

कर्मइलाहीजी अपना हुक्का हाथ में ले उठ खड़े हुए–"शाह साहिब, बड़ा मुबारक़ फ़ैसला किया है आपने! लड़का मेहरअली अपनी धुरी से थिड़का हुआ है। फ़रमान के बस में न लड़का और न लड़के की अक़्ल। बरक़तोंवाला दिल आपका, उठ के हौले से बक़्श दिया! वाह, बात हुई न!"

एक दुपहरी कुटिया के पाठी भाई भागसिंह के नाम इकोत्तर सौ का मनीऑर्डर आन पहुँचा तो पिंड में रौला पड़ गया। सरनावाँ मुल्क़ कनाडा का और भेजनेवाले बजाजी भाई गज्जनसिंह और दर्शनसिंह।

"देखो लोको, भाइयों ने कैसा सोहणा काम किया! परदेस पहुँच के वाहगुरु के दरबार में भेंटा भेजा है।"

"खट्टी कमाई चंगी हो गई होगी। तभी कुटिया में चहबच्चे बनाने को दमड़ा भेजा है एक-सौ एक।"

"हैं री, धन्य है मा जम्मनवाली। कुछ भी कहो, ताया रुढ़सिंह का टब्बर चंगा वाह-वाह निकला है।"

"ताया रूढ़सिंह और चाचा देवीसिंह कंघे-परांदों की फेरी लगाते थे ग्राँ-ग्राँ। गज्जन और दर्शन बड़े हुए तो लुंगी फ़कीरी और अनारदानी बेचने लगे। ख़बरे किसी के कहे-सुने मुलतान जा पहुँचे। जल्लाख़ोरी और लुंगी चौटानी की गाँठें ले आए। बस, फिर क्या था, भाग लग गए! बजाजी की चंगी हट्टी डाली। छींटें, बूँदरी, मूसी, सतकणी गुमटी–इलाक़े-भर के लोग ख़रीदारी करने आने लगे।"

"उन्होंने यहाँ क्या कोई कमी थी! पर देखो, दोनों भाई खट्टने-कमाने पहुँचे भी तो विलायत के विलायत!"

सुबह-सबेरे शाहों की कूई पर नहाती ज़नानियों के मुँह पर यही बात:

"सन्तो-वन्तों की बधाइयाँ तो पक्की। कोई छोटी-सी बात नहीं। मैं तो गिरी-छुहारे का सगुण डाल आऊँगी।"

"ख़ैर सदके, मुबारक़ें तो देवरानी-जिठानी की पक्की, पर कोई पूछे, जने समुद्रों-

पार गए तो सबसे आसीसें ले के जाते।"

"यह तो सच कहती हो। घरवालियों से जब पूछा, यही जवाब कि माल लेने दिसावर गए हैं।"

"मल्ला दोनों बड़ी चुप्पड़ियाँ हैं। किसी को कानो-कान ख़बर नहीं होने दी।"

हाथ से निक्की की पीठ मलते-मलते चन्नी की भाभी बोली–"बन्दा दिसावर को निकला तो लाहौर नहीं तो पिशौर। कोई आगे चला गया तो क़ाबुल-कन्धार। ये सीधे ही जा पहुँचे विलायत!"

"अपने ताये भागसिंह के पुत्तर बरसों से शंघाई गए हुए हैं। परते ही नहीं। दरवाज़े घर के ऐसे बन्द हुए कि ख़ुले ही नहीं।"

"सिंहों की घरवालियाँ पहले ही चूड़े छनकाती फिरती हैं, और गलबा चढ़ जाएगा!"

"हाँ-जी, घरवाले बुटकी अशरफ़ियों की पंड समेट के ले आएँगे तो क़दम सरदारनियों के कोई थल्ले-थल्ले थोड़े रहेंगे!"

कूईं के आगे से लाहबीबी निकल पड़ी। चबूतरे के हेठ खड़े-खड़े कहा–"पानी की मछलियो, आज तुम्हारे नहान-स्नान में देर कैसे हो गई!"

मेहँदी-लगे बाल, सिर पर काला दुपट्टा, गोरे-चिट्टे पके चेहरे पर बिल्लौरी अँखियाँ!

"धियो, आँख मलते-मलते पानी-तले आ बैठती हो। रात-की-रात तुम्हारे पिंडे मैले हो जाते हैं क्या!"

हिन्दुआनियाँ हँस-हँस गईं–"माँ, तुम हमारी वड्डी-वड्डेरी! आप ही बता, है हमारा मुँह कुछ कहने का!"

लाहबीबी ने ख़ुलासा कर दिया–"माहिया, शर्म आती हो तो न बताओ अपने छल-छिद्र। तुम्हारे गबरुओं से तो पूछने से रही!"

ज़नानियाँ हल्की-फुल्ल हो मुखड़ों पर छींटे मारने लगीं।

लाहबीबी ने छोटी शाहनी को बताया–"ऊपर हो के आई हूँ। शाहनी और चाची धर्मशाला गई होंगी। बरकती को पकड़ा आई हूँ घी की झाबरी।"

"माँ, निक्के-न्यानेयों के लिए थोड़ा सा घी रख लेना था। अभी तो पिछले हफ़्ते देखकर गई हो! चलो, मैं दाने तो दूँ तुम्हें!"

लाहबीबी टंकार से बोली–"इस बार दाने नहीं मैं लेती। हँडिया लाती हूँ घी की किसी मार पर ही। मैंने कहा, पुत्तर से कह छोड़ना, सौ सैंकड़ा लेकर ही हिलूँगी। उसके बिना मेरा काम नहीं सरता।"

लसूढ़ेवालों की प्यारी अपने ध्यान में ही कोच्छड़ों की धनदई के पास ढुक बुड़बुड़ाती रही–"हैं री, इन अरोड़ों का न पूछ! दाँत से दमड़ा पकड़ते हैं। सात समुद्रों के पार की भी कोई 'दस्स' डाल दे तो जा पहुँचेंगे! पैसे के तो पीर। आख्यान है न–कमर कसी अरोड़ेयाँ और पौना कोह लाहोर।"

बेबे किच्छी की मँझली बहू ने घड़ा भर सिर पर रखा। दो छोटी गागरें दोनों ओर बाँहों में टिकाईं और पाँव उठाकर बोली–"यह बोली-ठोली किस काम की! बन्दा गोला बन के कमाए और राजा बन के खाए। फिर, सच पूछो तो ये ही दोनों भाई अनोखे परदेस नहीं गए। शाहों की बहन वज़ीरो का घरवाला अफ्रीका पहुँचा हुआ है।"

छोटी शाहनी ने बड़ी क़द्र से नन्दोई की तरफ़दारी की–"हैं री लाजकौरे, लज्ज

बाँध घड़े को कुएँ में न डालें तो पानी का घूँट मुँह में कैसे पड़ेगा! फिर जो जिगरा कर समुद्रों पार जाने की सोचे, वह ख़ैर सदके जाए। किसी के हाथ माया लगे तो हम क्यों झींखें-झरें!"

लाजकौर कूईं से नीचे उतर गई तो मोहरे की बेबे हाथ मलने लगी–"लो देखो हुम्मा वधूटी का! खजूरों की पच्छियों में खट्टी कमाई चंगी हो गई लगती है!"

लाहबीबी ने मोहरे की बेबे को लशाया–"व्यापारियों-हटवानियों के यही तो रफ्फड़। एक बार नावाँ हाथ आया तो फिर हुड़क–और आए! और आया–अब और आए! और आया–अब और आए! और भी आ गया तो ख़समाखाना और आए। दौलत-दमड़ों की बड़ी तृष्णा!"

मोहरे की बेबे उलटी पड़ गई–"यह क्या री लाहबीबी, तुम भी बोली कसने लगीं–अरोड़े यह करते हैं, वह कहते हैं! उन्हें तो न जट्टों की तरह जिवियों की बरक़त, न शाहों की तरह रुपए-धेले की आसानी।"

लाहबीबी छोटी शाहनी को देखकर हँसने लगी–"माहिया, यह हमें क्यों बताती है! यह धनाढ़ बैठी है शाहों की घरवाली..."

छोटी शाहनी मुँह पर उबटन मलती थी। झूठमूठ के तेवर चढ़ाकर कहा–"जिवियाँ तो सरकार ने जट्टों के हाथ में दे दीं। अब मेहनत करो और दानों से कोठे भरो।"

लाहबीबी हँसकर बोली–"सरकार ने दीं तो जिवियाँ जट्टों को, पर धिए! जट्टों की जिवियों में तो कल्लर पड़ा हुआ है सूद-ब्याज का। तुम ही बताओ, मेहनत-मजूरियाँ क्या काम आएँगी! हर किसी का लेखा-जोख़ा फ़रमान अली जैसा तो नहीं कि उठा के शाह ने लीक फेर दी!"

छोटी शाहनी मुँह पर छींटे मारती रही, फिर पाँचों उँगलियों से मुखड़ा पोंछा, बालों की गीली लटों को पीछे किया और मिज़ाज से कहा–"माँ, मेरी तो तुम सास बराबर! इन मामलों का निस्तार-निदान अपने शाह-पुत्रों से कर!"

लाहबीबी ख़ुश हो गई–"क़ुर्बान तेरी अक़्ल पर धिए, चज्ज-सलीके की बात करनी कोई तुझसे सीखे! माहिया, पैसे-धेले की गरमाई बड़ी! जट्ट-पुत्रों में क्या हौंसला नहीं! चोखा है, पर धिए, बिना हथियार क्या करें! इनके पास न बल्ख़-बुख़ारे की खट्टी और न घर की मरजाद! फ़सल आई और जट्ट ने खाई चलाई।"

छोटी शाहनी से न रहा गया–"बुरा न मानना माँ, दीनिए तुम्हारे मौज़-मज़ा नहीं छोड़ते! आया, खा-पी डाला। झूठ कहती होऊँ तो बता!"

"धिए, सोलह आने सच्च! बात ऐसी है कि ख़ुदा-वन्दा ने भी हिन्दू-मुसलमानों को एक-न-एक रोग-मलामत लगा ही छोड़े हैं। दीनिए अपने ज़न के पीछे और पूजापाठिए ज़र के। पर माहिया, दमड़ों से भूखे पेट नहीं भरते। पेट भरते हैं दानों से। चंगा धिए, मैं चली!"

लाहबीबी के पीठ मोड़ते ही मोहरे की बेबे बोली–"बड़ी मारवान जट्टी है। मैं जिस साल ब्याह के आई हूँ, घरवाला इसका शेरू खेत में था। साथ का खेत इनके शरीक़ खैरू का था। उसने उठाकर आवाज़ दे दी–'मेरे खेत का बन्ना तोड़नेवाला तू कौन!'

"बस, इसके घरवाले ने आव देखा न ताव, मारी डांग खैरू के सिर और वह वहीं ढेर हो गया! जब सुनाई गई उमर क़ैद तो लाहबीबी कोठे जा चढ़ी और ज़ोर-शोर से बोलने लगी–'हुई क़ैद तो क्या हुआ! पहलवान निकला! आप गया है अन्दर, तीन शेरू

छोड़ गया है मेरे पास!' जट्टों के दिमाग़ों में तल्ख़ी की फिरकी घूमती ही रहती है!"

गीले बदन पर झग्गा डालते प्यारी बोली–"छोड़ बेबे इन्हें। अपनी बात कर। दौलत-माया की ख़ातिर घर संजे छोड़ घर के ख़सम पराए मुल्क़ों जा बसें, हमें तो नहीं यह सरता! न चूल्हे-पराँत का वक़्त-वेला, न हँडिया-तन्दूर का नियम। सरदी-गरमी घरवालियाँ उडीकों में बैठी रहें।"

शानो की भाभी को न भायी यह बात–"अरी, जाती ही है न दुनिया! निरंजनसिंह अपना हांगकांग पहुँचा हुआ है। मार शंघाई और चमकी के थान गुजरावालियों को भेज-भेज मालामाल हो गया है। ज़नानी को भी ले गया हुआ है साथ!"

सत्तो को अपने पीहर की याद आई। बड़ी तन्न से कहा–"नहरोंवाले नौदौलतिये भी कम राजी नहीं। कच्चे कोठे-झुग्गियाँ छोड़ पक्के बँगले बना बैठे। औरतों की तो बात ही छोड़, मर्द बीस-बीस तोले के पीडे कंठे पहने फिरते हैं।"

छोटी शाहनी ने कपड़े निचोड़कर डोल में रखे और बोली–"जो मेहनत से जी-जान मार के कमाए, वह ख़ैरों से क्यों न खाए-हँडाए। मनुक्ख की कम्म योनि है। उद्दम-हौंसले से काम करे। कंगला बन के झुरता रहे दिन-रात तो ऊपरवाला भी खुश नहीं होता। रब्ब भी कहता है–मनुक्खा, मैंने तुझे लाखों की तो जून दी, हाथ-पैर दिए और तू दलिद्री का दलिद्री बना रहा! जा, तुझे मेरी तरफ़ से भी फ़ारख़ती!"

शानो की माँ पले-पले सिर हिलाती रही–"सच कहती हो शाहनी, सच कहती हो!"

"शाहनो की माँ, तू क्यों न सराहोगी ब्रिन्दादई के कहने को! तेरा घरवाला भी तो साल में दस महीने बाहर रहता है!"

"शानो के भाइए ने चार-चार तोले के गोखडू बनवा दिए हैं, चलो किसी ढंग-पज्ज काम आएँगे! बेबे, लम्बे बिछोड़े भी तो हमीं काटती हैं!"

ख़ैराती की बहूटी का अन्दर-बाहर जल गया। ठीकरी से पैरों को रगड़ने लगी और मीठा सुर निकाल लिया:

"घर खाँवे रुखड़ी परदेस चुपड़ी
लाल मेरे, घर रुखड़ी खाँवी।
दम्मा दे लोभिया परदेस न जाँवी।"

मोहरे की बेबे बोली–"ख़ैराती की बहूटिए, एक डोल तो निकाल दो, मैं भी पिंडे पर पानी डाल लूँ।"

बेबे की सूखी छातियाँ नीचे ढिलक आई थीं, पर बहू-बेटियाँ लिहाज़ से वन्ती आँखें चुराए रहीं। छोटी-सी जूड़ी बाँध पानी डाला तो सबको सुनाकर कहा–"सन्तो-वन्तो के लच्छन देखो। गबरुओ के गए पीछे ऐसी बनी-ठनी रहती हैं ज्यों शहरनें हों! हाय-हाय, जिन्हें बिछोड़े पड़े हों, साँईं जिनके परदेस गए हों, वे सतवन्ती नारें सूखकर काँटा न हो जाएँ! कहते हैं न:

रणाँ चंचल हारियाँ
चंचल कम्म करन
दिने डारन बलाइयाँ
रातीं नदियाँ तरन।"

शानो की माँ मच गई–"बेबे, तेरे चित्त का कोई ठिकाना! सन्तो-वन्तो ब्याही-परणायी हैं। राँगला दातुन न करें या अँखियों में सुरमा न डालें, आप ही बता, वे क्यों

अपनी ज़िन्द तपाने-खपाने लगीं!"

मोहरे की बेबे ने आँखें सिकोड़ लीं–"धिए, मैंने बात की है भोले भाव! मेरी तरफ़ से दिन-रात पोशाकें बदलती फिरें! कंजरियों की तरह।"

बेबे के मुँह से कोई और भागी-भरा कथन निकला।

बेबे ने कूईं से उतर घर की तरफ़ क़दम बढ़ाए। इधर केसरी बोली–"बुड्ढे वेले कपत्तखाना! अपनी बहूटी का हाल देखे। ब्याही आई थी तो ये लक्ख-लक्ख की आँख थी उसकी, अब देखो हड़बें निकल आई हैं। निचुड़ गई है लड़की।"

प्यारी आवाज़ धीमी कर बोली–"वधूटी को पानी की बीमारी है। खोखली हो गई है। मैं एक दिन बेबे से कह बैठी–गोंद की पँजीरी बनाकर खिला बहू को। इस रोग के लिए अकसीर है।' बहना, मेरे कहने की देर! इस जुल्मी ससियोड़ी ने बहू का आगा-पीछा पुन डाला। बस, बोलती जाए–'अरी नासहोनिये, पड़ोसियों ने तुझे वर्क-मुरब्बे खिलाने थे जो उन्हें अपना रोग बताने गई!'

'बहूटी डुसक-डुसक करती मंजी पर जा औंधी पड़ी। मेरे मन बड़ा पछोत्तावा लगा। पास जा बेबे से मनुहार की–'मुझे मेरे धी-पुत्रों की सौंह चुका ले जो तुम्हारी वधूटी ने मुझसे बात भी की हो। कूईं पर बैठी कपड़े धोती थी तो उसके लत्तों पर नज़र पड़ गई। इसलिए कह बैठी!' तब कहीं जाकर बेबे ठंडी पड़ी।"

इतने में बेबे फिर दबे पाँव कूईं पर लौट आई–"मैंने कहा मेरे गले की छिंगमाला कहीं नहाते गिर तो नहीं गई!"

केसरो और प्यारी ने ओठों को मरोड़ दे आँखें मटकाईं और बेबे की जूड़ी में उलझी माला देखकर कहा–"बेबे, तुम्हारे बालों में फँसी है, निकाल लो!"

बेबे ने पोले मुँह पूछा–"किसकी बात करती हो बहूटियो!"

छोटी शाहनी ने नुकीला नाक ऊपर किया और बेबे को तड़पाने को कहा–"बेबे, तुम्हारी और तुम्हारी बहूटी की!"

बेबे सन्तनी बन गई–"सत्तनाम, सत्तनाम! धियो, माया-दमड़ा भेजा गज्जसिंह ने बाबे के दरबार और तुमने मेरे घर 'तक्क' मार ली। मल्ला यह बात कोई चंगी तो नहीं न!"

धनदई हँसने लगी–"बेबे, ज़िन्द-जहान के हिसाबों का निपटारा यहीं हो जाता है। ज़रा बहूटी की लगाम ढीली कर दे। सच्चे पातशाह के आगे सबकी पेशी होनी है।"

बेबे ने बुड़बुड़ाते-बुड़बुड़ाते पाँव उठा लिए–"पेशी हो दुश्मन-वैरियों की। हमने कोई डाका मारा है या सेंध लगाई है!"

बेबे ने ऐसी वाक्-वाणी निकाली कि बजाजी भाइयों की सच्ची-मुच्ची पेशी हो गई हो!

सन्तो-वन्तो चाव-चाव अपने मरदों की शोभा से भारी-गौहरी, सुच्चे कपड़े पहने कुटिया माथा टेकने जा पहुँचीं। महमूदी मलमलों के किंगरी लगे दुपट्टों में से गोरे-चिट्टे मुखड़े फब-फब पड़े। ठुड्डियों के तन्दोले ऐसे जापें ज्यों भागवन्तियों के मुखड़ों पर सगुणों के टिमके लगे हों!

आगे जा माथा टेका। दाता तेरी महरों के प्रताप, उनके मन की इच्छया पूर्ण हो। तुम्हारे सेवक बन कमाते रहें और आप जी के दरबार में सीस नवाते रहें।

भाईजी ने भर-भर मूठ जातकों को प्रशाद दिया। कड़ाह प्रशाद मुँह लगा माथा टेका और ख़ुशी-ख़ुशी घरों को चलीं सन्तो और वन्तो।

छप्पड़ के पास शाहों का काम्मा बाग्गा आन मिला–"पैरीपौना भरजाई!"

"क्यों रे वीरा, माथा टेकने जाते हो?"

"न, तुम्हें बुलाने आया हूँ। कोठे-कोठे शाहों के घर पहुँचती बनो!"

वन्तो ने मुँह का कपड़ा ऊपर किया–"क्यों रे, ख़ैर तो है?"

"भरजाई, तुम्हारे सिंहों ने मनीआर्डर भेजकर आप ही रफ्फड़ डाल दिया है।"

"होश कर रे बागया, कुछ होश कर! मरद अपने हाट-व्यापार करने गए हैं, कोई क़त्ल-जुर्म करके नहीं भागे हुए!"

बाग्गा पास आ खड़ा हुआ–"मैंने कहा वरदीवाली पुलिस नहीं, ख़ुफ़िया गारद आई है!"

"हाय...हाय..." देवरानी सन्तो कुनमुन-कुनमुन रोने लगी, तो वन्तो निःशंक हो बोली–"चुप री! रंडी सरकार फिरंगी हमें क्या बेजुर्म की सूली चढ़ा देगी!"

"मुक़द्दमे का मुँह-माथा पीछे, उसकी पीठ की छानबीन पहले। आख़ीर को तो अदालत के आगे पेशी-परचा होना है। खेल तो नहीं कि मुक़द्दमा भी चलता रहे और बन्दा तोड़-तोड़ बेर या ममोले खाता रहे।"

"पर बादशाहो, मर गए और मुकर गए का क्या इलाज! बात यह है कि फ़ौजदारी मामलों में स्वाँग-नाटक में तेज़ी होती है पर यह दबादब का खेल थोड़े ही वक़्त चलता है। दूसरी तरफ़ दिवानी मुक़द्दमों में मुवक्किल ढीला पड़ जाए, गवाह मर-खप जाए, पर मुक़द्दमे की मिस्ल आगे से आगे।"

"शाह साहिब, हम जैसे हमातड़-साथ यह कहें तो बात है, आप तो ख़ैरों से यह खेल खिलानेवाले हुए!"

शाहजी हँसने लगे–"बात तो यह है चौधरीजी, कि पहली फ़ीस पहुँची मुवक्किल की वकील के पास तो वकील आगे-आगे और मुवक्किल पीछे-पीछे। बस, ताना-फेरा शुरू हो गया कचहरी का।

"एक बार उस घर पहुँच जाओ तो फिर मुक़द्दमे में शहादतें और शहादतों के जोड़-बन्द। पुलिस की तफ़तीश, वारदात की जिमनी, फ़ौजदारी में चोटें ज़र-बात, दिवानी में सच्चे-झूठे दस्तावेज़ भीड़ लगाए रहते हैं। एक छोटी-सी घुंडी इरादा-ए-क़त्ल को मामूली झगड़ा और मामूली झगड़े को संगीन ज़ुर्म बना दे। सारा ताना-बाना तज़ुरबे का। पूरी शतरंज बिछ जाती है। गोटियाँ कभी सच्ची और कभी झूठी। कभी सच्ची बनाई जाती हैं और कभी झूठी करके दिखाई जाती हैं। बाकी रहे असल झगड़े-मुक़द्दमे, क़ानून पर पूरे उतर जाएँ तो फ़ैसला सही और ख़रा!"

चौधरी फ़तेहअली छोटा-छोटा हँसने लगे–"रब्ब आपका भला करे, ख़ैरों से आपने अब तक कितने मामले भुगता लिए होंगे!"

शाहजी बड़ी आसूदगी से कुछ सोचते रहे, फिर हँसकर कहा–"यह हिसाब-किताब मुझ तक ही रहे तो चंगा! बाक़ी यह समझ लो कि हर हफ़्ते कचहरी में अपनी हाज़री-पेशी होती ज़रूर है।"

"शाहजी, कुछ मुक़द्दमे तो जल्दी भी भुगत जाते होंगे!"

“मामला हो सीधा-सादा तो अदालत भी लम्बी-चौड़ी तराश-ख़राश नहीं करती। गुमान बनाम मुस्समात मुग़लानी का मामला ले लो। मुग़लानी का तलाक़ हुआ गुमान से और उसे पन्दरह दिन के अन्दर वज़ीरे से निक़ाह पढ़ा लिया। निकाह क्योंकि ‘इद्दत’ में पढ़ा गया था इसलिए अदालत ने इसे गैरक़ानूनी क़रार दिया और मुग़लानी पर 58 रुपया ज़ुरमाना कर दिया।

“ज़काख़ान की तरफ़ से मुक़दमा दायर किया गया कि हयातख़ाँ वल्द बोजाख़ाँ के पास उसकी वालिदा ने उसके पैदा होने से पहले और उसके वालिद के फौत होने के बाद ज़मीन बंधे रखी थी। अदालत ने ज़मीन पर लड़के का हक़ बहाल कर दिया।”

नजीबे ने मुंडी उठा शाहजी की ओर देखा–“शाहजी, इस हिसाब से मेहर अली के काग़दों पर लीक मारकर आपने सही ही किया!”

शाहजी चौधरी फतेह अली की ओर देखकर हँसे–“नजीबे, ऐसा करने की वजह क्या थी यह चौधरी जी से पूछना–तुम्हें खोलकर बता देंगे।”

जहाँदादजी ने पूछा–“शाह साहिब, फ़ज़ल नूरवाले मुकद्दमे के बड़े चरचे हैं इन दिनों।”

कर्मइलाहीजी ने मुँह से हुक्का निकाला–“बड़ी कोजी वारदात है वह। सज़ा होगी नूर के बाप को ही!”

कृपाराम उचक के बैठ गए–“मामला क्या है बादशाहो!”

कंग गाँव का गूजर शेरा, उम्र चालीस-पचास।

उसकी सगाई हुई साहबख़ान पिंड के खैरना की लड़की फ़ज़ल नूर से।

कंग ग्राँ से साहबख़ान कोई दस-बारह कोस था।

शेरा अक्सर वहाँ आता-जाता रहता। उस शाम भी आया। पोह-माह की रात। खैरना के घर से रोटी-पानी खा के निकला होगा।

शनीचर की रात पिंड के लम्बड़दार मुहम्मद नूर ने थाने जाकर दर्ज़ करवाया कि ग्राँ में शेरे की नंगी लाश मिली है।

लाश को सबसे पहले देखा हाशिम ने। उसी ने चौकीदार और लम्बड़दार को बताया। थाना मौका पर पहुँच गया। लाश अलफ़ नंगी और थोड़ी दूर पर ही उसकी जूती और चद्दर पड़ी हुई थी।

डॉक्टरी हुई। डॉक्टर ने लिख के दिया–हो सकता है, सिर पर गुज्जी चोट लगी हो! शायद साफ़े से मुँह बाँध दिया गया हो! हाँ, गर्दन पर ज़रूर कोई निशान नहीं था।

लगता यह था कि क़ातिल ने शायद मुँह पर साफ़ा बाँध दम घोंट दिया हो।

पुलिस का शुबह था खैरना, खैरना की बीवी जिऊनी और मुस्समात जिऊनी के भाई मेहरदीन और हाशिम पर।

हाशिम खैरना का रिश्तेदार था और कुछ ही महीने पहले उसकी बीवी जाती रही थी।

लम्बड़दार को शक़ था हाशिम और मेहरदीन पर, जिन्होंने सबसे पहले लाश देखी थी।

फ़ज़ल नूर ने कहा, उसने क़त्ल की रात साथवाले घर में कुछ शोर सुना। उसने शोर से यही अन्दाज़ लगाया कि हाशिम उसके मँगेतर को क़त्ल कर रहा है।

फ़ज़ल नूर ने पुलिस को दो चाँदी की अँगूठियाँ दीं और कहा–‘ये शेरे की अमानत है।’ उसने बताया कि एक तीसरी अँगूठी और है जो उसे हाशिम ने पहनाकर कहा कि

उसने शेरे को मार दिया है! अँगूठी वह खो गई है मगर पुलिस ने उसे मुस्समात जिऊनी से बरामद कर लिया।

हाशिम पुलिस को खेत में ले गया जहाँ शेरे के कपड़ों की पोटली पड़ी थी। उसके साथ एक कम्बल भी था जो खैरना ने उसे दिया था।

हाशिम ने बयान दिया कि खैरना ने उसके सामने क़बूल किया कि शेरे को उसने अपनी बीवी के साथ देखा और अपने भाई रशीद के साथ शेरे का पीछा किया और उसका खून कर दिया।

खैरना इनकार करता रहा लेकिन उसकी बीवी मुस्समात जिऊनी सरकारी गवाह बन गई। कहा, हाशिम और मेरे खाविन्द खैरना ने मिलकर शेरे का गला घोंट दिया।

मुस्समात फ़ज़ल नूर ने कहा कि उसने रात को आवाज़ें सुनीं। उसने माँ को जगाया। माँ-बेटी दोनों ने दरवाज़े में से देखा–हाशिम लाश को उठाए हुए था। साथ था खैरना।

आगे बात साफ़ हुई कि खैरना को शुबह था कि शेरा उसकी बीवी के साथ फँसा था।

लम्बड़दार ने अपने बयान में कहा कि यह बात सारे गाँव को मालूम थी।

मुस्समात फ़ज़ल नूर से पूछा गया तो उसने कहा कि उसे यह मालूम था।

मुस्समात जिऊनी ने कहा कि यह उसके ख़ाविन्द का शक़ था।

मुस्समात जिऊनी के भाई मेहरदीन ने कहा कि उसने बहन को कई बार समझाया था!

क़त्ल में हाशिम के शामिल होने का सबब था कि वह फ़ज़ल नूर से शादी करना चाहता था।

मुजरिम नम्बर एक ने गवाह पेश किया कि क़त्ल की रात वह अपने घर पर सोया हुआ था।

मुजरिम नम्बर दो ने गवाह पेश किया कि वह अपने गाँव में ही नहीं था।

खैरना ने बयान दिया कि सिर्फ उसने अकेले शेरे का क़त्ल किया है।

उसने कहा, वह शाम से ही हुजरे से ग़ैर-हाज़िर था।

जब वह घर आया तो उसने अपनी बीवी के साथ किसी ग़ैर मर्द को देखा।

उसने उठा के सिर पर लाठी मारी तो शेरा नीचे गिर पड़ा। पड़ोसी उठ आए।

सबने फ़ैसला किया कि ख़ामोश रहा जाए!

लाश मेहरदीन और हाशिम ने उठाई। खैरना ने कहा कि यह ग़लत है कि हाशिम ने शेरे का गला घोंटा। तीन अँगूठियों की बात भी ग़लत है!

खैरना ने कहा–यह सच है कि हाशिम फ़ज़ल नूर से शादी करना चाहता था, लेकिन जब हमने हामी न भरी तो उसने लम्बड़दार को ख़बर कर दी।

हाशिम ने अपने बयान में कहा कि यह सब सच है।

“बादशाहो, यह तो हो गई न पेश-बन्दी पुलिस-थाने की। कचहरी में देखें क्या होता है!”

शाहजी सोचते रहे, सिर हिलाते रहे–“जहाँ तक अपनी नज़र आती है, फ़ज़ल नूर का बाप खैरना आ जाएगा चपेट में।”

“और बाक़ी मुजरिम?”

“मुमकिन है, उनको दफ़ा 202-203 के तहत धर लिया जाए।”

मौलादादजी बोले–"शाहजी, आपको तो वकील होना चाहिए था। ख़ैर, कसर तो अब भी कोई नहीं। रब्ब आपका भला करे–इन घुंडियों से आपका दिमाग़ और रोशन होता है।"

फ़तेहअली को कोई बात याद आ गई। बोले–"एक बार शाहजी निकले जलालपुर से तो पता लगा, तहसीलदार की कचहरी लगी हुई है। दो टब्बरों का बड़ा पुराना झगड़ा तहसीलदार निबटाने के लिए बैठे थे। कई मुक़द्दमे-फ़ौजदारियाँ हो चुकी थीं।

"किसी ने जा तहसीलदार साहिब को ख़बर कर दी कि शाहजी का घोड़ा अड्डे पर देखा गया है।

"तहसीलदार का आदमी आन पहुँचा–तहसीलदार ने याद फ़रमाया है।

"शाहजी पहुँचे, दुआ-बन्दगी की और पूछा–'हुक़्म!'

"शाह साहिब, इन दोनों टब्बरों पर आपका रसूख़ है। इसका टंटा रफ़ा-दफ़ा हो जाए तो अच्छा है। सारे इलाक़े को तपा रखा है।'

"शाहजी ने एक गहरी नज़र डाली और सारी सभा को सुनाकर कहा–'अपना वक़्त न ज़ाया कीजिए तहसीलदार साहिब! दुनिया में ऐसा एक भी झगड़ा नहीं जिसे बैठकर न सुलझाया जा सके। पर इसे कैसे सुलझाइएगा! क्योंकि यह झगड़ा नहीं, रगड़ा है। दोनों तरफ़ें एक-दूसरे को रगड़ने पर लगी हैं!'

"दोनों क़बीले ऐसे शर्मिन्दा हुए कि हाथ जोड़कर कहा–'तहसीलदार साहिब, आप और शाहजी जो फ़ैसला दे दें, वह हमें मंजूर।'"

"वाह-वाह...!"

शाहजी को दादा साहिब की याद आ गई–"एक दिन शाम दादाजी ने बुलाकर हाथ में एक रुक्का पकड़ा दिया। कहा–'कल कचहरी में तारीख है। इसे तुम भुगता आओ। पौ फटने से पहले निकल जाना और हाँ, इसकी अगली-पिछली मुझसे समझ जाना।'

"सुबह उठ हस्ब-मामूल पहले दरिया गया, घोड़े पर जिवियों का चक्कर लगाया और छाह वेले घर परत आया।

"दादा साहिब हवेली में ही बैठे थे। देखकर बड़ी सख़्त नज़र दी–'बरख़ुरदार, तुम्हें तो आज कचहरी हाज़िर होना था! क्या गए नहीं?"

"'दादा साहिब, बात यह है कि रुक्का वह कचहरी से चला ही नहीं। किसी अनाड़ी ने आप ही लिख दिया है!'

"इसके पहले कि दादा साहिब कुछ कहें, मैंने नीचे झुक पैरीपौना किया–'गुस्ताख़ी माफ़ दादा साहिब, इस इम्तिहान में से निकलना मेरे लिए भी ज़रूरी था!'

"दादा साहिब बड़े ख़ुश हुए पोते से। बोले–'चाहता मैं देखना यह था कि कितने चौकन्ने और चतुर हो।'

"चौधरी साहिब, मूठ रुपयों की मेरे हाथ पकड़ाई और कहा–'बुजुर्गों के कन्धों तक पहुँच गए हो–आज जाकर शहर मौज़-मज़ा कर आओ।'"

जहाँदादजी ने पूछा–"बादशाहो, पता लगा तो आपको कैसे लगा कि परवाना कचहरी का नहीं!"

"इबारत सूँघकर। लिखा हुआ था–'आपको हुक़्म दिया जाता है कि आप असालतन या माफ़त वकील के जो मुक़द्दमा के हालात से क़रार वाकई वाक़िफ़ किया गया हो और कुल अम्र रात अहम मुताल्लिका मुक़द्दमा का जवाब दे सके या जिसके

पास कोई और शख़्स हो कि उसके दस्तावेज़ात पेश करे कि जिन पर आप बताईद अपनी जवाबदेही के हस्तकलाल करना चाहते हों!

"'आपको इत्तिला दी जाती है कि अगर बरोज़ मजकूर आप हाज़िर न होंगे तो मुक़द्दमा बग़ैर हाज़िरी आपके मसमुअ और फ़ैसला होगा।'

"इबारत तो पूरी कचहरीवाली, पर न मुक़द्दमा नम्बर, न कचहरी का नाम-पता, न तारीख़, न नीचे किसी के दस्तख़त–सही करना था न कि पौत्रा कहाँ तक चौकस है!"

फ़कीरे का ध्यान दादा साहिब की मूठ पर लगा था–"शाहजी, इनाम लेकर आप पहुँचे शहर। भला क्या किया वहाँ जाकर?"

शाहजी छोटे भाई की ओर देख मुस्कुराने लगे–"दादा साहिब ने इनाम लेने की देर कि अपने सिर पर क़ानून सवार हो गया। घोड़ा अड्डे पर छोड़ा, रेल में सवार हो लाहोर पहुँचा और क़ानून की किताब ख़रीद लाया।"

"बस, शाहजी!"

गंडासिंह यकायक ऊँचा-ऊँचा बोलने लगे–"पूछता जाता है–बस शाहजी, बस शाहजी! ओ तुम्हें फ़रक़ नहीं पता इन टोडरमलियों और जट्टों की औलादों में! इनाम लेकर पहुँचे कहाँ हैं बरख़ुरदार? क़ानून की किताब ख़रीदने! कोई गाना-मुजरा भी...!"

"न!"

गंडासिंह पहले शाहजी को घूर-घूर देखते रहे–"लो, देख लो, यह फ़र्क़ है टोडरमलिये खत्रियों में और जट्टों में। इनाम लिया जवानी का पहला और पहुँचते कहाँ हैं शाह साहिब? क़ानूनी किताब के पास! जट्ट की भी सुन लो। कहीं से मूठ आ गई। पहुँचे सीधे कुंजाहवाली के ठिकाने। क्या घुँघरू और क्या पैर! जी करे, बन्दा चूम ले और वहीं ढेर हो जाए।"

जहाँदादख़ाँ जी की अपनी आँखों के आगे बहार आ उतरी। लेते रहे हुक्के का मज़ा।

दीन मुहम्मदजी से न रहा गया–"खालसाजी, फिर सीढ़ी-पौड़ी चढ़ी वहाँ की!"

"न, मजबूरी थी। लड़की नई-नकोर। हरी गंदल। दिल न माना। खुश होकर इनाम दिया जी-भर और घोड़ी को मार एड़ी अपने घर आन पहुँचा।"

मौलादादजी हँसते-हँसते आप ही दस-बीस साल छोटे हो गए–"खालसाजी, यह कोई बहादुरी तो न हुई। उस डोडी की भी कोई क़ीमत तो पड़ती!"

"बराबर पड़ी बादशाहो, अमल अपना पूरा रखा–साल में एक दिन। हर नई फ़सल पर आपाँ गए हसीनों के पास!"

गुरुदित्तसिंह बोले–"मुझसे पूछो तो सौदा यह महँगे का रहा! नशा दबादब चढ़ जाए तो उतरनेवाला भी बनता है। यह तो ख़रगोश के पीछे भागनेवाली बात हुई न! न देनेवाला दिल परचा, न लेनेवाला हाथ!"

गंडासिंह अंगुल-भर और ऊँचे रह गए–"लो सुनो! पार के साल की बात है। बैसाखी के मेले वज़ीराबाद जा पहुँचा। मेले में बड़ी रौनकें। कुश्ती सौंची कौड़ियाँ–सारी राह-रस्म मेलों की। माढ़ीवाला क़बूल मिल गया। पहले तो खाईं जलेबियाँ। ऊपर से तत्ता-तत्ता दूध। फिर तालीमवालियों के शामियानों की ओर निकल गए!

"बादशाहो, क़बूल इलाक़े की हर नचौनी का मुजरा देखे हुए। एक तम्बू के पास पहुँचे तो अठवारा सुन पड़ा:

बुद्ध सुद्ध रही महबूब की

सुद्ध अपनी रही न और
मैं बलिहारी साहिब पर
जो खींचे मेरी डोर।
बुद्ध सुद्ध आ गया बुद्धवार
मेरी ख़बर लये दिलदार।

"मैंने कहा, हो-न-हो, नूराँ की छोटी बहन आयशाँ है!

"अन्दर पहुँचे। चान्नना ही चान्नना। एक कमसिन-सी कवार छनकारों में। साथ अट्ठवारा गा-गा दिलों को दरदाती-तरसाती आयशाँ! मैंने क़बूल को तो कुछ न कहा पर कभी मासूम घुँघरूवाली की ओर देखूँ, कभी आयशाँ की ओर। चित्त में कोई भुलेक्खा-सा पड़ गया।

"लड़की ने सलाम किया तो गिन के रुपए ग्यारह दिए।

"आयशाँ भी सलाम करने चली आई। मेरी नज़र ऐसी जुड़ी उस मुखड़े पर कि परतने का नाम न ले! ग्यारह रुपए और निकाले और उसे दे दिए।

"अब सुनो आगे की दास्तान। नाचनेवाली आयशाँ क्या कहती है!

"रुपए लेकर माथे से लगाए और कहा–'सिंहजी, आज मेरा हक़ तो नहीं बनता पर ख़ैर सदके आपका इनाम मेरी झोली। अब से यह लड़की आपकी ख़िदमत में।'

"मौलादादजी, मेरा चित्त बड़ा उदास हुआ। सोचा–समय के रंग। मैं पहुँचा पहली बार जब उस चबारे तो आयशाँ छोटी-सी थी। आज इसकी लड़की छोटी-सी। मैंने कहा–'आयशाँ, हिसाब-किताब तो जिन्दगी का चलता ही रहता है, पर मेरे लिए तुम दोनों एक ही हो!'

"आयशाँ ने नज़र नीची कर ली और सलाम करके कहा–'आपके दमड़े बड़ी बरकतोंवाले। रब्ब आपको सलामत रखे।'"

"वाह...वाह...क्या बात की है बीबी ने सजी हुई!"

जहाँदादजी ने भी सराहना में सिर हिलाया–"बेशक उस चबारे पहुँचकर आदमी बन्दा बन जाता है। इनके यहाँ शक़्लों-शबाहत, तहज़ीब-तरन्नुम और अख़्लाक की क्या कमी! बोलनेवाले लब तो शीरीं हुए ही!"

शाहजी ऐसे हँसे ज्यों सारे खेल के वाक़िफ़ माहिर हों–"कमी तो वहाँ एक ही चीज़ की–गृहस्थी की गुज्जी छिपी बरक़तों की! बाकी तो दिलजोई का साज़-सामान सजा ही हुआ है!"

चौधरी फ़तेह अली ने बड़ी दानाई से शाहजी की ओर देखते रहे। हुक्का मुहम्मदीन की ओर सरका दिया–"शाह साहिब, मजलिसों के मालिक हो। है कोई पढ़ाई जो आपने न पढ़ डाली हो! स्यालकोटी इदारे मदरसे की ही खूबी समझो। मुजरे से लेकर आला अदालत-कचहरी-दरबार तक पहुँचने की तौफ़ीक एक साथ हो!"

काशीशाह ने नजीबे की आँखों में हसरत और मुरादों के साये देखे तो समझाकर कहा–"नजीबे, ये सारी बरक़तें धन-दौलत की नहीं, तालीम की हैं!"

हड़ की डाडी गर्मी। डाडी तपश। धम्मदेव की महासत्या देखो। सारी धरती को नखशिख तक तपा छोड़ा। संक्रान्त से पहले अपने-अपने सेपिये कुम्हार घर-घर घड़े-घड़ियाँ घट-मट पहुँचाने लगे।

सुच्चे कोरे घड़ों पर घर-गृहस्थनें मौलियाँ बाँधने लगीं। छूनियों पर गुड़-आटा और रेवड़ियाँ रख हाथ में पंखियाँ ले ब्राह्मणों के घर पहुँचाने चलीं।

"जय धम्मदेव! तेरी करनी से किरणों के ताप-तप। आँख शीतल कर देवता। जल से तृप्ति पा और तृप्ति दे। भरे घड़े-घटक तेरे चरणों में। त्रिहाई सृष्टि जल-बुन्दियों से शान्त कर।"

शाहनी, छोटी शाहनी और चाची महरी बिशनो ब्राह्मणी को महीने-भर की रसद गुड़-आटा-वस्त पहुँचाकर लौटीं तो हट्टियों के सामने चाची ने कुटिया की ओर मुँह मोड़ लिया!

जाते-जाते कहा–"धियो, जाकर रोटी-टुक्कर लगो। मैं झट-का-झट माथा टेककर लौटी। हाँ री, गुड़वाले चावलों की देग ताव न खा जाए। नीचे ताव मट्ठा-मट्ठा रखना।"

देवरानी-जिठानी हँसने लगीं–"तुम्हारी ग़ैर-हाज़री में कुछ तो करेंगी!"

हट्टियों के आगे शाहनियों ने माथे पर छोटे-छोटे घूँघटे खींच लिए। नाली से बचने के लिए शाहनी ने देवरानी की ओर देखा तो वह निक्का-निक्का हँसती थी।

"क्यों बिन्द्रादइए, काहे को हँसती हो! कोई दीख गया है क्या! यह न हो किसी को पैरीपौना बनता हो करना और हम सीधी ही चलती चलें।"

"न जिठानी! जिऊन हलवाई की हट्टी देख के हँसी हूँ। कोई भूली-बिसरी पुरानी याद आ गई है!"

"बता री, तुम्हें सौंह है मेरी जो मुझसे छिपाई!"

"जिठानी, अभी मेरा गुरुदास न पेट पड़ा था। एक दिन शाह मेरी कुलेलों से ख़ुश हुए। लम्बे छन तक मेरी ओर तकते रहे। मैं उठने को हुई तो बोले–'किसी चीज़ पर दिल हो बिन्द्री, तो माँग।'

"और री, मैं सुभानकौर बेअक़्ल निरी।

"साईं से कोई गहना-गट्टा माँगती या कपड़ा-लीड़ा। जिठानी, नजूम लगा, मैंने क्या माँगा होगा तेरे देवर से?"

"अरी, कोई चूड़ी-छल्ला या धी-पुत्र!"

"न, अब हँसना तो मत जिठानी, मैं माँग बैठी जिऊन हलवाई की बरफ़ी का डोना!"

शाहनी हँस-हँस दोहरी हुई–"अरी, मेरा देवर क्या बोला?"

"सिर पर धप्पा दे लाड़ से कहा–"बिन्द्रा, ससुराल चली आई पर अभी बचपना न गया।'"

"बिन्द्रादइए, वैसे तो तुम बड़ी पारख चौकन्नी पर आप ही सोच, यह चीज़ माँगने की थी भला! दूध-मलाई से भरा अपना घर! बेबे से कहती तो खोया मरवा घड़ा न भरवा देती। तुम तो ख़ैरों से उसकी लाड़ली वधूटी! चल, आज वह पुराना भागी-भरा दिन तेरे ख़याल पड़ा–ला, आज मैं खिलाती हूँ तुम्हें बरफ़ी!"

शाहनी ने इधर-उधर तक्क मारी, फिर ज़रा-सा कपड़ा ऊँचा किया और बरफ़ी के थाल की ओर हाथ कर कहा–"पाव पक्का बरफ़ी का डोना तो देना।"

और पल्लू के छोर बँधा भनकड़ निकाल आगे कर दिया।

बिन्द्रादई जाने क्यों उदास हो गई–"तुम्हारे दिल की ख़ुशी बहना, तुमने पूछा और मैंने बताया। चल, मैंने भी बरस-बरस के दिन तुम्हारे हाथ का मंसा पुजाया ले

लिया। आज की संक्रान्ति को तो मुझे भी बाह्मनी ही समझ।"

शाहनी खीझ गई–"मुड़ री, आज बरस-बरस के दिन यह क्या ले बैठी! क्षत्राणी की जून में बाह्मनी। पुण्य-फल हमारे इतने कम हो गए कि नकर्मे हो दूसरों पर जीते रहें!"

"क्या कहूँ जिठानी, तेरी देवरानी के रंग-संग तो सारे मुक गए!"

"चुप री, ज़बान को फन्द दे देवरानी! बुरे बोल मुँह से नहीं निकालते!"

"जिठानी, तेरे देवर को ऐसी लग्न लगी है रब्ब के नाम की कि इस अभागी के तो संग-सोहबत सब ख़त्म हो गए।"

शाहनी का कलेजा धक्क रह गया–"अक़्ल-बुद्ध तो ठिकाने है री! देवर से लड़कर तो नहीं बैठी हुई!"

"सौंह गुरुओं की, तुम्हारे आगे क्या झूठ! बड़ी भरजाई मियाँ मस्त के पास ले गई थी पार के साल। जिठानी, मलवाने ने ऐसा नक्खिद टोटका बताया कि इस बुरी का दिल न माना। साईं मेरा देवता पुरुख। मैं पापन अपने ऋतुआरे की बिस्टा उस सन्त के मुँह लगवा दूँ कि मेरे रंग रँगा रहे, न री! न!"

"हाय, मैं मर जाऊँ बिन्द्रादइए, तेरी छाती पर इतना बड़ा पत्थर! श्रीराम...श्री...राम! देवर अपना तो कोई उच्च आत्मा है। जाने किसके पुण्य का फल कि काशीशाह साक्खयात हमारे कुल-घर में आन मिला। सातों ख़ैरें, हमारी उम्रें उसे लग जाएँ, पर देवरानी, दाते ने यह क्या खेल रचाया!"

छोटी शाहनी हौले से बोली–"कभी-कभी तो बड़ी रोती-कलपती हूँ।"

"बिन्द्रादइए, मनुक्ख के तन-मन की अगन-लगन तो लप्प-लप्प ऊँची। धम्मदेव के आगे हाथ जोड़, वह शीतल त्रौंका छींटा देता रहे और समय हरियाला मनुक्खों के संग सजा-बना रहे!"

सीढ़ियाँ चढ़ बिन्द्रादइए फिर से बच्चों की लाड़ली माँ बन गई–"जिठानी, गुरुदास तेरा मीठे का बड़ा चसकोरा। रात को टोह-टाह के देखो तो बिछाई में कहीं-न-कहीं गुड़ की भेली लुकाके ज़रूर रखी होगी। टुकड़ी ले के बड़ा ख़ुश होगा।"

शाहनी चौके की दहलीज़ पर खड़ी-खड़ी सोचती रही–रब्बा, हिरस-इच्छाओं से मनुक्ख बेवक़्त ही प्यासा क्यों हो जाए! मेहरोंवाले, इस घर पर नज़र सीधी रखना!

चाची महरी माथा टेक कुटिया से परती तो राह में गोमा चिड़ों की आन मिली।

सिर पर भत्ता रखे सामने से आती फ़तेह को देखा तो चाची ने लाड़ से घुड़का–"क्यों री धिया मटक्कनी, अब तो राजी हो न! जिस पर मन था, अपना हो गया! कैसा है री जवाँई हमारा?"

फ़तेह मरगई, आँकी-बाँकी हो हस्स-हस्स जाए।

"अरी, ज़रा ढंग से निकला कर। खिल-खिल मटकती रहेगी तो पिंड आँखों से खा जाएगा। तन पर कहीं काली थिगली खोंस डाल।"

फ़तेह ने दुपट्टी में हाथ डाल परांदा छाती पर लहरा लिया–"अब तो ठीक है न चाची!"

"सुन कुड़े, तू ही अनोखी इस सवारी पर नहीं चढ़ी। ज़रा सँभल के। दिन-रात आग जलाए रहेगी तो ढल जाएगी जल्दी!"

फ़तेह ने एक हाथ से सिर का इन्नू सँभाला। दूसरा लस्सी की झाबरी पर टिका लिया और गोमा की ओर पीठ कर हौले से कहा–"चाची, वैरी मुझे छोड़ता ही नहीं!

बता, क्या करूँ?"

चाची की ठंडी आँखों में कोसी-कोसी हँसी फैल गई।

"चुप री, सारा दोख उसके सिर न रख! वह मरद बच्चा और तू धी-ध्यानी धरती! तेरी ही वाही-बोआई होगी। आप सँभल के रहा कर।"

फ़तेह शरमा गई।

"चन्ना, ब्याह-परणा गई है सो तो भला, पर अपने बब्ब को न भूलना। तुम दोनों बेरियोंवाले खू पर ही न! अलिया कौन-सा दूर है–कभी साँझ-सवेरे उसे भी दो गर्म-गर्म रोटियाँ उतार दीं।"

"फिटे मुँह मेरा चाची, कई दिनों से उधर झाँका तक नहीं। चाची, राबयाँ कैसी?"

"राबयाँ वाह-वाह चंगी! अरी, बेटियाँ अपने घरों चंगी। उसका भरम न करना। तुम्हें याद दिलाती थी कि कभी संग-सोहबत को मन न हो तो रात-दो रात अलिये के पास गुज़ार ली।"

फ़तेह निक्का-निक्का हँसने लगी और पाँव उठा लिए–"हला चाची।"

फ़तेह आगे बढ़ गई तो गोमा चाची से बोली–"यह लड़की चंगी रही। जिससे आँखें चार कीं, उसी के लड़ लग गई। रह गई राबयाँ, सो लालीशाह की खलावी बनी मटकती है।"

"बड़ी सुचज्जी लड़की है री! सयानी ऐसी कि बन्दा देख-देख सराहे।"

"चाची, मेरे से पूछो तो लड़की ख़बरे किसकी लौ में सिंकती रहती है। फाँकड़ियाँ मदमाती ऐसे उठाती है ज्यों किसी महबूब को छेड़ना हो!"

चाची महरी का क़दम जहाँ था वहीं थिर हो गया। घूरकर गोमा की ओर देखा और फटकार दिया–"हैं री, तेरे होश ठिकाने हैं! जल-सी निर्मल लड़की, उसे रब्ब की दात! उसके अन्दर सरस्ती विराजती है, सरस्ती। बोलती है तो सुननेवाले के आगे चान्नन-ही-चान्नन!"

गोमा शट्टल्लो टस-से-मस न हुई–"चाची, ऐसे कहती हो कि हाड़-मांस की काया न हो! तुम लाख सयानी पर मेरी एक पल्ले बाँध लो कि जिन्द की माया हर देह को नचाती है!"

चाची सुनकर विरक्त हो गई। पाँव उठाकर कहा–"चुप कर री! तू चल घरों को, मैं धर्मशाला माथा टेककर आती हूँ।"

गोमा नासहोनी को बात का तार न भूला। चाची के कान में कहा–"मेरे कहे-सुने का भरम न करना चाची, पर तू ही बता, कशिश की क़ुव्वत किस रब्ब के बन्दे को नहीं घेरती! राबयाँ कुड़ी जुग-जुग खिलाए लालीशाह को, जम्म-जम्म सजाए दोहरे काफ़ियाँ, पर इतना जान रख चाची, कोई साधनी-सन्तनी नहीं!"

"ख़सम के हाथों मार-कुट्ट खा-खा तेरी अक़्ल-बुद्ध मारी गई है री! कहाँ वह काची, कँवार बालड़ी, कहाँ तेरे भरमी चलित्तर!"

गोमा न मुड़ी, न डरी। ज़हर-भरी निःशंक आवाज़ में कहा–"चाची, तेरी अँखियों पर मोतियाबिंद तो नहीं उतरा! देखती नहीं, बड़े शाह को निरखते-निरखते लड़की गुल सनोबर बन जाती है।"

"जा री, मेरी अँखियों से दूर हो जा।"

"मैंने जो कहना था, कह दिया चाची! मेरे कहे को उठा के परे न फैंक देना।"

चाची के पाँवों में हिम्मत आँगस ख़त्म हो गई। गहरी सोचों में हौली-हौली,

धर्मशाला की पौड़ियाँ चढ़ने लगी।

आँख मूँद वाहेगुरु के दरबार में माथा टेका तो एकाएक शाहजी के गोरे-चिट्टे मुखड़े पर टिकटिकी बाँधे राबयाँ दीख गई।

चाची थर-थर काँपने लगी। हाथ जोड़ अर्ज़ की–"मेरे दाता, यह संग-सम्बन्ध किसी तरह नहीं जुड़ता-बनता। जानी-जान, एक सजरी माँ, दूजी काची बालड़ी। यह खेल न खिलाना रब्ब जी। शाहों के नाम-धाम को कभी मैल नहीं लगी!"

इधर बद्दोकी के गुसाईं वाकपति शाहों के घर पधारे, उधर त्रिकालाँ से पहले पिंड के खत्रेटों को कथा का बुलावा चला गया।

रोटी-टुक्कर से फ़ारिग हो ज़नानियाँ बच्चों को गोदियों में लिए शाहों के घर बिछी जाजम पर आ-आ बैठने लगीं।

गुसाईंजी का गहर-गम्भीर मुहांदरा। सिर पर रेशमी पग्गड़ और कन्धों पर धुस्सा। नीचे लाँगड़वाली धोती।

मंजी पर बिछे चारख़ाने खेस पर गुसाईंजी चौकड़ी मार विराजे तो ज़नानियाँ भक्ति-भाव से माथे टेकने लगीं। गुसाईंजी आशीष वचन बोलते चले।

गुसाईंजी के आगे काठ की पेटी पर चौकी। चौकी पर बिछी सुच्ची फुल्कारी की चौहर। उस पर दिये की लौ प्रकाशती पोथी। गुसाईंजी ने ज्ञान-भंडार खोला तो पत्रों पर बड़े-बड़े अक्खर चमकने लगे।

शाहनी ने दूधारने में अंगारे लगा सामग्री-धूप धुखा दी तो गंगा-जमुनी पवित्र गंध से दिल-मन सबके सराबोर हो-हो गए।

श्री राम...श्री राम...सिर ढके माँएँ-बहनें पत्थल्ले मार बैठीं। कोई गोदी में लिटा बच्चे को मम्मा चुँघाए, कोई थपकी दे सुलाए, कोई रोते जातक को धप्पा मार दादी के कुच्छड़ में डाल दे।

"माँओ-बहनो, ध्यान से! गृहस्थियों के कानों में हर दिन प्रभु का नाम नहीं पड़ता। नाम की डाडी महिमा है। सो चित्त की वृत्ति इधर लगाओ। इस छन-भंगुर जगत में नाम की कमाई है।"

गुसाईंजी ने सिर नँवा माँ संस्कृत का श्लोक उच्चार दिया:

"चन्दनं शीतलं लोके चन्दनादपि चन्द्रमा:
चन्द्रच्च चन्दनाच्चैव शीतला साधु संगति:।"

"धन्य है, धन्य है, देवताओं की पवित्र वाणी!"

"माँओ-बहनो, हज़ार विच इकु कोई पंडित, लाखाँ विच इकु दाता। लो सुनो ध्यान से कथा गौरा-महादेव की:

"एक समय कैलास परबत उपरि महादेव अरु पारबती की आपस में गोस्ट भई। गौरा ने महादेवजी से पूछिया–'हे श्री महादेव, आप म्रिग-छाला ओढ़े, अंग विषै-विभूत लगाए, गले सरप पाए हैं जी। अरु मुंडियों की माला पहिरे हुए। उनमें तउ कोई पवित्रता नाहीं जी। तुम मुझको गियान कर सुणावहु जी। किस गियान-ध्यान से आप अन्तरजामी हो जी। आप अन्तहकर मरमें गियान से पवित्र हो जी। जिस गियान करि संसार के जीव तुम कऊ पूजते हैं जी। अरु बाहर तुम्हारे एड्डे करम दिखाई देते हैं जी!'

"महादेवजी बोले–'गौरजा, धियान से गियान की बात सुनि। जिस गियान करि

बाहर के करम मुझे व्यापते नाहीं। सो पारबती, यही गीता का ज्ञान है जिसका मैं रिदे विषै धियान कर हो है। गौरजा, जैसे कुम्हार का चक्र होता है अरु फिरता जाता है। तिस ते बासन उतपति होते हैं। तैसे ही मनरूप चक्र है। तिस ते पदारथ रूप बासन उतपति होते हैं। अस मन के फुरने करके संसार सति होता है, जब फुरना निवरत हुआ, तब दुःख कोउ न रहेगा। हे पारबती, फुरन-अफुरन बिषै जब तू सामान होवेगा, तब राग-द्वेष ते रहत होकर विचरेगा।'

"पारबती बोली–'हे महादेवजी, यह कैसी माया है आप जी की! मनुष्य लोक में शरीर उपजते भी हैं। अरु मिट भी जाते हैं। देखना मात्र है। जैसे रात आवती है। नहीं जनीती जो कहाँ गई। हे भगवान्, इस संसार कउ असार जान के मैं उदास हुई हूँ। जो बहुत जनम पाय हैं। अरु मरि-मरि गइया है। जीव क्यों इस प्रकार भटकता फिरता है!'

"'पारबती, देही भटकती है। देही से रहित आत्मा निरविकार है। अरु सांत रूप जिऊ का जिऊ स्थित है। सो सरब ब्रह्म है। अस आपने आप विषै स्थित है। हे गौरजा, जब यह आत्मज्ञान होवे तब जगत-भ्रम सांत हो जावेगा। जैसे जेवड़ी के अणजाणे ते सरप भासता है। अरु जेवड़ी के यथारथ जानणे पर सरप भ्रम निवरत हो जाता है।'

"धन्य गौरा पारबती, तेरी जय ही जय!"

शाहनी गुसाईंजी के लिए पिस्ते-बादामवाले दूध का कटोरा ले आई।

गुसाईं जी ने धुस्से के छोर से कटोरा पकड़ा और बड़े प्रेम से घूँट भरने लगे।

एकाएक सामने के चबूतरे पर लाठी की ठक्...ठक्...ठक्...सुन पड़ी।

रक्ख साईं की! यह तो वड्डे लाले और निक्की बेबे के पाँवों की आहट है!

"मल्ला ज़रा उजियारा करना। आले से दीवा उठा ला।"

शाहनी ने कपड़ा माथे से नीचे खींच लिया और आगे बढ़ दोनों के पाँवों की धूल माथे लगाई। बरकती के हाथ से लौ ले आगे की–"पैरीपौना बेबे!"

बेबे निक्की ने आसीस दी–"ठंडी रहो! साईं जीवे! बुढ़ सुहागन हो!"

चाची ने हाँक मारी–"मैंने कहा ज़रा तेल तो पकड़ा बच्ची! सदके जाऊँ। हैं रे, इस घर आज पधारे हैं साक्खयात स्वयम्भू और सतरूपा!"

चाची ने आगे बढ़ बेबे से रामसत्त की और वड्डे लाले के आगे सीस नवाया।

छोटी शाहनी ने देहरी पर तेल चुवाया। नीचे झुककर पैरीपौना किया और हाथ से संकेत दिया–"विराजिए!"

बेबे के लिए पीढ़ी आ गई, और लाला वड्डे गुसाईंजी के साथ विराजे।

बद्दोकीवाले गुसाईंजी ने सतपुरखों की शोभा कर दी–"साध संगत प्रभु के आगे बेनती है अपने पिंड पर वड्डे लाले और बेबे की छत्रछाया बनी रहे। जो पिछले जनम के पुण्य-प्रताप से सौ बरस जी ले, वह इस कलजुग में भी देवता।"

ज़नानियाँ आगे आ-आ माथे टेकने लगीं। बच्चों में होड़ लग गई।

देखकर बेबे निक्का का अन्तर भीग-भीग गया–जियो मेरे बच्चड़ो, जियो! हँसो-खेलो! जवानियाँ मानो!"

रागियों की बहूटी चरणों ने सिर झुका पैरीपौना किया तो बेबे निक्की ने सिर चूमकर आसीस दी:

"जितने धरती तिल गरेसी
उतने बहूटी पुत्र जनेसी!"

दोनों शाह भाई ऊपर आए तो बारी-बारी लाले-बेबे के पाँव छूए और हाथ

बाँधकर अर्ज़ की–"लालाजी, जो इच्छया हो मन में, सेवकों को हुक्म करें!! आज पहले नवरात्रे कथा का शुभारम्भ आपके भाव से!"

लाला वड्डे ने सिर हिलाया–"पुत्तरजी, अष्टमी के दिन सारे पिंड हलवा-पूरी कर देना। इतना ही!"

सुनकर खबरे क्या हुआ कि दोनों भाइयों की आँखें भर आईं–"जो आज्ञा, लाला जी!"

गुसाईंजी ने सिर हिलाया–"जहाँ लालाजी जैसे मनुक्ख विराजें, वहाँ तो यज्ञ-ही-यज्ञ!"

काशीशाह ने हाथ जोड़ अर्ज़ की–"गुसाईंजी नौरात्रों में कथा करेंगे, आप और बेबेजी चबारेवाली बैठक विराजिए।"

"पुत्तरजी, इस पके पात को अपने ठिये पर ही रहने दो। क्या पता कब झोंका आन हिलाए!"

दिवटे के आलोक में वड्डे लाला और छोटी बेबे के झुर्रियों पड़े मुखड़े चिर-पहाड़ और चिर-वती नदिया से जापने लगे।

निक्की बेबे के हाथ में छुआ प्रसाद का थाल शाहनी ने गुसाईंजी के आगे रख दिया।

बच्चे-बलूँगड़े प्रसाद के लिए आगे-आगे ढुकने लगे।

निक्की बेबे और वड्डे लाला उठ खड़े हुए। गुसाईंजी ने श्लोक उच्चारा:

"शैले-शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे-गजे
सज्जना नहि सर्वत्र चन्दनं न वने-वने

"पधारो-पधारो!" हाथ में लौ लिए दोनों भाई वड्डे लाला और बेबे को लिवा ले चले तो जनानियाँ-टाबर पीछे-पीछे हो लिए।

भगवान पांदे के छोटे पुत्र बिरजू को जाने क्या सूझा कि बन्द जोड़ लिया:

चलो पधारो देवता आप आगे-आगे।
चढ़ो सुरग की सीढ़ियाँ हम पीछे-पीछे।।

सबके कलेजे धक्क रह गए। हाय रे, ब्राह्मण-पुत्र को यह क्या सूझी!

तारों-भरी रात में लाला वड्डे के पाँव यूँ थिड़के ज्यों आँधी के झोंके से पारस पीपल हिल-हिल गया हो।

अपनी ड्योढ़ी पर पहुँच वड्डे लाला रुके। बारी-बारी दोनों शाह भाइयों की पीठ पर हाथ फेरा, कुछ कहना चाहा पर बोल न निकले।

काशीशाह ने मदद की–"लालाजी, सेवकों को कोई हुक्म-हिदायत!"

लाला वड्डे कई देर सिर हिलाते रहे, जैसे कुछ याद करते हों। फिर सिर हिलाया–"अब मेरी संज्ञा काया काम नहीं करती। आँखों के आगे माँ और चाचा उतर आए हैं। अब यात्रा ख़त्म हुई समझो। पुत्रो, मेरे पीछे टब्बर को अक़्ल देना। मेरे-तेरे से अक़्ल-बुद्ध भ्रष्ट हो जाती है। कुनबे-कबीले की मूठें बिखर जाती हैं।"

दोनों भाइयों ने सिर झुकाया–"सत्तवचन। और आज्ञा!"

"पुत्रजी, मेरा विमान सतियों के चबूतरे के आगे नमन हो!"

"जो हुक़्म!"

राह में दोनों भाई कुछ न बोले। ड्योढ़ी में क़दम रखा तो छोटे शाह ने कहा–"वड्डे लाले ने दुनिया से अब रूह फेर ली है। कुछ ही दिनों का दर्शन-मेला समझो!"

“बक़्शना महाराज, बक़्शना!

निक्किये, सो गई हो क्या!”

हाथ बढ़ा बेबे निक्की ने लाले वड्डे को रज़ाई ओढ़ा दी।

बेबे ने आँख मूँदी ही थी कि लाल वड्डे ने फिर आवाज़ दी–“मैंने कहा निक्किये, याद तो कर, हम कटासराज कब गए थे भला?”

“लो, भूल गए! सुखी सांदी सबसे बड़े चन्नमल्ल का जब त्रिखल जन्मा है तब पहली बार गए थे कटासराज। फिर दूजी बार पहुँचे हैं जब छोटे विक्रम का ब्याह किया है। तभी गए थे न कटासराज, दूनी साहिब, पंजा साहिब...”

“निक्किये, कटासराज धरती का त्रिनेत्र है। सुच्चे गुलाबों की महक मनुक्ख-आत्मा में सुगन्ध-भरी धूप-दीप धुखा देती है।”

वड्डे लाले ने बड़ा लम्बा श्वास खींचा ज्यों कटासराज से कोई सुच्ची हवा का झोंका आया हो!

“निक्किये, जो भी कहो रब्ब की यह दुनिया बड़ी सुहानी। याद है न, रघुनाथजी के मन्दिर के आगे सरोवर अमरकुंड! पांडव जब चलते-चलते इस स्थल पर पहुँचे तो बिन पानी त्रिहा गए थे। अमरकुंड देखते ही प्यास बुझाने को पानी मुँह लगा लिया। धर्मराज युद्धिष्ठिर को छोड़ और सब भाइयो ने पीया और मूर्च्छित हो-हो गिरते गए। युद्धिष्ठिर राज ने त्रिनेत्र का ध्यान किया और कुंड से पानी ले भाइयों को त्रोंके दिए। हँसते-खेलते पांडव उठ बैठे।”

बेबे निक्की ने पलक झपकी ही थी कि जैनियों का मूरत-मन्दिर आँखों में लहराने लगा!

“चन्नमल्ल के भाइया, चम-चम करता जैन-मन्दिर कई बार सपने में देखती हूँ। रब्ब ख़ैर रखे, एक बार जाना ज़रूर है। याद है न, रघुनाथजी के मन्दिर गए थे तो प्राणमल मेले में निखड़ गया था।

“मन्दिर में तीन स्थापन हैं। विष्णु नारायण, विष्णु नरसिंह और विष्णु वाराह! क्या सोहणी तराश देवों के मुहांदरों की! और हर हाथ में कमल!

“कटास में कमलों की क्या कमी! सरोवर झलमल-झलमल करता है। हरे पात और गुलाबी नीले कमल।

“बच्चों के भाइया, चिर हुआ देखा था पर वह ऊँचा टोप संघारामवाला, दस ताल-तालाब तो उसी के साथ लगे हैं। बनवाया होगा किसी चक्रवरती राजे ने।”

लालाजी को जाने क्या ख़याल गुज़रा। सिर हिलाया–“रब्बा, बेपरवाहियाँ तुम्हारी, गारे-पत्थर की इमारतें खड़ी रहें ज़मानों तक और प्राण की सत्यावाला बन्दा ग़ैरहाज़िर।”

बेबे ने ध्यान पलटने को कहा–“रणमल के पुत्तर की जब झंड उतरी है तो टिल्ले गोरखनाथ भी तो गए थे। कहते हैं, राजा भरथरी पर्वत-गुफाएँ उठाकर झंगमघियाने ले गया था। जप-तप की बड़ी महिमा। देह में सत्या उग आती है!”

बेबे निक्की ने कुछ देर हुंकारा न भरा तो लाले वड्डे ने आवाज़ दी–“सुन रही है कि सो गई?”

“साइँया, सो सकूँ तो चैन न पड़े इस काया को! इस बूढ़ी देह अब कौन-सी गरमी-ख़ुमारी बची है कि लेटते ही नींद आ जाए!”

“मैंने कहा, तत्ते-तत्ते दूध में बहू से घी डलवा लिया कर।”

बेबे छिड़ गई। उठकर कहा–"यह क्या छेड़ लिया! तुम्हारे भाने मैं क्या बहूटियों की निन्दा-चुगली ले के बैठ जाऊँगी? चन्नमल्ल के भाइया, कर्मों के बिना दूध-दही नहीं वरताया जाता!"

"साथिने, घर गाय-भैंस हैं, लवेरा बँधा है, पर तेरे भागों में झुरना। बड़ी बिच्चली, छुट्टकी, निक्कड़ी, चाहे जिसके चौके से पी।"

निक्की बेबे बुड़बुड़ाने लगी–"यह बात न हिला साइँया। कभी घूट-दो घूँट से मुँह-मुलाहज़ा करती भी हैं तो मैं कह देती हूँ–बटूहियो, बालड़ों के लिए रहने दो। हम बुड्ढे-ठेरों के ज़िम्मे कौन-सी मेहनत कमाई है जो दूध-मलाइयाँ खाएँ!"

लाला वड्डे उठ के बैठ गए–"निक्किये, यह क्या! तू इस घर की राजमहिषी है।"

बेबे निक्की जाने कैसी आनाकानी में हँसी–"मेरे भोले मालिका, चढ़ती राजेश्वरी और ढलती राजमाता में ऊपर-थल्ले का फ़रक। एक के हाथ में हुक़्म हासिल और दूजी के पास न हक़, न अख़्तियार।"

"निक्किये, दिल से यह दोक्खा निकाल छोड़। निरा भरम भुलेवा है!"

"एक बात कहती हूँ, सारी नियामतें-बरक़ते चढ़तलों की साइँया, तुमने इतना भंडारा कुल-क़बीला चलाया, आप ही बताओ, अब है कोई ज़ोर-ज़बर किसी पर?"

लाले ने लाड़ से धमकाया–"लाडिये, यह चित्त का विक्खोभन चंगा नहीं। मेरे-तेरे, हमारे वेले पीछे जा पड़े। जहाँ तक बना, तेरे पुत्र-पौत्रों ने तो कमी नहीं रखी।"

बेबे निक्की सिर हिलाने लगी–"साइँया, यह ज़िन्द बड़ी पापन। पिछली उम्रे बड़ी कलपती-तड़पती है। न कहें मुँह से, पर दिल-ही-दिल आत्मा बड़ा सन्ताप पाती है।"

"यह क्या पछोत्तावे ले बैठी! चल छोड़ दे! मैंने कहा बद्दोकीवाले गुसाईं चंगी कथा करते हैं। घर में कोई ख़ुशी हो तो कथा करवा लेना!"

"ख़ैर सदके शुभ दिहाड़ा आए! महीने दो में विक्रम की वधूटी को व्यम पड़नेवाला है!"

बेबे निक्की ने करवट ले पीठ मोड़ ली–"सतनाम, सतनाम!"

"दिल-ही-दिल सोचा–शरीर डोकरे का थक जाए पर चित्त-चेता हमेशा अगली-पिछलियों में भटकता है।

बेबे को छोटी सी झोंक आई होगी कि बाहर तन्दूर की ओर से बिल्लयों के लड़ने की आवाज़ आई तो ताकी पर हाथ मार लेटे-लेटे ही कहा, "दुर्रे-दुर्रे-दुर्रे बाह्मनियो, दिन-रात दूध-मलाई पर आँख रख।"

लाले वड्डे ने आवाज़ दी–"निक्किये, जेकर लारेंस साहिबवाला काग़द न बह जाता कांग में तो आज तेरे टब्बर को तगड़ी जागीरें लगी होतीं।"

बेबे निक्की ने ऐसे घुड़का ज्यों लाला उसका साँई न हो, उसका पुत्तर हो–"सोने की कोशिश करो। शाहों के घर तक जाकर तुम्हें थकान चढ़ गई है। चन्न-मल्ल के भाइया, इस बुड्ढे वेले जागीरों की तृष्णा क्या जाग पड़ी! साहबड़े के काग़ज़ गए कुएँ में। रब्ब ने हमें क्या कम दिया! ऊपरवाला सुनता है साइँया, उस दाते ने तुम्हें ग्यारह जागीरें लगा दीं।"

"कहती तो सच्च हो चन्ने की बेबे!"

बेबे ने पासा परत लाले की ओर मुँह कर लिया और हँसने लगी। फिर हाथ से लाले को टोहकर कहा–"साइँया, मुझसे तो तुम्हें कोई उलाम्भा नहीं न! ग्यारह बार गिनकर व्यम पाए और ग्यारह बार तुमने गोदी पुत्र खिलाए।"

लाले वड्डे ने बेबे के बिछौने की ओर हाथ फैलाया–"निक्किये, यह मनुक्ख की करनी नहीं, यह सामर्थ उस दाते की!"

तीसरा पहर होगा। अभी पीपलवाला खू न गिड़ा था। बेबे की आँख ख़ुली तो लाला वड्डे आप ही पड़े-पड़े बोलते थे–"ब्याह हुआ विश्वकर्मा का प्रभूति से। पुत्र जन्मे मालाकार, कर्णकार, संकोकार, कुबानदक...कुबानदक...कुबानदक...ओ रे मेरे रब्बा, अगला नाम ही चेते नहीं आता।"

बेबे निक्की ने हर गर्मी सयाले अनेक बार रातों में ये नाम सुने थे, खीजकर कहा–"लो, मैं बताती हूँ। कुम्भकार और कंसकार, पर एक बात तो बताओ भागमल्ल के भाइया, विश्वकर्मा और प्रभूति के पुत्रों का क्या प्रसंग? अपने पुत्रों के नाम लो। कलेजे ठंड भी पड़े। चन्नमल, भागमल, रणमल, विक्रममल, लाब्बामल।"

"बस, निक्किये, अगले नालायक़ का नाम मत लेना। अपनी घर-गृहस्थी छोड़ शीदो कुंजावाली के कोठे जा डेरा जमाया।"

बेबे नरम पड़ गई–"पड़ा रहने दो ग़र्कजाने को, जहाँ पड़ा है। ख़ैरों से टब्बर हो बड़ा तो एक-न-एक नज़र बट्टू भी चंगा ही होता है। औलाद को नज़र नहीं लगती।"

"बस-बस, सुन लिया है मैंने।"

वड्डे लाले का साँस चलने लगा और ख़ाँसी छिड़ गई।

बेबे ने छाती सहलाई–"घूँट-भर दूध लाती हूँ!"

लाले वड्डे ने सिर हिलाया–"ले आओ।"

बेबे उठ खड़ी हुई कि लाले वड्डे ने हाथ से रोक लिया–"मेरी बात सुन जा निक्किये। थल खंड के साथ मनुक्ख का पाताल खंड भी श्वास-श्वास उसके साथ चलता रहता है। जापता है अब इस काया के तीनों खंड मिलनेवाले हैं। आकाश-खंड से मेरा घोड़ा चल पड़ा लगता है। पहुँचा ही समझो। रब्ब जी, मैं भी तैयार हूँ..."

निक्की बेबे काँपने लगी, फिर भी सिदक से बोली–"ख़ैरें मेहरें हैं साइँया, अभी तो आप जी ने अष्टमी पुजानी है!"

लाला जी की छाती घरघराने लगी। बेबे ने झटापट पट खोले और दूधारने तक पहुँचते-पहुँचते बड़े बेटे की कुंडी खड़का दी–"भागमल्ला, सारे भाई लाले के पास पहुँचते बनो। त्रिखा पाँव उठाना। मैं दूध ले के आई।"

जितने बेबे निक्की दूध का कटोरा लाई, सारा टब्बर लाले के आसपास जा ढुका।

दिवटे की लौ लाले ने बेबे को पहचान लिया और नित की तरह रुक-रुककर कहा–"दिन की टिक्की तो निकल आई न! चल, आज तो सूरज उगने की बधाई ले ले। कल की मालिक जानता है..."

निक्की बेबे की बूढ़ी काया थरथर काँपने लगी–"हाय ओ मेरे रब्बा, यह डाडी घड़ी आज मेरे सिर पर क्यों आन पहुँची!"

बेबे ने लाले वड्डे के पाँव पकड़ लिए–"साइँया, ऐसी बेकौली न कर। मेरे साथ जुल्म न कमा। अपनी निक्कड़ी को अकेली न छोड़ जा!"

वड्डे लाले ने पलक झपकी। दस ऊपर सौ बरस पुरानी साँस उखड़ गई और पुत्रों ने लाले को भुंजे उतार दिया।

बड़े ने गंगाजल मुँह में डाला। मझले ने धान-गऊ मंसा दिए। चन्नमल ने हाथ पर

दीवा रखा। बुझती अँखियों में जोत झिलमिलाई और मनुक्ख की आत्मा अँधेरे से पार हो गई।

बेबे निक्की रो-रो लाले के सिर पर हाथ फेरने लगी–"हाय ओ मेरे बादशाह दूल्हो, मुझे अकेले क्यों छोड़ गया!"

चन्नमल ने ढाह मार दी और रो-रोकर पिंड जगा दिया–"ओ लोको, घर से देवते मुड़ गए–बादशाही चली गई!"

ढोल पर थाप पड़ी–लाम लग गई।

दूजी थाप पड़ी–भरती ख़ुल गई।

ऐलान होते ही कच्ची-पक्की उमरों के वारे-न्यारे होने लगे। चाचे-ताये-बाप-भाई छिपी-छिपी नज़रों बेटे-भतीजों के डौले-छातियाँ देखते और जातकड़ों की ख़ैर मना आसीसें देते।

झ्यूरों की भट्टियों, कुँइयों, तन्दूरों पर माँएँ-बहनें-चाचियाँ-दादियाँ हाथ मल-मल कहें:

"मल्ला यह क्या सूझी अंग्रेज़ को! बैठे-बिठाए जंग छेड़ दी। इनसे चंगी तो इनकी वड्डी-वड्डेरी थी। तख़्त-ताज भी चलाया सिदक से और चैन-अमन भी कमाया। रियाया से जस्म भी चोखा पाया।"

"ज़नानी थी न बाल-बच्चेदार! सुनते हैं, आप ही मलका थी। गबरू तो हुक़्म के हेठ था। वह कोई शाह-बादशाह नहीं था।"

"बहना, मलका हो, महिषी-महारानी हो, मर्द का साया तो उसके लिए भी लाज़िम।"

"कर गई सोहणी कमाइयाँ और बाँट गई बरक़तें रियाया को भी! अब देखें नासहोने पुत्र-पोत्रे क्या करते हैं!"

"हैं री, मरदों की मत्त बुरी। आदि-अदन्त से करते आए मार-काट, कत्ल-ज़िबह। इन लूठे अंशवालों को जुद्ध-लड़ाइयों के बिना चैन नहीं पड़ता। ग़र्क गए लाख मौज-मज़ा करें, पर जब तक खून-ख़राबा न कर लें, इन डौलेवालों की ज़िन्द नहीं पुरती।"

"सच कहती हो। इनकी तो मूँछ का बाल न गिरे, ख़ुलता है ढिढ तो ज़नानी का ही। जिस धरती बीज पड़े, वह अपने रूख़-फलों को बेफ़ायदा नष्ट क्यों होने दे!"

"मल्ला रब्ब ने भी कुछ सोचकर ही मर्द-ज़नानी का काम बाँटा था। ज़ोरावरी लाख आदमी की, पर रब्ब ने औलाद लगाई तो हव्वा को ही न! जेकर लग जाती कहीं अल-औलाद की परवरिश मनुक्ख को तो उसे फाड़-फाड़ खाते। इन्हें सब्र नहीं। इन्हें तो अपना मौज-मज़ा चाहिए।"

"ऊपरवाला भी आख़िर को सुच्ची समझ रखता है। जोड़े भी बनाए और काम-धन्धे भी बाँट दिए। ज़नानी से कहा–धिए, तू मामता की गाही-वाही कर और टब्बरों की देख-भाल कर। जनेया, तू खेती कर, फ़सलें पका और खिला-पिला।"

"सुनो री सुनो, निक्के का भाइया कल शहर से लौटा है। कहता है, हर पिंड से टाबरों की उम्रें लिख-लिखकर ले जा रहे हैं।"

"रब्ब रक्खया करे अपने जातकों की। शाही हुक़्म निकल गया, अब सब एक से रस्से बँध जाएँगे।"

"ख़ैर सदके, गौहर तुम्हारा है तो छोटा पर लगता बड़ा है!"

"और जलाल मेरा?"

"वही अग्गड़-पिच्छड़ के हैं। दो-चार महीने इधर-उधर!"

"चल माहिया, दुचित्ताई न रख। बरख़ुरदारों की बढ़ी-चढ़ी होने दो। आख़िर तो इन्हें या सुहागा-सहाड़ फेरना या फिर कन्धे बन्दूक। इन्होंने कौन से बहियाँ-खाते रखने-रखाने हिन्दुओं की तरह। अल्लाह बेली की रहमत हो गज्ज-वज्ज के लश्कर-छावनी पहुँचे।"

"हमीदा री, सिकन्दरे के करतब सुनती है न! जाता है, डाका मार परत आता है। चल, लाम लगी है तो लड़के अपने इन बातों से तो मुड़ेंगे।"

"मैंने कहा साईं दित्ती की तन्न देखी है इन दिनों! जट्टी शाहनी बन-बन बैठती है। कचहरी-परचा कर शरीक़ों की जिवियाँ हथिया लीं। रब्ब-रसूल आप देखेगा इस बेइंसाफ़ी को!"

"मियेंख़ाँ की बेग़म बी कान में कह गई थी कि मुक़द्दमे के लिए शाहों से और रुपया उठाया है।"

"शाहों की भली पूछी! गुत्थी भरी हो दमड़ों से तो वन्दा या आप हठ-उठ नाचे या दूसरों को नचाए। मुकद्दमे लड़ाए। हिन्दुआनी सिदक-सब्र मियें लोगों की तरह खा-उजाड़ नहीं देता। शाह सोच-समझ के पैसा लगाते हैं और दूना बनाते हैं।"

"चलती हूँ री, माल-डंगर को छप्पर ले जाना है।"

"हाँ री, एक बात तो सुन! जुलाहों के घर जो मियाँ-बीबी उतरे हुए हैं, मुझे तो कुछ ऊपर-हेठ नज़र आता है। ईद को रक़ाबी-भर पुलाव भेजा। मैं तो देखकर त्रबक गई।

"ज़लाल के चाचे ने देखा तो बोला–'कुछ भी कह लो, ऐसा पुलाव सैयदानी के अलावा और कोई नहीं बना सकता!'

"कहीं से भागे-भगाए होंगे। ज़नानी को तो दिन चढ़े लगते हैं। एक-न-एक दिन तमाशा खुलेगा ज़रूर।"

लाहबीबी सिर पर वड़ेवों की गठरी उठाए पास से गुज़री–"क्यों धियो, आज कैसे गोशे?"

"माँ, सुनते हैं, जंग छिड़ी है। लड़कों को जाए बिना चैन थोड़े ही आएगा। उठ-उठ भरती को जाएँगे।"

लाहबीबी बड़े लाड़ से हँसी–"फत्तू मेरा तड़के ही डंड निकाल रहा था। वरदी का बड़ा चाव!"

"बोद्दे के लिए मेरा तो कलेजा धक्-धक् करने लगा है।"

लाहबीबी के दो पुत्तर पहले ही फ़ौज में भरती। सहजे से बोली–"बोद्दे की माँ, ख़ैरें-मोहरें हैं। फिक्र न कर। जिस पुत्र-जवातरे ने वरदी में सजना है, उसने सजना ही सजना है। मौला किए जिसके काँधे पट्टी फ़ौज की फबनी है, उसके ज़रूर फबनी है। भरम न करो।"

लाहबीबी के गए पीछे कोच्छड़ों की विधूटी बोली–"ले, मल्ला लाहबीबी की बात सुन! इसके भाने जंग न हुई, सौंची कब्बड़ी हो गई!"

"जट्टी है न, जट्टी। पुत्तर-पोतरे खेती करें या भरती हो नायक बनें, इसे दोनों सरते हैं।"

अरोड़ों की बन्तों ने खत्राणियों को बोली मारी–"हम तो हुए हटवानिए बहना,

पर खत्राणियों की रूह क्यों अड़ती है! खत्री का तो कर्म-कम्म ही जुद्ध-लड़ाई। अब करें न पुत्रों को आगे!"

खुल्लरों की पाशो मच गई–"क्यों री, खत्री-ब्राह्मण के जिक्र क्यों ले बैठी! कौन माँ है जो अपने पेट के लिए न कतराएगी! पुत्तरों की छातियों पर लाम ढुकी है और तू करने चली कुल-गोत्रों के वारे-न्यारे! फिटे मुँह री!"

ग्राँ-ग्राँ में ढोल बजने लगे और सरकारी ऐलान हो गए:

पुत्र निशान
जिवियाँ जहान
सुनो शाही फ़रमान
जवाना, लाम रोज़-रोज़ नहीं लगती
तक़दीरें रोज़-रोज़ नहीं ख़ुलतीं!

जट्टों, सिहों, लबाणयों, राजपूतों, अवानों, पठानों, जंग क्या छिड़ी, जवाँमर्दों के मेले लग गए! बहादुरो, पहुँचते बनो मैदान में! सरकार तुम्हारे कुनबों की सलामती देखेगी। साहबज़ादड़ो, बहादुरी दिखाओ जा के मैदाने-जंग में। खिल्लतें पाओ। घरों में सनदें सजाओ!

बरख़ुरदारो, एक बार लग गए मुरब्बे तुम्हारे टब्बरों को तो फिर कोई कमी नहीं! गाय-भैंसें, माल-डंगर, घोड़े-घोड़ियाँ, दौलत के ढेर!

ओ जवाना बन रंगरूट
नई पोशाकें बढ़िया बूट।

माँओ, बहनो, घरवालियो, दो इज़ाज़त टब्बरों को–आला फ़ौज पंजाब में भरती हों, जवाँमर्दी दिखलाएँ मैदाने-जंग में और हँसते-खेलते घरों को परतें कन्धे सजाकर। याद रहे, विलायत के शहंशाह बहादुर टिवाणा-लांसर्ज़ की वरदी में लैस होकर शाही फ़ौजों की रौनक़ बढ़ाते हैं।

भरती-अफ़सर के इशारे पर सरकारी ढोलियों ने ज़िन्दाबादियाँ बुला दीं:

सरकार बहादुर ज़िन्दाबाद
बहादुरी पंजाब ज़िन्दाबाद
टिवाणा लांसर्ज़ ज़िन्दाबाद
ज़िन्दाबाद भाई ज़िन्दाबाद
फ़ौजें अपनी ज़िन्दाबाद।

निक्के-निक्के बच्चों के झुंड आ ढुके।

भरतीवालों ने छोटे बच्चों के सिरों पर थापड़े दिए और मदरसे जानेवालों को ललचाकर कहा–"जल्दी-जल्दी बड़े हो जाओ। तुम्हारी भी छाती नाप देंगे।"

मटमैले खेस-दोत्तहियों में चौधरहट्टा आन पहुँचा। चौधरी जहाँदादख़ाँ, फ़तेहअली, कर्मइलाही, मियेख़ाँ, मीराँबक़्श और दूसरे औन-पौन बन्दे।

साहब सलामत हुई। भरतीवालों ने नरमाई से ऊपर चढ़ाया–"चौधरीजी, आपके होते भला सरकार को क्या फ़िक्र! इस महीने पिंड कितने जवान दे रहा है?"

फ़तेहअलीजी ने गला साफ़ किया–"साहबजी, भरती क़ाबिल यहाँ का हर एक जवान भरती दफ़्तर पहुँच चुका है। हाँ, दो-चार वाल्दैनों के इकलौते पुत्तरों की सौंह

नहीं। बाक़ी जो पूर आपके सामने खड़ा है, उनके तो अभी नाक ही बह रहे हैं। क़द-बुत निकाल लें, अभी कौन-सी जंग मुक चली है!"

भरती अफ़सर जहाँदादजी को मुख़ातिब हुए–"फ़ौजी पेंशनी होने के नाते जंग के लिए हरचन्द कोशिश करना आपका फ़र्ज़ है।"

"बराबर जनाब, जंगी लाट के पुराने ख़ादिम हैं। दो बरख़ुरदार अपने जंग में पहले ही फ़ौज में भरती हैं।"

ज़नानियों की भीड़ ढुक आई। माँएँ, बहनें, बेबे, दादियाँ।

काली दुपट्टी ओढ़े, कुच्छड़ में निक्का उठाए आयशाँ बीबी आगे बढ़ आई–"भरती साहबा, पिंड ने अपनी चोनमी ताक़त सरकार के आगे कर दी है! कोई छोटी-सी बात तो नहीं!"

"हाँ जी, अपने चार पिंडों ने मिलकर सौ जवान भेजा है। पूरा लश्कर। उठा के पर्वत ठेल दे।"

भोलू का निक्का भाई घोलू अपने मामे को वरदी में देखने जलालपुर गया था। आगे बढ़कर सुना-सुनाया टप्पा बोल दिया:

हर घर से इक बन्दा
पुत्तर नहीं तो चन्दा

उत्तरी वंड की जैना ने झिड़क दिया–"चुप रे, शहरियों को पुगता होगा, हमें नहीं। यह दौलतियों के नखरे हैं। पुत्तर घर छिपाए रखेंगे और सरकार के आगे चन्दे की गुत्थियाँ तारते रहेंगे।"

सामने दारे के मोड़ पर शाहजी दीखे। ऊँचा क़द, गोरा रंग, सिर पर उजली पगड़ी। चाल-ढाल साहिबे-जायदादवाली!

शाहजी सूबालाट के दरबार में चन्दा लिखवा चुके थे, सो भरती अफ़सर ने गर्मजोशी से हाथ मिलाया।

गाँव के मोहतबिर भरतीवालों के सामने मंजियों पर सज गए। कुछ खड़े-खड़े हुक्के गुड़गुड़ाते रहे। कुछ पैरों के भार भुंजे बैठ गए।

नायब ने उठकर तक़रीर शुरू की–"हाज़रीन, सरकार आला और शहंशाहे इंगलिस्तान उन सब वालदैन के अहसानमन्द हैं जो अपने पुत्रों को जंग में हिस्सा लेने के लिए भरती करवा चुके हैं या करवा रहे हैं। अपनी हिन्दुस्तानी रियाया और बहादुर फ़ौजों की सलामती उन्हें उतनी ही प्यारी है जितनी उन्हें अपनी इंगलिस्तानी फ़ौजें।

"गौर करो, गोरी पलटनों के सिरों पर टोप सजते हैं और अपनी नक्क-दक्खवाली क़ौमों के सिरों पर साफ़े। साफ़ा-पगड़ी बन्दे की इज़्ज़त-आबरू है।"

तहसीलदार ने नायब को टोक दिया–"पहले डोगरा पाग बयान हो!"

"जनाब, डोगरा पाग सवा सात गज की। सिक्खी साफ़ा सात गज। पंजाबी मुसलमान साढ़े पाँच गज। पठानी साफ़ा साढ़े पाँच।"

दूसरे साफ़ों के मुक़ाबले मुसलमानी साफ़े की छोटी लम्बाई माँओं-बहनों को पसन्द न आई।

"अरे भरती अफ़सरा, यह दुजैगी कैसी! सिक्खी साफ़ा सात गज, डोगरी सवा सात, पंजाबी मुसलमान और पठान की पग्ग पर ही सरकार ने सारी कंजूसी-किरसकारी करनी थी!"

नायब बड़े अदब से बोला–"बेबे, बात बेशक तुम्हारी ठीक है, पर गज-डेढ़ गज

कपड़ों से सरकार के ख़ज़ाने ख़ाली नहीं होते। जैसा हर क़ौम-क़बीले का रिवाज़-चलन हो, बिलकुल वैसा ही साफा सरकार अपने फ़ौजियों के लिए मंजूर करती है।"

कर्मइलाहीजी ने हाथ से इशारा किया–"भरम न करो, रिवाज़ की बात है। जट्टियों का काम दो हाथ की दुपट्टियों से चल जाता है। हिन्दुआनियों को जोड़नेवाले ढाई-गजे भोच्छन चाहिए होते हैं।"

माँ करभरी ने साथ खड़ी हुसैना से कहा–"अरी, हिन्दुओं को बहुत पैसा, बहुत वरतन। बहुता फुल्ल फैलाव!"

"लो सुनो माँओ-बहनो! हर साफ़े की अल्हदा शान। अल्हदा बान। पठानी साफ़ा–लम्बे कुल्ले पर आठ बल। बाईं तरफ़ तीन बल और पीछे का लड़ अन्दर टुँगा हुआ। सिक्खी साफ़ा–एक घुमाव दाईं तरफ़, आठ लपेटनियाँ बाईं तरफ़ इकसार, बीच में पग्ग का तिकोण नज़र आता रहे।"

"पुत्तरा, डेरा जट्टी साफ़े की बात सुना!"

"लो सुनो, पंजाबी मुसलमान का कुल्ला बड़ी मरजादवाला। न छोटा, न बड़ा। चार अंगुल चौड़े बल। लपेटनी पहले दाईं तरफ़ फिर बाईं तरफ से कुल्ले पर। शमला पीछे से लाकर टूँगना ऊपर।"

ख़यालों में ही माँओं को अपने-अपने पुत्तरों के सिरों पर सोहणी पागें नज़र आने लगीं।

माँ हाको ने दुपट्टी के छोर से धेला निकाल नायब के सिर पर से सिरवारना कर दिया–"मैं सदके नायबा, मेरे दोनों पुत्र-पोतरे ऐसी ही पगड़ी बाँधते होंगे!"

नायब ने झुक बेबे को पैरीपौना कर दिया।

"जीता रह पुत्तर, जवानियाँ मान!"

गौहर की दादी आगे बढ़ आई–"मैंने कहा मेरे पोत्रे को रोटी तो चुपड़ी मिलेगी छावनी में!"

'बराबर बेबे! चाहे किसी से पूछकर सही कर लो। पिंडी बहाउद्दीन का कर्मनारायण जहाज़ भर-भर लाम पर भेजता है। बच्चों के खाने-पीने से निश्चिन्त रहो।"

बेबे की आँखों के आगे निक्के की झलक फिर गई–"पुत्तरा, पूरी वरदी-पोशाक में एक बार तो फेरा डाल जाता घर। बेड़े पर चढ़ने से पहले दो-चार दिन की छुट्टी तो दिलवा देना उसको!"

"कोशिश करूँगा बेबे, बाक़ी बरख़ुरदारों की चिन्ता बिलकुल न करो। सरकार अपने जवानों की खाद-ख़ुराक का पूरा ख़याल रखती है!"

"भला क्या कुछ मिलता है उन्हें खाने को?"

"आटा पौन सेर..."

"क्या रे क्या, यह क्या कहा! 12 छटाँकी में से कितने मंडे बनते हैं! दो नहीं तो तीन! हाय-हाय, बारह-छटाँकी आटा! तोले-माशों से बन्दूकें और तोपें चलेंगी! आटा न हुआ कि घी हो गया!"

"सुनो-सुनो, घी की भी बताता हूँ–दाल दो छटाँक, घी एक छटाँक, तरकारी गोश्त एक सेर!"

"मल्ला झूठ न बोल! जो सरकार 12 छटाँकी आटे को सोलह छटाँकी नहीं कर सकती, वह रोज़ का एक सेर सरकारी-गोश्त देगी लड़कों को! न रे नायबा, हमें न चला!"

"आगे सुनो, शराब-दारू एक पीपी एक हफ़्ते में!"

बुजुर्गों के माथे पर के तेवर भाँप नायब ने जोड़ा–"दूध के साथ दूध, कहवे के साथ कहवा। हफ़्ता-दस दिन में मीठी वनगी! मतलब यह बेबे कि अपने जवानों की चोग-चुगत माड़ी नहीं।"

नजीबे ने पूछ लिया–"क्यों जी, सुनने में आया है कि गोरा फ़ौजों को सरकार खूब बादाम-पिस्ते रगड़-रगड़ पिलाती है!"

"निरी अफ़वाहें! बादशाहो, अंग्रेजी पल्टन कोई काशीवाले ब्राह्मण-गुसाइँयों का कूंडी-डंडा रसाला तो नहीं जो दुनिया-जंग का काम छोड़कर ठँडियाइयाँ घुटती रहें।"

बड़ा हास्सा पड़ा।

"चलो जी, गोरों की ख़ुराक भी सुन लो। आपके दिल में खयाल तो न रहे–गोश्त-तरकारी पौन सेर, डबलरोटी पौन सेर, सब्ज़ी पौन सेर, चावल 4 छटाँक, शराब एक पीपी, चाय-चीनी-कहवा जैसे देसियों को वैसे उनको।"

तहसीलदार मंजी पर से उठकर खड़े हो गए–"तहसील, गुजरात, खारियाँ, फालियाँ की भरती पर लाट साहिब बड़े ख़ुश हैं। हाँ, आपके पिंड में अभी बीस-तीस लड़के ऐसे निकल आएँगे जो भरती के लिए पेश हो ही जाएँ तो अच्छा। हाज़रीन गब्बरोटों के नाम छिपाने की मुतलिक कोशिश न करें।"

खोजियों के टोटे ने उठकर खबर दी–"साहबजी, नौशहरेवाले सैयदों के लड़के कल घोड़ों पर आए हुए थे पिंड में!"

चौधरियों ने एक-दूसरे को सैनत मारी कि भरती अफ़सर ने ऐलान कर दिया–"सबको मालूम हो कि सरकार ने सैयदज़ादों को भरती न होने की छूट दे दी है।"

मीराँबक़्श बोले–"सैयद पाक़-साफ तो हुए ही, पर इनकी भरती न हुई तो सरकार को बड़ा कसारा हो जाएगा। सैयद कोई एक हैं क्या! हुसैनी, ज़ैदी, जिलादी, बग़दादी, जाफ़री!"

"सैयदों को रहने दो न! अपने इलाक़े में लड़ाकू जातों की कौन कमी है! जट्ट, गूजर, गक्खड़, टिवाणे, लबाणे, खोखर, राजपूत..."

"सबको मौक़े लग गए न अब बहादुरी दिखलाने के!"

पिंड के आठ-दस लड़के जो कोठों पर चढ़कर तमाशा देख रहे थे, फटाफट नीचे उतरे और भरतीवालों के सामने खड़े हो गए–"जनाबअली, हमारी नपाई हो जाए, हम भरती होना चाहते हैं।"

"चौधरी साहिब, इन्हें इनके वाल्दैन की इज़ाजत है न!"

"जी!"

"बुध को जलालपुर हाज़िर हों।"

नाम लिख दिए तो चौधरहट्टे ने अहलकारों से अर्ज़ की–"साहिब बहादुर, त्रिकालाँ उतरनेवाली है, कुछ दूध-लस्सी से मुँह तो गीला करते जाओ!"

सरकारी जत्था शाहजी की हवेली की ओर चल पड़ा।

रास्ते में माँएँ-दादियाँ रोक-रोककर पूछें–"साहिबा, मेरा नबिया महीना पहले भरती हुआ है। क्या अब तक जहाज़ चढ़ गया होगा?"

"पुत्तरा, सिकन्दर वड़ैच का नाम तो ज़रूर सुना होगा। उसकी नपाई-डाक्टरी गुजरात में हुई थी। जातक सौ-सैकड़ों में से एक है। पुज्ज के बहादुर। सरकार से कहना, कुछ दे-दिलाए लड़के को।"

नायब ने परचावा किया–"बेबे, हक़ूमत अपने फ़रज़न्दों पर बड़ी ख़ुश है!"

लाहबीबी ऐसे दबदबे से आई जैसे फ़ौजियों की माँ आ गई। टंकार से बोली–"हाक़मो, सारे मुरब्बे उल्टे बालोंवाले नहरियों को ही न लगा मारना। उनके पास पहले ही बहुतेरे। पुत्र-पोत्रे लाम पर हैं और हम दोनों सास-बहू आप ही खेती की वाही-गाही करती हैं। साहबा, माँएँ और सवानियाँ जिगरा न करें तो बताओ, अंग्रेज़ की फ़ौज कैसे सजती है! ज़िला लाट को कह देना हमारी तरफ़ से, दो पहले ही थे फ़ौज में, अब ख़ैरों से दो और छावनी चढ़ाया है।"

हवेली में मंजियाँ सरकारी रौब-रुआब से सज गईं। गर्म-गर्म दूध के कटोरे और साथ ख़स्ता, नानखताई और पीडी गोल मिठाई।

तहसीलदार ने खताई का टुकड़ा मुँह में डाला ही था कि मजलिस में हास्सा पड़ गया।

"बादशाहो, आधी अंगुली की खताई और उसका भी छोटा-सा टोटा! आज जो सरकार के तेवर हैं, उस मुताबिक़ तो सरकारी अहलकार बन्दों को कच्चा चबा जाएँ।"

जहाँदादजी गंडासिंह की ओर देखकर मुस्कराए–"साहब बहादुर, फ़ौजें अपनी दुश्मन की पीठ लगाकर गोल मिठाई ही खाएँगी। बाक़ी नानखताई तो हुई न आप जैसे बारीक़ अमले के लिए।"

कृपाराम भी अपनी आदत से बाज़ न आए, कुद्दक्का लगा ही लिया–"बादशाहो, इतना तो बताते जाओ कि आखिरी यह जंग छिड़ी तो क्यों छिड़ी?"

गंडासिंह छिड़ गए–"कृपाराम, यह भी क्या सवाल कर डाला! कोई टुकड़ा इलाका हड़पना होगा सरकार ने। नहीं तो जंग-लड़ाइयाँ कोई दोस्ताने बढ़ाने के लिए तो नहीं की जातीं!"

गुरुदित्तसिंह ने टींडा दिया–"आँख लगाई जमरूद के क़िले पर और फ़ौजों को छावनियों से निकलने का हुक़्म दे दिया। बस, एक रणजीतसिंही झटके ने इलाक़ा समेट लिया अपनी तरफ़।"

मुंशी इल्मदीन खीझ गए–"खालसाजी, कहाँ की कहाँ मिलाई, हिक़मत अपने को समझ में नहीं आई।"

"समझ में क्या आनी है! बात तो साफ़ है न! की चढ़ाई और इलाक़ा जीत लिया।"

"सवाल तो यह है कि अंग्रेज़ का क्या थुड़ गया जो जंग का ऐलान कर दिया! फ़ौजें वैसे भी तो कुछ-न-कुछ करती रहती हैं!"

"बात यह है बादशाहो, कि हक़ूमत को बीच-बीच में यह ठेसरे-मेसरे करने पड़ते हैं। आख़िर तोपख़ाने हक़ूमत ने मक्खियाँ मारने के लिए तो नहीं रखे हुए! किसी से आपने छेड़-छाड़ की, किसी ने आपसे करवाई। अपना वज़न भारी देखा तो भभकी दे दी। दाँव लग गया तो गिच्ची पकड़ ली।"

शाहजी ने फ़तेहअलीजी की हाँ-में-हाँ मिलाई–"बराबर चौधरी साहिब, हक़ूमत के ये ही दो ज़रूरी काम हुए–जहाँगीरी और जहाँदारी।"

"नायबजी, गिनती के हिसाब से भरती में कौन-से ज़िला-तहसील अव्वल चल रहे हैं?"

"बादशाहो, गिनती के हिसाब से इस वक़्त सारे हिन्दोस्तान से आगे और अव्वल सूबा पंजाब और पंजाब में सबसे आगे हमारे चार ज़िले–शाहपुर, गुजरात, जेहलम, रावलपिंडी।"

तहसीलदारजी ने अपना दबदबा क़ायम किया–"बात ऐसी है कि लड़ाई छिड़ने के वक़्त एक लाख पंजाबी अपनी फ़ौजों में भरती था। शाह साहिब, मतलब यह कि हर 28 जनों के पीछे एकजना फ़ौजी पंजाब में और डेढ़ सौ पीछे एकजना बाक़ी हिन्दोस्तान में।"

"हैयी शाबाश ए!"

"लो, और सुनो–गुजरात चार हज़ार, शाहपुर पाँच हज़ार, रावलपिंडी पन्द्रह हज़ार, जेहलम बारह हज़ार।"

कर्मइलाहीजी का जोश ज़रा ठंडा हो गया–"इस हिसाब से तो अपना ज़िला उन्नीस-इक्कीस ही हुआ।"

भरती अफ़सर ने बड़ी सयानफ़ जताई–"न चौधरीजी, औसत के हिसाब से अपने ज़िला गुजरात की तहसील ख़ारियाँ अव्वल नम्बर पर हैं।"

कुन्दन चिड़े ने पूछ लिया–"सुनने में आया है, मोहर की क़ीमत फिर गिरी है!"

"कोई नुक़्सवाली बात नहीं। सर्राफ़-मंडियों में तो यह ऊपर-हेठ होता ही रहता है।"

"यह न कहो बादशाहो, सरकारी बैंकों का दिवाला निकलनेवाला था जिस दिन, जंग का ऐलान हुआ है।"

तहसीलदार बोले–"हवा थी, उड़ गई। समझा दिया लोगों को कि आपकी मरज़ी के बिना आपका पैसा इस्तेमाल नहीं होगा।"

गंडासिंह यूँ ही ताव खा गए–"यह सरासर झूठ था। सरकार ने लाहोर गुजरावालियों हिन्दू धनाढों से कहा–रातों-रात बैंकों में पैसा डालो ताकि दिन का भुगतान चालू रहे। मेरे साले का साला पंजाब नेशनल में रोकड़ पर लगा हुआ है। दस जमातें की हुई हैं उसने।"

तहसीलदार की त्योड़ियाँ चढ़ गईं–"ज़रा नाम तो बताओ उस लड़के का!"

गंडासिंह बीस साल छोटा हो गया। फुरती से कहा–"नाम जानकर क्या करोगे! वह तो कब का भरती हो चुका!"

सरकारी मंडली को यह तेवर पसन्द न आया।

"खालसाजी, कहीं ग़दरियों-इन्क़लाबियों से तो मेल-जोल नहीं।"

"न जी, पर एक बात तो बताओ! सरकार ने कनाडा की राहदारियाँ क्यों बन्द कर दीं? अपने बन्दों की ऐसी खज्जलख़्वारी की, भला क्यों! यह जुल्मत नहीं चलनी–सरकार इतना जान रखे।"

तहसीलदार बड़ा ज़िच्च हुआ–"शाह साहिब, यह क्या माजरा है! कहीं ग़लत लोगों से रब्तो-ज़ब्त तो नहीं किया हुआ?"

"न जनाब, आप बिलकुल बेफ़िक्र हों। फ़ौजियों का पुराना टब्बर है। बड़ा लड़का फ़ौज में था–अफ्रीका में काम आ गया। छोटा भी लाम से पहले का भरती है। ख़ुद आप गंडासिंह फ़ौज के पेंशनी हैं।"

"अपनी पुरानी पल्टन 33 पंजाब है।"

"वाह!" तहसीलदार ने आगे बढ़ हाथ मिलाया–"फ़ौजी पेंशनियों की फ़ेहरिस्त मेरी नज़र से गुज़री ज़रूर है..."

"बेशक सही करो बादशाहो, नाम ज़रूर होगा–नायक गंडासिंह नम्बर 6685!"

बाबो मिरासिन ऊपर से उतर हवेली के आगे आन खड़ी हुई। भरतीवालों की

भीड़ देख नई ब्याही की तरह मुँह पर घूँघटा खींच लिया और टल्लीदार तालियाँ बजा दीं:

हुक़्म हुआ सरकारों
कि पुत्रवाली कम्म न करे
हुक़्म हुआ सरकारों
कि धी वाली छोले दले।

तहसीलदार को यह तुक्कड़ बड़ा पसन्द आया। आँख से नायब को इशारा किया तो उसने जेब से भनकड़ निकाल बाबो को दिया।

बाबो ने ख़ुश होकर फ़तेह बुला दी:

ओ मुच्छड़ बादशाह तेरी फ़तेह
ओ रोडे बादशाह तेरी फ़तेह
ओ मलका मोटड़ी तेरी फ़तेह
ओ जंगी लाटड़े तेरी फ़तेह।

"लो सुनो सहेलियो, लाम-घोड़ी:

शाही हुक़्म हुआ
जंग का बिगुल बजा
बाँका बसरे गया
जीत आ रण का
बन के, तू सिरमौर जी
तेरी छाती सजे
तेरे काँधे सजें
तेरे माथे पे
सनदों का है शोर जी।
माँ की झोली भरे
घर की जिवियाँ सजें
मिल गए हैं मुरब्बे
पड़ा शोर जी।

"जियो मेरी बच्ची, जियो! मैं सदक़े जाऊँ–एक बार और गा। कलेजे ठंड पड़ेगी।"

"धिए राबयाँ, ऐसी सुखाँ-लद्दी लाम-घोड़ी जोड़ दी!"

रेशमा ने राबयाँ को कन्धे से घेर लिया–"माहिया, वह दूसरी सुना जो जगतार की बहन को सुनाई थी।"

चाची महरी ने रोक दिया–"न री, जी भर-भर आता है उसे सुनकर।"

सजद बीबी ने सिर हिलाया–"चाची, सुनाने दे। अपने जिगर के टुकड़ों को याद करने दे। माँओं-बहनों की आँखों की फुहार जातकों को ठंडक पहुँचाएगी।"

शीरीं बोली–"अरी, वही हीरे-नगीनेवाली:

अंबड़ी के लाड़ले
बाबुल के लालड़े
बहनों के बाँकड़े
भाइयों के साँझड़े
मिट्ठड़ी के माहिया

ओ तेरे माथे पे
जीतों के सेहरे बँधें
मोती हीरे नगीनों से
ताज़े लल्ला तेरे सेहरे गुँथें
तेरे क़ुनबे बढ़ें।
तेरे बच्चड़ों के बच्चड़ों के बच्चड़ों तलक
तेरी बेलें बढ़ें
तेरी जिवियाँ खिलें
तेरी फ़सलें पकें
तेरे कोठे भरें।"

माँएँ, बहनें, घरवालियाँ और उदास पड़ी कुड़ियों की टोली रब्ब का नाम ले-ले अपने आँचलों से अँखियाँ पोंछने लगीं।

सजद बीबी ने सिर पर प्यार फेरा–"पीर फ़कीरों की ख़ैर धिए, तेरी ग़जल-घोड़ियाँ सुनती रहें और पुत्र-प्यारयों की उडीकें सहल करती रहें!"

पीढ़ी पर बैठी शाहनी ने हुसैना से पूछा–"माँ सदक़े, निक्के का रुक्का-पत्र तो आया है न!"

"आया है शाहनी, देखो अब चिट्ठी-रसैन कब पहुँचता है!"

मंजी पर बैठी चाची महरी चावलों की कणियाँ चुनती थी, बोली–"वारी बलिहारी हरकारे, पर री, जो पार समुद्रों से पुत्रों की सुख-सांद लाता है!"

रसूली की माँ बड़े हुंकार से बोली–"लाट ने हुक़्म निकाला है कि ज़िमींदारों के पुत्तर अपनी पलटनों से ही जिवियों के मामले-सरकारे जमा करवा सकते हैं।"

"अरी बहना, अंग्रेज़ हाक़मों की अक़्ल-बुद्ध माड़ी नहीं। शुरली की माँ, मैंने कहा तेरा काका तो पुलिस में भरती है न!"

"फ़ौज ही समझो। सरकार ने दो-चार टुकड़ियाँ पुलिस की भी लाम में भेजी हैं। उसी में गया है ख़ैरों से शुरली।"

फ़कीरे की माँ करभरी ने मुंडी हिलाई–"हैं री, गोला-बारूद से लड़ने को लाम-लश्कर बहुतेरे, पर दुश्मन-वैरी को जंग के मैदान में गालियाँ कौन दे! अपनी पुलिस पंजाब की तो गालियाँ देने में बड़ी अव्वल और आला हुई न!"

"सच कहती हो बेबे, लड़ाइयाँ-जंग सिर्फ़ नेज़े-बन्दूक़ों से ही थोड़े लड़ी जाती हैं। जब तक वैरी-दुश्मन को मन-भर पक्की गालियाँ न पड़ें, ग़र्कज़ाने वैरी का कैसे तो कालजा फुँके और कैसे ख़ून जले!"

लड़कियाँ बेबे करभरी को देख-देख हँसें।

चाची महरी ने पोले मुँह कहा–"मैंने कहा री, गालियों की अपनी ताक़त-सत्या जो पत्थर को फाड़ दे। बेबे करभरी के पास तो गालियों की पोटली नहीं, पंड है पंड। भेजना तो सरकार को तुम्हें चाहिए लाम पर। उधर से चलें बारूद-गोले और इधर से सेर-सेर पक्की गाली। फिर देख तमाशा वैरी-दुश्मन का!"

बेबे करभरी हँसने लगी–"माहिया, बेशक़ कर लो मशकरी मुझे, पर री, गालियों की जितनी मार बुरी, उतना गालियों का प्यार भला। कलेजा हो फुँकता तो चार-छः गालियाँ निकाल फैंक दो, आप चैन पड़ जाए। पीर साहिब दे दें बन्दे को दो-चार गालियाँ तो नदीदों के भाग जाग पड़े!"

"यह तो सच कहती हो बेबे! चोट होती है गलियों की सीधे मर्म-टठान।"

"फ़ातिमा री, नादर का मनीऑर्डर तो आया न?"

"खुदावन्दा क़रीम की नज़र रहे सीधी–अब तक ख़रों से दो आ चुके। चाची, ज़ल्दी थी उसे पर शेख़ सद्दों पर सलाम करके चिराग़ जलाकर गया है जातक! गड्डी पर चढ़ने से पहले गुजरात के वली शाहदौला पीर के बड़े दरबार में भी सज़दा करके गया है!"

"साईं ख़ैर करे!"

लस्सी का बर्तन उठाए लाहबीबी आन खड़ी हुई। फ़ौजी पुत्रोंवाली टश्श। बोली–"फ़ौजी रंगरूट को पन्दरह की तो सालाना तरक्की और पन्दरह का भत्ता मैदाने जंग का। धिए, भला कितने का रुक्का था गौहर का!"

"बेबे, दस कम सौ। बच्चड़ों ने कुछ आप भी तो खाना-पीना हुआ! रखते ही होंगे न पाँच-दस तो अपने पास भी!"

"खाना-पीना चंगा देती है सरकार। हर जवान को दूध-आंडड़े-फल लगे हुए हैं। रोटी-सालन भी चंगा।"

सजद बीबी को यक़ीन न आया–"बेबे, लश्करों में कौन इतना ख़रचा करने लगा!"

"न री न, सरकार अहसान थोड़े करती है। जंग की खातिर आप सूरमाओं को पालती है! और तो और, तम्बाकू के सूटे और पीने को दारू के घुट्ट भी।"

"अरी बहना, मुफ्त की मिलेगी तो अपने पुत्र भी सिंह-लबाणों की तरह पी-पी पड़े रहेंगे।"

"न री, फ़ौज में जेलों से ज़्यादा मुशक्क़त। टब्बर लड़ाई-जंग में घूँट भर भी लेंगे तो क्या!"

नज़ाम बीबी पौड़ियाँ चढ़ आई–"कोई दवा-दारू पूछने आई हूँ शाहनी! सैफ़ू के निक्के का पेट चला गया है। मैंने कहा, लालीशाह के लिए तुमने ज़रूर कोई घुट्टी-घाट्टी रखी होगी!"

शाहनी ने उठकर मिट्टी के कूजे में रियोंद, हरड़, ज़हरमोहरा, माजू, कचूर, निरमसी डाल हत्थ पकड़ाए–"रगड़ के दो-एक बार दो। बराबर आराम आएगा।"

"शारदूले की भाभी, काका अपना तो मेरठ छावनी पहुँचा हुआ है न!"

"हाँ शाहनी, अभी तक तो वहीं है। कब हुक़्म आ जाए आगे जाने का!"

सजद बीबी बोली–"सुनते हैं, पल्टन में ऊँटों को बीमारी पड़ गई है गल्लघोंटू की!"

"हैं री, सरकार को क्या कमी! घोड़े नहीं तो ऊँट, ऊँट नहीं तो डाचियाँ, डाचियाँ नहीं तो टट्टू!"

"कल बूटे का भाइया गया था न छावनी पुत्तर को छोड़ने, खबर लाया है कि लाट पंजाब ने दरबार में ऐलान किया है कि सरकार जवानों की बहादुरी के लिए दस हज़ार मुरब्बा गज ज़मीन इनाम में देगी।"

"फ़ौजों की पूछ तो चंगी।" मुरब्बों के नाम से ख़ुश हो ज़नानियाँ एकाएक रब्ब का ध्यान करने लगीं।

"रब्ब मेहर करे! पुत्तर राजी-बाजी घरों को लौटें। बहना, फिर मुरब्बों की क्या कमी! पुत्तर आया कि जागीर मिली, एक ही बात।"

जुम्मन की माँ का ख़याल सबके दिलों में खलबली मचाने लगा। यह शेर-जवान जुम्मन अपना और महीनों में पार हो गया। मुक़द्दर अपना-अपना। जहाज़ से उतरा पीछे और गोली पहले तैयार!

अपने-अपने दूध के लिए छातियाँ उमड़ने लगीं। बूटे की माँ उठ खड़ी हुई–"आज लिपाई में ऐसी रुँझी कि माथा भी न टेकने पहुँची। धर्मशाला का नया रागी बड़ा सोहणा कीर्तन करता है। घड़ी-दो घड़ी सुन लेती हूँ तो चित्त ठिकाने रहता है।"

चाची बोली–"सबके पुत्तर-टाबर लाम-लशकरों में। माँओं की आन्द्रें। दिल कैसे लगे!"

चाची ऊँघने लगी। हाथ का अटेरन हाथ में ही पड़ा रहा। छोटी शाहनी जिठानी के पास ढुक आई। हौले से कहा–"शुक्र मना जेठी, जो बच्चड़े हमारे भी कन्धों तक पहुँच जाते अब तक तो क्या लाम पर जाने से रुकते! मैं तो, री, रोज़ मणके फेरती हूँ–जब तक बच्चे बड़ो हों, यह जंग-जुल्मी मुक-मुका जाए।"

"सच्च कहती हो बिन्द्रादई, अपने निक्के-न्याने गए होते लड़ाई पर तो, री, मैं न जीती। अरी, कल काशीराम भाई को बता रहा था कि रुपोचक की हाको ने पहले दो पुत्तर भरती कराए। एक के ज़ख्मी होने की ख़बर आई तो तीसरा भी उठा के लाम में भेज दिया। कहते हैं, लाट पंजाब ने ख़ुश होकर हाको को रुक्का भेजा है।"

"हाको जैसी और बहुतेरी। सजद बीबी कल बता गई थी कि चकवालवाली शरीफ़न की बड़ी धूम मची है। हैं री, जट्टी ने पाँचों पुत्र भरती करवा दिए। कोई पूछे, मूढ़मते, एक पुत्र की छूट तो सरकार भी देती है। आगे बढ़-बढ़ आप जाओ छावनियों की ओर तो फिरंगी क्यों दरेग करने लगा!"

चाची को ऊँघते देख राबयाँ ने सूत-अटेरन उठा पच्छी में डाल दिए। शाहनी बोली–"राबयाँ, ज़रा जाली को तो देख। कहीं तबेले तो नहीं पहुँचा हुआ। ख़बरे लड़के को क्या संस्कार-घोड़ों के आसपास हो तो बड़ा ख़ुश।"

"पिछले जन्म सौदागर होगा घोड़ों का!"

राबयाँ पैड़ियों से नीचे उतर गई तो देवरानी से कहा–"जेठ तुम्हारा लड़की के सवैए-क़ाफ़िए ऐसे मग्न होकर सुनता है ज्यों लड़की के मुँह से फूल झरते हों!"

"जिठानी, यही हाल तुम्हारे देवर का! लड़की मरजानी में रोशनाई भी तो बहुत। जो पोथी उठाती है, पढ़ लेती है। लाली से ही सुन, ऐसी-ऐसी कहानियाँ सुनाता-कहता है! यही सिरमुन्नी सिखाती है उसे।"

जिठानी के माथे पर चिन्ता कीर झूँझल देखी तो सहजे से कहा–"भरम न कर। इन अराइयों को तो रब्ब की देन। कोमल कूली साग-सब्जी उगाते-उगाते अन्दर-बाहर भी हरियाला उग आता है। लड़कियाँ तो और भी छन्द-टप्पे जोड़ती रहती हैं, पर इसकी तो कुछ बात ही अनोखी। जो चाहे जोड़ ले और गले की सुच्ची डूँग ऐसी कि बन्दा पानियों में तैरने लगे।"

"बिन्द्रादइए, देवर से कहना, इसका कहीं साक-सम्बम्ध कराने की करे। अब छोटी तो नहीं न!"

बैठे-बिठाए मिट्ठी के संजोग ख़ुल गए। एक त्रिकालाँ मिट्ठी की मौसेरी बहन गुणकौराँ घोड़े से उतरी। सबने रामसत की। बच्चों के सिरों पर प्यार फेरा।

"मौसी, सब ख़ैर सुख है न!"

"हाँ, धिए! गुणकौराँ, न चिट्ठी, न रुक्का-पत्री। आज कैसे इधर मुँह कर लिया? सास-ससुर तो ठीक? जवाँई राजा हमारा कैसा? घोड़ी के साथ बन्दा आया है न?"

"मौसी, ख़ैर मेहर है। घरवालों से बिना पूछे नहीं आई। ज़रा साँस लेने दे। फिर बताती हूँ सारी बात।"

मिट्ठी की माँ ने अपनी भनेवी को मंजी पर बिठाया–"मैं सदके गई। ला री मिट्ठिये, बहनू के लिए लस्सी-पानी ला।"

"मौसी, ज़रा ठहर। मेरी जिठानी-सास की नसीहत है कि जब तक बात न कर लूँ तुम सबसे, मुँह जूठा न करूँ!"

"हाय री, सुखी सांदी यह क्या!"

गुणकौराँ मंजी पर बैठ अपनी गठरी-पोटली फरोलने लगी। लाल गुत्थली से गरी-छुहारा निकाला–"ले मौसी, ज़रा करना झोली।"

"बुझारतें न बुझा, बता तो सही।"

गुणकौराँ हँस-हँस बोली–"बेबे को भी बुला लो। बेबेजी, ज़रा आना। आप ही से कुछ कहना-सुनना है।"

गुणकौराँ ने उठकर बेबे से रामसत की तो बेबे ने आसीसें बरसा दीं–"गुणकौराँ, राजी हो न! सास-ससुर राजी! मेरा जवाँई राजा राजी! आज कैसे पहुँची मेरी धी इस पिंड?"

"बेबे, बधाइयाँ! मैं आई हूँ मिट्ठी का रिश्ता लेकर।"

"रक्ख साईं की।"

वन्तो चमक उठी–"यह क्या गुणकौराँ, न पहले बताया, न पूछा-गिछा!"

"मौसी, यह सगुणों के काम तुरत-फुरत। जिठानी मेरी ने बैठे-बैठे बात छेड़ी। जेठ जी ने सिर हिला हामी भरी और जितने में मैंने थाली मुकाई, जेठ राजे ने घोड़ी और बन्दा घर भेज दिया। मौसी, सगुण-शास्त्र के काम में देर कैसी!"

वन्तों ने हाथ से रोका–"ठहर री गुणकौराँ, बता तो सही, रिश्ता लाई किसका है? अपने देवर का?"

"न, जेठ के पुत्र का!"

"हैं री धिए, एक ही पुत्र उसका। गंजी नहाएगी क्या और धोएगी क्या! घर तो भरा हुआ हो। गुणकौराँ, तेरा टब्बर तो थुड़वाला है।"

"बेबे, यह बात फेंकनेवाली नहीं–लड़का भाँवे एक है पर सोहणा सालड़ा। ऊँचा तगड़ा। देख के भूख उतरे। फिर दस जमातें पढ़ा हुआ। मौसी, मासड़जी को बुला ले। जेठजी का हुक़्म है कि सगुण मिले तो मुँह जूठा करूँ नहीं तो..."

"ठहरी री, अभी 'हाँ' 'न' कर। मेरे पुत्र को तो आने दे।"

दादी को अपनी पौत्री पर भर-भर लाड़ आया–"गुणकौराँ, लड़की भी देख। सारा काम करती-धरती है। बाक़ी, री, शक़्ल-सूरत की मैं अपने मुँह क्या कहूँ! जन्म देते हैं माँ-बाप और रूप देता है रब्ब!"

"बेबे, मेरी बहन है मिट्ठी। मेरे ससुरालवालों ने भी क़िस्म ही देखी न! जिठानी मेरी बोली कि गुणकौराँ, तुम्हारे टब्बर की मुंड-जड़ बड़ी सोहणी। धी मिल जाए तुम्हारी मौसी की तो इस घर सोहणी रौनकें चल जाएँ।"

बेबे हँसने लगी–"बुरा न मानना गुणकौराँ, टब्बर तुम्हारा बड़ा लड़ाका। अरी,

उनसे निभ जाएगी।"

"बेबे, दिल के माड़े नहीं। बड़बोले हैं। दिमाग़ में आ गई तो तुरत-फुरत। देखो, थाली अभी मेरे हाथ और घोड़ी भेज दी।"

मिट्ठी के भाइए जिऊनदास ने सुना तो झटापट शाहों के यहाँ जा पहुँचा। शाहजी से सलाह-सूत्र किया और घर आ बधाई बुला दी–"गुणकौराँ, बधाई हो!"

"बधाइयाँ! बधाइयाँ!"

मिट्ठी पसार में जा लुकी। बेबे ने सबको गुड़ मुँह लगवाया। अन्दर जा सालू निकाला, उस पर रुपए रखे और गुणकौराँ की झोली में डाल दिए।

"लो धिए, रब्ब ने मेल मिलाया। बैठे-बिठाए संजोग जुड़ गए!"

अगली सुबह आसपास की आ जुड़ीं। सुहाग छू लिए। गुणकौराँ ने मिट्ठी का माथा चूमा। लाड़ से हथेली पर थूका। बेबे और वन्ती से रामसत्त की।

"वन्ती को हौले से कहा–"जो रिश्ते की 'हाँ' न होती तो ससुराल में मेरी शामत थी! मेरी रब्ब ने रख ली!"

मिट्ठी के भाइयों ने कूजों की पोटली में सगुण के रुपए रखे और गुणकौराँ को पकड़ाकर कहा–"हम उनके किस तुल! दौलत-माया के लशकारे उनके बहुत, इज़्ज़त-मान की उनके घर कोई कमी नहीं। हाथ जोड़कर कहना समधियों से, इस दिशा मुँह करके उन्होंने हमातड़-साथों को उभार लिया।"

गुणकौराँ ने मिट्ठी को बाँह में भर ठुड्डी पकड़ी–"मासडजी, ऐसी रुपली-सोहणी धिएँ घर में चाहे दरजनों में हों। जहाँ पहुँचें, चिराग़ जल उठें।"

घोड़े पर चढ़ सबको हाथ जोड़े तो हँसकर कहा– "ब्याह की तैयारी शुरू कर लो। मेरे घरवाले ब्याह जल्दी माँगेंगे।"

"इतनी जल्दी क्या! लड़की का ब्याह सौ ढक-साल है!"

"बेबे, माँओं के सिर से जितनी जल्दी भार उतरे, उतना चंगा। लड़के को ख़ैरों से फ़ौज की परची मिल गई है।"

घरवालों को भागदौड़ पड़ गई। त्रियोरों के दुपट्टों पर किनारी टँकने लगी। मिट्ठी की दादी को फुल्कारी की चिन्ता लग गई।

"मैंने कहा वन्तिये, पल्लू के लहरिए बाक़ी हैं और ख़ैर सदके, एक-चौथाई कौड़ियाँ। चरखा थोड़े दिन रहने देती हूँ, भर लूँगी जल्दी-जल्दी!"

मिट्ठी को सहेलियाँ घेर बैठीं।

"बता री बता, कुछ तो बता!"

"क्या बताऊँ–मुझे कुछ पता ही नहीं!"

"छोड़ री, हमें न चरा। तुम्हारी मौसी की धी लगती है। भला बता न गई होगी!"

"बेबे, नाम तो बता दो न लड़के का। हम सिट्ठ जोड़ेंगी ऐसी कि शहरिए मुँह लुका लेंगे!"

"अरी, नाम लड़के का बड़ा सोहणा मिट्ठा–महताबचन्द।"

चन्नी ने गलबाँही दी–"मिट्ठिये, ससुराल का नाम तेरा महताबकौर पक्का। बेबे, भला ससुराल इसके कहाँ?"

"लखनवालवाले दुग्गलों के घर।"

"लो री मिट्ठिये, तुम तो शहरन बन जाओगी। फिर भला कहाँ पहचानोगी अपनी सखी-सहेलियों को!"

मिट्ठी की मँगनी-कुड़माई की बधाइयाँ-मुबारक़ें अभी ताज़ी ही थीं कि टेवा मिला और ब्याह सुध गया। घर में सुहागों के सगुणी सुर गूँजने लगे।

वन्ती आँखें भर-भर लाए तो मिट्ठी की दादी समझाए–"मैंने कहा वन्तिये, धियाँ पेट में समाती हैं पर तौन में नहीं। इनका अन्न-जल तो निखड़ना ही हुआ!"

घर में कड़ाही चढ़ गई। मेल आना शुरू हो गया।

मिट्ठी माइयाँ पड़ी। मैले-कुचैले कपड़ों में कोई सूरत-मूरत उघड़-उघड़ पड़े।

सगुण शास्त्र में दादी बड़ी पक्की–"आओ री आओ सात सुहागनो, आकर लड़की को उबटन-वटना मलो! बहन-भरजाई, मौसी-फूफी, चाची-ताई–एक ओर आ जाओ।"

बरकती हँस-हँस के बोली–"मैं आ जाऊँ?"

शाहनी चाची साँस रोके खड़ी रहीं–हैं री, इस चंचला ने यह क्या पूछ लिया, कि मिट्ठी की दादी बोली–"आ री, आ, तुमसे बड़ी सुहागन कौन! तारेशाह का पुत्र तेरी गोद! आ।"

ज़नानियाँ सुहाग गा-गा मिट्ठा-मिट्ठा रोने लगीं:

आले दवाले मेरी गुड्डियाँ
मैंनू नहीं खेलन दा चाव रे
मेरी सखी सहेली बाबुल बिछुड़ी
मेरे सासरे घर चाव रे
माँ रोती का आँचल भिज गया
मेरा बाप रोए दरिया रे
मेरा वीर रोवे सारा जग रोए
मेरी भाभियाँ दिल चाव रे।

सहेलियाँ भर-भर अँखियाँ रोएँ। शानो ने चन्नी को गलबाँहीं दी–"अरी अरमान न लगा, तू भी चली जाएगी।" मिट्ठी से पूछा–"डोडो को घोड़ी भेजी है न? आ जाए तो चंगा, तेरी पक्की सहेली है!"

बड़ी सयानियों की भीड़ से अलग मिट्ठी सहेलियों के संग पसार में आ बैठी।

मिट्ठी चन्नी का हाथ पकड़ हौले से बोली–"वह तो दस जमातें पढ़े हुए हैं और मैं निरी-कोरी–धर्मसाल में पैंतीस अक्खरी तक पहुँची थी, फिर भूल-भाल गई। हाय री, मेरे चित्त में बड़ी चिन्ता है!"

"बिसर गई बातें। यह तो वही बात हुई। दरवाज़े आई जंज, विंधो कुड़ी के कन्न! क्यों री राबयाँ, तुम इसे तुरत-फुरत कुछ सिखा दो।"

राबयाँ हँसने लगी–"मौलवीजी और पांधाजी रात-की-रात दोनों लगे रहें पढ़ाने पर तो भी मुश्किल है।"

"छोड़ री छोड़, यहाँ आओगी तो राबयाँ से चिट्ठी-पत्री लिखवा लिया करना।"

राबयाँ बड़ी पढ़ी-गुढ़ी। दस जमातिए को तो यह चला ले। अरी सह हरफ़ियों में ही रात गुज़र जाए।"

राबयाँ कुछ न बोली। बस देखती रही।

रेशमा ने झुझका मारा–"क्यों री राबी, किन सोचों में! तेरी भी हो जाएगी। सहारा रख! मेरे से पूछ तो राबयाँ कुड़ी तो ऐसा घर ढूँढ़ेगी जो शाहों की हवेली-सा बड़ा हो। ख़ुला हो और, री, कह दूँ इसका घरवाला जना भी ऐसा ज्यों..." रेशमा बीच में ही थिड़क गई।

राबयाँ ने हाथ बढ़ा रेशमा के मुँह पर रख दिया।

रेशमाँ हँसते-हँसते रुक गई–"क्यों री, क्यों?"

"मरी का मुँह देखो जो आगे बात करो!"

राबयाँ उठ के जाने लगी तो रेशमा बोली– "सहेली, मैंने ऐसा क्या कह दिया जो बुरा मान गई!"

मिट्ठी बोली–"सौंह चुका गई है तो अब कुछ न कह।"

"शेरे के भाई से मँगनी होने लगी थी इसकी, ख़बरे क्यों रह गई। दोनों बहनें देवरानी-जिठानी बन लड़तीं।"

मिट्ठी को किन्हीं ख़यालों में खोए देखा तो चन्नी बोली–"तेरा तो अब हो गया न काम पक्का। तुम्हें दूसरों की क्या सोच!"

मिट्ठी उदास हो अँखियाँ भर लाई–"सुन री, मेरी एक बात रख लेगी न अपने दिल में? सौंह खा मेरी!"

"खाई सौंह। कह अब।"

"सहेलिए, शाहनी के घर आए थे न जम्मूवाले..."

"वही री वही, दोनों भाई। चल बोल, उनका क्या?"

"दोनों में से छोटा था न जो..."

"हाँ मिट्ठिये, हाँ। अब कह तो..."

"क्या कहूँ!"

मिट्ठी ने हाथों में मुँह छिपा लिया।

"वह मेरे दिल में लुका हुआ है। जाती बेर चुपके से रुमाल दे गया!"

"हाय री, मैं मर जाऊँ! मिट्ठिये, इतनी देर मुझसे छिपाए रखा!"

चन्नी आप उन डोगरों पर डुल पड़ी थी। सोच-सोचकर बोली–"सहेलिए, आज पीछे नाम न लेना। कहीं भी छिपाए रखेगी दिल में तो वह जान जाएगा। मरदों के पास ऐसे जन्त्र-मन्त्र बहुतेरे। मरगए हाथ लगाते ही बूझ लेते हैं।"

शानो पास आ ढुकी–"ज़रूर तुम्हें हरबंसो ने बताया होगा।"

चन्नी शरारतों पर उतर आई–"मल्ला तू तो अब हो गई किसी और की। एक काम कर। उस हुस्न-कमाल की मूरत अपने दिल से निकाल मुझे रखनी दे जा। जब-जब फेरा डालने आओगी तो मैं तुम्हें निकालकर दिखा दिया करूँगी। हुआ क़ौल-क़रार!"

मिट्ठी के ब्याह का साहा ऐसा कि मेंह कहे, आज ही बरसना है।

चूड़ा चढ़ाने को बैठे-बैठे आधा दिन बीत गया। दुग्गलों के नाई-पुरोहित छुहारा लेकर न पहुँचे। हौली-हौली ख़ुसपुस होने लगी–समधी किसी बात का बुरा तो नहीं मान गए!

बरसते पानी में भीगते-भीगते समधियों के पुरोहितजी आन पहुँचे तो घरवालों की जान में जान आई। मामियाँ-चाचियाँ बधाइयाँ देने लगीं–"वन्तो, बधाइयाँ, छुहारा आन पहुँचा! अब जंज की चढ़ाई पक्की।"

कुड़मों के नाई-पुरोहित की ख़ातिरें होने लगीं। पूरी-कड़ाह, खीर-खोया। इनके सब लाज़िमे ज़रूरी।

साहा ऐसा कि बराबर दो दिन से धिम्मी झड़ी लग गई। बारातियों की शामत आ

गई। कच्ची राहों पर तिलकन। चोह घप्प में पानी। टाँगें राह में छूट गए। घोड़ों पर बारात पहुँची पिंड तो हर बाराती गीला गुडुच्च!

सयानो ने ज़नानियों को हिदायत दे दी कि बारात डाडी मुश्क़िलों से पहुँची है। खबरदार, पेशकारे से पहले कोई सिठनियाँ न दे।

सारा पिंड मिट्ठी की बारात की हिफ़ाजत-ख़िदमत में लग गया।

जंजघर में बिछी मंजियों पर बिछाइयाँ बिछ गईं। एक दालान में जांजियों के कपड़े सुखाने को आग सुलगने लगी।

बादाम-पिस्तेवाला कहवा वरतने लगा तो छिपे-दबे लड़के के यार मिट्ठी के भाइयों से पूछने लगे–"क्यों जी, इतने मींह-पानी के बाद कहवे पर ही परचावा!"

बारात के लिए हुक्के भर दिए गए। मंजियों पर बाराती ऐसे पसरे ज्यों कोई शाही डेरा हो! कोई पैर दबवाए। कोई मुक्कियाँ मरवाए। कोई नाइयों से सिर की चम्पी करवाए।

हलवाइयों के चूल्हों-सेकों को ज़रा ठंडा देख शाहजी ने मिरास बुला दी। मौलू को इशारे से कहा–"वित्त में रहना। बारात बड़ी तंग हो के आई है!"

मौलू ने डफली बजाई:

"सुनो ओ लोको
राजों की चढ़तलें
जिऊन शाह के घर
खड़केदार
धड़ल्लेदार
कुल क़बीला दुग्गलों का
शाह रामचन्द
शाह किशनचन्द
शाह बिशनचन्द
शाह करमचन्द
शाह धरमचन्द
शाह दिवानचन्द
शाह ध्यानचन्द
शाह महताबचन्द
सजा के लाए बारात
दो सौ घोड़ों की
अपना माडा-सा पिंड
कैसे करे ख़ातिरें शाही पुरौहनों की।

"इनके नाम ऊँचे। इनके काम ऊँचे। इनकी पग्ग सोहणी। इनकी टश्श सोहणी। नक्क तीखा। रंग गोरा। अक़्ल तेज़। ज़बान तीखी। गुथली रीती..."

"ओए मिरासिया, ज़बान सँभाल के!"

"जी, ग़लती माफ़। भुलेक्खे से दूसरे का जिक्र हो गया। पहले भी एक चढ़तल हुई थी बारात की। थे वे आप ही के शरीक़ दुग्गल। पर क़सम है, मिरास को एक धेला भी दिया हो!"

"भला कहाँ के थे दुग्गल?"

"यही, आपके शरीक़ हाफ़जाबादवाले।"

लड़के का चाचा मचने लगा–"दो जी दो, इसे दो-चार टके दो। इसका दिल ठंडा हो।"

मिरास ने जय बुला दी:

"दुग्गलों के बाग़ सावे
ऊँचे दरबारवाले
लो सुनो लोको
नीलकोट
कच्चकोट
वसन्तकोट
शाहकोट
जालीवाहन
राजघाट
रंगीलपुर

"जोरकोट पार करके आन पहुँचे लखनवाल खालसा वक़्तों में। आकर सँभाली दिवानी महाराज की। अक़्लमन्दी-दानिशमन्दी से जागीरें लग गईं!"

तारीफ़ सुन बारात रौ में आ गई! लड़के के दादा साहिब ने साफ़े पर पाँच टके रखकर फरमाया–"दिल खुश किया है। इनाम बनता है।"

जवान मिरासी के इर्द-ग़िर्द हो गए–"कोई मज़ेदार क़िस्सा-स्वाँग हो जाए।"

"जो हुक़्म बादशाहो!"

"शहंशाहो, इस ख़ादिम को अम्लों में अम्ल अफ़ीम का। हुआ यह कि बेध्यान होकर कुछ ज़्यादा खा गया और जी, बिना घोड़े आसमानी उड़ने लगा। न पता लगे ज़िन्दा हूँ, न पता लगे नहीं ज़िन्दा हूँ! अपने मस्त था कि जानी दरवेश ने आवाज़ मार दी–'ओ मौलू मिरासिया, मुझे राजा इन्द्र ने इन्द्रपुरी के नज़ारों-अखाड़ों के दावत-जश्न पर बुलाया है। देखने हों जल्वे इन्द्र-सभा के तो मेरे साथ तैयार हो जाओ।' बादशाहो, मिरासी की तयारी क्या! गला-सुर अपना साथ, चल पड़े दरवेश के पीछे-पीछे।

"चलते-चलते, चलते-चलते, चलते पहुँच गए टिल्ला गोरखनाथ।

"किसी ने आवाज़ मारी–'जानी दरवेश, किधर की तैयारियाँ हैं?'

"मैंने दरवेश से पूछा–'किसकी आवाज़ है?'

"'राजा भरथरी। महाराज, ज़रा इन्द्रसभा तक जा रहे हैं। कोई सन्देसा देना हो इन्द्र महाराज के लिए तो दे छोड़ो।'

"न...न...न...मेरा नाम न लेना। इन्द्र मेरे पीछे अप्सराएँ लगा देगा तो कहाँ छिपता फिरूँगा!'

"'जैसी आपकी इच्छा। वैसे चार-छ: महीने के लिए कोई आ भी निकलती तो राजन, हर्ज़ कोई नहीं था। इस बुड्ढे वेले आपको रौनक़ रहती।'

"'न ओ न, अब ऐसा काम नहीं। यहाँ कौन-सी जान पड़ी हुई है! बेकार फ़ज़ीहत होगी।'

"दरवेश बोला–'महाराज, आपकी इच्छा और आपकी सामर्थ, न दें इज़ाजत तो अपने को क्या लेना-देना!"

"उड़ते-उड़ते, उड़ते पहुँच गए हम दोनों कोट-कमालिया। नीचे देखा घोड़ों का

दरिया। घोड़े ही घोड़े। घोड़े, घोड़े, मुझे लालच आ गया। दरवेश के कान में कहा–'एक-एक घोड़ा ले लेते हैं। ज़रा रौब-दाब से पहुँचेंगे इन्द्रपुरी।' इतने में शाह सिकन्दर ने आवाज़ मार दी–'ख़बरदार, मेरे घोड़ों पर नीयत न रखना! मेरी फ़ौजें वतन को लौटेंगी।'

"चुप! हम एक-दूसरे को इशारा कर आगे बढ़ गए।

"दरवेश बोला–'मौलू, देख लो, शाह सिकन्दर की रूह अभी भी घोड़े पर सवार है वापिस वतन पहुँचने को।'

"चलते-चलते-चलते अब पहुँचे हम क़ाबुल डङ्के पर। एक रौबीली सजीली हाँक पड़ी–'मुसाफ़िर, हिन्दुस्तान से आए हैं क्या? किस महल से?'

"दरवेश ने मेरे कान में कहा–'शाह दुर्रानी है। हज़ूर, हम आपके गुजरात महल से चले थे!'

"'बहुत ख़ूब! हमारे शायर इशरत को साथ ले आते। उससे कुछ सुनते-सुनाते।'।

"हवा में हिलकोरे ले-ले हमने हिन्दूकुश पार कर लिया!

"उड़ते गए, उड़ते गए, उड़ते गए...ऊपर...ऊपर...बदन हल्के फुल्ल! आँखें खोलीं–यह क्या!

"बड़े-बड़े लाल सुर्ख सेबों के बाग़! यह बड़े-बड़े लाल माल्टों के पेड़! यह बड़े-बड़े अंगूरों के गुच्छे! यह बड़े-बड़े बग्गूगोशे! यह बड़े-बड़े अनार कन्धारी! यह क्या, कोयटा चमन कश्मीर आसमान पर भी आ लगे!

"दरवेश ने मुझे हाथ से झकझोरा–'अपना तम्बा ज़रा ठीक कर ले। यह न हो, यहाँ का ज़नाना ऐतराज़ करे।'

"बादशाहो, यह सुनकर यह मिरास बड़ा घबराई। न काम का कप्पड़ और न बन्दे ने की हुई कोई शौक़ीनी। जानी दरवेश के पीछे-पीछे चलने लगा।

"जिधर नज़र मारो, रंग-तमाशे। आसमान पर सुच्चे पट्ट के तम्बू शामियाने तने हुए। मार झालरों पर झालरें। कहीं घुँघरू। कहीं रियाज़। कहीं तबला। कहीं सारंगी। बस, मुँह कहे–वाह-वाह!

"दरवेश ने घुड़का–'खामोश। यह इन्द्र का अखाड़ा है। यहाँ तारीफ़ नज़ारों की नहीं। इन्द्र की है। वाहवाही सिर्फ़ उसकी।'

"आगे सुनो–महाराजा इन्द्र छैला बना जनानियों में लगा हुआ। किसी का हार छुए, किसी की पाजेब। किसी को बाँह में भरे। किसी को गोद में बिठाए। किसी का हार चूमे, किसी के बाल..."

दूल्हे के यारों ने आवाज़ मार दी–"खच्चरा, जल्दी-जल्दी आगे बढ़। दिल न ललचा।"

"बादशाहो, इतनी भूख-तृष्णा थी तो मुजरा-तमाशा साथ लाते। चलो, नहीं ला सके तो मिरास हाज़िर है।

"इन्द्रसभा। अप्सराएँ मार एक-से-एक बढ़कर। किनख़ाबी कपड़े। झलमल-झलमल। न पता लगे कपड़े हैं, न पता लगे पिंडे हैं। मोती-हीरे-जवाहरातों से सजे। इन्द्र राजा मस्त सोमरस पान में।"

"ओए, यहाँ हमें तुमने इलायचीवाला कहवा पिला दिया।"

"सब्र रखो और आगे सुनो। अप्सराओं के नाजुक बदनों पर लच्छे-गुच्छे। कलेजा फड़फड़ाए। स्वर्ग यही। जन्नत यही। बहिश्त यही।

"महाराज इन्द्र की नज़र इस मिरासी पर पड़ गई। बोले–'हमें खबर मिली है कि आज हमारे दरबार में गुजरात पंजाब की मशहूर मिरास हाज़िर हैं। महामन्त्री, यह ख़ानदानी मिरास हैं। इनकी आवभगत और मान-आदर में कोई कमी न हो।'

"मेहमानो, इस मिरास ने उठकर इन्द्र के दरबार में रब्ब रसूल का नाम ले दिया–'अल्लाह सच, नबीबार हक़, दीदार अल्लाह का, शफ़ात हज़रत की।'

"महामन्त्री ने पूछा–'मिरास का गोत्र क्या है–पीपलानी, साजानी, छोछानी, पोसला की मीर मिरासी?'

"'मीर मिरासी श्रीमान्! हम शाग़िर्द जिनके वह जगतप्रसिद्ध गुरु तान हुसैन।'

महाराजा इन्द्र ने सिर हिलाया–'मैं आपके वंश-वृक्ष से वाक़िफ़ हूँ। आपकी मिरास का ध्वज मेरे यहाँ सुरक्षित है। कहिए, आपके ग्राँ का क्या हाल है?'

"'ख़ैरियत है महाराज।'

"'पिंड के शाह कैसे हैं?'

"'आपकी तरह ही लहरों-बहरों में।'

"'पिंड के काश्तकार जट्ट कैसे?'

"'जैसे हो सकते हैं जट्ट काश्तकार।'

"'मुजारे कैसे हैं?'

"'वक्त को ठिल रहे हैं।'

"'क्यों, हमारी तरफ़ से पानी तो वक़्त पर मिल रहा है न उन्हें?'

"'क्षमा महाराज, पानी तो वे अब सरकार अंग्रेज़ी का ही लगाते हैं।'

"'और हम जो स्वर्ग से पानी बरसाते हैं, उसका क्या होता है?'

"'महाराज, वह पानी तो हीरे-मोती बन-बन के महलों और मन्दिरों में पहुँचता जाता है।'

"'वाह, हम जानकर ख़ुश हुए। हाँ; यह सरकार अंग्रेज़ी कैसी है?'

"'महाराज, इन दिनों लड़ाई पर है। पहले तो सिर्फ़ तुर्की से ही ठानी थी, अब दूसरे पंचों से भी छेड़ ली है।'

"सुनकर इन्द्र महाराज उचाट हो गए। कहा–'गाना हो।'

"बस, शुरू हो गए वही रास-रंग। वही नाच-तमाशे।

"जानी दरवेश के कान में कहा–'यहाँ तो सारी अप्सराएँ महाराज इन्द्र को ही लिपटी हुई हैं। काहे को दिल तरसाएँ अपना! यहाँ आए ही हुए हैं तो चलो, अल्लाह ताला से भी मिलते जाएँ।'

"महाराजा, इन्द्र ने हमारे मन की भाँप ली। हुक़्म दिया–'प्रतिहारी, इन्हें अल्लाह मियाँ के दरवाज़े तक छोड़ आओ। हाँ, उन्हें मेरा सलाम देना और कहना इन्द्र आपकी कुशल-क्षेम पूछते थे।'

"'जी महाराज!'

"बारातियो, इस मिरास को ख़ुड़क गई। हो-न-हो जब से हिन्दुस्तान का नया लाट आया है तब से परमपिता परमात्मा और अल्लाह तआला के ताल्लुक़ात दो नए-नए समधियों की तरह ख़ुश सलीक़ा हो गए हैं।

"इन्द्र-दरबार से निकलकर हम चलते गए। चलते गए। चलते गए। सब फल-फूल-सब्ज़ा-हरियाला खत्म हो गया। आँखों के आगे विराना-ही-विराना। बड़े परेशान। जानी दरवेश बोला–'जहाँ हूरें नज़र आईं, समझो अल्लाह तआला की हक़ूमत आ गई।'

"चलते-चलते-चलते एक मसीत नज़र आई। साथ एक छोटा सा कूआँ। ऊपर चरखड़ी पड़ी हुई। लज के साथ डोल लटका हुआ। पहरेदार रुक गया–'जाइए, यही वह जगह है जहाँ आप पहुँचना चाहते थे।'

"आगे बढ़े। देखा, मंजी पर बैठे एक बुजुर्ग हुक्का पी रहे हैं। आँखों में चील के अंडों का सुरमा लगाए हुए।

"पास जाकर पूछा–'जनाब, हम पंजाब की सरज़मीं से अल्लाह तआला को मिलने आए हैं!'

"'आओ-आओ।'

"'जी, उन्हीं से मुलाक़ात करवा दें तो आपका अहसान न भूलेंगे।'

"'बुजुर्गवार बोले–'कहिए, इस नाम से तो मैं ही...'

"इस मिरासी से न रहा गया। कहा–'ऐ मेरे रब्ब, कहाँ महाराज इन्द्र की इन्द्रपुरी, कहाँ वे साज-बाज, हीरे-जवाहरात और रग-रलियाँ! और एक यह आपकी हक़ूमत! बादशाहों के बादशाह, आपकी कुव्वते-मर्दानगी और क़ुव्वते-रुहानी के होते हुए यहाँ की यह हालत!'

"देखो बेटा, परेशान होने की ज़रूरत नहीं। यहाँ का सब साज-सामान, कुछ देर पहले बुलाक़ीशाह कुर्क़ी करवा के ले गया है।'

"'ओह, मेरे मौला! आपकी, और कुर्क़ी! परवरदिग़ार, ये अलामतें-मलामतें तो बिचारे जट्ट किसान की! मेरे मालिक, आपने उसे ऐसा क्यों करने दिया?'

"'मौलू बेटा बुलाक़ी शाह का मुक़द्दमा झूठा और काग़ज़ फरज़ी। पर अदालत में मुक़द्दमा लड़ने के लिए भी नावाँ शाह से ही उठाना पड़ता। इसलिए हमने फ़ैसला दे दिया कि होती है कुर्क़ी तो हो।

"'बेटे, उदास न हो। एक-न-एक दिन इसका भी कोई रास्ता निकल आएगा। इन्द्र महाराज की क़ौम दौलत-दमड़े ऐसे बाँध के रखती है कि हमारी हदों को छूने नहीं देती!'

"जानी दरवेश ने सज़दा किया–'ग़रीबपरवर, अपने बन्दों के लिए नई हदें क़ायम कर दीजिए।'"

सुनकर बाराती हँस-हँस दोहरे हुए। मौलू की झोली भरने लगी।

पंच-सयानों ने आ-आकर बारातियों के आगे हाथ जोड़े–"महाराज, जो रूखी-सूखी तैयार है, उसे स्वीकार करें।"

भाँति-भाँति की लपटें-ख़ुशबुएँ ऐसी कि जंजघर महकने लगा।

पाँत खाने बैठीं तो पंच चौधरी ऐसे आदर-मान से वरताने लगे ज्यों उनकी बारात में देवता पधारे हों!

मौलू ने आवाज़ उठाई–"लोको, इन्द्रपुरी के देवते हमारे जजमानों के घर–जीवें जोड़ियाँ। धी मिट्ठी रानी और दूल्हा राजा महताबचन्द!"

पुत्रीं-वेत्रीं पिंड पर रात उतर आई। सूरज की लाली पेड़ों को गहराती कलिक्खन के पीछे जा लुकी। ऊपर आसमान की गुमटी पर चाँद तैर आया। निक्के-निक्के चानने झिलमिलाने लगे। कहीं दिवटे, कहीं गुल, कहीं चूल्हों में झम्म-झम्म जलती लकड़ियाँ और उपले।

गिड़ते कूओं के सुर और वल्दों की घंटियाँ। नन्हे बच्चड़ों के रोने और किलकारियों पर झूम-झूम दिलों की रीझें और हिरसें आपस में ख़ुसर-फुसर करने लगीं। और रात-रतियारी दम्म-दम्म दमकने लगी।

बड़ी बहनेलियाँ छोटे वीरों को रोटी खिला सुलाने लगीं। कोई बुझारतें डाले। कोई कहानी सुनाए। राबयाँ बोली–"सुन लाली, सुन!"

"राबी बहन, कहानी सुनाओ बूजोवाली।"

"एक था तो एक था बूजो।"

"बूजो क्या राबी बहन?"

"बूजो था तो बूजो एक नटखट बन्दर था।

"बूजो चलता-चलता एक ग्राँ में जा पहुँचा।

"वहाँ कीकर हेठ बैठा था एक नाई। एक जाट की हजामत बनाने।

"बूजो ने मारी टपोसी और नाई का उस्तरा छीन लिया।

"नाई ने आवाज़ दी–'यह क्या बूजो, यह क्या बूजो–कर ले लेखा। कर ले लेखा।'

"दँतुले बूजो ने दाँत दिखा दिए:

जट्ट के बाल नाई के पास
नाई का उस्तरा मेरे पास
उस्तरा मेरा घाई के पास
घाई का भूरा मेरे पास

"जट्ट बोला:

कर ले लेखा
कर ले लेखा।
मेरे बाल नाई के पास
उस्तरा मेरा घाई के पास
घाई का भूरा मेरे पास
भूरा मेरा धड़वाई के पास
धड़वाई का गुड़ मेरे पास
मेरा गुड़ बुड्ढी के पास
बुड्ढी के पूड़े मेरे पास
मेरे पूड़े जंज पास
जंज का डोला मेरे पास।"

"फिर क्या हुआ राबयाँ बहन?"

"होना क्या था लाली शाह:

बूजो ले गया
दुल्हन का डोला
अब तू भी
राजा बन सो जा।
जल्दी से सो जा।"

"मदरसेवाले लड़के इतनी देर गए रेत पर कबड्डी-कबड्डी क्यों खेल रहे हैं?"

"खेलने दो। तुम्हें क्या!"

"राबयाँ बहन, कोठे पर कम्मो-बिम्बो कीकली डाल रही हैं।"

शाहनी ने आवाज़ दी–"सुला री इसे जल्दी से!"

माँ की आवाज़ सुन लाली रोने लगी–"मैं नहीं, मैं माँ से सोऊँगा।"

चाची बोली–"बच्ची, बार-बार न रुलाया कर, ढीठ हो जाएगा! दो-चार थपकियों

की बात है। सुला दे।"

लाली राबयाँ की चुन्नी खींच-खींच खरुद करने लगा।

राबयाँ झूठ-मूठ डुसकने लगी–"ऊँ...ऊँ...मुझे लाली शाह मारता है शाहनी..."

शाहनी ने तरेरा–"मुड़ रे मुड़। दूध के बर्तन-भाँडे रख के आती हूँ।"

"बच्ची, दूध रुत पहचानता है। बर्तन में ज़रा ठंडा छींटा मार लेना।"

राबयाँ ने खटोले पर बिछौना बिछाया और लाली शाह को सुलाने लगी:

"आठ पत्तन नौ बेड़ियाँ
चौदह घुम्मन घेर
जो तू राजा जती सती
तो पानी किन्ने सेर।"

चाची ने आवाज़ दी–"राबयाँ धिए, रसालू ही गाने लगी है तो, री, ज़रा ऊँचे सुर निकाल। ख़ैरों से दूजों के कान में भी पड़े!"

"आठ पत्तन नौ बेड़ियाँ
चौदह घुम्मन घेर
अम्बर तारे गिन दस्सीं
मैं दस्साँ पानी उन्ने सेर
रे जितनी जगंली लकड़ी,
मेरे दिल की उन्नी लौ!"

दरिया किनारे की ठंडी हवा बच्चड़ों को झुलाने-सुलाने लगी। रोटी-टुक्कर से ख़ाली हो ज़नानियों मंजिलों पर आ बैठीं।

शाहनी लाली के सिरहाने आई और बिन्द्रादई को आवाज़ दी–"ख़ैरों से भाई अभी नहीं परते।"

राबयाँ ने सिर उठा आँखें अँधेरे में गड़ा दीं। कानों से जैसे कोई आहट सुनी हो। फिर सिर हिलाकर कहा–"आए ही समझो!"

छोटी शाहनी ठट्ठा करने लगी–"क्यों री राबयाँ, तेरे पास कोई ग़ैबी गुल है क्या जिससे देखकर नजूम लगाती है?"

राबयाँ थोड़ा-थोड़ा हँसने लगी।

चाची महरी बोली–"सुना बिन्द्रादइये, तू ही सुना। बड़ा मीठा गाया करती थी तू–कौन गुण लागूँ श्री रामजी को प्यारी!"

ख़ुल्लरों की निक्की वधूटी सलूना लेने आन पहुँची:

"अपना क्या, कभी बहुत हुआ तो सुहाग-घोड़ी गा लिए। अब तो गृहस्थी लग गई जान को। अब क्या अपना ढिड्ढ और अपना-अपना निड्ढ।"

वीराँवाली आन पहुँची–"मैंने कहा री ख़ुल्लरों की, जेम-जेम वक़्त ही काटना है। ये सुर काफ़ियाँ चैन बाज़ियों से!"

शाहनी को न भाया–"उस दाते का पुण्य-प्रताप है, नहीं तो झटदिशी मैं और तुम क्यों नहीं जोड़ लेतीं कवित्त-काफ़िये!"

गोमा मुँहफट चाँदनी रात में संगेमरमरी मूरत को तकती रही, फिर नगोड़ी ने काँकरी मार दी–"अरी दरदों बाज़ न जुड़ती हैं काफ़ियाँ!"

चाची ने झिड़क दिया–"फिटे मुँह री, कौन है यह कान भभेरनी। भोल-भाले दिलों में दर्द पीड़ें जगाने लगी!"

चाची से शह पा शाहनी लाड़ से बोली–"सुना री राबी! गोमा को भी चान्नना हो।"

"जी शाहनीजी, क्या सुनाऊँ!"

चाची ने अपना हुक़्म चला दिया–"धिए, वह सुना जो इस बार रमज़ान में जोड़ी थी!"

तारों की छाँह मंजी पर बैठी राबयाँ आप ही चनाब की कोलक लहर बन आई। चाँद की चान्ननी में गुँथे सिर की मींडियाँ नुकीले नाक को अनूठी फबन दें। सिर पर की नटखटी दुपट्टी ऐसी अल्हड़ बन टूँगी रही जैसे मुँडेरे पर कोई कूँज आ बैठी हो–

हाय रे
डाची किस ओर हाँकूँ!
चार दिशाएँ
चार दिवड़े
कैसे झेलूँ लौ
चार चान्नने।
इक दिवड़ा
मेरा माँही
इक दिवड़ा
मेरा साँई
इक दिवड़ा
मेरा हिया
जल-जल अँखियाँ
लौ बनी
हाय रे मैं
कैसे न लौ
मिलन को जाऊँ!
जित देखूँ लौ जले
जित देखूँ लौ उठे
मेरी अँखियाँ
मेरा हियरा
तन-मन सब
जल-जल
लौ भया
हाय रे
डाची किस ओर हाँकूँ!

सुननेवालियों के कालजे फरफराने लगे।

राबयाँ की थरथराती आवाज़ ख़ामोश हो गई कि काशीशाह का स्वर सुन पड़ा–"वाह-वाह राबी, रब्ब साँई तुझे और रोशनी दे, और चान्नन करे।"

ज़नानियों ने दुपट्टे माथों तक खींच लिए।

छोटे शाह पास आए, राबयाँ के सिर पर हाथ रखा–"बीबी रानी को मालिक की दात। दिल तुम्हारा पाक़-साफ़ सरोवर है।"

राबयाँ सिर का कपड़ा सहेजने लगी।

सहसा सामने निगाह उठी–शाहजी अँधेरे में थिर खड़े थे।

"राबयाँ..." शाहनी शाहजी को देख थिड़क गई।

चाची ने आँख उठाई–"बच्ची, हाथ-पाँव धुला। खाना परस। हाँ री राबयाँ, आज अब्बू को सजरी रोटी खिला आ। न आने को मन किया तो वहीं सो जाना।"

"हला चाची!" राबयाँ ने पलकें उठाईं और ऐसे क़दम उठाया जैसे दस बरस और सयानी हो गई हो।

पिंड पर तैरते पतले-घने रौले बच्चों की नींद में घुलघुल गए। पहरुए की डाँग खड़कने लगी–जागते रहो!

अलिये की झुग्गी से राबयाँ का घना ऊँचा सुर उठकर दरिया किनारे फैल गया:

तनु ख़ुड्डी, मनु हुजरो,
कीम चालीहा रख़ु
कोहु न पूजियो पूजिएँ,
अठई पहर अलख़ु?
ताँ तूँ पाण परख,
सभ कहिं ड्डाहुँ सामुहों।

थाली आगे रख थिर बैठे दोनों भाइयों को राबयाँ के सुरों में खोए देखा तो कालजा मुँह को आ गया। हे ज़िन्दगानी के पीर ख़्वाज़ा ख़िजर, दरियाओं के कंडे मिलानेवाली समर्था मिट्टी के पुतलों में कहाँ! एक पत्तन पर पहुँचकर फिर बेड़ी! न...न...दरिया पीर, मेरे साँईं के आगे यह मृगना-हिरन न दौड़ाना!

पौत्रे लद्धे का पहला रुक्का-रुपया आया तो दादी हस्सा ने टके चूम हस्सा को पकड़ा दिए–"ख़ुदावन्द क़रीम, तेरी मेहरें। लाम से ठंडी हवा आती रहे!"

महीना पार न हुआ और तत्ती ख़बर आन पहुँची। रोना-करलाना मच गया–"हाय रे दुश्मना, तूने हमसे वैर कमाया। लाम सजी पड़ी है जवानों से और तूने चुनकर अपना शेर बच्चड़ा हलाक़ कर दिया! हाय ओ रब्बा!"

सुनकर माँओं के कलेजे दहल गए। पास-पड़ोस में चूल्हे ठंडे हो गए।

जुम्मन की माँ जो जुम्मन की ख़बर आने के पीछे पुत्रोंवालियों से कतराकर निकल जाती थी, आगे बढ़ फ़ातिमा के गले जा लगी।

"हाय ओ, खिलंदड़े यारों की जोड़ी बहिश्ती जा मिली। बच्चड़ो, तुम्हारी टूटी-भज्जी माँएँ अब कैसे पहाड़ जैसी उमरें निकालेंगी! हाय ओ रब्बा, यह दिन देखने से पहले इन बुड्ढियों को मौत क्यों न आ गई!"

आस-उम्मीदोंवाली माँएँ दिल-ही-दिल सहमकर मालिक का नाम लेने लगीं।

"रब्बजी, बच्चड़ों को आपकी ओट। तेरी नज़र सीधी रहे!"

मर्द अनमने उदास हुक्कों में लगे रहे। किसी को कोई बात न सूझे।

हारकर मुहम्मदीन बोले–"ज़हाँदादजी, अपने निक्के बाल लाम में पहुँचे हुए हैं, सलामत रहें। आप ही कुछ छावनी-लश्कर की सुना डालो।"

कर्मइलाहीजी ने हुंकारा भरा–"चौधरीजी, कुछ ऐसी सुनाओ कि रंज-उदासी कम हो।"

जहाँदादजी ने हुक्का छोड़ पुराना क़िस्सा छू लिया–"बात यह उन दिनों की है जब 14 पंजाब का तबादला हुआ पेशावर से झाँसी। झाँसी में तैनात थी उन दिनों छठी मद्रास। बादशाहो इत्तफ़ाक, इधर पल्टनगाड़ी पंजाब से निकली, उधर रास्ते-भर बारिश। गाड़ी पहुँची झाँसी टेशन तो वहाँ भी मौलाधार पानी। आप जानो 14 पंजाब ख़ैरों से पंजाबी मुसलमान और पठानों की पल्टन।

"इधर तगड़े ऊँचे-लम्बे क़द, उधर मद्रास पल्टन बड़ी क़ायदे-क़रीनेवाली। बन्दे ऐसे लगें ज्यों नहाए-धोए हुए हों। वर्दियाँ साफ़-शफ़ाफ़। अपने बन्दे उतरे गाड़ी से तो मार हो-हल्ला मच गया। मद्रास पल्टन बड़ी गम्भीर, चुपचाप और मिज़ाजी। पठानों को देख-देख उन्हें हैरानी हो कि कमान-कप्तान साथ है और इतना हो-हुल्लड़। हुक़्म मिला पंजाबी को कि अपना सामान हाथियों पर रखो। घोड़ों की जगह हाथी। बादशाहो, ज़रा सोचो नज़ारा। कहाँ तो गाज़ी घोड़े मुस्तैद टिच्च और कहाँ फस्का-का-फस्का हाथी ढिल-मट्ठ। बड़े-बड़े कान और यह लटकी हुई सूँड। इधर के लोग घोड़ों के सधे हुए। हाथियों का तजुरबा कोई न! फिर आप जानो, हाथी दरशनी जानवर। वजूद और कार-कर्त्तब दोनों ही ठस्सक-फस्सक। भला हाथी की घोड़े से क्या तुलना! खूबसूरत घड़त और चाल मरदाना।"

शाहजी बोले–"ठीक है जहाँदादजी, कहने में आता है कि रब्ब ने सबसे पहले घोड़े को ही वजूद दिया था। क्या तराश हुई है घोड़े की काठी! कहने को जनावर, पर भोले भाव भी खड़ा हो गाज़ी तो मनुक्ख को लुंडा करके रख दे।"

गंडासिंह ने हुंकारा भरा–"बादशाहो, घोड़े पर सवार हो बन्दा तो शाही तस्वीर तो आप ही क़ायम हो गई आलम में।"

नजीबे का भी दिमाग़ परखरा हुआ–"शाहजी, सोचने की बात है। मनुक्ख बैठा हो गधे पर तो या धोबी या कंजर। बाक़ी कहने को बेशक़ साहिबे-आलम कहता फिरे। किसी ने नहीं मानना।"

दब के हास्से-खाँसियाँ खड़के।

गुरुदित्तसिंह छिड़ गए–"महाराजा रणजीतसिंह का घोड़ा लाली। दुनिया में मशहूर। घोड़ा शाही। रंग नीला। काली टाँगें और सोलह हत्थ लम्बा। पाँव में सोने की कड़ियाँ।"

"वाह-वाह!"

फ़कीरा बोला–"बात यह है कि शहंशाहों-बादशाहों के पास लूट-मार का सोना-ज़ेवर, सजाते रहें घोड़े को। यह तो समझो कि जानवर की खाल सोने में नहीं मढ़ सकती, नहीं तो कौन कम करता!"

शाहजी ने बात और खींची–"शहंशाह-सम्राटों की तरह उनके घोड़ों की भी बड़ी मशहूरी हुई। शाह दुर्रानी के घोड़े तरलान और हमदम ने बड़ा नाम कमाया।"

फ़तेहअलीजी ने हामी भरी–"शाहजी, बात तो यह हुई कि बन्दे को उसकी सवारी ही सजाती-बनाती है।"

कक्कूख़ाँ से न रहा गया–"सवारियाँवाले बहुतेरे, पर, जी, बिना सवारी के भी आदम ख़लकत बड़ी। वैसे बात है, मनुक्ख अपने दो पैरों पर चल रहा हो तो सच पूछो, इसकी भी कोई रीस नहीं। जीते-जागते इन्सानी वजूद की बरक़त ही समझो न! अपनी सवारी सालम-सबूता, बन्दा आप ही चलाए जा रहा है।"

"वाह-वाह, तबीयत ख़ुश की है कक्कूख़ाँ!"

चौधरी फ़तेहअली बोले–"शाहजी, कक्कूख़ाँ और नजीबे के दादा साहिब की दरिया पार तक मशहूरी थी। बात करनी मोटी पर पुर-असर।"

मैयासिंह छोटी-सी ऊँघ लेकर जागे–"जहाँदाद, झाँसी टेसन पर पहुँची थी न पठान पल्टन। अब आगे भी हो जाए!"

"लो जी सुनो। देख के इधर-उधर के शोर-शराबे को मद्रासी टुकड़ी ने त्योड़ियाँ चढ़ा लीं और बड़े ऐड्ड-बाबे बनकर घूरने लगे। उनका कप्तान-कमान ऐसे देखे ज्यों पाँचवीं जमात कच्ची-पक्की को देखती है।"

जहाँदादजी ने आप ही ख़ुलासा किया–"मद्रासी मनुक्ख निस्बतन स्वभाव से ही ठंडा है। क़द-बुत्त भी छोटा संजम-मरजादावाला। इधर अपनी पल्टन का फुल्ल-फैलाव ज्यादा। शोर-शराबा ज़्यादा, धक्का-मुक्की ज़्यादा।"

गंडासिंह हँसे–"गज-गज के बाजू-बाँहें उठें बुनेखाल, गिलज़ई, दुर्रानी, पठानों के तो देखनेवाले को लगे बन्दे हाथापाई कर रहे हैं। चलो जहाँदाद, आगे चलो।"

"तो जी, उस दिन झाँसी टेशन पर समझो भाँगड़ा पड़ गया। पर अपनी पंजाबी पल्टन का हवलदार मेजर गुल बादशाह झाँसी टेशन पर ऐसे सजा रहा ज्यों पठान ब्लोच दर्रों पर सजते हैं। पीडी काठी, रंग विलायती। माँ ग़ालिबन अंग्रेज़ थी उसकी। बड़ा दक्ख अंग्रेज़ पठान का। खड़ा-खड़ा मुस्कराता रहा। अपनी पल्टन तो उस पर फ़िदा थी न! मद्रासी पलटन ने मुँह-माँह बहुतेरे चढ़ाए पर हवलदार मेजर अपने रौबदाब में मस्त।"

मौलादादजी ने पूछा–"हाथियों का क्या हुआ?"

"हाथियों को महावत बिठाएँ नीचे। मुँह से करें–धक्क...धक्क...धक्क...तो पठान हँसें। उन मुहांदरों पर दाँत ऐसे चमकें ज्यों बिजलियाँ। हबड़ा-दबड़ी में हाथियों पर सामान चढ़ाया जाने लगा। रस्से बँधने लगे तो सामने गड्डी की लाइन पर हड़-हड़ धड़-धड़ करता इंजिन निकल गया। बस जी, टेशन पर तो नादरगरदी पड़ गई। दबड़-दबड़ हाथी दौड़ें और पठान रैंक हँसें और रस्सियाँ पकड़-पकड़ हाथियों के साथ झूलें। ऊपर से मींह! अगले दिन पूरी बैह-बिठाई हो गई तो त्रिकालाँ वेले सरनाई और ढोल पर पठानों ने 'ज़ख़्मी-दिल' छेड़ दिया। छावनी में समाँ बँध गया। हेक ऐसी दर्दनाक़ कि आँखें नम हो जाएँ।"

कृपाराम ने पूछा–"भला 'ज़ख्मी-दिल' क्या चीज़ हुई?"

"ज्यों अपने गीत, टप्पे, काफ़ियाँ, वैसे ही कोई पठान बन्दिश समझो। बोल समझ आएँ-न-आएँ, पर सुर उसके रूह तड़पा देते हैं।"

गुरुदित्तसिंह का ध्यान कहीं और था–"उस मद्रास पल्टन का क्या हुआ?"

"होना क्या था! बैठकर उसी गड्डी में पल्टन अपनी छावनी की ओर चलती बनी।"

जहाँदादजी का फ़ौजी दिल कुछ देर के लिए अपनी पल्टन टुकड़ी में जा बसा।

"बादशाहो, अपनी 14 पंजाब को देखकर जंगीलाट डाडा ख़ुश हुआ। दौरे पर झाँसी आया तो पल्टन को अव्वल क़रार दिया! गंडासिंहजी, यह तभी की बात है जब सिपाही रहीम अली ने बड़े-बड़े इनाम जीते थे। साथ थे सिपाही दित्तू डोगरा और पंजाबा सिंह।"

खबरे क्या हुआ कि मजलिस में जवान लद्धा आन खड़ा हुआ। क़द-काठी तगड़ी। जट्टी मुहांदरे पर सजी हुई मूँछें।

गुरुदित्तसिंह बोले–"रह-रह ख़याल आता है लद्धे का। अपनी आँखों के आगे जन्मा-खेला-पला और आज उसके पूरे होने की ख़बर भी कानों से सुन ली। नसीब भरजाई फातमा और बेबे हस्सा के! एक दिहाड़ी में मुँह पीले फट्टक हो गए हैं।"

"बड़ा बरख़ुरदार था। भरती की परची मिली तो खुशी-खुशी सबको सलाम करने आया।"

कर्मइलाहीजी ने सिर हिलाया–"रब्ब के रंग। लिखी हुई थी, आन पहुँची। नहीं तो लाम-जंग में बेहिसाब गोलियाँ। मौत जिसकी आ गई, गोली उसी की छाती में जा लगेगी।"

मीराँबक़्श बोले–"बादशाहो, अपने पिंड के कई छोटे-बड़े पल्टनों में। छोटी-मोटी लड़ाइयों में भी शरीक़ तो होते रहे न! मरनेवाले मरे भी, पर बचनेवाले बचे भी।"

"ये सारे अख़्तियार रब्ब रसूल ने अपने ही हाथ में रखे हुए हैं।"

"जी हाँ, गंडासिंहजी अपने अफ्रीका भी पहुँचे थे। क्यों खालसाजी!"

गंडासिंह जी ने आँखें मींटी हुई थीं, न खोलीं।

शाहजी ने बात फिर जहाँदादख़ाँ जी की ओर मोड़ दी–"जब आप पहुँचे तिब्बत तो भी वक़्त तो बड़ा जुल्मी था।"

"बादशाहो, तिब्बत में तो बस दरिया और पानी। रोटी का टुकड़ा देखने को न नसीब हो। रूट मार्च करके लाहसा पहुँचे।"

मुंशी इल्मदीनजी रौब में न आए–"जहाँदादजी, कितना पैंडा होगा लाहसा और तिब्बत के बीच?"

"होगा क़रीब चार सौ कोस। शाहजी, पानी वहाँ का बड़ा नाकस, न पीया जाए, न उबाला जाए। आबहवा इतनी ख़राब कि पुट्ठ पीडे डोगरे नमूनिए से मर गए। सरदी खा गए। यह समझ लो कि आठ तो मरे गोरे अफ़सर और कोई दो-ढाई सौ देसी बन्दे। हस्पताल भर गए।"

गंडासिंह उब्बड़ वाहे उठे–"सयाले में अंग्रेज़ का वड्डा दिन किशम्रिश होता है। एक बार अंडों की फिरनी खा-खा जवानों के पेट चल गए। बस, कमान में हुक़्म निकल गया कि मैस में न फिरनी बने, न खाई जाए!"

"हाँ जी, फ़ौजों की सलामती तो सरकार को पहले। शाहजी, वहाँ की जोंकें बड़ी ज़ालिम। लग जाए तो जब तक सारा-का-सारा ख़ून न चूस लें, बदन से अलग न हों। इलाक़ा भावें पहाड़ी है पर पानी नाकस। मनुक्ख की बड़ी हुई हो तभी इसको सहार जाता है! अपने सिर पर से भी चंगे-बुरे सब गुज़र ही गए न?"

गंडासिंह बोले–"तिब्बती लोगों की काठी छोटी और तलवारें बड़ी। उनकी दाढ़ी-मूँछें भी नदारद!"

"गंडासिंहजी, ठंडा मुल्क़ है। बन्दों का उभार-उठान कम। लो, और सुनो, तिब्बती बन्दा जेकर आपका शुक्रिया करे तो जीभ बाहर निकाल हाथों के अँगूठे दिखाए।"

"तौबा-तौबा...यह तो कोई रस्मवाली बात न हुई!"

"बादशाहो, वहाँ एक हादसा हो गया। एक पठान ने किसी तिब्बती को फ़ौजी यक्के से उतारा। बन्दे ने नीचे उतरकर पहले तो जीभ निकाली, फिर अँगूठे दिखा दिए। बस जी, पठान हो गया लाल-पीला। मारने को पिस्तौल निकाल ली। सूबेदार मेजर कहीं से आन निकला। पठान को समझाया कि अपने रिवाज़ मुताबिक़ यह तुम्हारी इज़्ज़त कर रहा है।"

क़िस्सा यह कई बार सुनाया जा चुका था, पर शाहजी ने जहाँदादख़ाँ जी को गरमाना जरूरी समझा–"काशीराम अपना टाँडेवाला क़ाबुलसिंह बताया करता है न कि तिब्बत में फ़ौजें अपनी बड़ी बहादुरी से लड़ी थीं। लन्दन के अख़बारों में चरचे हो गए। बड़ी तारीफ़ें की गईं।"

पल्टन के रुआब से जहाँदादजी की मूँछें माशा-भर फड़क गईं–"सूबेदार शब्बीबुलाह, हवलदार, शरीफ़, सिपाही अकबरशाह, सूबेदार मेजर जमालअली, लांसनायक पयायो को बहादुरी के तमग़े दिए गए थे!"

गंडासिंह बोले–"ईश्वरसिंह कोटलीवाल, नाम उसने भी चंगा कमाया था। डाडा तगड़ा और सोहणा। उसे बाद में सोमालीलैंड भेजा गया।

मुंशी इल्मदीन इस गल-बात से खीज गए–"बादशाहो, एक बात तो बताओ। आपके ज़रिए एक छोटी-मोटी तमग़ी अपने पिंड को भी मिल जाती तो हर्ज़ कोई नहीं था। आख़ीर तो आप सजे हुए ही थे फ़ौज में!"

इस छींटाकशी पर हास्सा पड़ गया।

जहाँदादजी बोले–"बात तो बराबर खरी है इल्मदीनजी, पर मैदाने-जंग में शोहरत हाथ लगने की भी कई शर्तें। अव्वल आप कुछ करें और ऐन वक़्त पर कमान-कप्तान की आँख पर चढ़ जाएँ, दोयम अल्लाह ताला भी आपको शोहरत इनाम दिलवाने पर राज़ी हों। तीसरे आप बेख़ौफ़ी से जान हथेली पर रख मर-कट जाने पर तैयार हों!"

गंडासिंह को यह बात न मन लगी–"जहाँदाद, मैदाने-जंग में जान-प्राण कोई खीसे-बटुए में बन्द नहीं होती। जान तो हमेशा ही हाथ में होती है बाक़ी आगे बढ़कर जो उछाल ले वह सूरमा!"

काशीशाह को कोई बन्द याद आ गया–"बादशाहो, सुनो शाह लतीफ़ क्या कहते हैं:

सिरु ढूँढियाँ धडु न लहाँ
धडु ढूँढियाँ सिरु नाहिँ,
हथ करायूँ आँडियूँ
विया कपिजी काँहि
वहू दत जे विहाँइ,
जे विया से वढिया।"

फ़तेहअलीजी बोले–"भाखा कुछ मुश्किल है। काशीराम, ज़रा सहल करके बताओ।"

"सिर ढूँढ़ता हूँ तो धड़ नहीं मिलता और धड़ ढूँढता हूँ तो सिर नहीं मिलता। हाथ, कलाइयाँ और उँगलियाँ न मालूम कहाँ कट-कटकर गिर पड़ी हैं! साँईं को ब्याहने जाती कवार के ब्याह में जो शरीक़ होने जाते हैं वे उस राह पर क़त्ल कर दिए जाते हैं!"

"वाह-वाह, सुभान अल्लाह, कवारी कन्या के ब्याह का क्या प्रसंग बाँधा है! शाह साँईं, तेरे नाम को सलामें!"

काशीशाह विभोर हो बोले–"चौधरीजी, शाह लतीफ़ कोई छोटी-सी हस्ती नहीं। बाबा फ़रीद जैसे वड्डे-वड्डेरों की पाँत में। उनके वचनों में या हीरे या सुच्चे मोती। किसी दूसरी धातु का काम नहीं वहाँ। उन्हीं का मशहूर है:

साई सूरत ऐन की,
साई सूरत ग़ैन

समन नुक़ता दूर कर,
तउ ऐन की ऐन।"

मदरसे बैठने से पहले काँछ में मरगान ले हाथ में भिच्छया का पात्र ले, शाहों का बेटा सात घरों से भिक्षा माँगने निकला तो ज़नानियाँ रल-मिल सगुणों के गीत गाने लगीं।"

"बधाइयाँ शाहनी, बधाइयाँ! खैर सदके लाली पुत्तर मदरसे बैठने चला है।"

शाहनी भरी-भरी अँखियों बेटे को देखने लगी और मन-ही-मन दाते के आगे नमन हुई–"रब्ब जी, मेहरें तुम्हारी।"

काले सीलम के फुम्मन, गर्दन के पीछे बँधी गलीती, काजल लगी अँखियाँ, लाली जातक सचमुच का ऋषिकुमार लगे।

ड्योढ़ी से निकलते ही लाली ने हाथ छुड़ा लिया और फ़कीरे लुहार के थड़े पर जा खड़ा हुआ।

"आगे बढ़ रे, आगे बढ़।"

"मैं पहले बेबे करभरी से माँगूँगा। आओ राबी बहन!"

शाहनी ने मोड़ा–"छोड़ पुत्तर, हाथ छोड़ दे राबयाँ का!"

"न, हम दोनों भिच्छया माँगेंगे।"

चाची पास आई। समझाकर कहा–"पुत्तरजी, लड़कियाँ सुखी सांदी भिक्षा नहीं माँगतीं। वे देती हैं, लेतीं नहीं।"

लाली अड़ गया–"मैं नहीं मानता! मैं राबी बहन के साथ जाऊँगा।"

शाहनी ने देवरानी को आवाज़ दी–"बिन्द्रादइये, समझा अपने कुछ-लगने को। खरुद करने लगा तो खाएगा मार मुझसे।"

छोटी शाहनी ने आगे बढ़ सिर पर हाथ रखा–"माँ रज्ज गई–पुत्र लाली, रीति-नीति की बातों में क्यों-क्यों नहीं करते। यह नहीं चंगी बात!"

लाली ने राबयाँ की चुन्नी न छोड़ी–"मदरसे तो जाएगी न राबयाँ बहन मेरे साथ!"

"बराबर जाएगी! चल हाँक दे बेबे करभरी को।"

"बेबे, दर पर फ़कीर खड़ा है, भिच्छया डाल दे!"

ज़नानियाँ लाड़-चाव से हँस-हँस दोहरी हुईं।

बेबे करभरी कुच्छड़ में पोत्रे को उठाए बाहर आई–"सदके री सदके लाली शाह पर! रब्ब बड़ी-बड़ी उम्र करे!"

बेबे ने लाली की झोली में गुड़ की टिक्की डाल दी।

लाली ने बेबे को पैरीपौना किया और सुनारों के घर के आगे जा खड़ा हुआ। आवाज़ दी–"चाची, सन्त आए हैं। डाल कुछ झोली में!"

वीराँवाली दानों की मूठ ले बाहर निकली और लाली की झोली में डाल बच्चे का माथा चूम लिया–"मेरा लाली पुत्र चंगा-चंगा पढ़े।"

लाली ने ज़िद पकड़ ली। माँ को झुझका देकर कहा–"चाची ने क्यों मेरा मुँह जूठा किया! सन्तों को भी कोई चूमता है!"

वीराँवाली निहोरे करने लगी–"पुत्तरजी, हो गई न ग़लती मुझसे!"

ज़नानियाँ हँसें। लाली और मच्छरे।

चाची महरी बोली–"धिए राबयाँ, समझा इसे!"

राबयाँ ने नीचे झुक कान में कहा–"तू सचमुच का सन्त थोड़ी है! चूम लिया तो

क्या हुआ!"

लाली न माना–"सन्त फ़कीर नहीं तो मैं माँगने क्यों निकला हूँ?"

"यह मदरसे जाने से पहले की रीति है। फ़कीर ऐसे थोड़े ही बन जाते हैं!"

लाली ने झट अगले घर की ओर पाँव उठा लिया और गली में ख़ुलते झरोखे के आगे आवाज़ लगा दी–"माता, सन्त आए हैं, कुछ खाने को दो।"

अन्दर से कोई जवाब न आया तो लाली ने अपने दोस्त जग्गे को आवाज़ दे दी–"जग्गे ओए, अपनी बेबे से कह–फकीर आए हैं, फ़कीर!"

जग्गा अपनी माँ को भोच्छन खींच बाहर ले आया–"माँ, लाली को दाने डाल। लाली मेरा यार है!"

"देती हूँ रे, देती हूँ। ख़ैर सदके दोनों की जोड़ी बनी रहे!"

"जग्गे की माँ मूठ-भर शक्कर ले आई–"बलिहारी मैं, क़ुर्बान री अपने लालीशाह पर! अपना खत्त-धम्म निबाहे। बधाइयाँ शाहनी, बधाइयाँ! पुत्तर मदरसे बैठने जाता है।"

"राबी बहन, अब तीन घर हो गए। चलो मदरसे।"

"अभी सात करने हैं, सात!"

लाली हाथ छुड़ा दौड़ पड़ा–"मैं चला बेबे किच्छी के घर!"

ज़नानियाँ लाड़ से हँसें–"मैंने कहा शरारतें देख इसकी, शरारतें! निरा गोला है गोला!"

बेबे किच्छी के थड़े पर खड़े हो लाली ने हाँक दी:

मेरे चम्बल में आटा
तुम्हें कभी न पड़े घाटा
मेरे चम्बल भर दे!

बेबे किच्छी समझ गई, लाली शाह है। बहूटी को आवाज़ दी–"निरलेप कौरे, लाली शाह मदरसे बैठने चला है। मिश्री-छुहारा डाल दे झोली में।"

माँई किच्छी झुकी कमर पर हाथ रख दहलीज़ तक आई। लाली शाह का हाथ पकड़ 'थू' किया और शाहनी को मुबारक़ें देकर कहा–"मैं वारी-बलिहारी, पुत्तर मदरसे बैठने लगा है। बड़ी-बड़ी रोशनाइयाँ हों!"

लाली ने बेबे के दोनों पैर छूकर ऐसा सुहावना पैरीपौना किया कि ज़नानियों के थन उमड़ आए। रब्बा ऐसा समय सबको दिखाए।

अगला घर ढूँढ़ा लालीशाह ने चिड़ों का। हाँक लगाई–"फ़कीर आए हैं जी, ख़ैर डालो!"

चिड़ों के घर की सारी धिएँ-बहूटियाँ बाहर निकल आईं। सिरवारने कर बच्चड़े की बलैयाँ लीं और झोली में गुड डाल आसीसें दीं।

चाची ने टनोका लगाया–"पाँव छू रे। पैरीपौना कर। तेरी चाचियाँ-ताइयाँ हैं।"

लाली अड़ गया–"न, मैं नहीं करता।"

"क्यों रे क्यों! तेरी बड़ी-सयानियाँ हैं।"

"भले हों। इनका मँझला भाई हमारे खेत से रूख क्यों उठाके ले गया!"

ज़नानियाँ हँस-हँस दोहरी हुईं–"लो री, यह जम्म पड़ा वड्डा निशंक शाह! बहना, शाह से कहो, मदरसे बैठाने से पहले ही जिवियों की मीरी दे दे लाली शाह को।"

छोटी शाहनी ने आगे बढ़कर लड़के के सिर पर धप्पा दिया–"चुप्प, बड़बोला!

चल राबयाँ, अक़्ल सिखा इसे कुछ।"

लाली ने परतने को पाँव उठा लिया–"बस, अब और नहीं।"

राबयाँ ने समझाया–"अभी दो घर और। चंगे बच्चे अडी नहीं करते।"

लाली राबयाँ को समझाने लगा–"राबीं बहन, चिड़ों के घर तीन चूल्हे हैं। हो गए न तीन घर!"

ज़नानियाँ ठुड्डियों पर हाथ रख-रख बोलीं–"बुज़ुर्ग सच कहता है। सच कहता है।"

सामने की गली से लाहबीबी चली आई। देखकर लाली चहकने लगा–"सलाम माँ, सलाम कहता हूँ।"

"क़ुर्बान मल्ला क़ुर्बान अपने लाली शाह पर! क्यों लाली शाह, आज किधर चढ़ाई है?"

"माँ, अलिफ़ बे की पट्टी
मियाँ घर और बीबी हट्टी।"

"ठहर रे लाली शाह, ठहर, मुझे बात करने दे शाहनी से। मैंने कहा शाहनी, तुम्हारा पुत्र तो मेरे मन भा गया है। मैं तो ब्याह करके रहूँगी। क्यों रे, कर लेगा न पसन्द मुझे।"

कुड़ियाँ-चिड़ियाँ हँस-हँस लाली से कहें–"जवाब दे रे, जवाब दे। मदरसे चढ़ा पीछे और लाली शाह को रिश्ता पहले आ गया।"

लाली ने पहले राबयाँ की ओर देखा, फिर माँ की ओर और झटापट लाहबीबी के पाँव पकड़ लिए।

"यह क्या रे, यह क्या!"

लाली शाह की अँखियाँ हँसने लगीं–"अब तो पैरीपौना हो गया माँ, अब पुत्र से शादी कैसे करोगी!"

लाहबीबी हँस-हँस बलैया लेने लगी–"हाय री, मैं सदके जाऊँ। देखो लड़के को। पैरीपौना करके इस बुड्ढी को सौंह खिला दी। अरे, मैं तुमसे ही ब्याह करके रहूँगी।"

लाली मच गया–"न-न, मैं तो ब्याह करूँगा राबी बहन के साथ।"

राबयाँ ने आगे बढ़ एक धप्पा लगाया–"कमली बातें!"

चाची महरी हँसने लगी–"करेगा तो करेगा, पर अभी से जहान पर नश्र क्यों कर रहा है!"

लाली शाह जमघटे-जमावड़े के साथ घरों से भिक्खा लेकर घर लौटे तो पांदाजी ने वस्त्र बदलवा माथे पर तिलक किया। आशीष वचन कहकर आज्ञा दी–"जाओ गुरु के चरणों में। विद्या पढ़ो। गुणवान बनो। यशवान बनो।"

बताशों-भरी चंगेर में मौलवीजी के लिए पाग-जोड़ा रख शाहनी ने ऊपर टके रख दिए।

लाली के गले में बस्ता, हाथ में तख्ती और दूसरे में कलम-दवात।

चाची ने पीठ पर प्यार फेरा–"पुत्रा, लड़कों से लड़ना मत। बड़े लड़कों से कभी छेड़छाड़ नहीं करनी!"

"पता है चाची, पता है!"

पंडितजी बोले–"लाली पुत्र, हवेली में पिताजी और चाचाजी को प्रणाम कर मदरसे पहुँचते बनो।"

हवेली की दहलीज़ पर राबयाँ ने हाथ छुड़ाया, पर लाली न माना। अन्दर खींच ले गया।

लाली ने बारी-बारी दोनों शाहों को पैरीपौना किया तो राबयाँ ने बाँह से घेरकर कहा–"जाकर नवाब चाचा और चाचा मुहम्मदीन को भी पौरीपौना करो।"

"उन्हें मैं सलाम करूँगा! चाचा बाग्गा को सलाम करूँ कि पैरीपौना?"

पांदाजी अपने निक्के यममान की अक़्ल-बुद्ध पर बड़े ख़ुश हुए–"जियो बेटा, जियो!"

लाली ने कपिला गाय को प्यार फेरा। भैंस को थापी दी। घोड़ों को छू-छू हेल-मेल करने लगा।

"राबयाँ बहन, मैं तो शहबाज़ पर मदरसे जाऊँगा।"

"न, मदरसे पैरों पर जाते हैं। नहीं तो पढ़ना नहीं आता। चलो, अब मदरसे चलो।"

दोनों भाई तख़्त पर बैठे-बैठे लाली को देखते रहे।

पांदाजी ने हाथ से संकेत किया–"अब मदरसे की ओर महूर्त्त खड़ा है!"

लाली बड़े-सयानों की तरह पंडितजी के आगे झुका–"प्रणाम करता हूँ पंडितजी!"

"आयुष्मान, यशवान, धनवान–जियो पुत्र, जियो!"

"सलाम करता हूँ नवाब चाचा! सलाम करता हूँ मुहम्मदीन चाचा!"

बड़े शाहजी ने बेटे को घूरा–"तुम्हारे भाई गुरुदास और केशोलाल कहाँ हैं?"

"जी, वे कड़ाही के पास बैठे बताशे चख रहे हैं। चाचा साहिब, उन्हें रात को चमूने ज़रूर लड़ेंगे।"

शाहजी इस मुँहज़ोरी के लिए लड़के को घूरने लगे। काशीशाह ने खुश हो एक टका निकाल आगे किया–"पुत्रजी, मौलवीजी को सलाम के वक़्त यह नज़र करना है! समझे?"

"जी, चाचा साहिब, वैसे ही करूँगा जैसे आपने कहा है। अब ठीक है न राबी बहन!"

शाहजी ने दोनों को हवेली से बाहर जाते देखा और आँखें मीट लीं। ख़बरे कहाँ से बन्द आँखों के आगे दृक्ख की झलक उठ आई कि राबयाँ मदरसे से परती है और घर के चौके में जा बैठी है। सिर दुपट्टे से ढका है और थाली की ओर बढ़ते हाथ की कलाई में सोने का कंगन झिलमिलाता है।

शाहजी ने चौंककर आँखें खोल दीं।

काशीशाह जाने किस रौ में थे–"भ्राजी, राबयाँ सयानी हुई। अलिये से कहो, इसके लिए कोई साक-सम्बन्ध आसपास ही ढूँढ़े। हम कैसे दूर करेंगे लड़की को!"

शाहजी कुछ बोले नहीं। उठे और शहबाज़ को थांपड़ा दिया। नवाब ने मुस्तैदी से काठी डाली और घोड़े पर सवार हो शाहजी गाँव से बाहर निकल चले।

एक बार अलिये के घर की ओर नज़र मारी और घोड़े की रासें दूसरी दिशा को मोड़ लीं। रब्ब साइयाँ, मेरे 'आज' के आगे तेरी मालकी है। मेरी नहीं।

"तो शाहजी, इस बार सूबा लाट ने अपनी हेक भी बदली दरबार में कि नहीं?"

"चौधरीजी, काफ़िया जो एक ही हुआ तो हेक कैसे बदले! वही भरती, वही जंग-

फंड और ख़िल्लत-वज़ीफ़ों के ऐलान।"

"कुछ भी कहो, इस बार लाट ने अपने ज़िले की बड़ी तारीफ़ की। कहा, इस शहर पर हकूमत को बड़ा नाज़ है। लाट ने जी खोल के अपने लोगों की ख़ुशनुमाई की। कहने लगा कि गुजरात के लोग पहले-पहल हांगकांग पुलिस में भरती हुए थे। गुजरातिए ही पहले नील नहर, अवादान और लन्दन जा पहुँचे थे। मशहूर है जो मिलनसार यारबाश बन्दा आपको बाहर के मुल्क़ों में मिल जाए, समझो जेहलम, गुजरात या स्यालकोट!"

मौलादादजी बड़े ख़ुश हुए–"वाह-वाह, वतनियों के बारे क्या सोहणी सही बात की गई है। अपने बन्दों की गर्मजोशी तो जग-ज़ाहिर हुई न!"

"चौधरीजी, लाट ने दरबार में पिंड और पिंडवालों के नाम ले-लेकर बखान किया। पहले ज़िक्र किया जँडियालावाले लम्बड़दार बक़्शशख़ान का कि उसने तीन पुत्र और तीन भतीजे भरती करवाए हैं। सरकार इसे क़ाबिले-तारीफ़ समझती है। फिर ज़िक्र किया मुरीदकीवाली मुस्ममात शरीफ़न का। तीनों पुत्र लाम में भेजकर आप हल चलाती है।"

फ़तेहअलीजी बोले–"काशीशाह, एक रुक्का लाहबीबी के बारे ज़िला लाट को डाल दो। नज़र चढ़ गया तो टब्बर को कुछ मिल-मिला जाएगा। बड़ी हिम्मत से खेतों की गाही-वाही देखती है!"

"जो हुक़्म! कल ही लिख के भेजते हैं।"

"शाहजी, जलालपुर में खबर थी कि लाट ने अपने, गुजरावालियों को बड़ा धमकाया था। कहा, धनाढियो, तुम पुत्र तो रखो सँभाल के और चन्दे दे-दे सरकार से ख़िल्लतें खरीदना चाहो–यह बात हकूमत को हरगिज़-हरगिज़ पसन्द नहीं है।"

चौधरी फ़तेहअली भी दरबार में मौजूद थे, कहा–"बादशाहो, जापता कुछ ऐसा है कि लाट ने दरबार का यह अमल ही बना लिया है। पहले तारीफ़, फिर चन्दे की उगराई और फिर भभकी।"

गंडासिंह ऐसे छिड़े ज्यों सरकार से उनकी शरीकदारी हो–"लड़ाई लगे कौन-से इतने ज़माने हो गए कि अभी से हकूमत की फटकरी फुल्ल होने लगी। असल में अंग्रेज़ बड़ी डंडीमार क़ौम है और पैसा पालू।"

नजीबा बड़ा हँसा, कहा–"खालसाजी, इस हिसाब से तो अंग्रेज़ की साकादारी खत्री-अरोड़ों से भी हुई। रुपए एक को खत्रीशाह जब तक सौ न बना ले, बात न बने।"

शाहजी बोले–"लाट बहादुर वज़ीराबादियों को कुछ और कहता है। उन्हें धमकाया कि तुम अभी सोए हुए हो। उधर एक हज़ार बंगाली और नौ सौ पंजाबी मसीही भरती हो चुका है।"

तुफ़ैलसिंह बोले–"लाट को कौन समझाए कि बंगाली की भरती चंगी नहीं!"

काशीशाह बोले–"ताया तुफ़ैलसिंह, यह तो बरख़िलाफ़ी बात हो गई। आख़ीर इन्क़लाबियों की बहादुरी तो बंगाले से ही चली। जान पर खेल जाते हैं।"

"मेरी बात ध्यान से सुनो काशीरामा! बंगाली के मुँह चढ़ा हुआ है–यह क्यों! वह क्यों! आगे क्यों! पीछे क्यों! कितना चलना है! कितना बढ़ना है! लिखत में क़ानून बताओ। मैदाने-जंग में जो क़ानून का सयापा छिड़ जाए तो हो चुकी लड़ाई में जीत!"

जहाँदादजी ने सिर हिलाया–"यह तो बात ठीक है कि फ़ौज में 'क्यों' करने की देर और मुँह बन्द! अदालत-मुक़दमे की बातें तो नहीं न! बहस होती रहे। ज़िरह होती रहे। यहाँ तो करो चाहे मरो।"

शाहजी ने पहला तार पकड़ दिया–"इधर तालियाँ बजीं, उधर सूबा लाट ऊँचे चढ़ गए। इशारा किया अहलकारों को और चन्दे लिखे जाने लगे। आप समझो, शुरू हुआ पाँच लाख से और ख़त्म हुआ पाँच हज़ार पर।"

फ़कीरे ने घुंकल निकाली–"हाँ जी, कुछ लड़ाई पर ख़र्चा कर देंगे, कुछ आप खा-पी जाएँगे। आख़ीर को तो सबको घर-बाहर और टब्बर लगे हुए हैं।"

"ज़िला हाक़म ने कई टब्बर-क़बीलों के नाम लिए–करोर के सूबेदार टिक्का ख़ाँ। सैयद के हवलदार फ़ज़ल हुसैन। मायरा शमस के नायक गुलाब ख़ान। ढोंक के सिपाही अब्दुल क़रीम। कुँइया के बुरहान अली। मायरा मोर के गेब्बा ख़ाँ। चक अमरू के लम्बड़दार खुदादाद ख़ान ने चार लड़कों में से तीन को लाम में भेज दिया।

"स्यालकोटिए मेजर हाशिम ख़ाँ ने गिनकर एक हज़ार सलाहरिया रजपूत भरती करवाए हैं। हाशिम ख़ाँ की जागीर तो पक्की। शाहजी, एक और ऐलान किया गया है सरकार की तरफ़ से। हाशिम ख़ाँ की जागीर तो पक्की। शाहजी, एक और ऐलान गया है सरकार की तरफ़ से कि दस हज़ार ड्राइवरों की भरती खोलेगी सरकार।

"लाट ने पहला विक्टोरिया क्रास पानेवाले नायक खुदादाद ख़ाँ का जिक्र किया तो जी, पूरे दरबार में ज़िन्दाबादी बुलाई गई। ख़लकत हिल गई। माई का लाल ज़िन्दा ही ज़िन्दा है।"

गुरुदित्तसिंह बोले–"बादशाहो, यह तो मलका क्रास मिल गया, नहीं तो, जी, बन्दा जो भी लड़ाई में खेत हो वह तो अमर ही अमर है। हाँ, ज़िन्दाबादियाँ ज़रूर क़िस्मतों से।"

मुंशी इल्मदीन आ डटे मैदान में–"फ़कीर सुहरी का नाम तो सुना होगा शाह साहब! पुराने वक़्तों की बात है। दुश्मन ने लड़ाई के मैदान में फ़कीर सुहरी का सिर काट दिया तो वह बहादुर अपने हाथों में अपना सिर पकड़कर खड़ा हो गया। बस, देखने की देर थी, दुश्मन की फ़ौजें उखड़ गईं।"

कर्मइलाहीजी का ध्यान पोतरे अखिये पर जा लगा। बोले– "शाहजी, अखिया अपना है तो बहादुर पर ज़्यादा बारीक़ बुद्ध नहीं!"

"ख़ैर मेहर है चौधरीजी, लड़ाई के मैदान में तो बहादुरी की ही ज़रूरत रहती है। सोचने-सचाने के लिए फ़ौज के आला अफ़सर। वैसे झूठ क्यों कहें, अपने लश्करों का दम्म-ख़म चंगा तरतीब-तरक़ीबवाला है!"

"जहाँदादजी, यह तो आप जानें।"

कर्मइलाहीजी ने गंडासिंह को आँखें मूँदें-मूँदे सिर हिलाते देखा तो जहाँदादजी से बोले–"कल अपना बरखुरदार ज़ोरावरसिंह पिंड पहुँचा है। ज़रूर जहाज़ पर चढ़ने की परची मिल गई होगी।"

कक्कूख़ाँ बोले–"न जी, कहते हैं, छावनी से बिना छुट्टी किए घर लौट आया है। यह भी सुना है कि 'फरलो' हो गई है काके की।"

मुंशी इल्मदीनजी बोले–"चढ़तल ज़ोरावरसिंह की कुछ तोला-माशा कम ही जापती है!"

गंडासिंह उब्बड़वाहे उठ बैठे। धमकाकर कहा–"न काके अपने को कोई बिमारी और न ही वह छुट्टी पर। वह फ़ौज की फ़ीतियाँ वापस कर आया है। गोरे कप्तान के आगे रख दीं–अपनी वरदी सँभालो, आप्पाँ चले।"

जहाँदादजी परेशान–"कुछ खोल के बात बताओ। बादशाहो, यहे बड़ी संगीन

बात है।"

गंडासिंह ने अपना साफ़ा छुआ, फिर बोले–"ज़ोरावर बेवर्दी हो के आया है। इनकी पल्टन में तीस-चालीस बंदे थे। पुरानी भरती। सूबेदारी फ़ेहरिस्त निकली तो उसमें देशी नाम एक भी न था। खलबली मच गई। सबने मिलकर कमान अफ़सर के सामने अपनी शिकायत पेश की कि साहब, बताया जाए कि देशी बन्दे किस चीज़ में कम हैं! उनको तरक्की क्यों न मिले!

"बस जी, अगले दिन परेड में ही हुक्म सुना दिया गया कि डिंग-विंग करनेवाली टोली अपनी बन्दूक़ें जमा करवा दे! और इनके कन्धों से फ़ीते उतार लिए जाएँ!"

"यह तो मुअत्तल कर छोड़ा न लड़कों को! क्यों जहाँदादख़ाँ जी?"

जहाँदादख़ाँ ने गंडासिंह से पूछा–"यह मामला कोई छोटा-मोटा नहीं। कोई संगीन वजह मालूम देती है!"

"वजह बस यही कि फ़ौज-पल्टन हिन्दुस्तानी है तो उन्हें भी तरक़्की का मौक़ा बराबर मिलना चाहिए।

"कप्तान ने लड़कों को समझाया–'तुम्हारे क़सूर की सजा यही। तुम लोग इन्क़लाबियों से साजिश करके ऐसे काम करोगे तो ख़ता खाओगे।' जहाँदाद जी, ज़ोरावर बताता है कि लड़का था एक साहीवाल का–रोशन अली। बड़ा आला खिलाड़ी। उसने बड़ा रौबीला जवाब दिया–'कप्तान साहिब, हमारी भी बात पल्ले बाँध लो। जेकर फ़ौज में बराबरी न वरती गई तो हर देसी आदमी का दिल पिंजरे से बाहर निकलकर इन्क़लाबी हो जाएगा।'"

शाहजी कुछ सोचते रहे, फिर आवाज़ हौली कर कहा–"ज़ोरावर को कुछ दिन ननिहाल भेज दो। अपने पिंड में पुलिस-फौज़ की आवा-जाही ज़रा ज़्यादा ही। चंगा है, थोड़े दिन बाहर लगा आए तो।"

गुरुदत्तसिंह शरदूलसिंह का रुक्का-चिट्ठी ले बैठे–"शाहजी, शरदूलसिंह लिखता है कि मुल्क़ फ़ांस की ख़ल्कत अपने फ़ौजियों को देखकर बड़ी ख़ुश होती है। ख़ासकर ज़नानियाँ वहाँ की। सड़कों पर निकल जाए हिन्दोस्तानी टुकड़ी तो ऐसी हँस-हँस हाथ मिलाती हैं कि बन्दा मज़बूर हो के बाँहों में भर ले।"

मीराँबक़्श बोले–"बरक़तें फ़ौज की अपने फ़रज़ंदों को। ये तो मुँहमाँगी मिठाइयाँ हुईं न! चलो जी, गोला-बारूद की ऊँच-हेठ भी तो इन्हीं लड़कों ने सहारनी-सँभालनी हैं। मिलती है खुशी तो क्यों न कर लें!"

"बादशाहो, अपने गौहर की भी चिट्ठी-पत्री आई!"

"आई। मुझसे तो ज़रा संगता है। पर अपने भरा की तरफ़ चिट्ठी थी उसकी। लिखता है कि एक शाम पाँच-सात की टुकड़ी अपनी छावनी को लौट रही थी। रास्ते में एक बड़ी खूबसूरत गुलाबाँ ने पहले तो हाथ मिलाया। फिर चुम्मी दे दी। साथ चलते गोरे ने देखा तो हँसने लगा। गौहर ने पूछा–'आप ही बढ़-बढ़कर गले लग रही है। बताओ, क्या करूँ?'

"गोरा बोला–'ख़ुशक़िस्मत हो जवान। जाओ, इस प्यारी अंगना को ज़रा सैर करवा लाओ।'"

"फिर क्या हुआ मीराँबक़्श जी?"

गुरुदित्तसिंह बीच में कूद पड़े–"ओहो, होना क्या था! आई-गई में घूँट भर लिया होगा! और कोई झुग्गी तो नहीं डाल देनी थी लड़के ने कि आ बीबी, बच्चे बना और रोटी

पका!”

मैयासिंह हँस-हँस दोहरे हुए। गुरुदित्तसिंह को आँख मारकर कहा–“क्यों मेरे पुत्रा, है मरज़ी फ़्रांसी ज़ायका लेने की! चलो, आप्पाँ चलिए फ्रांस। क्या हुआ बूढ़े हैं तो, कुछ तो बची-ख़ुची चूल्हे में अभी बाक़ी होगी!”

फ़कीरे ने हँसकर कहा–“हद मुकाई है ताया मैयासिंह, शेर बूढ़ा होते-होते ही होता है।”

मैयासिंह की जैसे जवानी लौट आई। हँस-हँसकर कहा–“ओ मादरचोद लड्डुआ, मशकरी करता है! ओए, ताया तुम्हारा कफ़न की तैयारी में। अब कहाँ मिलेगा यह झूठा! नहीं मिलता रब्बा, अब नहीं मिलता।”

मजलिस ऐसी हँस-हँस दोहरी हुई कि खाँसियाँ छिड़ गईं।

आँखें पोंछते-पोंछते लोग सकते में आ गए–हँसते-हँसते ताया मैयासिंह का साफ़े-सजा सिर मंजी की पाटी पर जा लगा था।

काशीशाह ने हाथ से उठाया। आँखें थिर हो गईं। नब्ज़ देखी–ग़ायब। बूढ़ा शेर झटापटी में ही मैदाने-जंग की खन्दक पार कर गया था।

हाय-हाय री फफ़्फेकुट्टन, मामोठगनी, दिवारों के अन्दर खेल रचा लिए। टके-टके की तोलकर घर ढेर लगा लिए। हमने भी लगाए होते पेड़ हराम के अपने वेहड़े में तो दिन-रात डालों पर बुगतियाँ फूटतीं और औलाद हराम की बढ़ती! अरी, ख़सम किए दो तो पानी ग़र्कजाना कंडे तोड़ने लगा। जर के दित्तिए, जर के। मरजादा में न रही तो ढह लग जाएगी, ढह!

साँई दित्ती की छाती पर भभ्भड़ बल उठे। कोठे पर से आवाज़ दी–“ढह लगे तेरे टब्बर को।”

“कौन है माँ-प्यो पिट्टी बकारा करनेवाली सवेरे-सवेरे!”

“चुप री, जिवियाँ हज़म करके इस घर उंगल उठाने लगी!”

“फिटे मुँह! अरी दित्तिए, यहाँ तो पहले ही थुड़ है। ख़ैरों से एक जने का क़बीला है। तेरी तरह अपने जने का मौहरा नहीं दिया मौहरा।”

“तुझे दोज़ख मिले। झूठी तोहमते। सरताज मेरे को सरसाम हुआ था। होता न ज़िन्दा तो गिच्ची घुटट देता बोलनेवालों की।”

“तू तो जिन्दा है, तू उठा ले हाथ। अरी, तू चाहे भी तो हाथ न उठेगा। ख़ुदावन्दा क़रीम तेरे गुनाह जानता है। उसे तूने अपने हाथों ज़हर पिलाया।”

“चुप्प री, चुप!”

“क्यों न बोलूँ! जो मेहनत-मजूरी के सिर राख डाले और बटमार कमाइयों से घी के तड़के लगाए...”

“तड़के लगते हैं ख़ुदा के फ़जल से। तेरा क्यों कालजा जलता है! छटाँक-छटाँक जोड़ते नहीं, खाते हैं।”

शाहनी ने कान दिया–“मैंने कहा बिन्द्रादइये, यह क्या अँगियारी जल उठी सुबह-सवेरे!”

छोटी शाहनी हँसने लगी–“निकाल लेने दे गुबार शरीक़नियों को। बरस-छमाही इन्हें दौरा पड़ता है। जिसके पल्ले पैसे थे उसने जिवियाँ सँभाल लीं। दूसरों ने तो

मनछिट्टी-सा जलना है।"

चाची महरी कुटिया से लौटी थी। आवाज़ धीमी करके कहा–"दित्ती का बड़ा पुत्तर लौडेख़ाँ आया है कल। जहाज़ी बेड़े पर ख़लासी लगा हुआ है। जमीला बेसब्री कुछ तो अक़्ल करती! लड़का बड़ा चुप-चपीता है। ऐसा बन्दा भख जाए तो तन्दूर है तन्दूर! कहीं और गुल न खिला बैठे!"

दोनों मामे-फूफी की दुपहर तक बकारा करती रहीं।

भत्ते वेला खिलाकर लौटी तो साँई दित्ती ने पहल कर ली–"कुचज्जी दूसरों की गूँ-छीछी करे। बन्दा सुचज्जा हो, सौक्खा हो तो अपने साथ-साथ दूसरों की भी आबरू रखे।"

जमालो छिड़ गई–"बड़े छनकने छनका रही है! क्या तू ही जन्मी है इज़्ज़त-आबरूवाली! चाँदी के डंडियाँ छल्ले और पाव-पाव के कड़े देखे हैं किसी ने भला! अरी, दौलत कंजरियों के पास भी कम नहीं। देख आ ज़नानमंडी। हर कंजरी लदी-फदी है गहने-गट्टे से!"

जवाब की जगह जमीला ने दित्ती के चिट्टे रंग पर गुमान के ऐसे चमकार-टनकार देखे कि मुँह पर छित्तर फैंक दिया–"कंजरियाँ तुमसे चंगी। पैसा-धेला बटोरती हैं, पर री, ज़हर नहीं पिलातीं शरबतों में!"

साँई दित्ती ने गुस्सा-गुब्बार थूक डाला और जाकर अपना तन्दूर लीपने लगी।

जमीला और मची–"अड़िए, बदगुमानियाँ तेरी तभी तक जब तक जना तेरा दिवार बनकर खड़ा है। ख़ुदा के कारिन्दे नहीं छोड़ते गुनहग़ारों को। उधड़ जाएँगी लग्गियाँ-बद्दियाँ, उधड़ जाएँगी।"

साँई दित्ती ने हँडिया उठा चूल्हे पर रखी–"ख़ैरों से पुत्तर मेरा फ़रमाबरदार। मेरी तरफ़ से लटूनी भड़ी जले-खपे।"

"अगेतरे-पछेतरे मुरदे उठ आएँगे कब्रों से। मेरी पल्ले बाँध ले।"

"बाँधने को तो तेरा नक्का बाँधूँगी। मार बोल-बोल के दिल-पिंडा जला मारा।"

साँई दित्ती ने मूठ-भर सेंवइयाँ निकालीं और धी रेशमा को आवाज़ दी–"रेशमी, जा टुक हट्टियों से दो मूठ बूरा तो ले आ। भाई तेरे के लिए सेंवइयाँ राँध दूँ।"

जमीला हँसने लगी–"माँ बनके लाख कर ले खेखन, आख़ीर को तो दोज़ख ही मिलना है। क़त्ल-करतूतें नहीं छिपतीं।"

घर के सामने से चौधरी फ़तेहअली निकल पड़े। सुनकर धमकाया–"बीबी, ज़बान पर फंद डाल। पाँव सराहँदी हों या पवांदी, पीठ बीच में ही लगेगी।"

जमालो ने दुपट्टी सिर पर डाल ली–"सलाम पंचों की पगड़ियों को। किसे पता नहीं कि शरबत था कि मौहरा। चौधरहट्टा तो धोखा खा गया न!"

चौधरी फ़तेहअली के गोरे रंग पर मेहँदी लगी मूँछें भभकने लगीं। सिर उठाकर कहा–"धिए, गुजर गए को नपीड़ना चंगा नहीं। नग्गेजी आज भी बुरी और कल भी।"

चौधरी जी ने पाँव उठा लिए तो जमीला मुँह-ही-मुँह बुड़बुड़ाने लगी:

"चोर उचक्के चौधरी
और लुंडी रण प्रधान।"

साँई दित्ती की बन आई–"मुझे भाँवे सौ छित्तर मार, पर, री, चौधरहट्टे से तो हया-लाज़िमा कर। पंचों की पगड़ियों को हाथ डालने लगी। दुर फिटे मुँह!"

"हाँ री हाँ, जिवियाँ हमारी हड़प्प कर लीं और चौधरहट्टे के कानों में जूँ तक न

रेंगी। वे तुम्हारे इमदादी हैं, हमारे नहीं!"

दिन-ढले साँई दित्ती ने पुत्तर के लिए बटेर भून कुन्नी में डाले। बास्मती उबलने रखी तो ख़ुशबुएँ जमालो के सिर जा चढ़ीं।

कोठे से लगी लकड़ी की पौड़ी पर पाँव रख शरीक़ों के वेहड़े में झाँका और छिड़ गई–"खिला री, खिला। तेरा ही पहलौठी का खट्ट-कमा के घर नहीं आया। जो भी खट्टने-कमाने जाते हैं, बरस-छमाही परत घरों को आते हैं।"

साँई दित्ती ने अपने जने की ओर देखा। कमाल ने दिवार पर से मंजी उतार बिछाई और कुत्ता दुतकारने के बहाने जमीला को ख़बरदार किया–"दुरे...दुरे..."

जमीला मुँहफट्ट न रुकी–"कड़ाहियाँ चढ़ा रोज़-रोज़ पुलाव बना, पर री, ख़बरदार रहना पुत्तर से। बाप-सा भोला नहीं है कि तेरे हाथ से शरबत पी सोता ही सो जाएगा।"

दित्ती के हाथ से डोई थिड़ककर नीचे जा गिरी। सहमकर ऊपर बन्ने की ओर देखा। फिर कन्धे के पास जाकर कहा–"खुदातरसी, कुछ तो ख़याल कर। पुत्तर के सामने माँ को इतना जलील तो न कर। कभी तो मैंने तेरे साथ कुछ चंगा भी किया होगा।"

साँई दित्ती ने सिर नीचा किए-किए ही बर्त्तन-भांडे रखे। कनाली उठा तन्दूर पर रखी और दिल-ही-दिल ख़ुदावन्द क़रीम के आगे अर्ज़ की–"रब्बा, इस बेलज्जी का ध्यान हटा दे इस बात से। इस बूढ़े वेले कोई तमाशा न खड़ा कर दे।"

भैंस की ख़ुरली के पास कमाल ने मंजी बिछाई और बाँहें सिर के नीचे रख सीधा लेट गया और आसमान की ओर टिकटिकी लगा दी। कान जैसे लौडेख़ाँ के क़दमों का इन्तज़ार करने लगे। आँखों के आगे नज़ारा चलने लगा–लड़का दारे से चला। अरुढ़ियों के पास पहुँचा। हौदी पर से छलाँग भरी। अब इधर मुड़ा...

कमाल ने आँख झपक के देखा तो कहीं आसमानों से उठ बशीर का झौला-सा पड़ा और लौडेख़ाँ के चौड़े मुहांदरे से घुल-मिल गया। या अल्लाह, चाल तक वही! इतने बरसों के बाद यह घड़ी भी क्या परती!

साँई दित्ती ने हँडिया उतार एक कनाली में चावल डाले, दूसरे में रखी रोटियाँ और भुने हुए बटेर।

"आओ, पुत्तरजी, आओ। बैठो!"

फिर कमाल को हाँक मारी–"मैंने कहा उठ आओ, खा-पी लेटना।"

लौडेख़ाँ और कमाल ने बुरकी तोड़ी ही थी कि सामने बनेरे पर जमालो आ बैठी, "पुत्तर लौडेख़ाँ, तेरे होते इस घर में क्या कमी, पर टिक्काजी, भला हमारा हिस्सा क्यों मार लिया! तुम्हारे शरीक़ हैं, तुम्हारे दुश्मन-वैरी तो नहीं।"

साँई दित्ती को पुत्तर के सामने शह मिल गई–"झूठ कहती हो री जमालो, झूठ कहती हो। हम शरीक़ नहीं, वैरी हैं।"

लौडेख़ाँ ने आँखें उठा ऊपर देखा, सलाम किया जमालो को और हँसकर कहा–"ख़ाला, मामला तो कचहरी तय हो चुका। अब दुनिया-जहान को सुनाने-भड़काने से क्या फ़ायदा!"

जमालो नरम पड़ गई। आख़ीर को जवान-जहान लड़का–"पुत्तरा, तू सयाना है। आप ही बता, हैं कोई जट्ट के औलाद-अंश जिन्हें जिवियाँ प्यारी न हों! मल्ला मेरे कलेजे की न पूछ! मेरी कच्ची दिवारें भी फूँक रही हैं। पुत्तर, इंसाफ़ कर, आख़ीर को मैंने भी तुझे झोली में खिलाया-झुलाया है। सौंह है रब्ब रसूल की जो मैंने तुम्हें अपने फज्जू से

कम समझा हो!"

लौडेख़ाँ ने पहले माँ की और देखा, फिर चाचा कमाल की ओर। संजीदगी से कहा–"ख़ाला, मैं उसे कभी नहीं भूला। घर के लड़ाई-झगड़े एक तरफ़ और प्यार-मुहब्बत एक तरफ। इतने बरसों बाद घर आया हूँ, तुम भी कुछ चाव-मल्हार करो। नीचे उतर आओ और आकर कनाली से हाथ भरो। डिंग-विंग किया तो आज मैं रोटी नहीं खाता!"

कमाल ने ऊपर देखा और सहजे से आवाज़ दी–"सिकन्दरा, बाहर निकल। क्या हँडिया की खुशबू तुझ तक नहीं पहुँची?"

चावलों और बटेरों की खुशबू पर जमालो का अपना दिल फिसल आया– "देखो मेरे बहनूजे की बातें! साली समझो तो मैं, सालेहाज समझो तो मैं। अरे, मैं क्या तुम्हारी कुछ नहीं लगती? कचहरी चढ़ के रिश्ते नहीं बदलते।"

साँईं दित्ती ने सौ-सौ ख़ैरें मनाईं। लाड़ से कहा–"आ रही बडबोलिए, उतर आ कोठे से। मियाँ को साथ ले आ।"

जमालो हँसने लगी–"सुन री, तुमने तो जीता है मुक़द्दमा और हम ग़रीब मसकीन ज़ख़्मी हुए तुम्हारे हाथों। तुम्हारे घर बैठकर खाते अच्छे लगेंगे!"

लौडेख़ाँ ने रौबीली आवाज़ दी–"माँ, उठा के कनाली भैंस की ख़ुरली में डाल दे। अगर खाला और चाचा नहीं आते तो मेरे लिए एक बुरकी भी हराम है।"

जमालो के गोरे रंग पर काली दुपट्टी और कानों में चाँदी के बाले। हँस-हँस दोहरी हुई, फिर सिकन्दरे को आवाज़ दी–"जनेया, पहले शरीक़ नहीं थे मान, अब शरीक़ वड्डा एक और जम्म पड़ा। दावत छोड़ने का हुक़्म नहीं है तो पहुँचता बन।"

कनाली के आसपास रौनक़ें लग गईं। जमालो ने लौडेख़ाँ को बुरकी भन्नते देखा तो बशीर ज़िन्दा हो आया। वही चौड़ा हाथ, वही रोटी को दोहरा कर चार टुकड़े करने की जल्दी!

दित्ती ने हाथ देखा पुत्तर का, कलेजे भँवर पड़ गया। उठकर घड़े से प्याला भरा और मुँह को लगा लिया।

देखकर लौडेख़ाँ हँस दिया–"माँ, पहली बुरकी पर ही पानी!"

दित्ती ने बेटे से आँख न मिलाई। दिल के खप्पे में लुकी-छिपी हूक उठकर गले में आ अटकी।

कमाल को कुछ न सूझा तो ज़मालो से कहा– "लौडे को जट्ट जवाँई की सुना जो सास के साथ कनाली में घी-चावल खाने बैठा था।"

जमालो कानों के बाले मटकाने लगी–"लो और सुनो, कनाली पर बैठे मैं आख़्यान में क्यों वक़्त गँवाऊँ! न मल्ला, यह नहीं सरता!"

साँई दित्ती ने दिल की चिन्ता-फ़िकर छिपाने को कहा–"माहिया मेरी फूफी की धी है, जमालो किसी से नहीं हारती।"

जमालो चहकने लगी–"लौडेख़ाँ पुत्तरा, तुम्हें भानजा कहूँ, भतीजा, दोनों साक बनते हैं। अब आगे चल। मैं हूँ फ़रियादी तुम्हारे सामने। कचहरी में पीठ लगा दी हमारी और हमीं को तोहमतें!"

"ख़ाला, दिल से मैल निकाल दे। हुक़्म कर मुझे, पूरा न करूँ तो बाप का नहीं!"

सुनकर कमाल और साँई दित्ती ऐसे अलग पड़े ज्यों कनाली के ही दो टुकड़े हो गए हों!

"हुक्म कर ख़ाला!"

जमालो ने दित्ती की ओर देखा जैसे उसका पुत्तर जीत लिया हो और लाड़ से कहा–"जिए जागे पुत्तर लौडेख़ाँ, तेरी लम्बी सलामती! शाह से काग़द निकलवा के देख कल, जो हाथ रखनेवाली बात होगी तो टालियाँवाली ज़मीन छुड़ा दें! तेरे छोटे भाई तेरी आवाज़ पर चलेंगे।"

"हुआ कौल-क़रार ख़ाला!"

कमाल और दित्ती ने लौडेख़ाँ को कुछ सैनत करनी चाही, पर वह चाव-चाव ख़ाला से रुझा रहा।

सिकन्दरे ने बोटी मुँह में रखते-रखते एक नज़र कमाल को देखा और आँख चुरा ली। जमालो घोड़े-खोलनी जिनकी कनाली में खाएगी, उन्हीं के पुत्तर को सिखाए-पढ़ाएगी।

जमालो ने जैसे नज़रों को पढ़ लिया। मिट्ठा-मिट्ठा हँसकर कहा–"मल्ला क्यों न हो, बेटा किस बाप का है! पुज्ज के रहमदिली!"

लौडेख़ाँ का अब्बू लौडेख़ाँ के अपने दिल में धड़कने लगा। हाथ की रोटी हाथ में ही रह गई। माँ से पूछा–"भला क्या हुआ था चाचे को! याद करता हूँ तो कुछ झौला-सा पड़ता है। यहीं इसी वेहड़े में अब्बू लेटे हैं। ऊपर चादर पड़ी है। माँ ज़ोर-ज़ोर से करला रही है और आसपास पिंड झुक आया है।"

दित्ती के गले में फाँस अटक गई। साँस खींचा तो आँखें भर आईं।

जमालो की बन आई–"लौडे पुत्तर, बाक़ी तो रोना-करलाना ही रह गया था। वह सिंह जवान तेरा अब्बा। त्रिकालाँ वेले खेत से लौटा। बस माँ तुम्हारी शर्बत बनाकर लाई है। एक ही डीक में पीया और आँखें मूँद लीं। हाय अल्ला, क्या मौत थी! क़हर था क़हर!"

लौडेख़ाँ कमाल की ओर मुड़ा–"दूर के सिलसिले चाचा। यहाँ से दो-चार सपारे पढ़कर निकला था। मामू के साथ माँ ने नहरों पर भेज दिया। एक-दो बार आया भी तो दो-चार दिन रहकर चला गया। फिर क़दम उठा तो कराची जा पहुँचा। अपना घर क्या होता है, यह तो जाना ही नहीं। यह तो कहो जहाजियों के दिलों में बन्दरगाहें देख अपने-अपने जिवियाँ-पिंड ज़िन्दा होने लगते हैं। एक जहाज़ी यार मेरा साहीवाल का कहा करता है–लौडेख़ाँ, दुनिया-जहान घूम के आ जाओ, अपने कच्चे कोठे नहीं भूलते।

"माँ, उठो न! ज़रा बैठी रहो। सुननेवाली बात है! एक बार एक सहाबी ने प्यारे नबी से पूछा–'मैं सबसे ज़्यादा किसके साथ भलाई करूँ!' हजूर ने फ़रमाया–"अपनी माँ से।' सहाबी ने फिर पूछा–'उसके बाद?' हजूर ने फ़रमाया–'अपनी माँ से।' फिर पूछा–'उसके बाद?' हजूर ने फ़रमाया–'अपनी माँ से।' तीन बार प्यारे नबी ने यही जवाब दिया। चौथी बार पूछने पर फ़रमाया–'अपने बाप से।'"

साँई दित्ती सामने से बर्तन उठाने लगी तो लौडेख़ाँ बोला–"माँ, सोचकर आया था, इस बार तुमसे अब्बू की बातें सुनूँगा।"

दित्ती ने मुर्ग़ियों की झलानी की ओर मुँह कर लिया। पट खोला, बन्द किया, फिर आवाज़ दी–"ठहर पुत्तरा, मैं आई।"

दित्ती की आवाज़ ने कमाल को थरथरा दिया। डरी-सहमी-काँपती हुई आवाज़।

सिकन्दरा उठ खड़ा हुआ। उबासी लेकर कहा–"बटेरों की दावत तो ऐसी थी कि बन्दा खाँ के जुम्मे से जुम्मे तक सोया रहे।"

लौडे ने घुटनों पर हाथ लगा रोक लिया–"मेरी सौंह है चाचा, आज ज़रा बैठक

जमने दे! आप्पाँ कौन रोज़-रोज़ गाँव आते हैं!"

दोनों मंजियाँ आमने-सामने सज गईं। एक पर तीनों जने और दूसरी पर साँई दित्ती और जमालो।

जमालो ने पूछा–"निक्के-न्यानों को रोटी-टुक्कर तो खिला दिया है न!"

"खा-पीके कब के सो गए!"

लौडेख़ाँ ने अँधेरे में ही माँ का चेहरा लीप दिया–"माँ, जिस दिन अब्बू अल्लाह को प्यारे हुए, याद तो कर, उस रात घर में किससे टाकरा हुआ था!"

"पुत्तरजी, उस रात तो न कोई आया, न गया। गोद में बिठा तुझे तेरा अब्बा बुरकियाँ देता रहा।"

साँई दित्ती की आवाज़ लरज़ गई–"जेठ हाड की रातें डाडी गरम। पर अब्बू तेरा सारी रात तुझे अपने साथ लगाए सोया रहा!"

"फिर क्या हुआ माँ?"

दित्ती कुछ बोले कि बोले, जमालो छिड़ गई–"पुत्रा, रोज़ की तरह मुँह अँधेरे उठा है तेरा अब्बा। रात ज़रूर कोठे पर रौला पड़ा–चोर है, चोर है। लौडेख़ाँ, तुम तो छोटे थे, पर दूसरों के कहे-सुने तुम भी यही कहो कि चोर कोठरी में है..."

लौडेख़ाँ ने पहले माँ की ओर देखा, फिर कमाल चाचा की ओर–"चोर था क्या कोठरी में?"

"न रे, कोठरी में तो तेरी माँ सोई हुई थी!"

लौडेख़ाँ उठकर पैरों के भार बैठ गया–"माँ, याद तो कर, तुझे कोई झौला पड़ा हो अँधेरे में, खड़का आया हो!"

साँई दित्ती की ज़बान तालू से लग गई। सिर हिलाया–"न!"

लौडेख़ाँ ने बाँहें फैला अँगड़ाई ली। देखकर दो दिल दहल गए! सामने बशीर आ खड़ा हुआ अपने क़द-काठी के साथ।

लौडेख़ाँ ने बाँहें फैला हाथों के कड़ाके निकाले, फिर उबासी ले जमालो और सिकन्दर ने कहा–"चंगा चाचा! नींद आ गई लगती है। ख़ाला, कल तुम्हारे हाथ की भुनी खिचड़ी हो जाए!"

"सदके जाऊँ, एक बार छोड़ सौ बार। मैं आज रात ही तैयारी शुरू कर दूँगी। मैंने कहा बहना, लौंग-इलायची तो है न तुम्हारे पास? दो-चार दाने दे छोड़, पल्ले बाँध लेती हूँ!"

दित्ती ने जमालो की हथेली पर लौंग-इलायची रखीं तो उसने दुपट्टी के छोर बाँध लीं–"चंगा जी, कल खिचड़ी-गोश्त हमारी तरफ!"

सिकन्दर, जमालो उठ अपने कोठे पर जा चढ़े।

लौडेख़ाँ भैंस की ख़ुरली के पास जा टुक-भर को रुका, फिर बाहर चला गया।

कमाल मंजी पर बैठे-बैठे कभी आँखें मीटे, कभी खोले। छाती में उमड़-घुमड़ ऐसी ज्यों कोई वा-वरोला आना हो!

दित्ती पास आ खड़ी हुई और फुसफुसाकर कहा–"शरीक़ों ने लड़के को लशा दिया है। दो-चार दिन बाहर लगा आओ!"

कमाल ने हाथ से रोक दिया–"बस, बस, कुछ न कह! मेरे ओढ़ने के लिए दोत्तही ले आ!"

साँई दित्ती ने अन्दर बाँस पर से खेस उठाया। झाड़ा। बाँह पर डाले-डाले बाहर

आई कि लौडेख़ाँ का गँडासा कमाल की गर्दन के पार हो गया था:

"हाय ओ मेरेया रब्बा! पुत्तरा, यह जुल्म!"

"चंगा है माँ, ख़लासी हो गई। अब्बू का पुत्तर तो ज़िन्दा था न हिसाब-किताब चुकाने को! रूह अब्बा की मेरे चार-चौफेरे घूमती रहती थी। माँ, मंजी बिछा दे कोठरी में। मैं ज़रा ठौंका लगा लूँ। फिर थाना-परचा होना है!"

थानेदार को बैठक में सोता छोड़ शाहजी चुपचाप नीचे उतरे। नवाब को हिदायत दी। ऊपर आ काशीशाह को जगाया–"नवाब ज़ोरावर को घोड़े पर रियासत की हद तक पहुँचा आएगा। बाक़ी आप मुँह अँधेरे ज़रा खालसा को समझा आना। ठंडी बातचीत करे। थानेदार की बातों से मालूम होता है कि छानबीन यह ख़ुफिया महकमे की तरफ़ से है। दूसरा मामला गज्जनसिंह-दर्शनसिंह का ज़रा फ़िकरवाला है। कनाडावाले जहाज़ से उतर दोनों भाई ज़ख़्मी हो गए थे। सरकार को उन्हीं की ढूँढ़ है। आँख लगाए हुए है कि एक-न-एक दिन तो पिंड को पहुँचेंगे ही! तड़के ज़रा सरदारनियों को चौकस कर आना!"

"चंगा जी!"

खेत-पानी से फ़ारिग हो शाहजी और थानेदार संसारचन्द छाह वेला करने बैठे। लस्सी, मट्ठा, मक्खन और बेसनी दुप्पड़!

थानेदार को स्वाद-आनन्द में देख शाहजी बोले, "संसारचन्दजी, हम दोनों भाई खेती-ज़मीन से टँके रहे और देखो न आप बड़ी पढ़ाइयाँ करके कहाँ पहुँचे हो! पुलिस की अहलकारी तो बादशाही हुई न!"

संसारचन्द का तीख़े नक़्श-नैनवाला चेहरा अपनी हैसियत हालात सुन खिल-खिल पड़ा। हँसकर कहा–"कुछ वक़्त की बात ही समझो। क़िस्मत चल निकली!"

थानेदार को खुश देख शाहजी ने बारी ले ली–"परचे-अख़बारों में कुछ निकलता-निकलाता रहता है। कनाडावाले जहाज़ पर सरकार ने ज़रा ज़्यादा ही सख़्ती-जुल्म ढाह दिया है। मुसाफ़िरों से कहा–जहाज से उतरो! और पुलिस-फ़ौज़ को इशारा किया–गोलियाँ चलाओ!"

थानेदार संसारचन्द अपने मदरसी यार शाहजी के सामने ख़ुद ही सरकार बन गए–"इन ग़दरियों को सीधा करना ज़रूरी था। आपको मालूम नहीं, इन कनाडावाले ग़दरियों ने बड़े पैमाने पर सरकार के ख़िलाफ़ साज़िश की कि हक़ूमत का तख़्ता पलट देंगे। एक दिन मुक़र्रर कर लिया कि सूबा पंजाब की हक़ूमत अपने हाथ में ले लेंगे।"

शाहजी ने सिर हिलाया–"ली तो नहीं न!"

"नहीं ली, पर अपनी तरफ़ से कुछ कमी भी नहीं की। कनाडे में इनकी राहदारियाँ ख़त्म हुईं, उधर जहाज़ में चढ़ कलकत्ता आ पहुँचे!"

"और कर भी क्या सकते थे! मुट्ठी-भर आदमी, संसारचन्द जी, क्या हक़ूमत को हिला सकते हैं!"

"अन्दर-ही-अन्दर सरकार को ख़तरा तो पैदा हो गया न!"

"अपनी दबदबेवाली सरकार को हर्ज़ा पहुँचा सकने का दम रखना कोई छोटी-सी बात तो नहीं।"

"बात यह है कि सरकार सौ-सैंकड़ा या हज़ार-लाख बन्दों से नहीं डरती। ख़तरा खाती है तो बग़ावत के बीज से!"

शाहजी हँसे–"बीज तो, बादशाहो, उगते-उगते ही उगेगा!"

मदरसे में हमेशा अपने से आगे रहनेवाले शाह को पछाड़ने में संचारचन्द को मज़ा आया–"झाड-झंखाड़ नाकस होगा तो ज़रूर उखाड़ के फैंक दिया जाएगा! इधर ग़दर पार्टी, उधर इन्क़लाबी बंगाली–इन दोनों का बीज नष्ट करके रहेगी सरकार!"

खा-पीकर कुल्ला-साफ़ा सिर पर सजाया और थानेदार साहिब ने अपने ही वजूद से कचहरी लगा ली। पिंड इकट्ठा हो गया! पहली हाँक गंडासिंह को पड़ गई–"सरदार साहिब, आपका पुत्र ज़ोरावरसिंह फौज से दाग़ी होकर निकला है। भला, आजकल किस काम-धन्धे में!"

"जनाब, जट्ट के लिए तो या फ़ौज या खेत! किसान खेत छोड़े तो फ़ौज और फ़ौज छोड़े तो खेत!"

"ज़रा ज़ोरावर को बुला भेजो घर से!"

गंडासिंह बड़े खच्चरपन से मंजी पर डट गए। सिर हिलाया–"न ठानेदारजी, आपका काम बनता नहीं दिखता। बात यह है कि ज़ोरावर इन दिनों अपने ननिहाल गया हुआ है नहरों पर!"

संसारचन्द की नाक और कुल्ला एक ही सीध में हो गए–"ज़ोरावर के जोड़ीदार पकड़े जा चुके हैं, छिपाने की कोशिश बेकार है!"

"ठानेदारजी, घर-पिंड आपके आगे हाज़र है, बेशक़ देखो! तलाशी लो! ज़ोरावर ख़ैरों से जवान-जहान लड़का है, कोई कुच्छड़ खेलनेवाला बाबा गुड्डा तो नहीं कि किसी मंजी के हेठ या किसी घड़े-भड़ोले में लुका-छिपा दिया जाए!"

कर्मइलाहीजी ने टोका–"गंडासिंह, आदत न गई तुम्हारी मशकरी-मज़ाक करने की। थानेदारजी, ख़याल न करना खालसा की बातों का। स्वभाव से ही हँसोड़ है। फ़ौजी टब्बर ठहरा। वर्दी में हुए तो सरकारों के लिए लड़ छोड़ा, खेत पर हुए तो काम-धन्धे से फारिग हो हँस-हँसा छोड़ा।"

थानेदार की त्योरियाँ चढ़ गईं–"त्रिकालाँ तक आ जाएगा!"

"न जी। अब तक मामे के साथ तो ख्योड़ा जा पहुँचा होगा।"

थानेदार ने नाक फुलाया तो मूँछें चौड़ी होकर पसर गईं–"क्यों, वहाँ क्या नमक का ठेका लेने का इरादा है?"

"न जी! बादशाहो, वह बड़ा लूण-हरामी है। कमाकर चार पैसे बाप के हाथ पर रख सके, ऐसा कम्म उसने कभी नहीं करना!"

शाहजी ने थानेदार की ख़रमस्ती कम करने को कहा–"आ जाएगा थानेदारजी, आपके अगले दौरे तक तो माजूद होगा ही।"

थानेदार बड़ी दिलचस्पी से गंडासिंह को घूरते रहे, फिर सिर हिलाकर कहा–"ज़ोरावर को वापिस बुला भेजो। सरकारी पूछताछ गोगा-गोगी का खेल नहीं।"

"क्या कहूँ थानेदारजी, फ़ौजी जवान की अक़्ल-बुद्ध मुझसे पूछो। खुद मुख़्तियारी और मग़रूरी दोनों ही।"

चौधरी फ़तेहअली ने सयानफ़ बरती–"जनाबे-आला, इस पिंड के तो जवान ज़्यादातर फ़ौज में ही। बड़े चावों से भरती हुए हैं! अपने काका ज़ोरावर की क्या खोज-बीन है! हमारे जाने तो आजकल उसे 'फरलो' लगी हुई। तभी छुट्टी पर है।"

थानेदार संसारचन्द ने सारे पिंड को एक बार ही चित्त करना ज़रूरी समझा–"चौधरी जी, अपने लड़के-बालों पर ज़रा निगरानी रखिए। मोगा ख़ज़ाना

लूटनेवालों का जोड़ीदार आपके पिंड का लड़का हो, यह गाँव के हक़ में अच्छा नहीं!"

शाहजी ने तह परतायी–"थानेदार साहिब, कहीं कुछ गड़बड़ मालूम देती है। आप मालिक हैं, पर कहाँ मोगा ख़ज़ाना लूटनेवाले और कहाँ तीन पीढ़ियों का फ़ौजी टब्बर! कहाँ मोगा फ़िरोजपुर, कहाँ यह पिंड़!"

थानेदार गंडासिंह पर नज़र गड़ाए रहे–"जो अपने कन्धे की पट्टी उतार कप्तान के आगे फैंक दे, उसका इलाज सरकार के पास है। बाक़ी मोगावाला जुर्म..."

गंडासिंह ने पगड़ी उठा ली–"ठानेदारजी, जब लूटा गया था मोगा ख़ज़ाना, उस वक़्त ज़ोरावर अपनी पल्टन में तैनात था। बेशक़ उसकी पल्टन से सही करो!"

थानेदार संसारचन्द की आँख बँध गई। भृकुटी तन गई। देखनेवालों ने जान लिया कि भब्भड़ मचने को है। मचेगा।

शाहजी ने चुपचाप ही हाथ से इशारा किया और बिना किसी गल्ल-बात के मंजियाँ खाली हो गईं।

शाहजी ने लस्सी-पानी के लिए आवाज़ दे दी। ठानेदार कुछ सोचते रहे, फिर हक़ूमती अदा से कहा–"जिस पिंड में दो-चार घर ग़दरियों के हों, उसे सरकार शक़ से देखती है। गज्जनसिंह-दर्शनसिंह दोनों भाई गोली से ज़ख़्मी हो कितनी ही देर पुलिस को चकमा दे सकेंगे! शाह साहिब, दोनों की घरवालियों से कुछ उगलवाया जा सकता है क्या?"

शाहजी ने हाथ से इशारा किया–"जनाब, यह फ़ौजी पिंड है। इस वक़्त हर घर का बच्चा पलटन में। आपका सरदारनियों से बात करना कुछ अच्छा असर न डालेगा।"

"आप सरकार के ख़ैर-ख़्वाह हैं। इन सब ग़दरियों-झगड़ियों पर आँख रखें! मेरी ख़बर मुताबिक ज़ोरावरसिंह अपने पिंड में माजूद है!"

शाहजी के ओठों पर अजीब-अनोखी हँसी उभरी। सिर हिलाकर कहा–"अर्ज़ यह है कि पिंड शहर नहीं होता। एक पत्ता भी खड़क जाए तो वह भी सबकी जानकारी में। सरकार सात ख़ून माफ़ कर दे पर ग़दरियों की अफ़वाह पर भी पुलिस-चौकी तैनात कर दे!"

थानेदार उठकर जाने को तैयार हुए। नवाब ने घोड़ा खोल उनका बाहर खड़ा कर दिया। शाहजी ने हाथ मिलाया तो थानेदार दोस्ताना निभाने को बोले–"गंडासिंह और गज्जनसिंह-दर्शनसिंह के टब्बर पर आँख रखिएगा। सरकार आपसे इतनी उम्मीद ज़रूर रखती है!"

छोटेशाह थानेदार संसारचन्द को नौशहरेवाली राह पर डालकर हवेली पहुँचे तो मजलिस पूरी-की-पूरी जमी थी।

चौधरी फ़तेहअली बड़े फ़िक्रमन्द–"शाह साहिब, जो भी कहो, यह शुरुआत चंगी नहीं। हुआ कोई डाके-क़त्ल में ठानेदार-दारोगा आन पहुँचा, पर इन्क़लाबी-गदरी मामलों की खोज़-बीन आज तक तो अपने पिंड में की नहीं गई!"

मौलादादजी ने सिर हिलाया–"देखा जाए तो इधर मुँह करके किसी को हाँक मारनी कोई अच्छे आसार नहीं।"

जहाँदादजी बोले–"ज़ोरावरसिंह का फ़ौज से अलग होना तो हक़ीकत है ही। शक़-सुबह में ही..."

"बादशाहो, इसलिए नहीं कहता कि लड़के का बाप हूँ, पर सोचनेवाली बात यह है कि मोगा ख़जाना कब तो लूटा गया और थानेदार की चोह-म-चोह अब शुरू हुई है।"

मीराँबक़्श बोले–"शाह साहिब, याद तो कुछ पड़ता है कि आपने परचे से पढ़कर यह ख़बर सुनाई थी।"

"ग़ालिबन यह पिंड मिश्रीवालवाला क़िस्सा है। पाँच-छह ग़दरियों ने मिलकर सरकारी ख़ज़ाना लूटने की कोशिश की थी।"

मुंशी इल्मदीन चमक उठे–"ग़दरियों ने मोगा अड्डे से तीन टाँगे किए और बैठकर मिश्रीवाल पिंड की ओर बढ़ चले। पिंड में बशारत अली, ज्वालासिंह ज़ैलदार और कुछ दूसरे लोग पुलिस कप्तान का इन्तज़ार कर रहे थे। उसका दौरा लगा हुआ था उस दिन! ग़दरियों के टाँगे पहुँचे तो बशारत अली ने रुकने को आवाज़ दी। इधर पहला टाँगा रुका, उधर आगे बैठे जगतसिंह ने बशारत अली को गोली मार दी।

"गोलियाँ चलती देख जैलदार और दूसरे लोग भज्ज पड़े। जगतसिंह ने उठाकर जैलदार को भी गोली मार दी। गिनकर छः बहादुरों की टोली थी–जगतसिंह, बक़्शीशसिंह, लालसिंह, ध्यानसिंह, जयवारेसिंह और काशीराम जोशी।

"पिंडवालों ने आवाज़ सुनी तो समझा, डाकू हैं। बस इकट्ठे होकर घेरा डाल लिया। सुनने में आता है, जगतसिंह पकड़ा गया, बाक़ी अब तक फरार हैं।"

मौलादादजी ने एक लम्बी नज़र शाहजी तक पहुँचाई और सिर हिलाकर कहा–"शाह साहिब, पुलिस ने मोगा, फ़िरोजपुर छोड़कर मुँह इधर कर लिया है, कुछ तो वजह होगी।"

गंडासिंह हँसने लगे–"मुंशीजी, इबारत तो आपको मूज़बानी याद है। सवाल अब यह है कि गए तो मुजरिम कहाँ गए!"

मजलिस फीकी पड़ गई।

मुंशी इल्मदीन भड़क उठे–"खालसाजी, न मैं थानेदार, न सिपाही। जो परचे में पढ़ा, वह सुना दिया।"

ताया तुफ़ैल सिंह ऊँघ रहे थे। साक्खयात अख़बार बनके उठ खड़े हुए–"बादशाहो, पिछली बार बंगाले से आते हुए लाहोर रुका तो जिधर सुनो चर्चा ग़दरवालों की। दिवारों पर ग़दरियों ने इश्तहार लगाए हुए:

तुम्हारा नाम क्या–ग़दर!
तुम्हारा काम क्या–ग़दर!
तुम्हारा पेशा क्या–ग़दर!
तुम्हारा ईमान क्या–ग़दर!"

मुहम्मदीन बोले–"बादशाहो, यह तो बड़ा खरुदी काम हुआ। इस वक़्त सरकार अपनी जंग में रुझी हुई है। अपनी फ़ौजें ज़ोरो-शोरों से लड़ रही हैं। ऐसे वक़्त यह नारा इन्क़लाबियों का ठीक नहीं।"

"ग़दरवालों का नारा यह कनाडा से ही चला है!"

"बादशाहो, सोचनेवाली बात है। हक़ूमत दिल्ली में बैठी हो और लड़ाई-बग़ावत छेड़ लो आप कनाडा से तो बात कहाँ तक बन आएगी।"

गुरुदित्तसिंह बोले–"बात यह है बादशाहो कि बाहरी मुल्क़ों में हिन्दुस्तानी रियाया की हुंडी बोली ज़रा नीवीं पड़ती है।"

दीनमुहम्मद ने सिर हिलाया–"हुआ जो अंग्रेज़ के हेठ मुल्क़ अपना। बेशक़ हो, पर बन्दे अपनों से सहन नहीं होना। कहीं कुछ ख़राबा न कर बैठें।"

शाहजी की आँखों के आगे अख़बार की सुर्खी घूर गई–"यहाँ के रहनेवालों को

अफ्रीका में घटिया मनुक्ख समझा जाता है। बरस-छमाही रुक्का-पत्री अपने बहनोई साहिब की आती रहती है न!"

कर्मइलाहीजी ने पूछा–"कौन, अपने सावनमलजी!"

शाहजी ने सिर हिलाया–"हाँ। कोटला रव्वली ख़ाँ से पाँच-सात आदमी इकट्ठे जहाज़ चढ़े थे!"

"पैसा-धेला तो चंगा पर सलूक हिन्दोस्तानियों से मुसल्लियोंवाला ही समझो। टोका-टाकी। आप यहाँ नज़र न आओ। आप इस मुहल्ले में न जाओ। यहाँ न देखे जाओ! रात को सड़क पर न चलो।"

"बादशाहो, यह तो बड़ी ज़लालत हुई न बाहर जाकर!"

मौलादादजी तपने लगे–"मतलब यह कि बन्दा गया मेहनत करने, कमाने और आगे से यह सलूक। मुल्क़ों की संझाली भरापरी फिर कैसी!"

'छापे में भी ख़बरें तो आती रहती हैं कि हालात अफ्रीका में चंगे नहीं। एक गुजराती वकील मोहनदास कर्मचन्द गांधी अफ्रीका पहुँचे हुए हैं। बन्दा ज़िद्दी मालूम देता है! बैठ जाए पथल्ला मार के कि सरकार करती रहे जुल्म-ज़्यादतियाँ, आपाँ ने अन्न-पानी मुँह नहीं लगाना!"

"शाह साहिब, भला यह क्या मस्ती-मलंगी हुई!"

"वकील हुआ–उसकी अपनी जिरह। बेइंसाफ़ी आपकी, पर सज़ा मैं अपने को दूँगा।"

चौधरी फ़तेहअली सिर हिलाने लगे तो हिलाते ही चले गए–"बादशाहो, यह भी कोई नई ही तर्ज़-तबह है!"

कर्मइलाहीजी को खाँसी छिड़ गई–"शाहजी, यह ज़िदबाज़ी घरों में भी चलती है न अक्सर! छाप छल्ला बनवाना हो तो सवानी अपना रोटी-पानी बन्द कर दे। यही कि घड़वा के दो, नहीं तो भूखी ही मरूँगी!"

नजीबा हँसने लगा–"बादशाहो, बात तो कुत्ता फँसने की है, जिसका भी फँस जाए। जेकर सरकार का फँस गया कुत्ता तो गुजराती वकील की सुनवाई पक्की!"

मीराँबक़्श बोले–"शाहजी, भला कौन-से टब्बर का है यह वकील? गुजरात जेहलम में भी हैं तो सही गांधियों के घर-टब्बर!"

शाहजी ने सिर हिलाया–"नहीं मीराँबक़्शजी, यह बन्दा अपने गुजरात का नहीं। एक दूसरा भी बम्बईवाला गुजरात है।"

मुंशी इल्मदीन ने सिर हिलाया–"जी, बोहरों और खोजों का वतन पड़ता है उधर। वहीं के होंगे वकील साहिब!"

गंडासिंह शुरू हुए–"कनाडावालों का कहना है कि अगर सरकार अंग्रेज़ी एक है सारी रियाया के लिए तो मुल्क कनाडा में हमारे लिए दुजैगी कैसी। वहाँ पन्द्रह-बीस हज़ार पहुँचा है अपना पंजाबी। आगे ख़ैरों से टब्बर होंगे! बढ़ेगी गिनती प्रजा की!"

शाहजी बोले–"जो कुछ हालात पता लगते हैं, इसमें एक वजह ख़ारबाज़ी भी है!"

कर्मइलाहीजी ने हुक्का छोड़ पूछा–"वह कैसे बादशाहो?"

"मेहनत करने में पंजाबी बन्दा चीनी-जापानियों से ज़्यादा मेहनती। दूसरे ज़रा माड़े। बस, ख़ुड़बा-ख़ुड़बी हो गई।"

"पर जी, सरकार तो इंसाफ़ करे!"

"सरकार ने राहदारियों बारे क़ानून लागू कर दिया। दो सौ पाउंड तो हो गए

जाने के और जेकर साथ जा रही हो घरवाली तो दो सौ और गिनो! बड़ी सख़्ती हुई न! इस मारे कई हज़ार बन्दे छोड़ आए हैं मुल्क़ कनाडा।"

काशीशाह बोले–"रेल पड़ने लगी कनाडे तो बन्दा अपना तो काफी गया था न! पार के साल मैं गुजराँवाला गया ख़रीदारी करने तो दुकान पर सरदार हरबंससिंह से टाकरा हो गया। गल्ल-बात होती रही।

"कहने लगे कि पहले डाक्टरी होती थी अपने बन्दों की हांगकांग। हुक़्म सरकारी यह कि उन्नीस-इक्कीस देखो तो पास न करो।"

"अपने लोकों ने कहा–बेशक ठोक-बजा के देखो। अपने बन्दों की मशीन बुरी नहीं।

"यहाँ ज़रा ढिलाई हुई तो वहाँ पहुँच के लोकों की और बुरी हुई।"

गंडासिंह ख़बरे अब तक क्यों चुप थे। गुरुदित्तसिंह से कहा–"आप जी के साले का टब्बर पहुँचा हुआ लम्बिया, भला बोलते क्यों नहीं!"

छोटे शाह ने सही किया–"लम्बिया नहीं, मुल्क़ का नाम कोलम्बिया है।"

"चलो वही सही। हुआ यह शाहजी, कि मेरा साला और सालेहाज दोनों तैयार हुए जाने को। किसी ने इत्तफ़ाक से मेल करवा दिया भाई भागसिंह और भाई बलवन्तसिंह से। दोनों कनाडा गुरुद्वारे के ग्रन्थी और प्रधान थे। साथ थीं उनकी सरदारनियाँ। मेरा साला और सालेहाज भी उनके साथ लग गए।"

फ़तेह अलीजी ने सिर हिलाया–"होता ही है न, देस-परदेस का मामला! साथ-संग हो तो चंगा।"

"जी, पहले तो हांगकांग कई टंटे पड़े। कर-करा के पहुँचे कनाडा तो देखो गोराशाही क्या करती है। भाई भागसिंह और बलवन्तसिंह को तो जहाज़ से उतरने दिया और उनकी घरवालियों को क़ैद कर लिया!"

"गुरुदित्तसिंह, तुम्हारे साले-सालेहाज का क्या हुआ?"

"मियेख़ाँ, वही जो दूसरों का हुआ। इन दोनों को हिरासत में ले लिया गया।"

"कक्कूख़ाँ ने पूछा–"बादशाहो, यह पता लगाना था कि अंग्रेज़ी हवालातें कैसी हैं!"

फ़कीरा हँसने लगा–"जो हो ही हवालात तो उसकी क्या चंगिआई और क्या बुराई!"

शाहजी समझ गए। सिर हिलाया–"नहीं फ़कीरया, यह बात ऐसी नहीं! देखो, अपने मुल्क़ की सारी जेल-हवालातों से कालेपानी की जेल सबसे नाकस और क़ैदियों के लिए बड़ी डाडी!"

मौलादादजी खुश हुए–"क्यों न हो कक्कूख़ाँ, आख़िर तो भाई का दिल है न! तार जा बजी वज़ीरे के पास! वैसे बात करता हूँ, जेल गुजरात की भी बड़ी डाडी मशहूर है।"

कृपाराम ने सोच-सोच के बात निकाली–"खालसाजी, जेकर कनाडा में बन गया गुरुद्वारा तो भू-ज़मीन तो आख़िर सरकार ने ही दी होगी न! यह तो बात बुरी नहीं। चंगी ही है।"

चौधरी फ़तेहअली बोले–"सुनने में आता है कि शहर लन्दन में भी बड़े रौब-दाबवाली मस्जिद बनाई जा रही है। इस मामले में तो कोई भी सरकार टोका-टाकी नहीं कर सकती।"

मीराँबक़्शजी को बड़ी ख़ुदख़ुदी–"मैंने कहा ग्रन्थी और प्रधान का क्या हुआ!

गुरुदित्तसिंहजी, आपका साला और सालेहाज...”

“लोगों ने मिल-मिलाकर वहाँ की कचहरी में फ़रियाद कर दी। आला इजलास ने हुक़्म दे दिया कि सबको छोड़ दिया जाए!”

“यह तो इंसाफ़ चंगा ही है!”

“अपने बन्दों में वहाँ कई बड़े सयाने अक़्लमन्द और तगड़े अमीर। एक गुजराती सेठ हुसैन रहीम और पशोरी आत्माराम ने बड़ा पैसा दिया अपने लोकों की मदद के लिए। कचहरी-मुक़द्दमे का सारा खर्च़ा।”

“वाह-वाह, परदेश में तो ऐसे बन्दे निहत्थों के हत्थ हुए न!”

“ठहरो, भुलेक्खा पड़ रहा है–एक और नाम भी लेता था मेरा साला। पादरी हाल साहिब–अंग्रेज़ पादरी हिन्दोस्तान से ही पहुँचा हुआ था वहाँ!”

नजीबा बोला–“क्या पता अपने जलालपुरवाले पादरियों का ही कोई साक-अंग हो।”

“न जी! पादरियों का पादरियों से इतना ही साक-सम्बन्ध जितना मौलवियों का मौलवियों से और पंडितों का पंडितों से।”

गुरुदित्तसिंह कोई और सवाई कहना चाहें पर याद न आए। आँखें बन्द कीं तो साले की बातचीत ताज़ी हो गई–“बादशाहो, बाहर जाकर खालसों ने बड़ी-बड़ी माया कमाई। मलाया-सिंगापुर के ठेकेदार सरदार गुरुदित्तसिंह ने अपने बन्दों की तक़लीफ़ सुनी कि इन्हें गोरा जहाज़ों पर टिकट देने में बड़ी हीलो-हुज्जत की जाती है तो बादशाहो, गुरुदित्तसिंह ने अपने बन्दों के लिए जहाज़ खरीद लिए! लाखों-करोड़ों के सौदे!”

“बादशाहो, औक़ात हुई न!”

गंडासिंह बोले–“एक और बन्दे की बड़ी मशहूरी है। सरदार ज्वालासिंह। अपने तेज़ हुशियार लड़कों को अमरीका में पढ़ने के लिए उसने चार वज़ीफ़े लगा दिए। कर्मइलाहीजी, यह कोई छोटी बात नहीं। यह समझ लो दहेज, बर्तन-भाँडा, मंजी-पीढ़ी, सगुण-तम्बोल, लेन-देन एक धी का और वजीफ़ा एक पढ़ाई का खरा!”

गुरुदित्तसिंह को कुछ सूझ ही गया–“मुझसे पूछो शाह इंगलिस्तान विलायत में बैठा है और हुक़्म हासिल उसका हमारे मुल्क़ में चल रहा है। यही कारसाज़ी यहाँ भी बरतेगी। इन्क़लाबिए और ग़दरवाले सरकार को ख़ुड्डे लगा के रहेंगे।”

कर्मइलाहीजी ने हुक्का हाथ से परे कर दिया–“अपना इलाक़ा तो ख़ैरख़्वाह है सरकार का। भरती सबसे ऊँची इन पिंडों की। भला ऐसी बेमुरव्वती यहाँ की रियाया क्यों करने लगी!”

काशीशाह कुछ कहने ही जाते थे कि ताया तुफ़ैलसिंह अपनी जानकारी और बंगाले का डंका बजाने लगे–“कुछ भी कहो, इन्क़लाबी बन्दे बंगाल के बड़े बहादुर। इनके नाम-काम से अंग्रेज़ की माँ मरती है। वहाँ घर-घर में इन्क़लाब बिरादरी। सुबह-सवेरे उठो और दिवारों पर इश्तहार लगे हुए हैं–मर जाएँगे या मार डालेंगे!

“कभी किसी इन्क़लाबी के सिर पर इनाम की पेशक़श, कभी किसी का हुलिया। इनाम पाँच हजार। मज़बूत काठी। रंग गंधमी। न ज़्यादा गोरा, न काला। बन्दा बंगाली लगता है। कपड़े दूसरे पहन ले तो पंजाबी भी लग सकता है। हाथ की तीसरी उँगली पर ज़ख़्म का निशान है।”

शाहजी बोले–“यह बात काफ़ी पुरानी है। बड़े लाट पर दिल्ली में बम फेंकनेवालों

के बारे में था यह, कई परचों में शाया हुआ। लाट का जलूस दिल्ली के चाँदनी चौक से निकला तो हौदे पर बम मारा गया! लाट बराबर ज़ख़्मी हुआ था।"

कृपाराम इस मज़मून से खीझ गए–"चंगी भली ख़लकत आराम से रह रही थी। पर उपले को आग लगा छोड़ी–धुखते रहो! ओ जवान पुत्र सरकारी फ़ौजों में ही तैनात है न! यह तो नहीं कि किसी राजे-महाराजे की फ़ौज है। कुछ तो दरगुज़र हमें भी करना चाहिए न।"

कुक्कूख़ाँ ने हामी भरी–"बादशाहो, बात तो कुछ दिल-मन लगती है।"

गंडासिंह चिढ़ गए–"क्यों जी, हम दिल के इतने पीले हो गए कि मार इन्क़लाबिए फाँसियों के तख़्तों पर झूलें और हम अपने ज्ञान-चक्खु बन्द कर सरकार का गुनगाण करें! बादशाहो, यह नहीं होना..."

दीन मुहम्मद अभी आकर ही बैठे थे मंजी पर–"रियाया उठ-उठ सरकारी बन्दों पर गोलियाँ-बम चलाने लगे–यह भी तो वाज़िब नहीं! अपनी गुजरातवाली फूफी के जवाँई मुहम्मद मूसा इसी खेल में बुरी तरह ज़ख़्मी हो गए!"

शाहजी ने पूछना ज़रूरी समझा–"दीनमुहम्मद, यह क्या मामला था भला!"

"शाह साहिब, हुआ यह कि तीन सरदार लाहोर अनारकली से टाँगे में गुज़र रहे थे। दारोग़ा मुहम्मद मूसा ने सोचा, हो-न-हो इनके पास तलवारें हैं। शक-ही-शक में हाथ दे टाँगा रोक लिया।

"टाँगा रुकते ही सज्जनसिंह ने पुलिस पर गोली चला दी। मुहम्मद मूसा के साथ खड़ा सिपाही मासूमसिंह। वहीं ढेर हो गया और मूसाख़ाँ दरोग़ा ज़ख़्मी होकर हस्पताल पड़ा रहा। यह ख़बर छापे में ज़रूर आई होगी!"

काशीशाह बोले–"हाँ, ख़बर में था कि सज्जनसिंह कचहरी में पेश हुआ तो उसने डंके की चोट कहा–"जो भी कोई मेरी आँखों के आगे हिंदोस्तान के ख़िलाफ़ काम करेगा, मैं उसे छोड़ता नहीं। उसकी ख़लासी मेरे हाथों होकर ही रहेगी।"

"नांगल-कलाँ हुशियारपुर का जैलदार चन्दनसिंह ख़ुफिया तौर पर इन्क़लाबियों की ख़बरें सरकारे पहुँचाया करे। लालच यही कि ख़िल्लत-ख़िताब मिल जाएगा कुछ सरकार से तो चंगा ही है।

"इधर इन्क़लाबी मजलिस ने फ़ैसला किया कि चन्दनसिंह का काम तमाम कर दिया जाए! काम यह सौंपा गया बन्तासिंह और बूटासिंह को।"

फ़तेहअली जी पूछ बैठे–"देखा नहीं अपना बूटासिंह! गया तो था न भरती में!"

गुरुदित्तसिंह बोले–"बराबर बादशाहो! सुनने में ऐसा आया है कि कम्पनी अभी उसकी कानपुर या कलकत्ता पड़ी है। हुक्म होगा तो जहाज़ चढ़ जाएँगे।"

मुंशी इल्मदीन ने सचमुच में ही नई सुना दी–"यह सुनो बादशाहो, ज़रा पुरानी बात है। द्वाबे के रहनेवाले एक बूटासिंह ने बैठे-बैठे फ़ैसला कर लिया कि नहीं मानती हक़ूमत किसी की! और लाहोर-अमृतसर के रास्ते पर अपनी चुंगी-चौकी जमा-सजा ली। सरकारों की तरह दर मुक़र्रर कर ली।

"गड्डा छकड़ा लाँघ के जाए तो दो आने। घोड़ा दो आने। गधा एक पैसा। बाक़ी जो भी निकल जाए, सब दो पैसे।"

बैठक को बड़ा मज़ा आया–"बादशाहो, ख़याल तो वाह-वाह है। न चोरी-चकारी, न ठगमारी। अपने चौकी-चुंगी पर बैठ गए और मेहनत की खट्टी कमाई।"

"ख़बर पहुँची सूबेदार जक़रियाख़ाँ को। उसने चुंगी पर कब्जा करने को सिपाही

भेज दिए। बूटासिंह तड़ गया। कहे, ज़िन्दा-जी सलामी देनी नहीं, लेनी है! ज़करिया ने टुकड़ी भेज दी सवारों की! बूटासिंह ने पैसा-धेला ग़रीबों में बाँट आप हथियार उठा लिया और लड़ते-लड़ते खेत हो गया।"

"बादशाहो, बन्दा मिजाज़ से हो बहादुर तो भला बहादुरी भी कहीं छिपी-ढुकी रह सकती है!"

कृपाराम कहीं से कुछ और निकाल लाए–"सावनमल के पास तो थी दिवानी मुल्तान की और जालन्धर द्वाब की मिश्रा रूपलाल के पास! मिश्रा रूपलाल मामला लगाए ज़रा हल्का और जिवियोंवाले बड़े ख़ुश। चस्का उसको यह कि पूरी-की-पूरी ज़नाना रियाया को वह सीधा अपने हेठ समझे। सुनो मिश्रा रूपलाल क़ाबू कैसे आया।

"एक शाम मिश्राजी एक ख़ूबसूरत खत्राणी के पास जा पहुँचे। खत्राणी का घरवाला गया हुआ था दूसरे शहर, सो दिवानजी अपने बेफिक्री से बैठे। इत्तफ़ाक, हाट-व्यापारी खत्री जल्दी पलट आया। मिश्रा को देखा अपने पसार में तो उठा के मारा तेसा खब्बे मोंडे पर। दिवान साहिब ज़ख़्मी हो गए। ठीक हुए तो जिधर से निकलें, आवाज़ें पड़े–दिवान साहिब, बड़ा जुल्म हुआ। सूझी भी तो उस भडुवे खत्री को यह क्या सूझी!"

क़क्कूख़ाँ, नजीबा, फ़कीरा हँस-हँस दोहरे हुए।

मौलादादजी ने दिल-ही-दिल ख़ूब मज़ा लिया, फिर एक लम्बा सूटा मारा और दाना आवाज़ में कहा–"हो गई न ज़रा बेइतियाती! वह घड़ी ख़ैर से निकल जाती तो निकल ही जाती।"

काशीशाह ने मज़मून बदल दिया–"कनक कमेटी लन्दन में बैठी-बैठी हर फ़सल के भाव मुकर्रर करती रहती है। पहले कनक की दर चार रुपए मानी। फिर भाव चढ़ा साढ़े पाँच। छः तक भी हो गया। मोहर सोलह से हो गई बीस। हाँ, कपाह और रुई सस्ती ज़रूर हो गई है।"

मियेख़ाँ बोले–"चलो चंगा है–लोगों की रजाइयाँ बन जाएँगी।"

फ़तेहअलीजी ने कहा–"बादशाहो, माड़ी बात यह है कि सिक्के की जगह सरकार ने रुपए की परची निकाल दी है। निरा काग़ज़, और क्या!"

"चौधरीजी, बात तो बीच में से इतनी ही है कि सरकार चाहे तो मिट्टी को सोना और सोने को मिट्टी बना दे।"

गंडासिंह ने पूरी मंजियों को हँसा-हँसा मारा–"बादशाहो, आजकल तो सरकार अपनी गुलटरिया कुत्ता बनी हुई है।"

जहाँदादजी बड़ा हँसे। कहा–"जिनकी आँखों का रंग जड़-मुढ़ से ही लाल हो, वे कैसे न गुलटरिया नज़र आएँ!"

काशीशाह ने परचा निकाल ऊँचा-ऊँचा पढ़ना शुरू कर दिया–"अब्दुल्लाख़ान चक नम्बर 12, दलीपसिंह चक नम्बर 116, दिलबागसिंह चक नम्बर 66, हामिद अली चक नम्बर 128, हयात मुहम्मद चक नम्बर 308, नौरंगसिंह ठाकुर चक नम्बर 247, सुंदरसिंह हवलदार चक नम्बर 501। बादशाहो, यह लायलपुर इलाक़े की इनामी फ़ेहरिस्त है।"

गंडासिंह चौकस हो पैरों के भार बैठे, फिर मंजी ढीली देख पथल्ला मार लिया और बोले–"परचे बहुतेरे पढ़ छोड़े होंगे आपने भी। एक बात याद करो। कोई ख़बर नज़र से गुज़री हो ऐसी जिसमें अपने चार फ़ौजी सिपाहियों का भी जिक्र हो। नाम बताता हूँ–लैंस दफ़ादार ईश्वरसिंह नम्बर 572, सवार हज़ारासिंह नम्बर 310, सिपाही फूलासिंह

नम्बर 2970, क्वाटर मास्टर बीबासिंह नम्बर 2848।"

जहाँदादख़ाँ जी ने कान खड़े किए। आँखों से एक लम्बी तक्क गंडासिंह के चेहरे पर जमाए रहे, फिर गला खँखारकर कहा–"मैंने कहा खालसाजी, किस रजमंट के नाम ले रहे हो ख़ैरों से! क्या काका ज़ोरावर की?"

"न। यह अपने मुल्क़ की शहीदी रजमंट है। इन बहादुरों को बग़ावत करने के लिए सज़ाए-मौत दी गई मेरठ छावनी में! कोर्ट मारशल। गोली सीधी छाती पर!"

मजलिस सहम के कुछ ख़ामोश-सी हो गई तो गंडासिंह ने हँसकर कहा–"सदक़े इन बहादुरियों पर। मौतों के जयकारे। फ़ौजी बन्दे अपने मुल्क़ की ख़ातिर क़ुर्बान हो गए!"

ताया तुफ़ैलसिंह ने शाहजी का गम्भीर चेहरा देखा तो समझाकर कहा–"गंडासिंह, कलजुग वरता हुआ है। सत्त-कुसत्त को इकट्ठा न कर। नुक़सान होने का अन्देशा है! ज़रा सँभलकर!"

"ख़ुड्ड से निकलकर साँप चढ़ जाए दिल पर तो बिना क़त्ल ख़लासी मुश्किल है।"

"यही समझो बादशाहो कि लौडेख़ाँ ने अपने हाथों से बस माँ बचा ली और कमाल को कर दिया पार!"

"कमाल की उसी के हाथों आई हुई थी। नहीं तो इतने बरसों बाद बाप का बदला लेने आ पहुँचा पिंड!"

"बात यह है कि हिसाब-किताब यह मुकने के बिना नहीं रहता!"

"सुना हुआ है न माई देस्साँवाला क़िस्सा! अपने हाथों महासिंह ने मौत के घाट उतार दिया।"

कर्मइलाही जी चौकन्ने हो उठे–"शाहजी, ज़रा बात ताज़ी कर डालो।"

"हुआ यह कि जलालपुर जट्टाँ का एक ख़ुदादादख़ाँ महासिंह के रसाले में जा दाखिल हुआ। ख़ुदादाद बड़ा दरशनी जवान। चढ़ गया सरदार साहिब की आँखों में। कुछ दिन ग़ैरहाज़िर रहा। वापिस आया तो महासिंह ने वजह पूछी। बस नशे की झोंक में सारी बात खोल दी–'सिंहजी, एक काम मेरे ज़िम्मे बड़ा ज़रूरी लगा हुआ था। होता-होता यह बाजुओं की राहों मेरे सिर को जा चढ़ा। रोग-मलामत यहाँ तक पहुँचा कि इससे सुरख़रू होना ज़रूरी हो गया। बस माँ को दूसरी दरगाहे पहुँचाना था–पहुँचा आया हूँ।'

"महासिंह ने चौकन्ने हो पूछा–'ज़रूरी था क्या?'

"'था। सिंह साहिब, नहीं तो कौन नालायक़ है जो दूध पीकर माँ का, उसे क़त्ल करने का सोचे!'"

"बस बादशाहो, महासिंह को लग गई। रात-भर नशा करता रहा और अगले दिन माई देस्साँ का काम तमाम।"

फ़तेह अलीजी ने हुक्के की नड़ी मुँह से निकाल ली–"कहते हैं न, इश्क़ और अक़्ल में ज़िद है। जो कुछ अक़्ल में न आवे वह काफ़िर इश्क़ कर दिखाए।"

"ओ जी, बड़ी उम्रे इश्क़ काहे का! यह तो टाँक लो या टाँग दो वाली बात हुई!"

"जो भी कहो, बात कुछ चंगी तो नहीं न!"

गुरुदित्तसिंह हस्बेमामूल छिड़ गए–"कक्कूख़ाँ, इसे चंगी कौन कहता है! धी-बहन की कभी गाढ़ी-न्यारी हो भी जाए पर जेकर पुत्रों की माँएँ उठ-उठ फँसने लगें तो इलाज फिर पुत्रों के पास वही जो महासिंह ने किया या ख़ुदादाद ने।"

शाहजी ने एक और आतिशी छोड़ दी–"लो, और सुनो। जो बाप ने किया वही महासिंह के बेटे रणजीतसिंह को करना पड़ गया।"

"यह कुफ्र क्यों वरता शाह साहिब!"

"रब्ब जाने, हुकूमत के लिए रास्ता साफ़ करने का बहाना था या महाराज की माँ की कुछ ऊँच-नीच थी दिवान लखपत राय से। रणजीतसिंह ने इकट्ठे ही ठिकाने लगा दिया।"

छोटे शाह ने जोख़िमवाली टीप बदल दी–"बादशाहो, महाराजा ने जब खालसा फ़ौजें जम्मू भेजीं तो यही अपने जफ़रवाल के रास्ते चढ़ाई हुई। इधर लश्कर जम्मू के करीब पहुँचा, उधर जम्मू महाराज त्रिकोटा देवी जा पहुँचे। ख़ालसा ने मैदान साफ़ देखा तो फ़रमान निकाल दिया अपनी फ़ौजों के नाम कि शहर जम्मू की लूट-मार न की जाए। दूसरे वहाँ के सर्राफ़े को हुक्म दिया कि हाट-बाज़ार खोल दिए जाएँ।"

"बादशाहो, इससे तो सही यह हुआ कि हकूमत सिर्फ़ अंग्रेज़ को ही नहीं आती!"

जहाँदादजी ने सिर हिलाया–"बराबर बादशाहो! कोई भी उठ खड़ा हो मुल्क़ फ़तेह करने तो सयानफ़ों की क्या कमी! उसके चौतरफ़ा अक़्लमन्दियाँ और दानिशमन्दियाँ!"

मौलादादजी को यह बात बड़ी मन लगी–"मुद्दा तो यह निकला शाहजी, कि घोड़े पर सवार हो कोई भी बहादुर क़ौम निकल पड़े मुल्क़ फ़तह करने तो उन्हें न तो कोई कोह रोके, न रोकें दरिया।"

जहाँदादख़ाँ के माथे पर फ़ौज का रुआब झलकने लगा–"तातार, तुर्क़, ईरानी, अफ़ग़ानी कोई रुका! बस, मुँह किया हिन्दोस्तान की तरफ़ और ठिल्ल पड़े!"

शाहजी ने छोटे भाई को उकसाया–"काशीराम, पंजाब की पुरानी मालकी तो तुर्क़-अफ़ग़ान-पठानों के हाथ ही थी न! बीस-बीस, पच्चीस-पच्चीस पीढ़ियाँ हो गईं यहाँ आए। बस, रहते-रहते ख़ानदान हिन्दोस्तान-ज़ाद हो गए।"

"हाँ जी। मुल्तान में मालकी बग़दादी सैयद शाह हबीब ने क़ायम की थी। कबीरवाला तहसील में बग़दाद पिंड उसी का बसाया हुआ है।"

मुंशी इल्मदीन कान की कन्नूनी में उँगली फेर रहे थे–"इनकी एक और अल्ल भी निकली थी बग़दाद से, जो उच्च में आकर जमी। कस्सोकीवाले सैयद भी इन्हीं के भाई-बन्द हैं। असल बात तो यह है कि शाह साहिब कि ये सारे के सारे जफ़ाकार हेरातिए, बग़दादिए, क़ाबुल-कन्धारिए खोलकर दरवाज़ा हिन्दोस्तान का बढ़-बढ़ आगे आते रहे!"

जोश-ख़रोश में मजलिस के दिल भखने लगे। ढीले-ढाले पग्गड़ोंवाले सिर अनोखे गुमान से हिलने लगे।

"जो भी कहो, जब्बरख़ान-खट्टरख़ान-नगख़ान जैसे हमलावर बादशाहतें तो क़ायम कर ही गए न हिन्दोस्तान में! आए गए। हारे परते। पर फ़तेह हासिल करके ही रहे। की न गद्दी इस मुल्क में क़ायम।

"और तो और, सिकन्दर शाह ने भी इधर मुँह कर लिया। बड़े-बड़े समुद्र देखे हुए थे उसने मगर बादशाहो, ऐसे दरिया नहीं जो बरक़तों में समुद्र होते हैं! शाह सिकन्दर ने क़ाबुल और सिन्ध के तड़पते पानी देखे तो आँखें भरम गईं। सिंह की बाब पर नीलाभ का शोर सुना तो सुलेमानी हौंसला और बुलन्द हो गया! गज्ज-वज्ज के लश्कर डेहरी-शहान और कोट कमालिया जा पहुँचे! आगे मुल्क़ देखा पंजाब का तो आँखों पर दूध और खून का रंग चढ़ गया। फैला दिए सिपाही अपने अटक से लाहोर तक!"

आले में जलते चिराग़ की रोशनी में दर्जनों आँखें लड़ाई के मैदान देखने लगीं। घोड़ों पर चमकती बहादुरों की शमशीरें!

"आगे सुनो। साढ़े चार हाथ का भारी गौहरा डील-डौलवाला पोरसवान खड़ा है शाह सिकन्दर के आगे–'आपके साथ कैसा सलूक किया जाए!'

"पोरसवान न हिला, न पलक झपकी। डट्ट के खड़ा रहा–'वैसा ही जैसा एक शहंशाह को दूसरे शहंशाह से करना चाहिए!'"

"वाह...वाह...वाह! पोरसवान, क्यों नहीं! पग्ग पंजाब की थी तेरे सिर! बहादुरा, तू भी क्या बराबरी से दस्तपंजा हुआ है शाह सिकन्दर से!"

"क्यों न हो, बब्बर शेरों को कौन सिखाए गर्जना-दहाड़ना और कौन उठाए शेरों की क़ूव्वतें और बद्दियाँ!"

मुंशी इल्मदीनजी की बन आई–"बादशाहो, लिखत बताती है कि सिकन्दर शाह ने अपनी जेहलम-चनाब की धरती देखी तो सिर को खुमार चढ़ गया। अपने रिवाज़ के मुताबिक़ दोनों दरियाओं को मान-इज़्ज़त से क़ुर्बानी दी। एक तरफ़ जेहलम जैसा जवाँमर्द और दूसरी तरफ़ चनाब जैसा जवान!"

फ़तेहअलीजी ने मुँह से हुक्के की नड़ी निकाली। सिर हिलाया और बोले–"दोतरफ़ीं खड़े हों चाहनेवाले ज़बरी तो धरती का मुख ख़ुद महबूब हो गया!"

"बेशक। आँखों में ख़ुब्बनेवाला मुल्क़ पंजाब तो अपना है ही न! बड़ी-बड़ी क़ौमें आईं, मामले उगराह के ले गईं!"

"कहनेवाले कहते हैं, पंजाब फ़ारस का एक सूबा रहा था। फिर यूनान का, ईरान का हुआ। अफ़ग़ानों को भरते रहे मामले! बादशाहो, दूर क्यों जाना! मीर मुन्नू ने शाह अब्दाली को चार महल दे दिए थे। अपना स्यालकोट, गुजरात, पसरूर और औरंगाबाद।"

छोटे शाह बोले–"चौदह लाख मालिये की शक़्ल में शाह अब्दाली हर साल मामला उठाता रहा!"

नजीबे ने अपने पुत्र का नाम सिकन्दर रखा था। बीच में ही टोका–"बादशाहो, अपना सिकन्दर शाह का क्या बना? उसे कुछ खट्टी कमाई हुई हिन्दोस्तान से?"

गुरुदित्तसिंह हँसने लगे–"नजीबेया, तेरी भोली बातें। लड़ाई के मैदानों में या तौफ़ीकें बन गईं या बिगड़ गईं। बीच की तो कोई बात ही न हुई!"

"कई लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं शाह सिकन्दर को। फ़तेहयाब भी हुआ, पर उसकी फ़ौजों ने दरिया व्यास लाँघने से इनकार कर दिया। लौटती बार जब सिकन्दर शाह की फ़ौजों ने जेहलम पार किया तो दो हज़ार बेड़ियाँ पड़ीं दरिया में। मुलतान में शाह को ज़हरीला तीर लग गया। बस जी, यूनानी फ़ौजें बिफर गईं। इलाक़े में क़त्ले-आम कर दिया!"

जहाँदादजी ने सिर हिलाया–"शाहजी, शाही फ़ौजें बिगड़ जाएँ, आगे बढ़ने से इनकार कर दें तो बड़ी-से-बड़ी शहंशाही बेबाजू हो जाती है। फ़ौजें तो हुईं न जी हकूमतों की बाँहें!"

"बराबर जी! अब आगे सुनिए। सिकन्दर शाह जब पहुँचा है अपने पंजाब तो रावी तक के इलाके का नाज़िम सूबेदार था सत्रप सोबती। रावी व्यास के इलाके की मालकी उसके पास। एक तरफ़ आंबी और पौरस ने सिकन्दर शाह का मुक़ाबला किया और दूसरी तरफ़ देखो, सत्रप सोबती क्या करता है! आगे बढ़कर सिकन्दर शाह का

इस्तक़बाल किया। हीरे-जवाहरातों की नज़र भेंट की। मुर्ग़ों की लड़ाई दिखलाई शाह को और दोस्ताना बढ़ा लिया।"

"यह तो बात कुछ चंगी न हुई। न डंका बजा। न नगाड़ा। न घुड़चढ़ी। न लड़ाई लड़ी और हमलावर से बग़लग़ीरी कर डाली!"

शाहजी बोले–"कर्मइलाहीजी, इसका सबब यह था कि सत्रप सोबती रहनेवाला ही यूनान का था। इस टब्बर के मूरिसे-अव्वल यूनानी भगदौड़ों में पंजाब उतर आए थे।"

"हो गई न बात साफ़। दोनों शरीक़ ही हुए न! हमवतनी! फिर तो सलूक निभाना ही था न!"

"यही समझो। सिकन्दर ने भी भरापरी बिरादरी निभाई। जाने से पहले सत्रप सोबती को रावी और व्यासवाले इलाक़े का नाज़िम बना दिया। उधर पोरसवान को मालकी दे दी पोठोहार की। सिन्ध और जेहलम के बीच का इलाक़ा! अभिसारा को चनाब और भिंबर राजौरी की हदें हाथ पकड़ाईं।"

"हाँ जी, कई शाह और कई सत्रप। मुल्क़ पंजाब कोई छोटा-सा तो नहीं न!"

काशीशाह ने सिर हिलाया–"पंजाब का नाम कभी सप्तसिन्धु होता था। यूनानी शाह-बादशाह पहुँचे तो नाम हो गया 'पैंतपोताम्या'–पाँच नदियों की धरती।"

मौलादादजी ने हुक्का छोड़ सिर हिलाया–"वाह-वाह! सच पूछो, बादशाहो, तो रूह बड़ी ख़ुश होती है यह सोचकर कि अपने वजूद बने तो इसी मिट्टी-पानी से। सदक़े!"

कर्मइलाहीजी ने हाँ में हाँ मिलाई–"सच्च है। रब्बी बरक़तें अपने वतनों को!"

गुरुदित्तसिंह के ख़याल कहीं और विचर रहे थे–"सोबती सत्रप को क्या माड़ा रहा! बढ़-बढ़ पराहुनाचारी की, कुक्कड़-लड़ाइयाँ दिखाईं और कुक्कड़-कड़ाहियाँ खिलाईं। रंग-तमाशे दिखाए शाह सिकन्दर को और ब्रादराना तआल्लुक़ात क़ायम कर लिए।"

फ़कीरा हँसने लगा–"बात तो यहाँ टूटी न कि बिना मैदान में उतरे फ़ायदे का सत्त निचोड़ लिया। यह बहादुरी तो न हुई, नीति हुई।"

नजीबा किसी सोच में था–"शाहजी, एक बात कहता हूँ। भला यह कैसे सही हुआ कि ज़मानों पहले यह हुआ था, वह हुआ था! अब कोई चश्मदीद गवाह तो नहीं बैठा हुआ न! पता कैसे लगे, यह सच्ची है, झूठी है या यह मिरास ने जोड़ी हुई है!"

"नजीबे, वाज़िब सवाल है। होता यह है कि छोटी-बड़ी हक़ूमतें-सरकार अपने कारनामों-लड़ाइयों-फतेहयावियों को महफ़ूज़ रखने के पूरे इन्तज़ाम करती हैं। पूरा दफ़्तर रखती हैं। बाक़ी हमातड़-साथों के लिए यही काम उनकी मिरास कर लेती है! जिस ख़ानदान का कारज ढंग-पज्ज हुआ, मिरास उनकी सात पीढ़ियों तक नाम दोहरा लेगी! सिलसिला चलता रहता है।"

कृपाराम बोले–"शाहजी, मिरास भी कोई एक तो नहीं न! खत्रियों के मिरासी शोहाला, ब्राह्मणों के मिरासी कमाछी, मीर मिरासी, राय मिरासी, सेवक-क़व्वाल। ब्लोचों के मिरासी अलग। शिया मिरासी अलग। अमीर हमजावाले लोरीं अलग।"

काशीशाह बोले–"अपनी मिरास की जड़ पीछे मुल्तान से है। तभी समय-समय पर नवाब अली मरदान का शज़रा ताज़ा करते रहते हैं।

"मुज़फ़्फर दीन जहाँदादशाह, फारुखशाह बादशाह, शाह रुख़ मिर्जा, शाहज़ादा अली क़ुली ख़ान, सरदार गंज अलीखाँ, नवाब अली मरदानखाँ, सरकार बहराम अली

ख़ाँ, सरदार महम्मूद हुसैनख़ाँ, सरदार अलीख़ाँ, नवाब शाह बादलख़ाँ, नवाब अमीर मुहम्मदख़ाँ, सरदार शाह पसन्दख़ाँ। नवाब अली मरदान के टब्बर को मुल्तान की जागीर मिली थी। पहले ये हेरात-कन्धार के सूबेदार थे!"

मौलादादजी बोले–"शाहजी, वह जंग-लड़ाइयों की बातें तो बीच में ही रह गईं!"

शाहजी ने फिर छू ली–"लो सुनो। महमूद ग़ज़नी चलता है ग़ज़नी से दस हज़ार घोड़ों का लश्कर लेकर। इधर सम्राट जयपाल सामना करता है बारह हजार घोड़े, तीस हज़ार पैदल और तीन सौ हाथी लेकर। मैदाने-जंग में पासा पलट जाता है और जयपाल बन्दी बना लिया जाता है! महमूद ग़ज़नी को हीरे-जवाहरातों का बड़ा ठरक। नज़राने में बेशक़ीमती हीरे-जवाहरात लेकर जयपाल को छोड़ देता है।"

जहाँदादख़ाँ हँसने लगे–"शाह साहिब, वह शहंशाह-सम्राट क्या हुआ जिसे हीरे-जवाहरातों की तृष्णा न हो!"

कक्कूख़ाँ बोले–"मोटी-सी बात है। बादशाहों को तृष्णा-प्यास हीरे-जवाहरातों की, तो डाकू-लुटेरों को भी वही चस्का। दोनों में लम्बा-चौड़ा फ़रक भी क्या हुआ!"

गंडासिंह हँसने लगे–"शाहजी, कक्कूख़ाँ के बयान से सही यह हुआ कि मजलिस में बैठकर लोगों की अक़्ल-बुद्ध तेज़ हो जाती है। कक्कूख़ाँ, पहले तो हुई न डाकाज़नी और लूट-मार। पीछे बहादुरी के ज़ोर बन्दे ने ख़लकत साथ लगा ली। बस जी, जहान में तख़्तो-ताजवाली हट्टी चल निकली। मनचाहे फ़रमान निकाले, दो-दस चढ़ाइयाँ कीं। महल-परकोटे बनवा दिए। मामले लगा लिए। बस, फिर उम्र-भर के जलसे-जशन! अगले घर से आवाज़ पड़ गई तो अपने शाही मान-इज़्ज़त से समाध-मक़बरों में जा लेटे!"

ताया तुफ़ैलसिंह बड़ा हँसे–"गंडासिंह, तुम्हारे हाथ में कोई पड़ न जाए। हो न हो, पिछले जन्म में तू बिरादरी का अग्गू ज़रूर होगा।"

काशीशाह को याद हो आई–"रणजीत महाराजा का दिल आ गया कोहेनूर हीरे पर, बस फिर कोई नीति-तरक़ीब नहीं छोड़ी और अफ़ग़ान शाह शुज़ा से हथिया के छोड़ा। देखो, आखीर को हीरा कहाँ पहुँचा है! बरतानिया के ताज पर। कहते हैं, दुनिया का सबसे बड़ा हीरा है यह! जो हीरा लगा हुआ है रूसी ताज में, वह कबूतर की आँख के बराबर है और कोहेनूर उससे भी बड़ा। बड़े इक़बालवाला बाजूबन्द हीरा हुआ न कोहेनूर।"

"शाहजी, जयपाल जब छूट गया तो फिर सँभाली जाकर राज की बागडोर!"

"बादशाहो, आगे सुनो। जयपाल राजा क्या करता है। गद्दी सौंपता है बड़े लड़के अनंगपाल को और आप चिता पर चढ़ जाता है!"

कृपाराम के सिर धर्म का ख़ुमार चढ़ गया–"आख़ीर को विक्रमाजीत था। धर्म की लाज रखनी थी।"

"मुल्तान जीत महमूद ग़ज़नी मुँह करता है भटिंडा की ओर। तीन दिन ज़बर्दस्त लड़ाई होती है और ग़ज़नी की फ़ौजें भारी गिनती में हलाक़ होती हैं। चौथे दिन ग़जनी ने मक्का शरीफ़ की ओर मुँह कर नमाज पढ़ी और सिपाहियों को ललकारकर कहा–'बहादुरो, मक्का-मदीने से फ़तेह का हुक़्म आया है। कोई डर नहीं। आगे बढ़ो।'

"भटिंडावाले बिजी राय की फौज के पाँव उखड़ गए और सेहरा फ़तेह का ग़ज़नी के सिर जा चढ़ा!"

"क्यों नहीं जी, रब्ब रसूल हो इमदाद पर, गाज़ियों के हौंसले बुलन्द हों, हाथ में

शमशीरें चमकती हों, फिर कौन रोक सकता है इन्हें आगे बढ़ने से! आख़ीर को जीता न हिन्दोस्तान!"

शाहजी सिर हिलाने लगे–"काशीराम, इसका अगला हिस्सा भी हो जाए। आप सुनाओ!"

"बाज़ी हारी देख बिजी राय ख़ुद अपनी गर्दन धड़ से अलग कर देता है।"

मौलादादजी से न रहा गया–"शाहजी, सोचनेवाली बात यह है कि चिता पर चढ़ने से या ख़ुद को हलाक़ करने से हाथ में क्या आया! अपनी जान गई, मैदान गया और अलगी बाज़ी लड़ने से पहले ही हारी गई!"

मुंशीजी ने मौक़ा ताड़ा–"दरअसल गीता बेग़र्ज काम करने, ख़्वाहिशात और जज़्बात से आज़ाद होने की तालीम देती है। यह हिन्दुस्तान का पुराना अक़ीदा है अपनी जान पर खेल जाएँगे पर दिल में विराग बैठा ही रहता है। मैदाने-जंग में जेकर सिर उठा लिया, ऐसे विराग ने तो लाम-लश्कर में भगदौड़ पड़ जाएगी और फ़तेह दूसरों के हाथ जा लगेगी।"

गुरुदित्तसिंह भड़क उठे–"बस ओ मुंशी इल्मदीन! महाराजा रणजीतसिंह ने किस-किसकी पीठ नहीं लगाई! पता है न! पठान-ब्लोच-अफ़ग़ान कौन मादर रण छोड़कर नहीं भागा! गाँठ बाँध लो मेरी बात, बहादुरी किसी एक क़ौम की विरासत नहीं!"

जहाँदादजी ने बीच-बचाव किया–"बराबर सही। जब तक बावटा लहराया खालसों का, पंजाब में कोई कुसका नहीं! शेरे-पंजाब की आँखें मीटने की देर कि फिरंगी गोरों ने ताक़त पकड़ ली!"

"बादशाहो, तब एक गीत पढ़ा था–रब्ब मोया, देवता मर गए, राज फिरंगियाँ दा!"

मीराँबक्शजी ने टींडा दिया–"महाराजा का पीछा सुनता है। खालसों ने बड़े-बड़े जुद्ध-लड़ाइयाँ लड़े। लश्कर सजाए। जंग जीते। फ़तेहयाब हो हकूमत की तो वह भी गज्ज-वज्ज के।"

फ़तेहअलीजी शामिल हुए बातचीत में–"बड़े-बड़े सूबेदार-कारदार रखे। बराबर मुग़लोंवाला सारा ताम-झाम! शाहजी, आप नाम लिया करते हैं न! हो जाएँ..."

"लो सुनो। दरोग़ा देग, दरोग़ा जवाहरात, दरोग़ा, फ़ौजदार द्वाब, दरोग़ा नहर, दरोगा रिसाले-सुल्तानी वग़ैरा-वग़ैरा।"

गुरुदित्तसिंह बोले– "और तो और, मुल्तान की पक्की मालकी पठानों से खोंस ली।"

काशीशाह ने हरारत देख मज़मून बदल दिया–"दिवान सावनमल ने मुल्तान का नाज़िम बनकर बड़ा नाम कमाया था!"

"नाम भी और नाँवा भी। दौलत-माया के ढेर लग गए। मामला इकट्ठा किया जिवियों का। ज़रूरीवाला जमा किया लाहोर दरबार, बाक़ी परमानन्द!"

शाहजी बोले–"चौधरीजी, मालिया उगराहने के लिए खालसा सरकार फ़सलों पर बोली लगवाती थी। पकी फ़सलें खड़ी हैं खेतों में और सरकार ने बोली लगवाकर नीलाम करवा दीं। जो सबसे ऊँची बोली दे, वह मामला इकट्ठा कर सरकारी ख़जाने पहुँचा दे। राज के लिए हिसाब-किताब जिवियों-फसलों का भी वही रख। बोली से उगराही ज़्यादा हो गई सो अपनी।"

"सरकारों की अपनी-अपनी सोच और अपने-अपने फरमान! अंग्रेज़ ने भी काम

तो चंगा ही किया है शाहजी! अपने मुसलमीन दर्ज़ हो गए किसानी फ़ेहरिस्त में! अलबत्ता हिन्दुओं को घाटा ज़रूर रहा। चलो, उनके पास धन-दौलत काफ़ी। बीस सालवाला क़ानून आसामी के लिए तो माड़ा नहीं। गहने पड़ीं आधी ज़मीनें तो आप ही छूट जाएँगी।"

शाहजी हँसने लगे–"चौधरीजी, यह भी सही है। कोई और नया क़ानून आ गया तो फिर आप शाह और हम मुजारे!"

"अभी तक तो, चौधरीजी, इतना ही आया है न कि मुसलमान तीन हज़ार सालाना आमदन पर मामला भरे तो चोन का हक़दार बने। उधर हिन्दू तीन लाख सालाना पर मामला दे तो परची डाल सके! अब आप ही अन्दाज़ा लगा लो बादशाहो कि अपनी हालत क्या होनेवाली है!"

बड़ा हास्सा पड़ा।

"शाहजी, मान लो, क़ानून ही बन गए, जिवियों की मालकी भी मिल गई काश्तकार को, पैसे-धेले को सँभालेगा कौन? अपना कोई पुश्तैनी पेशा तो न हुआ पैसा-धेला सँभालना! रब्ब आपका भला करे शाहजी, ऐसा हो गया अपने हक़ में तो दौलत-माया कौन सँभालेगा? उसके लिए क़ाबलियत भी तो होनी चाहिए न! यहाँ कोई पुश्तैनी वारिसी तो न हुई रुपए-पैसे की!"

शाहजी के माथे पर माड़े-से बल उभरे, पर हँसकर कहा–"चौधरी जी, दरियाओं में हढ़बाढ़ उतर आएँ तो किसने रोक सकना है! परिवर्तन के आगे किसने टिकना! पानियों के रुख हैं, किसी के रोके नहीं रुकते।"

मौलादादजी हुक्का छोड़कर बोले–"मैंने कहा सावनमलवाला क़िस्सा आपने कैसे छोड़ दिया! चंगा दिल लगा हुआ था!"

"दिवान सावनमल ने कम-से-कम तीन सौ मील लम्बी नहरें निकलवाई थीं अपने इलाक़े में! रियाया वहाँ की बड़ा चंगा मानती थी उसे!"

गुरुदित्तसिंह चौकन्ने हो के बैठे तो सबको ख़ुड़क गई कि कुछ नई-ताजी है खालसा के पास!

"लाहोर फ़ौजों ने मुलतान फ़तेह किया और दिवाली सज गई लाहोर-अमृतसर। जशन मनाए गए। ख़ुशियों में खिल्लत-खिताब बाँटे गए!"

शाहजी ने पैंतरा डाला–"मुलतान की हक़ूमत महाराजा रणजीतसिंह ने सँभाली और वहाँ के शाहज़ादों सरफ़राज़ ख़ाँ और जुल्फ़िकार ख़ाँ के गुज़ारे के लिए जागीरें लगा दीं।"

"शाहजी, मुलतान में शेख़ शम्सुद्दीन तबरीज़ी की ख़ानकाह बड़ी मशहूर है। ज्यों गुजरात के वली हाक़म हुए साँई शाहदौला, मुल्तान के वली हुए शम्स तबरीज़!"

काशीशाह ने प्रसंग उठा लिया–"पीर शम्स तबरीज़ ज़िन्दा क़त्ल हो गए थे। क़त्ल हुए और ज़िन्दा रहे। सुननेवाली बात है यह। अपनी चमड़ी हाथ में लेकर चलते रहे। कहने में आता है कि मुलतान की ज़मीन पर सूरज इनकी हकूमत में है! शाह शम्स का मेला शेखपुरा भेरा में भी लगता है। बीमार लोग वहाँ नाइयों से नश्तर लगवा-लगवा खून बहाते हैं।"

कर्मइलाहीजी बोले–"मैंने कहा शम्सी तो अपने स्यालकोट में भी बहुत!"

कृपाराम दोहराने पर उतर आए–"सुनने में आता है, सावनमल चंगा-तगड़ा इंसाफ़ी हो गुज़रा है।"

"बराबर। सावनमल ने उठा अपने पुत्र को बन्दीख़ाने में डाल दिया! हुआ यह कि किसी जट्ट ने दरबार में जा शिकायत कर दी कि 'किसी दरबारी बन्दे ने मेरी पकी फ़सल बरबाद करवा दी है। अब क्या तो खाऊँ और क्या सरकारे जमा करवाऊँ!'

"सावनमल ने हुक़्म दिया–'अगर वह आदमी दरबार में माजूद है, चाहे मैं ही क्यों न होऊँ, बेख़ौफ होकर हाथ रख दो।' बादशाहो, जट्ट अपनी ज़ात का फट्ट। उठा और दिवान सावनमल के फ़रजन्द रामदास पर हाथ जा रखा!

"दरबार सारा हक्का-बक्का। पर जी, दिवान सावनमल का हुक़्म हो गया और अगले ही दिन क़ैद मुशक़्क़त के लिए काका रामदास अन्दर। ख़ैरों से लड़का हाक़म का। अमीर पुत्र। न मेहनत, न मजूरी। बन्दीख़ाने में बीमार पड़ गया। समझो सज़ा के ग़म में ही जाता रहा। पर सावनमल दिवान अपनी बात पर थिर।"

"दिवानों का शजरा तो बड़ा आला हुआ न जी! इस ख़ानदान में कई मशहूर नाज़िम कारदार हो गुजरे हैं।"

मुंशी इल्मदीन कहीं से पुरानी पोटली निकाल लाए–"आगे जाकर इसी टब्बर के पुत्र-पोत्रे ने क़लमा पढ़ लिया और ख़ैरों से दिवान रामस्वरूप पर ग़ुलाम मोहीउद्दीन हो गए!"

मुहम्मदीनजी ने रफ़ा-दफ़ा की–"क़लमा तो हज़ारों ने पढ़ डाला। यह तो कोई नुक्सवाली बात न हुई!"

शाहजी ने नया क़िस्सा छेड़ दिया–"हुआ यह कि सावनमल के बहनोई बदनहज़ारी मुलतान भेजे गए थे मुलतान के सरगना अहलकार की हैसियत से। बहन का दिल। घरवाले के पीछे पड़-पड़कर अपने भाई को बुला लिया। बहनोई ने किसी छोटे-मोटे काम पर लगा दिया साले साहिब को। साला बहादुर बड़े तेज़। जिस काम में हाथ डाले, बरक़त बड़ाई। लोग लड़के पर बड़े ख़ुश। बस जी, उड़ती-उड़ती लाहौर दरबार जा पहुँची। महाराजा रणजीतसिंह में एक बड़ी भारी सिफ़्त। सौ कोस से पहचान जाए कि आदमी मेरे मतलब का है! साल-भर बाद हुक़्म कर दिया। भाइया बदनहज़ारी हकूमत के हेठ और सावनमल गद्दी के ऊपर।"

फ़तेहअलीजी बोले–"घरवालियों की ज़िद, और क्या! पेके-मायके के प्यार ने अपने घरवाले का नुक़सान करवा छोड़ा।"

मीराँबक़्श बोले–"बादशाहो, यह ज़नानी की खसलत। मर्द के माँ-बहन लड़ाई-झगड़े और तोहमतों के लिए और अपने पेके-पीहरवाले ख़ातिर-त्वजा को। यह तो नहीं कि बन्दा देखता नहीं। घूँट पीना हो रोज़ तो बताओ, दूध की हँडियाँ फैंकी जाती हैं!"

कक्कूख़ाँ सिर हिला-हिला बोले–"आप्पे फाँसड़िए, तैनू कौन छुड़ाए! चौधरीजी, बन्दा धड़ से पकड़ा जाता है।"

फतेहअलीजी ख़ैरों से दो बीवियों की सरदारी सँभाले हुए थे। बड़ी सयानफ़ से कहा–"ख़ानदान की हड्डी पाक़-साफ रहे, नहीं तो जहाँ इधर-उधर की लग्गलबेड़ ख़ानदान में पहुँची, ख़ूबियाँ-खामियाँ सब खिचड़ी हो जाती हैं।"

मौलादादजी मानो इसी मज़मून पर सोचते रहे हों। बोले–"फ़तेहअलीजी, जेकर नुक़्स पैदा हो जाए तो उन हालात में औलाद का ऊपरी धड़ बन जाता है मर्द का और निचला जनानी का। इसी तरह पिंजर मर्द का और दिल-दिमाग़ औरत के। कहने का मतलब यह कि ऐसे हालात में सालम-सबूते आदमी ज़रा कम ही पैदा होते हैं।"

गंडासिंह शुरू हो गए–"चौधरी जी, सैयदोंवाली चिट्टी चादर तो न तान दो कि

साक-सम्बन्ध करना है तो सैयदों से ही। कितने ख़ानदान हैं जो पाक़ भी हैं और साफ़ भी। यह बात परदे में ही रहे तो चंगा!"

शाहजी ने टोका–"कुल-गोत्र या ख़ानदानी देखने-जाँचने की टेव-टेक तो कोई बुरी बात नहीं। हमारे पुरखों ने सोच-समझ के ही यह बंध बन्ना बनाया था। जो मेल नहीं मिलते उन्हें तर्क कर दिया।"

ताया तुफ़ैलसिंह ने बात दूसरी तरफ़ ही खींच ली–"बादशाहो, अपने खालसा को देखो। भाँति-भाँति की मिट्टी-हड्डी से गुरु साहिब ने एक धाकड़ धात पैदा कर दी!"

कृपाराम ने अपनी हाँकी–"ठीक है, ख़ानदान की पुश्त-पुख्तगी देखे मनुक्ख़, पर ज़ात-बिरादरी की हदबन्दियाँ तो लगी हुई हैं न क़बीलों के साथ। शास्त्र-मर्यादा यही कहती है न–क्षत्रिय क्षत्रियों से, जाट जाटों से!"

कर्मइलाहीजी को भी कुछ सूझ गई–"गुजरात के अवान अपनी धी-धियानी चिब्ब-खाखरों के यहाँ नहीं देते। जेहलमवाले अवान रिश्ता करेंगे तो अवानों के घर। आपने भी सुना होगा शाहजी, कालाबाग़वाले मलिक ने रावलपिंडीवाले मुहम्मद अली गेब्बे के यहाँ अपनी बेटी का रिश्ता करने से इनकार कर दिया था!"

"धर्मशास्त्र कहते हैं कि क़िस्म और तासीर का फ़र्क़ सात पीढ़ियों में कम होता है!"

शाहजी जाने किस ख़याल में बेख़बर-ध्यान दिवटे की लौ की ओर देखने लगे तो देखते ही चले गए।

काशीशाह ने गला खँखार ज़रा ध्यान बँटाना चाहा पर शाहजी न हिले, न पलक झपकी। काशीशाह ऊँची आवाज़ में बोले–"आपसदारी में जहाँ गाढ़ी-गहरी मुहब्बतें और सलूक पैदा होते हैं वहाँ नाकस ज़हरीली बूटियाँ भी उगती रहती हैं। इसी को मद्देनज़र रख बड़े-बुजुर्गों ने कुछ क़ायदे-क़ानून बना दिए ताकि मर्यादा बनी रहे।"

नजीबे को कुछ न पल्ले पड़ा। खीजकर कहा–"बादशाहो, अगर रब्ब रसूल ने इन्सान को एक आला बरक़त लगा ही दी है तो इन सब हक़ीकतों का क्या मतलब! मोटी बात तो ले-दे के इतनी ही हुई न कि बन्दा ग़रीब हो तो ग़रीब से मेल मिलाए, अमीर हो तो अमीर से। बाक़ी एक बात पक्की है कि अकेली हव्वा बच्चे पैदा नहीं कर सकती। आख़ीर को अल्लाह तआला ने जोड़े बनाए तो इसीलिए न!"

सूख सूख पट्टिए, लौंगाँ चट्टिए!
लौंग सुपारी, तेरी मेरी यारी!

राबयाँ ने आवाज़ दी–"लाली शाह, पट्टी आप ही सूख जाएगी। बैठकर रचती सबक़ याद करो।

"राबी बहन, मैं स्याही रचाकर आया।"

लाली ने पीतल की दवात में छोटी-सी लीर डाली, काली रोशनाई की पुड़िया खोली, ऊपर से पानी की बूँदें डाल क़लम से रसाने लगा।

राबयाँ ने फिर बुलाया–"बस, अब धूप में रखकर चले आओ। आप रसेगी।"

लाली शाह ने चाकू से क़लम को टक्क लगाया और उसे दवात में डाल राबयाँ के पास आ बैठा। हँस-हँसकर क़ायदा खोला और आँखें मीटकर शुरू हो गया–"बरक़त पालने में पड़ा अँगूठा चूस रहा था। बरक़त की माँ पास बैठी सालन पका रही है। बरक़त का बाप हुक्का पी रहा है। बरक़त की माँ बच्चे को देख-देखकर ख़ुश होती है। सोचती

बरक़त बड़ा होगा। मेहनत करेगा। कमाएगा। आप खाएगा। हमें खिलाएगा।"

माँबीबी पास आन खड़ी हुई–"सदक़े जाऊँ अपने लाली शाह पर! भला सुनें तो किस-किस को खिलाएगा!"

"रब्बा बहन, नाम ले दूँ! चाची को खिलाऊँगा। माँ को खिलाऊँगा। माँबीबी को खिलाऊँगा, राबयाँ बहन को खिलाऊँगा।"

चरख़े पर बैठी चाची हाथ का तार रोक इधर देखने लगी–"मैंने कहा खिलाएगा क्या हमें? क्या चीज़? नाम तो ले।"

शरारत से लाली दन्दियाँ चहकाने लगा–"पट्ठे, चाची, पट्ठे खिलाऊँगा–सबको पट्ठे खिलाऊँगा!"

राबयाँ उठकर पास आई। लाली का कान खींचा और आँखों से घुड़ककर कहा–"बड़ों को ऐसे कहते हैं। चलो, चाची और माँबीबी से माफ़ी माँगो!"

उछलते-कूदते लाली ने बारी-बारी दोनों के पाँव छू लिए। फिर हाथ में क़ायदा पकड़ा और शताबी से राबयाँ को पैरीपौना कर दिया।

राबयाँ ने कान पकड़ लिया–"कितनी बार मना किया है। छोटों के पैर नहीं छूते। आज से याद रख ले मेरी बात! नहीं तो मैं चाचाजी से शिकायत करूँगी!"

लाली फिर चौंकड़ी मार बैठ गया और क़ायदा खोलकर कहा–"राबी बहन, मेरे से बड़ी हो। आपको पैरीपौना किया तो क्या हुआ! न करूँ।"

चाची ने धमकाया–"मुड़ जा। आगे से आगे जिरह ज़ारी। एक बार कह जो दिया नहीं छूने पैर राबयाँ के, फिर बार-बार..."

लाली खीझकर बोला–"फिर राबी बहन को क्या करना है? रामसत? बोलो, रामसत करूँ? ईद मिलूँ?"

लाली राबयाँ से लिपट गया।

चाची ने घुड़का–"छोड़ रे छोड़, मैं बताती हूँ तुम्हें। बरायाँ को तू सलाम किया कर!"

"सलाम राबयाँ बहन, सलाम!"

राबयाँ ने लाड़ से सिर पर एक धप्पा दिया–"क़ायदेवाली जमात कब से पीछे छोड़ चुका, आज फिर क्यों पढ़ रहा है?"

"मैं देखता था राबी बहन, मुझे याद है न! कहीं भूल तो नहीं गया!"

शाहनी ने आवाज़ दी–"तेरी टर-टर नहीं मुकी!"

लाली ने सक़ीना छू ली:

कित मदीना कित शाह नज़ाफ़
थिया शाम मकान सक़ीना दा
मालक पैग़म्बर ज़ात ख़ुदा दी
करन अरमान सक़ीना दा।

एकाएक लाली के कान खड़े हो गए। चौकन्ने हो आवाज़ सुनी–"राबयाँ बहन, सुनो! भैंस बोल रही है। सुनो न!"

"सुन लिया। अब पहाड़ा याद करो।"

"राबयाँ बहन, यह वाली भैंस भूरी भैंस जैसी नहीं है। पहले भी बोली थी एक बार। नवाब चाचा इसे छोड़ आए थे पर यह गब्बन नहीं हुई थी। यह भैंस फ़रड़ है।"

शाहनी ने उठकर एक लगाया–"हर बात में बोलना! राबयाँ, इसे सबक़ दे और

ग़लती करे तो कान खींच!"

"बोलता हूँ माँ, बोलता हूँ। आठ का पहाड़ा याद है मुझे। पर चाचा नवाब बाग्गे चाचा से कह रहे थे कि एक बार और देख लेते हैं। इस बार गब्बन न हुई तो वापस भेज दी जाएगी।"

शाहनी ने आवाज़ कड़ी कर ली–"आऊँ उठ के?"

"अगर मुझे मरना ही है तो मैं ही उठ के आ जाता हूँ।"

राबयाँ ने ओठों में हँसी और तेवर चढ़ाकर कहा–"चलो पहाड़ा दोहराओ!"

लाली शुरू हो गया:

"आठ ठग औ आठ सुनार
आठ सुनार औ आठ लुहार
आठ चौका बत्तरी
एक पगला जया खत्री
खत्री तोड़ बनाया खोजा
ज्यों बालों का गन्दा बरोजा
खोजा सो ससुरे का ससुरा
खोजा शहद लपेटा मौहरा!"

नीचे से काशीशाह आन पहुँचे। त्योड़ियाँ चढ़ाकर कहा–"लाली पुत्र, यह क्या सुन रहा हूँ!"

लाली ने मुस्तैदी से चाचा साहिब के पाँव छूए और खड़े होकर कहा:

"अव्वल अल्लाह नूर उपाया
क़ुदरत के सब बन्दे
एक नूर से सब जग उपजा
कौन भले कौन मन्दे!"

"शाबाश! पुत्रजी, वह आठ का पहाड़ा कभी न सुनूँ! जानते हो, इसकी मनाही क्यों है?"

"जी! चाचाजी, इसमें खोजों के लिए बुरी बातें हैं। पर मदरसे में सब लड़के बोलते हैं।"

"उन्हें भी मना कर दिया जाएगा। तुम कभी नहीं दोहराओगे! समझे?"

"जी!" लाली ने अपने झग्गे में छोटी-सी गाँठ बाँध ली।

"बरखुरदार, यह किसलिए?"

"इससे आपकी बात याद रहेगी चाचाजी!"

"हूँ!" काशीशाह मन-ही-मन हँसे मगर ऊपर से रौबीली अदा बनाए रहे। "तुम्हारे भाई गुरुदास-केशोलाल कहाँ हैं?"

लाली शशोपंज में पड़ गया–"चाचाजी, वे दोनों...वे गए हैं...वे दोनों गए हैं बेरियों पर!"

"क्या कहा! इन दिनों बरियों पर क्या काम!"

लाली मुँह पर हाथ रख कुछ सोचता रहा, फिर कपास की सूखी संटी उठा लाया। काशीशाह के आगे कर कहा–"चाचा साहिब, मैं झूठ बोल रहा था। मुझे लगा लीजिए हाथ पर?"

चाचा साहिब ने तहक़ीकात की–"यह क्या ठीक कि तुमने सुबह से एक ही झूठ

बोला है!"

लाली ने आँखें ऊपर उठाईं तो चाचा साहिब दिल-ही-दिल ख़ुश हुए।

"चाचाजी, आपके सामने रोंगटी बिलकुल नहीं। सची-मुची में एक ही झूठ बोला है!"

"चलो, आज तुम्हें माफ़ी मिली। हाँ, तुम्हारे जोड़ीदार कहाँ है भला, सोचकर बताओ।"

"चाचा साहिब, वह मदरसे के पीछे खेल रहे हैं।"

"क्या खेल रहे हैं–गुल्ली-डंडा, गोडियाँ, कौड़ियाँ..."

"जी, दोनों उत्तरी वंडवाले लड़कों के साथ कौड़ियाँ खेल रहे हैं।"

"हूँ!" काशीशाह ने मजमून बदल दिया–"राबयाँ बेटी, लाली ने और क्या सीखा तुमसे! उन किताबों में से कुछ पढ़ा-सुना!"

"जी, तीनों हिदायतें याद की हैं!"

लाली ने उतावली से पूछा–"राबयाँ बहन, सुना दूँ!"

"सुनाओ।"

काशीशाह इत्मीनान से चारपाई पर बैठ गए और लाली ने दोनों हाथ सीधे रख राबयाँ की ओर देखा और शुरू कर लिया–"रियाया जड़ है और बादशाह दरख़्त।

"जब नौशेरवाँ का आख़ीरी वक़्त आया तब उसने अपने बेटे हुरमुज़ से कहा–'बेटा, दिल से फ़कीरों-दरवेशों की हिफ़ाज़त कर। अपने आराम की फ़िक्र न रख। कोई भी अक़्लमन्द यह पसन्द न करेगा कि चरवाहा पड़ा सोता हो और भेड़िया उसके ग़ोल में रहे। होशियारी से दरवेशों-मुहताज़ों का ख़याल रख। इसलिए कि रियाया की बदौलत ही बादशाह ताजदार होता है। रियाया जड़ की तरह है और बादशाह दरख़्त की तरह और दरख़्त जड़ से ही मज़बूत होता है। ऐ मेरे प्यारे बेटे, जहाँ तक बन सके, रियाया का दिल मत दुखाना और अगर तू ऐसा करेगा तो अपनी जड़ खोदेगा। बेटा, अगर तुझे नेक राह की ज़रूरत है तो तेरे सामने फ़कीरों-परहेजगारों का रास्ता खुला पड़ा है। जिसे यह ख़ौफ़ है कि वह खुद तक़लीफ़ न उठाए, उसे भला दूसरों का नुक़सान क्यों पसन्द आएगा और अगर उसकी तबीयत में यह आदत नहीं है तो उसके मुल्क़ में अमन-चैन की बू भी नहीं है। अगर तू क़ानून-क़ायदे से मज़बूर है तो खुशी इख़्तियार कर और अगर तन्हा है, पाक़-साफ़ है तो अपना रास्ता ले। उस मुल्क़ में ख़ुशहाली की उम्मीद न रख जिसमें बादशाह-रियाया एक-दूसरे से नाराज़ हैं। ख़्वाब में मुल्क़ को आबाद वही देखता है जो लोगों के दिल गुलज़ार रखता है। जुल्म से ख़राबी-बदनामी होती है। जुल्म के ज़रिए रियाया को तबाह करना ठीक नहीं। इसलिए कि वही हक़ूमत को पनाह देनेवाली है।'"

लाली ने चाचा साहिब के आगे ज़रा-सा सिर झुकाया और नाक फुला राबयाँ की ओर तककर मुसकराने लगा।

"शाबाश बरखुरदार! शाबाब राबी!"

लाली की चढ़-बढ़ बन आई–"चाचा साहिब, अमीर हमज़ा की भी दो हिदायतें याद कर ली हैं मैंने!"

"बेटे, सोचकर बताओ। जब से मदरसे गए हो, तुम्हें कितनी बार कुट्ट पड़ी हैं!"

लाली ने उँगलियों पर गिनती कर डाली–"चाचा साहिब, मुझे पाँच बार मार पड़ी है! एक बार मसालेवाला गुड़ चुगला रहा था, एक बार सक़ीना गा रहा था, एक

बार मैं मोटे गुल्लू से छेड़छाड़ कर रहा था, और एक बार मौलवी जी ठौंका लगा रहे थे और गुरुदास भाई हाजत को गए, मुझे अपनी जगह बिठा गए। मौलवीजी ने पूछा तो मैंने फ़ातिहा-ख़ैर को फ़ातिहाख़्वानी कह दिया! उस दिन डाडी कुट्ट पड़ी। चाचा साहिब, राबी बहन ने चुपके-चुपके उस दिन घी और लौंग चुपड़ दिया था पीठ पर। मैंने किसी को बताया नहीं था!"

"राबयाँ बेटी, शाग़िर्द तुम्हारा क्या सच बोल रहा है?"

राबयाँ ने सिर हिलाया–"जी, शाह साहिब!"

"चाचा साहिब, एक और सुनाऊँ, इसका नाम है:

"ज़ोरो-जुल्म पर बुनियाद रखनेवाला फ़ना हो जाता है।"

सीढ़ियों पर पैरों का खड़का हुआ और शाहजी ऊपर आन पहुँचे।

लाली ने बढ़कर पाँव छू लिए–"पिताजी, पैरीपौना!"

शाहजी के माथे पर तेवर उभर आए–"कौन फ़ना हो जाता है–क्या कह रहे थे?"

"जी, मैं चाचा साहिब को कहानी सुनाने लगा था।"

राबयाँ ने आँख से इशारा किया। लाली ने फुर्ती से मंजी खींच दी–"बैठिए, पिता जी!"

शाह साहिब चुपचाप लड़कों को घूरते रहे।

लाली ने शाहजी के माथे पर तेवर देखे तो चाचाजी से पूछा–"गुरुदास भाई और केशोलाल भाई को मदरसे से बुलाकर ले आऊँ?"

"नहीं। उन्हें आज आप ही आने दो।"

लाली ने फ़िक्र से कहा–"चाचा साहिब, आज उन्हें बहुत मार पड़ेगी न!"

"ज़रूर पड़ेगी। जो जैसा करेगा वह वैसा भरेगा!"

लाली ने हौले से बनेरे की तरफ़ छलाँग मारी ही थी कि चाचाजी की आवाज़ सुन परत आया।

"कहाँ जा रहे थे?"

"जी, मदरसे!"

"जाने की ज़रूरत नहीं।"

"चाचाजी, अगर मैं उन्हें रोक नहीं लेता तो दोनों गोडियाँ चुनने दरिया पहुँच जाएँगे। मैं भी एक गुलेल रेत में छिपा आया था। न गया तो मेरी गुलेल उनके हाथ लग आएगी।"

शाहनी ने उठकर एक धप्पा दिया–"चुप रे! बड़ा बलभद्र बुद्धिमान बना फिरता है। आगे से आगे टींडा दिए ही जाता है! राबयाँ, जा, छोटी बैठक में बैठकर इसे इमला लिखा।"

लाली को बाँह से पकड़े राबयाँ बैठक की ओर ओझल हो गई तो भी देर तक शाहजी उधर ही तकते रहे!

काशीशाह बड़े भाई के बोलने का इन्तज़ार करते रहे–"ज़ल करियालीवाली मिस्ल अभी फ़ैसले तक नहीं पहुँची। तारीख़ पड़ गई है।"

शाहजी कुछ सोचते रहे, फिर आवाज़ हल्की कर कहा–"अलिया मिल गया जलालपुर के अड्डे। साथ था रंगोवालवाला सुल्तान!"

शाहजी ने आँख उठा भाई की ओर देखा–देर तक देखते रहे जैसे कुछ कहना चाहते हों और न कह पाते हों। एक लम्बा श्वास भरा–"रब्ब के रंग। लाखों में एक अपनी

राबयाँ और उम्र हँडाए हुए सुल्तान। अलिये-सुल्तान को साथ-साथ देख मेरा दिल बुझ-सा गया है! सलाह-सूत्र करने आज आएगा ज़रूर! सोचता हूँ...”

काशीशाह कई पल इन्तज़ार करते रहे, पर शाहजी ने बात न पूरी की–“अलिया आया तो बैठक में ही ले आना।”

रोटी-टुक्कर खाके दोनों भाई बैठे ही थे कि अलिया आन पहुँचा।

बेटी ने सलाम किया तो सिर पर प्यार फेरा!

अलिये ने बैठते ही बात छेड़ दी–“शाह साहिब, सुल्तान के पास घर-जिवियों की मालकी है। पहली बीवी जाती रही। धी ठिकाने जा पहुँचेगी तो मैं भी सुरख़रू हूँगा। फ़तेह अपने घर राजी। ज़रा इसी की चिन्ता-फ़िकर है मन में।”

छोटे शाह बोले–‘धी राबयाँ दूजी लड़कियों-सी नहीं अलिये, इसके दिल-मन में रोशनी। आप बाप हो, जो रुचेगा करोगे। बेशक साक-सम्बन्ध मिलाओ। ज़ोरा-ज़ोरी नहीं, सोच-समझकर। राबयाँ हमारी धी बराबर है, जो जुड़-बन आएगा, करेंगे।”

“शाहजी, यही सोचा था कि सुल्तान पैसे-धेले से सौक्खा है...”

छोटे शाह ने हाथ से रोक दिया–“होगा, पर सुल्तान की उम्र तो देखो। अलिये, चाव से यह काम करो। धी तुम्हारी मोती है। उसकी रीझें चुण्ण-विचुण्ण न कर दो। यह न हो कि कँवारी के सौ चाव और ब्याही के सौ मामले। लड़की मुँह से न कहेगी पर महसूस करेगी।”

“जी शाह साहिब!” अलिये को कुछ जवाब न सूझा। उठकर खड़ा हो गया–“कहीं और नज़र मारूँगा। आप भी ख़याल में रखें शाहजी। देखो, धी करतारो अपने चंगे घर पहुँच ही गई।”

काशीशाह बोले–“भरम न कर अलिये, इसमें भी कुछ बेहतरी है।”

शाहनी दोनों भाइयों को गर्म-गर्म दूध के कटोरे दे गई। जाते-जाते बैठक के पट भिड़ा दिए!

दोनों भाई चुपचाप बैठे रहे। अलिया ज्यों जाते-जाते कुछ अनकहा छोड़ गया हो। दीपक की लौ में अँधेरे की पलक न झपकी।

भित्त के बाहर दबी-दबी हिचकियाँ सुन पड़ीं।

काशीशाह ने आवाज़ दी–“कौन? कौन है?”

काशीशाह ने उठकर कपाट खोला, बाहर झाँका–“राबीं बेटा, तुम! यह क्या, अभी सोई नहीं! कुछ कहना है क्या!”

राबयाँ ने सिर हिलाया–“जी।”

“अन्दर आ जाओ राबीं, बाहर सरदी है!”

राबयाँ ने दहलीज़ लाँधी कि जहान लाँघ लिया। पहले रोते-रोते शाहजी की ओर देखा, फिर छोटे शाह की ओर और आँखों पर आँचर रख लिया।

राबयाँ सिर हिला-हिला बोली–“मैं कहीं नहीं जाती शाहजी, मुझे कहीं नहीं जाना!”

“सुल्तान के लिए हमने अलिये को मना कर दिया है। बेफ़िक्र हो जा राबीं!”

राबयाँ ने क़दम उठाया और शाहजी की पाटी पर सिर झुका दिया–“मैं मर जाऊँगी शाहजी, मैं आपके बिना नहीं जीती!”

“राबयाँ...!” शाहजी की आवाज़ की थरथराहट से जैसे दिवारें हिल गई हों!

“लाली इस घर का बेटा है। समझो, तुम्हारा भाई है और तुम इस घर की...”

राबयाँ रो-रोकर बोली–“यह न कहना शाह साहिब, यह कभी भी मत कहना। मैंने आपको...”

शाहजी की आँखों के आगे आँधियाँ उड़ने लगीं। एक निगाह भाई की ओर डाली और काँपता हाथ राबयाँ के सिर पर रख दिया–“राबी, दिल में कुछ न रख। कह दे! राबयाँ, कह...काशीराम, इससे पूछ लो।”

राबयाँ काँप-काँप थिर हुई। उठी। दुपट्टी से आँखें पोंछीं और पाक़-साफ़ आवाज़ में कहा–“शाह साहिब, मैंने आपको दिल में ऐसे धार लिया जैसे भगत मुरीद अपने साँईं को धार लेते हैं।”

“यह क्या राबयाँ! तेरे दिल में अनहोनी वरत गई! यह अनहोनी है, अनहोनी...राबयाँ, यह नहीं होना। यह नहीं होगा।”

छोटे भाई की बात से बेखबर शाहजी ने राबयाँ की ओर देखा तो अधमैली ओढ़नी में दमकते मुखड़े के सामने दिवटे की लौ कुम्हलाने लगी!

मजलिस हमेशा की तरह मंजियों पर सज गई। आले में जलते दिवटे की लौ काशीशाह को कुछ कम जापने लगी तो मौलादादजी ने नवाब को हाँक मारी–“बरख़ुरदार, ज़रा अपनी बैठक से शमादान उठा लाओ। ख़ैरों से छोटे शाह कुछ पढ़कर सुनाने ही लगे हैं तो उनकी आँखों के आगे अक्खर तो साफ़ चमकें!”

जहाँदादजी आते ही कुछ कहने को बेताब–“बादशाहो, हादसा एक बड़ा बुरा हो गुज़रा है। गुज़रात अड्डे पर एक ही मज़मून–शाहपुर के तहसीलदार नादिर हुसैन का क़त्ल कर दिया गया है।”

यकायक हुक्कों की गुड़गुड़ बन्द हो गई–“बादशाहो, यह क्या कुफ़्र वरता? ज़िला शाहपुर तो भरती निशान में बड़ा अव्वल और आला चल रहा है!”

“चलने को तो सरकार का जंगी-क़ानून ही चल रहा है। जंग-फंड तो जुरमाना हो गया न! फ़्री खेत दस रुपया और फ़्री मुरब्बा तैंतीस रुपया।”

मौलादादजी ने सिर हिलाया–“यह ज़्यादती है। लोगों के लिए यह सट्ट डाडी है।”

गुरुदित्तसिंह बोले–“सुनने में आया है कि जना जवान जो भरती के लिए अपने को पेश न करे, उन्हें दफ़ा 107-110 के मातहत अन्दर कर देने का हुक़्म है। और सुनो, जो जट्ट किसान लड़ाई-लाग न दे, सरकार उसका पानी बन्द कर दे!”

कर्मइलाहीजी बोले–“असल में सरकार अब हौले हथियारों पर तुल गई है। बात तो ऐसी हो गई कि लोकों की बाँहें मैदाने-जंग में और लोकों पर ही थूक। ज़मीन का परचा-काग़द हो, लेन-देन के टोम्बू-रजिस्ट्री हों, जंग-फंड की वसूली पहले! शाह साहिब, यह सलूक-सरकारी भला कितनी देर चलेगा!”

“बादशाहो, जंग-लड़ाइयाँ निरे झगड़े तो नहीं न! ये रगड़े हैं। चलते जाएँ तो सालाँ-साल चलते जाएँ। शाही मामले!”

जहाँदादजी ने कहा–“बात एक और भी है। जंगपसन्द जंग़जू लोगों ने तो फ़ौजों में जाना ही जाना, उसका तो सरकार पर कोई अहसान नहीं। बाक़ी रहे हरज़े-जुरमाने–वह भी समझो, हक़ूमत के लिए लाज़िमी।’”

मुहम्मदीनजी हँसने लगे–"क्यों न हो जहाँदादजी, आख़िर को फ़ौजी हो न! फ़ौजी बन्दों के सबक-सूत्र बड़े आला। सरकार की ख़ैर-ख़्वाही पुज्ज के! बाक़ी तंगी तो लोगों की हुई!"

फ़तेहअलीजी का ध्यान कहीं और भटक गया–"बादशाहो, अपने क़ौमी शायर लालचन्द 'फलक' के पीछे सरकार बड़ा पड़ी हुई है। सुनने में आता है कि सरकार ने पहले तो उसे एक लाख रुपया और सौ मुरब्बे देने का ऐलान किया। लालचन्द ने मुंडी हिला दी–मुझे नहीं चाहिए। तंग आकर सरकार ने दिल्लीवासी बम-वारदात में फँसा दिया!"

छोटे शाह बोले–"चौधरीजी, जेहलम करियालेवाले दो-चार बन्दे और भी इसी लाट-बम्बी क़िस्से में अन्दर थे!"

"वही जी वही, बड़ा धूम-धड़क्का हुआ था। भाई बालमुकन्द को फाँसी हुई तो अपने पसार में बैठी बालमुकन्द की घरवाली बीबी रामरक्खी रब्ब को प्यारी हो गई। न रोई, न करलाई, बस बैठे-बैठे ख़त्म। हाँ, शाहजी, लालचन्द 'फ़लक' के पीछे सरकार क्यों पड़ गई!"

शाहजी ने सिर हिलाया–"इसकी वजह एक और भी थी। लालचन्द 'फलक' ने कहीं जल्से में नज़्म गाई–"दाना-दाना हिन्द का, राली-ब्रादर ले गया!"

कर्मइलाहीजी हुक्का छोड़ के बैठ गए–"शाहजी, है कोई क़ाबिले-एतराज़ बात इसमें! वैसे कनक-कमेटी तो लगी हुई है पीछे अपने दानों के। सच पूछो तो मुल्क़ अपना और हक़ूमत पराई। बस, यही बात जड़ है खींचातानी की। नहीं तो शायर लिखते आए और लोग सुनते आए। स्यालकोटवाले शायर मुहम्मद इक़बाल साहिब की भी शोहरत तो बड़ी!"

गंडासिंह बोले–"शाहजी, आपने सुना हुआ है न यह भी:

चलो चल्लिए देश नू
युद्ध करन
ऐ ही आख़ीरी वचन
फ़रमान हो गया!

"बादशाहो, अपने कनाडावाले बन्दों ने यह गीत जोड़ा था!"

नवाब ने शमादान ला काशीशाह के आगे तख़्त पर रख दिया तो काशीशाह किताब खोल पढ़ने लगे–"शाहजहाँ-बादशाह के वक़्तों की बात है।

"उन दिनों शाह मियाँ मीर बड़े वलीयुल्लाह माने जाते थे।

"मियाँ मीर शाह अक़्सर अमल और शुगल में रहा करते। हिन्दू-मुसलमान सब उनके दरबार में आते। गवैयों-रंडियों की तरफ़ से नाच-गाना और मुजरा भी होता रहता।

"किसी अहमक़ ने बादशाह सलामत के आगे शिकायत कर दी कि मियाँ साहिब के यहाँ ओबाश लोगों का हजूम रहता है। इसकी खोज-बीन की जाए।

"सो बादशाह सलामत ने फ़रमाया कि जब तक हम ख़ुद मौके को न देखें, सुनी-सुनाई पर कुछ न करना चाहेंगे।

"चुनाँचे एक दिन बादशाह घोड़े पर सवार हुए और उधर का रुख कर लिया। रास्ते में दरिया रावी हाईल था। चूँकि पानी कम था, बादशाह सलामत ने घोड़ा पानी में डाल दिया।

"जब घोड़ा ऐन दरिया के बीच पहुँचा तो घोड़े ने पेशाब और लीद कर दी। शाह मियाँ मीर दरबार में बैठे-बैठे अपनी रूहानी आँख से सब देख रहे थे।

"बादशाह दरबार में पहुँचे तो शाह साहिब ने हँसकर फ़रमाया–'आपके घोड़े ने तमाम दरिया गन्दा कर दिया है। अब हम वुज़ू और गुसल कहाँ करेंगे!'

"शाहजहाँ बादशाह हँसे। कहा–'साँई साहिब, भला घोड़ों की लीद से दरिया पलीत होते होंगे!'

"'फ़कीर का दिल, जो बामस्त समुद्र है, अगर दुनिया की अलाइश से पलीत हो सकता है तो यह क्यों नहीं हो सकता!'

"सुनते ही बादशाह पर असर हुआ और शाहजहाँ ने साँई साहिब की शाग़िर्दी क़बूल कर ली।

"इतने में बादशाह सलामत देखते क्या हैं, छज्जू भगत दरबार में आ खड़े हुए। देखते ही मियाँ मीर छज्जू भगत की पेशवाई के लिए उठे और बाइज़्ज़त अपनी गद्दी पर बिठाया।

"बादशाह ने देखा मगर दरियाए-तक़ब्बुर में ग़र्क़ रहे और ख़ुदा के बन्दे को न पहचाना। इधर शाही सवारी मियाँ मीर शाह के दरबार से रुख़सत हुई, उधर बादशाही प्यादा दौड़ा-दौड़ा आन पहुँचा। अर्ज़ की–'साँई साहिब, बादशाह सलामत की हवा बन्द हो गई है। पेट फूल गया है। और वह बड़े अवाज़ार हैं।'

"साँई साहिब ने फ़रमाया–'मैं इस मामले में कुछ नहीं कर सकता! उनकी यह तक़लीफ़ सिर्फ़ छज्जू भगत ही रफ़ा कर सकते हैं।'

"प्यादा भगतजी के आगे पहुँचा तो वह बोले–'मैं एक मामूली टटपूँजिया। दवा और दारू क्या जानूँ!'

"प्यादे ने फिर अर्ज़ की–'भगतजी, साँई साहिब का कहना है कि सिर्फ़ आप और सिर्फ़ आप बादशाह सलामत की तक़लीफ़ को दूर कर सकते हैं।'

"छज्जू भगत बोले–'यह साँई साहिब की बन्दानवाज़ी है। वह हर तरह साहबे-कमाल हैं।'

"हारकर प्यादा फिर साँईं साहिब के दरबार में हाज़र हुआ–'शाह साहिब, बादशाह सलामत बड़ी तंगी में हैं। कुछ तो करिए!'

"साँई साहिब ने फ़रमाया–'बादशाह सलामत से जाकर कहो कि भगतजी के यहाँ उन्हें प्यादा न भेजना था। उन्हें ख़ुद जाना चाहिए था!"

"हारकर बादशाह सलामत छज्जू भगत के यहाँ पहुँचे। कहा–'भगतजी, मेरी ख़ता बक़्श दी जाए। बड़ी मुश्क़िल में हूँ!'

"छज्जू भगत बोले–'ऐ बादशाह, तुम्हें अपनी शहंशाही पर इतना गुमान! बताओ, हम जैसे मामूली लोग किसी एक बादशाह के लिए कर भी क्या सकते हैं!'

"'भगतजी, रहम कीजिए। मेरी परेशानी अब बरदाश्त के बाहर है।'

"ऐ शहंशाह, यह तो बताओ, अगर हमारी दया से राजी हो गए तो इसके एवज़ में क्या दोगे?'

"'आप जो कहें महाराज, आप फ़रमाइए।'

"छज्जू भगत हँसे–'ओ भोले शहंशाह, तुम्हारे पास है ही क्या! फ़कत बादशाहत ही न! वह भी तुम्हारी नहीं, रियाया की है। चलो, आज के लिए बादशाहत ही क़बूल किए लेते हैं। बादशाहत का पट्टा लिखो और मोहर लगाकर हमारे हवाले करो!'

"बादशाह सलामत शशोपंज में पड़ गए। सोचा, जान के मुक़ाबले माल क्या चीज़ है। जान निकल गई तो पादशाही, तू यूँ भी चली जाएगी!

"बादशाह ने पट्टा लिख छज्जू भगत के आगे पेश कर दिया!

"ज्योंही भगतजी ने हाथ में पकड़ा, बादशाह के पेट से हवा ख़ारिज हो गई और पेट हल्का हो गया!

"बादशाह ने मुसाहिबों को हुक़्म दिया–'जाने की तैयारी हो।'

"भगतजी ने यह शहंशाही अदा देखी तो हँस दिए–'होश में तो हो! अब कैसा हुक़्म और कैसी बादशाहत! हिन्दुस्तान की हक़ूमत का पट्टा तो लिखा जा चुका और वह हमारे हाथ में है! शाहजहाँ, अब तुम्हारी हस्ती बाक़ी भी है कुछ!'

"बादशाह झुँझलाए–'यह क्या तमाशा है!'

"'अपने क़ौल से मुड़नेवाले बादशाह, एक पलड़े पर बादशाहत हिन्दोस्तान की और दूसरी तरफ़ गन्दी हवा का एक इख़्राज़। इस पर भी तुम घमंड और तक़ब्बुर का शिकार होकर उन लोगों का मुक़ाबला करने की हिमाक़त करते हो जो ख़ुदा से हम-पंजा हैं। ऐ बादशाह, चले जाओ हमारी आँखों के सामने से और उठा लो अपनी सल्तनत का टंडीरा भी।'

"भगतजी ने पट्टे के कागज़ को पाश-पाश कर दिया! बादशाह पानी-पानी होकर भगतजी के क़दमों पर पड़ गया–'मैं अपनी ग़लती और गुनाह दोनों समझ गया। इस नाचीज़ की ख़ता माफ़ की जाए!'

"भगतजी ने आँखें मूँद लीं–'माफ़ी देने के हक़दार साँइयों के साँई मियाँ मीर हैं। मैं नहीं!"

"वाह-वाह! पीर-फ़कीर, साधु-संन्यासियों में एक तरफ जी भर कर हलीमी, दूसरी तरफ़ ऐसा रौब-दाब जो बादशाहों-शहंशाहों को भी न गरदाने!"

काशीशाह भक्ति-भाव में जैसे छज्जू भगत के चबारे ही जा पहुँचे। सिर हिलाकर कहा–"कहावत मशहूर है–जो सुख बल्ख़ न बुख़ारे, वह सुख छज्जू के चबारे। शाह मियाँ मीर और छज्जू भगत की दोस्ती-मुहब्बत-सलूक़ तो दुनिया में मशहूर। एक-दूसरे की सोहबत में न इन्हें दिन दिन लगता, न रात रात लगती। दोनों पर रब्ब की बक़्शश। बस, ज़िक्र में खोए रहते।

"एक दिन शाह मियाँ मीर वज़्दोहाल में बैठे थे! चौंककर उठे और छज्जू भगत के चबारे की ओर चल पड़े।

"पहुँचे तो देखा, छज्जू भगत चौके में खाना बना रहे हैं। शाह मियाँ मीर ने चौके की दहलीज़ के बाहर खड़े हो पूछा–'अन्दर आ जाऊँ?'

"छज्जू भगत ने कड़ी निगाह से देखा और सिर हिलाकर कहा–'अन्दर आ ही जाते तो किसी को क्या इनकार था! पर अब आप बाहर ही रह जाइए! मीर साहिब, पीर-फ़कीरों की भी जात-पाँत होती है क्या! आपके दिल में यह ख़याल गुज़रा तो कैसे गुज़रा! अगर आपके दिल में इसने सिर उठाया है तो यहाँ यह पहले है!'

"सुनकर मियाँ मीर बड़े हैरान-परेशान। दहलीज़ पर सिर झुका माफ़ी माँगी–'गुनहगार हूँ भगतजी, जो सज़ा चाहें, दें। हाज़िर हूँ!"

"छज्जू भगत का कंठ भर आया। भर्राए गले से कहा–'मियाँ मीर, तुमने एक और ख़ता कर डाली! मेरे दोस्त, अन्दर आ के मेरे गले न लग गए तुम! लानत तो मुझ पर है! मुझसे बड़ा मेरा चौका समझ लिया! साँइयाँ, मुहब्बत में यह गुनाह है गुनाह! इस एक

लमहा में तुमने हम दोनों के बीच समुद्र ला बहाया है। अब मैं इधर और तुम उधर!"

"मियाँ मीर गीली आँखों से देर तक छज्जू भगत को देखा किए। फिर सलाम किया–'अपना गुनाह और आपकी सज़ा दोनों क़बूल करता हूँ! आपका मुरीद हूँ। मुरीद ही रहूँगा। न पल को भी भूलूँगा, न बिसराऊँगा!' यह कहकर मियाँ मीर देखते रहे। देखते रहे। फिर सलाम किया और रुख़सत हो गए।

"छज्जू भगत बस पनियारी आँखों से रास्ते की ओर देखते रहे, जब तक मियाँ मीर ओझल न हो गए।"

जहाँदादजी बोले–"शाह साहिब, दूध-मक्खन की तरह दिल के दर्पण में भी बाल आ जाए तो ख़याल मैला हो ही जाता है!"

शाहजी ने सिर हिलाया–"इसकी वजह कुछ और भी थी। साँई साहिब की नशा-ए-मुहम्मद में मख़्मूर आँख जब छज्जू भगत पर पड़ती तो उन्हें ऐसा मालूम देता जैसे उन पर इलाही बरक़तें बरस रही हैं। भगतजी जान गए कि जब तक मियाँ मीर और वह एक-दूसरे की सोहबत में रूहानी दौलत से फ़ैज़याब होते चलेंगे, साहिबे-कमाल को भूल जाएँगे!"

गंडासिंह का ख़्याल कहीं और भटका हुआ! पहले पगड़ी ठीक की, फिर खेस की 'बुक्कल' खोली। बाँहें फैला दोबारा ओढ़ ली और सिर हिलाकर कहा–"शाहजी, यह तो बात हुई रूहानी इश्क़ की, पर जेकर कोई मुझसे पूछे तो आपवाला बादशाही प्रसंग सरकार फिरंगी की ओर चल निकला है! होगा अब यह कि ग़दरी और इन्क़लाबियों ने मिलकर सरकार का झाड़ा-मूत्र बन्द कर देने हैं। भावें टोंबू लिखवा लो शाहजी, हक़ूमत का पट्टा देसी रियाया के हाथों में पहुँचकर रहेगा। एक बार तख़्त-ताज से हौली हुई सरकार, फिर ख़लकत अपनी नहीं रुकती। नारा एक ही बुलन्द हो के रहेगा–आवाज़े-ख़लक को आवाज़े-खुदा समझो।

"कहते हैं, सूरज को जन्मा शनीचर और उसके सत्त-बल का सोलहवाँ हिस्सा कम हो गया। सरकार की भी यही हालत। उधर जंग, इधर इन्क़लाबिए ग़दरी शहीदी पर!"

शाहजी कई देर सिर हिलाते रहे–"बादशाहो, दशम पातशाही गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज ने मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब के ज़ोर-जुल्म देखकर उसे खत में लिखा:

चूँ कार अज़ हमाँ हीलते दरगुज़श्त!
हलालस्त बुर्दन ब-शमशीर दश्त!!

"जब दूसरे सब रास्ते कारगर न हो सकें तो जुल्म के ख़िलाफ़ तलवार उठा लेना जायज़ है!"

"वाह-वाह, गुरु साहिब, आपकी बहादुरी की वाह ही वाह!"

●●●

लेखन को जीवन का पर्याय माननेवाली कृष्णा सोबती की क़लम से उतरा एक ऐसा उपन्यास जो सचमुच ज़िन्दगी का पर्याय है – *ज़िन्दगीनामा।*

ज़िन्दगीनामा–जिसमें न कोई नायक। न कोई खलनायक। सिर्फ़ लोग और लोग और लोग। ज़िन्दादिल। जाँबाज़। लोग जो हिन्दुस्तान की ड्योढ़ी पंचनद पर जमे, सदियों गाज़ी मरदों के लश्करों से भिड़ते रहे। फिर भी फसलें उगाते रहे। जी लेने की सोंधी ललक पर ज़िन्दगियाँ लुटाते रहे।

ज़िन्दगीनामा का कालखंड इस शताब्दी के पहले मोड़ पर खुलता है। पीछे इतिहास की बेहिसाब तहें। बेशुमार ताक़तें। ज़मीन जो खेतिहर की है और नहीं है, वही ज़मीन शाहों की नहीं है मगर उनके हाथों में है। ज़मीन की मालिकी किसकी है? ज़मीन में खेती कौन करता है? ज़मीन का मामला कौन भरता है? मुजारे आसामियाँ। इन्हें जकड़नों में जकड़े हुए शोषण के वे क़ानून जो लोगों को लोगों से अलग करते हैं। लोगों को लोगों में विभाजित करते हैं।

"...रियाया जड़ की तरह है और बादशाह दरख़्त की तरह और दरख़्त जड़ से ही मज़बूत होता है। ऐ मेरे प्यारे बेटे, जहाँ तक बन सके, रियाया का दिल मत दुखाना और अगर तू ऐसा करेगा तो अपनी जड़ खोदेगा...।"

ज़िन्दगीनामा–कथ्य और शिल्प का नया प्रतिमान, जिसमें कथ्य और शिल्प हथियार डालकर ज़िन्दगी को आँकने की कोशिश करते हैं। *ज़िन्दगीनामा* के पन्नों में आपको बादशाह और फकीर, शहंशाह, दरवेश और किसान एक साथ खेतों की मुँडेरों पर खड़े मिलेंगे। सर्वसाधारण की वह भीड़ भी जो हर काल में, हर गाँव में, हर पीढ़ी को सजाए रखती है।

आवरण : नरेन्द्र श्रीवास्तव

राजकमल पेपरबैक्स